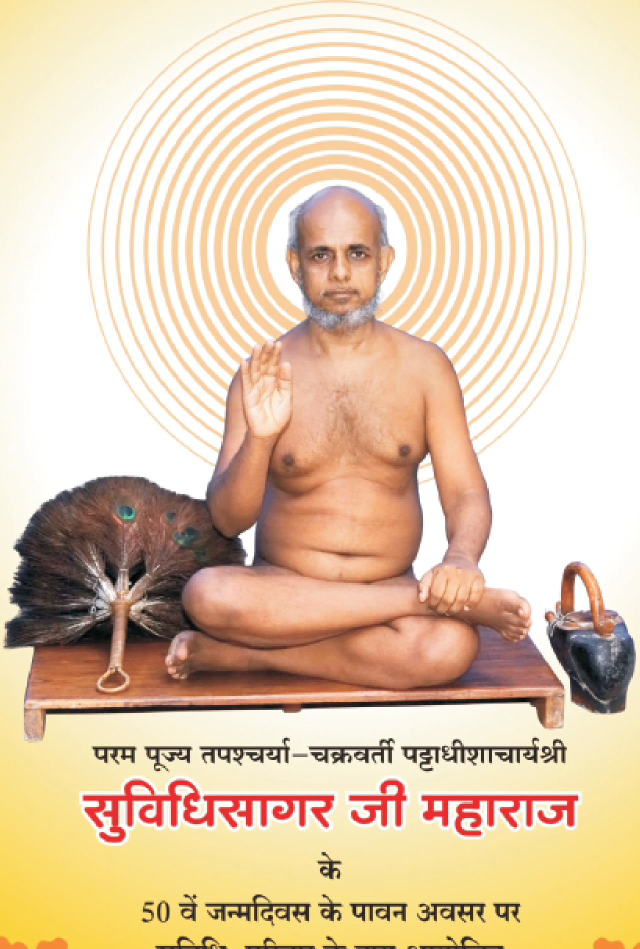

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती पट्टाधीशाचार्यश्री

सुविधिसागर जी महाराज

के

50 वें जन्मदिवस के पावन अवसर पर

सुविधि–परिवार के द्वारा आयोजित

जिनवाणी-महोत्सव

सहस्रग्रन्थसंग्रह

❋ जन्मदिवस 19–03–1971 ❋ मुनिदीक्षा–11–05–1989 ❋ आचार्यपद– 20–06–2004

पट्टाधीशपद– 24–12–2010 (20–06–2004 को की गई उद्घोषणा के अनुसार)

परम पूज्य आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज के द्वारा की गई उद्घोषणा:–

हमारी समाधि के पश्चात् आपको इस संघ के संचालकपद पर नियुक्त करते हैं।

(अंकलीकर वाणी–जुलाई 2004) (अक्षयज्योति–अक्तूबर 2004)

वात्सलय रत्नाकार प.पू. आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज
की 93 वी. जन्म-जयन्ती के उपलक्ष्य में

विमल भक्ति संग्रह

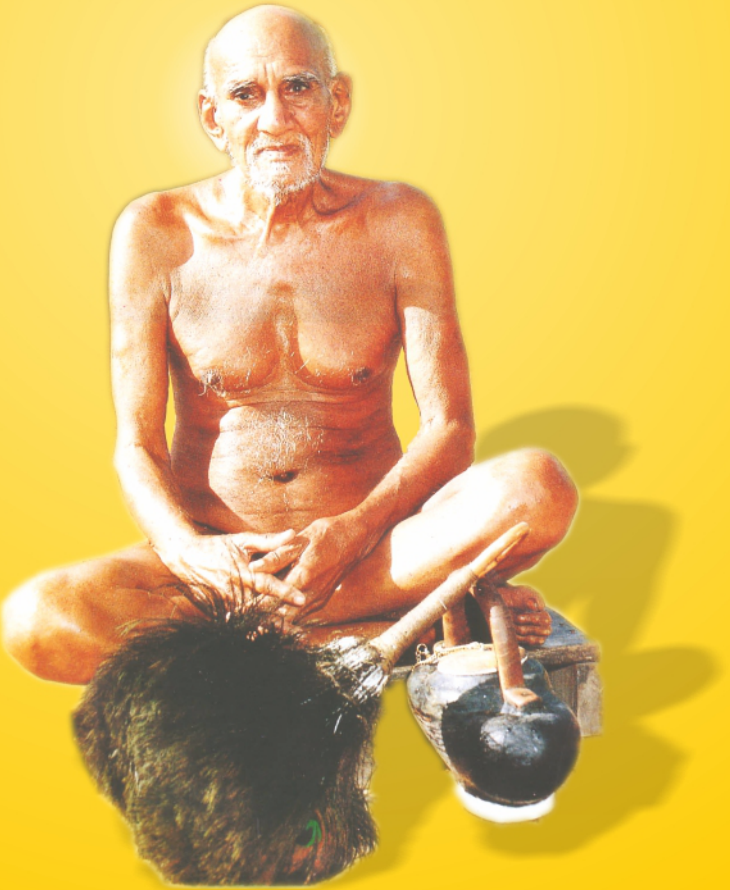

सम्पादिका

गणिनी आर्यिका श्री स्याद्वादमती माताजी

भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद्

(परम्परानायक)

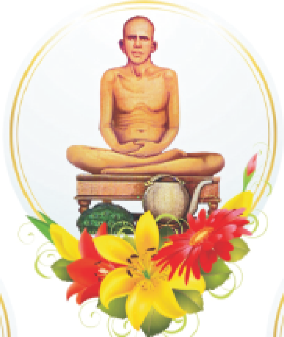

परम पूज्य चारित्र–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री आदिसागर जी महाराज
(अंकलीकर)

(द्वितीय पट्टाधीश)

परम पूज्य तीर्थभक्त–शिरोमणि,
आचार्यश्री महावीरकीर्ति जी महाराज

(तृतीय पट्टाधीश)

परम पूज्य सिद्धान्त–चक्रवर्ती,
आचार्यश्री सन्मतिसागर जी महाराज

(चतुर्थ पट्टाधीश)

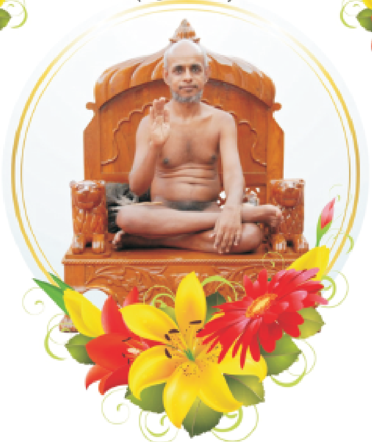

परम पूज्य तपश्चर्या–चक्रवर्ती, आचार्यश्री सुविधिसागर जी महाराज

दिगम्बर साधु निरन्तर पगविहार करते रहते हैं। ग्रन्थभण्डार को साथ में रख कर विहार करना अशक्यप्राय: होता है। फलत: उनको ग्रन्थों के सन्दर्भ देखने में असुविधा होती है। उनकी सुविधा के लिये इस कोश का निर्माण किया गया है। इस कोश के निर्माण में किसी भी प्रकार का व्यापारिक हेतु नहीं है।

आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न श्रावकबन्धुओं से निवेदन है कि वे ग्रन्थ का विक्रय कर अध्ययन करने की परम्परा को कायम रखें।

मुखपृष्ठ पर हमने ग्रन्थकर्त्ता, अनुवादक, सम्पादक, प्रकाशक आदि के नाम दिये हैं। किसी संस्थान का कर्तृत्व हमने लुप्त नहीं किया है।

इस कोश के लिये आवश्यक ग्रन्थ हमें अनेक स्रोतों से प्राप्त हुये हैं। हम उन सभी का आभार मानते हैं।

सुविधि–परिवार

वात्सल्य रत्नाकार प.पू. आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज
की 93 वीं जन्म-जयन्ती के उपलक्ष्य में

विमल भक्ति संग्रह

सम्पादिका
गणिनी आर्यिका श्री स्याद्वादमती माताजी

स्व. श्रीमति शान्तीदेवी बड़जात्या
की पुण्य स्मृति में
श्री द्वारकादास जैन बड़जात्या
पुत्र राजेश जैन
पुत्रवधु पूनम जैन द्वारा
सादर समर्पित
ओट्रम लाइन्स किंग्सवे कैम्प, दिल्ली

भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद्

भारतवर्षीय अनेकान्त विद्वत् परिषद् पुष्प संख्या—२

आचार्य श्री विमलसागरजी महाराज

आशीर्वाद : आचार्यश्री भरतसागरजी महाराज

निर्देशिका : गणिनी आर्यिका स्याद्वादमती माताजी

संयोजन : ब्र० प्रभा पाटनी B.S.c.,L.L.B.

ग्रन्थ : **विमल भक्ति संग्रह**

•

अष्टम आवृत्ति : प्रति १०००

पुस्तक प्राप्ति स्थान : (१) आर्यिका गणिनी स्याद्वादमति माता जी संघ
(२) आचार्य विमल भरत साहित्य सदन सम्मेद शिखर जी
(३) अष्टापद तीर्थ जैन मन्दिर
विलासपुर चौक, गुड़गांव (हरियाणा)
फोन: ०९४६६७७६६११

मूल्य : ७०.०० रुपये

मुद्रक : शिवानी आर्ट प्रेस, दिल्ली

आचार्य विमलसागरजी महाराज

आचार्य भरतसागरजी महाराज

आर्यिका स्याद्वाद्‌मति माताजी

श्री द्वारकादास जैन बड़जात्या

स्व. श्रीमति शान्तीदेवी बड़जात्या

समर्पण

युग प्रमुख, चरित्र शिरोमणि, सन्मार्ग-दिवाकर, करुणानिधि

वात्सल्य-रत्नाकार

अतिशय योगी, तीर्थोद्धारक चूड़ामणि, पतितोद्धारक, ज्योतिपुञ्ज,

कल्याणकर्ता, दुखहर्ता, समदृष्टा, बीसवीं सदी के अमर सन्त,

परम-तपस्वी, जिनभक्ति के अमर प्रेरणा स्रोत, पुण्य पुञ्ज,

गुरुदेव आचार्य

श्री 108 श्री विमलसागरजी महाराज

की 93 वीं जन्म-जयन्ती पर सादर समर्पित

साधन से साध्य

[आचार्य श्री १०८ भरतसागरजी महाराज]

अनादिकालीन संसार दुःखों से संतप्त जीव सुख चाहता है पर सुख की प्राप्ति के उपायों को नहीं करता हुआ पंच पापों के प्रपञ्च में फँसा दुःख शृंखला को मजबूत करता है । आचार्यश्री गुणभद्र स्वामी आत्मानुशासन में लिखते हैं- "पापात् दुःखं धर्मात् सुखम्" पाप से दुःख व धर्म से सुख प्राप्त होता है । प्रश्न उठता है धर्म क्या है ? तो प्रवचनसार में कुन्दकुन्दाचार्य लिखते हैं-"चारित्तं खलु धम्मो" चारित्र ही निश्चय से धर्म है । आचार्य इसीलिये भव्यात्माओं को सम्बोधित करते हुए लिखते हैं "महानुभावों ! सच्चे सुख की प्राप्ति करना है तो चारित्र धारण करना परम आवश्यक है । कहा है-

अनन्तसुखसम्पन्न येनात्माय क्षणादपि ।
नमस्तस्मै पवित्राय चारित्राय पुनः पुनः ।।

उस चारित्र को बारम्बार नमस्कार हो जिसके धारण करने से आत्मा क्षण-मात्र में अनन्त सुख का स्वामी बन जाता है ।

महानुभावों ! दर्शन की पूर्त्ति क्षायिक सम्यग्दृष्टि के चतुर्थ गुणस्थान में हो जाती है, पर जीव सुख को प्राप्त नहीं करता, ज्ञान की पूर्णता केवलज्ञान होते ही तेरहवें गुणस्थान में अर्हदावस्था में हो जाती है फिर भी ८ वर्ष कम १ कोटि वर्ष पूर्व तक जीव संसार में बना रहता है परन्तु अन्तर्मुहूर्त चारित्र की पूर्णता चौदहवें गुणस्थान के चरम समय में होते ही आत्मा शाश्वत सुख को प्राप्त कर सिद्धावस्था को प्राप्त होता है तात्पर्य यह है कि चारित्र सुख प्राप्ति का "साधकतमकरण" है ।

चारित्रं सर्व जिनैश्चरितं प्रोक्तं च सर्व शिष्येभ्यः ।
प्रणमामि पंचभेदं पंचम चारित्र लाभाय ।।

-वीरभक्ति ६

पूर्व में जितने तीर्थंकर हो गये सभी ने स्वयं चारित्र की आराधना की और शिष्यों के हितार्थ चारित्र धारण करने का उपदेश दिया । द्वादशांग वाणी में सर्वप्रथम "आचारांग का ही कथन किया" । पंचम यथाख्यातचारित्र की प्राप्ति के लिये उस पंच भेदों युक्त चारित्र को मैं पुनः पुनः प्रणाम करता हूँ ।

तीर्थंकरों को भी बिना चारित्र धारण किये अनन्तसुख प्राप्त नहीं हुआ तो साधारण जीवों की क्या कथा ?

कुन्दकुन्दाचार्य ने अष्टपाहुड में विवेचन किया-

णवि सिज्झइ वत्थधरो, जिसासणे जइ वि होइ तित्थयरो ।
णग्गो हि मोक्खमग्गो सेसा उम्मग्गया सव्वे ।।२३।।

जिनशासन में बस्त्रधारी कभी भी सिद्धि को प्राप्त नहीं कर सकता है, चाहे वह तीर्थंकर भी क्यों न हो । नग्न दिगम्बर यथाजात रूप ही मोक्षमार्ग है शेष सभी उन्मार्ग है ।

आचार्य श्री समन्तभद्र स्वामी से शिष्य ने पूछा-प्रभो ! चारित्र धारण करने की आवश्यकता क्यों है ? आचार्यश्री ने समाधान किया-

मोहतिमिरापहरणे, दर्शनलाभादवाप्तसंज्ञानः ।
राग द्वेषनिवृत्यै, चरणं प्रतिपद्यते साधुः ।।

-रत्नकरण्डश्रावकाचार ३/४७

सम्यक्दर्शन व ज्ञान की प्राप्ति हो जाने पर भी राग-द्वेष रूप अशुभ परिणामों की निवृत्ति धारण किये बिना नहीं हो सकती अतः मोहरूप अंधकार को नाशकर राग-द्वेष की निवृत्ति के लिये साधुजन चारित्र की शरण को प्राप्त होते हैं ।

उस सम्यक्चारित्र को पालने में आत्मा का प्रबल शत्रु प्रमाद बार-बार परेशान कर ज़ीव को पथ भुला देता है । चारित्र की रक्षार्थ आचार्यों ने मुनि-आर्यिकाओं के लिए कृतिकर्मों का विवेचन किया है । "साधु के करने योग्य कार्य को कृतिकर्म कहते हैं" । उन कृतिकर्मों का साधु अहोरात्रि विधिवत् अच्छी तरह से पालन कर सकें इस बात को लक्ष्य में रखकर "विमल भक्ति संग्रह" पुस्तिका का प्रकाशन किया गया है । क्योंकि कोई भी कार्य कारण के बिना नहीं होता है । साधुओं के संयम आराधना कार्य में यह पुस्तक कारण बनेगी और संयम आराधना रूप कारण, यथाख्यातचारित्र रूप कार्य में साधक होगा । इसी लक्ष्य को लेकर इस पुस्तिका का सम्पादन आर्यिका स्याद्वादमती माताजी ने गुरु आशीर्वाद से पूर्ण किया है । माताजी के लिये हमारा आशीर्वाद है कि आप इसी प्रकार आगे भी ऐसी पुस्तकों का सम्पादन कर जिनधर्म की प्रभावना करती रहें ।

●

मनो भावना

[आर्यिका श्री स्याद्वादमती माताजी]

"बाह्येतरोपाधि समग्रतेयं कार्येषु ते द्रव्यगत स्वभावं"

बाह्य और अन्तरंग दोनों साधनों से कार्य की सिद्धि होती है, ऐसा वस्तु स्वभाव है । अकेला उपादन कुछ नहीं कर सकता और अकेला निमित्त भी अकिंचित्कर है । भगवान आदिनाथ के समय जीव भोले थे । अतः प्रतिक्रमण विधि कही थी और महावीर प्रभु के शासन में जीव कुटिल हैं अतः इस समय भी प्रतिक्रमण विधि की अनिवार्यता कही, शेष बाईस तीर्थंकरों के काल में जीव भद्र सरल परिणामी थे अतः उनके लिये प्रतिक्रमण विधि की आवश्यकता नहीं कही गई ।

"सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया" शुद्ध नयापेक्षा प्रत्येक आत्मा शुद्ध है, पर वर्तमान पर्याय या व्यवहारापेक्षा अपने कर्मों से बद्ध जीव विभाव परिणामों से परिणत हुआ अशुद्ध बना हुआ है । अनादिबद्ध कर्मपटल के विघटनार्थ जिनभक्ति एक अमोघ निधि है । मूलाचार में कुन्दकुन्दाचार्य कहते हैं कि जो भव्यात्मा प्रयत्नपूर्वक अर्हंत-सिद्ध-आचार्य-उपाध्याय-साधु को एक बार भी भक्तिपूर्वक नमस्कार करता है वह सर्व दुखों से छूटकर बहुत थोड़े समय में मुक्ति को प्राप्त करता है ।

जिनभक्ति से निकाचित कर्म भी ढीले पड़ जाते हैं । जिनभक्ति रूप सराग परिणामों से तात्कालिक बन्ध की अपेक्षा असंख्यातगुणी कर्म की निर्जरा होती है । पूज्यपाद स्वामी बार-बार कह रहे हैं–

तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पद्द्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र तावद् यावन्निर्वाण सम्प्राप्ति ।।

हे प्रभो ! जब तक निर्वाण सुख की प्राप्ति न हो आपके चरण-कमल तब तक मेरे हृदय में विराजमान रहें ।

साधु की चर्या में प्रतिक्रमण, सामायिक, भक्ति आदि आवश्यक कर्म कहे गये हैं । पूर्व में प्रतिक्रमण-भक्ति सम्बन्धी अनेकों पुस्तकों का प्रकाशन विभिन्न स्थानों से हुआ ।

पिछले कुछ वर्षों पूर्व पूज्या श्री १०५ विदुषी आर्यिका विशुद्धमती माताजी

ने अति परिश्रमपूर्वक श्रमण-चर्या नामक पुस्तक का सम्पादन किया । यह पुस्तक सबके हृदय को छू गयी । काफी शुद्ध प्रति होने के साथ-साथ साधु चर्या का पूर्ण विधिवत् वर्णन इसमें हमें प्राप्त हुआ ।

इन्हीं पिछले वर्षों में आचार्य संघ से 'विमल भक्ति संग्रह' का सम्पादन भी हुआ । इस प्रति को भी शुद्ध संस्करण का रूप देने का काफी सफल प्रयास किया गया ।

श्रमण चर्या और विमल भक्ति संग्रह दोनों लेकर गुरुदेव आचार्य श्री विमलसागरजी एक दिन विराजमान थे । आपने आचार्य भरतसागर जी से चर्चा की थी कि दोनों संस्करण काफी शुद्ध होने पर भी दोनों में कमी रह गई है । हमने पूछा था वह क्या ? गुरुदेव ने बताया-श्रमण-चर्या में साधु चर्या का विधिवत् वर्णन है पर जिन स्तवन, पाठ स्तोत्रादि के बिना सूनी लगती है तथा 'विमल भक्ति संग्रह' में प्रतिक्रमण स्तोत्रादि सब हैं पर साधु चर्या का विधिवत् वर्णन नहीं होने से वह भी सूनी ही मालूम होती है ।

आचार्यश्री का आदेश था कि एक नवीन संस्करण ऐसा निकाला जावे जिसमें एक ही पुस्तक के माध्यम से साधु अपनी पूरी अहोरात्रि की चर्या विधिवत् कर सके । गुरुदेव की चर्चा आचार्यश्री से थी । आचार्यश्री १०८ भरतसागरजी महाराज ने यह अतिभारारोपण मुझ पर कर दिया ।

गुरु आशीर्वाद कहिये या आदेश, मैंने अल्पबुद्धि से पालना की है । भव्यात्माओं की माँग को देखते हुये यह पंचम संस्करण आचार्य गुरुदेव श्री १०८ विमलसागर जी महाराज की षष्ठम पुण्यतिथि के अवसर पर प्रकाशित किया जा रहा है । इस संकलन में मेरा अपना कुछ परिश्रम नहीं मात्र पूज्यपाद गुरुवर्य्यों के आशीर्वाद से इस कार्य को पूरा करने का प्रयास किया है । फिर भी अल्पज्ञतावश अशुद्धियाँ रह जाना स्वाभाविक है । विज्ञजन अशुद्धि को सुधारकर हमे इंगित करने का सफल प्रयास करें ।

इस षष्ठम संस्करण के लिए जिन महानुभावों का आर्थिक सहयोग मिला है उन महानुभावों को पूर्ण आशीर्वाद है ।

अनगार चर्या

[आर्यिकाश्री स्याद्वादमती माताजी]

आचार्यश्री कुन्दकुन्ददेव प्रवचनसार के चारित्राधिकार में लिखते हैं कि 'हे भव्यात्मा ! संसार के दुःखों से छुटकारा पाना चाहते हो तो निर्ग्रन्थ अवस्था को प्राप्त करो-

पडिवज्जदु सामण्णं जदि इच्छदि दुक्खपरिमोक्खं ।।२०१।।

-प्रवचनसार

संसार दुःखों से संत्रस्त भव्यात्माओं के लिये आचार्यश्री की अमृतमयी देशना मननीय, चिन्तनीय व अनुकरणीय है ।

आचार्यश्री ने धर्म की परिभाषा करते हुए लिखा कि "चारित्तं खलु धम्मो" आपने चारित्र को ही धर्म बताया ।

चारित्तं खलु धम्मो, धम्मो जो सो समोत्ति णिद्दिट्ठो ।
मोहक्खोहविहीणो परिणामो अप्पणो हि समो ।।७।।

-प्रवचनसार

धर्म का अर्थ समोत्ति णिद्धिट्ठो साम्य परिणाम किया तथा समतारूप परिणाम किसे कहें तो-मोह और क्षोभ से रहित आत्म परिणाम को साम्य भाव कहा । तात्पर्य यह है कि राग-द्वेष-मोह रहित आत्मा की जो परिणति है वही धर्म है और ऐसे वीतराग धर्म की प्राप्ति होना ही सच्चा चारित्र है । वह चारित्र पाँच महाव्रत, पाँछ समिति, पंचेन्द्रिय विजय और छह आवश्यक तथा शेष सात गुण आदि रूप व्यवहार चारित्र परमार्थ चारित्र की प्राप्ति होने में साधक होने से चारित्र कहलाता है ।

"सम्यक्-यताः पापक्रियाभ्यो निवृत्ताः संयता" जो हिंसादि पाप क्रियाओं से सदा के लिए निवृत्त हो चुके हैं उन्हें संयत, साधु अथवा श्रमण कहते हैं । अच्छे साधु भगवान हैं-

भिक्कं वक्कं हिययं सोधिय जो चरदि णिच्च सो साहू ।
एसो सुट्ठिद साहू भणिओ जिणसासणे भयवं ।।

-मूलाचार

जो आहारशुद्धि, वचनशुद्धि और मन की शुद्धि रखते हुए सदा ही चारित्र का पालन करता है, जैनशासन में ऐसे साधु की भगवान् संज्ञा है अर्थात् ऐसे महामुनि चलते-फिरते भगवान ही हैं।

दिगम्बर साधु रत्नत्रय की सिद्धि हेतु यम-नियमों के माध्यम से २८ मूलगुणों का (पाँच महाव्रत, पाँच समिति, पंचेन्द्रिय विजय, छह आवश्यक क्रिया, लोच, आचेलक्य, अस्नान, भूमिशयन, अदन्त धावन, खड़े-खड़े आहार और दिन में एक बार भोजन) पालन करते हैं। श्री कुन्दकुन्दाचार्य कहते हैं– मूलगुणों के द्वारा आत्मा का शुद्ध स्वरूप साध्य है।

पाँच महाव्रत–अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और परिग्रह त्याग की अपेक्षा से महाव्रत के ५ भेद कहे हैं।

अहिंसा–"प्रमत्तयोगाद्दश प्राणानां वियोगकरणं हिंसेति"-प्रमत्तयोग से युक्त हो प्राणियों के दश प्राणों का वियोग करना हिंसा है। उस हिंसा का परिहार कर प्राणी-मात्र पर दया भाव का होना अहिंसा महाव्रत है। भगवान जिनेन्द्र ने इस अहिंसा को समस्त व्रतों की माता बतलाई है। जिस प्रकार सूत की गाँठ से बनने वाले हार सूत के ही आधार से ठहर सकते हैं उसी प्रकार मुनियों के समस्त सद्‌गुण जीवों की कृपा के आधार से ही ठहरते हैं।

सत्य–प्रमादवश राग-द्वेष, पैशून्य, कलह, ईर्ष्या, मात्सर्य आदि रूप वचनों का नहीं कहना सत्य महाव्रत है। जिन वचनों से लोगों को वैराग्य में स्थिरता हो, सज्जनों के गुण वृद्धि की प्राप्ति हो, राग-द्वेष नष्ट हो जांय तथा जो वचन मिष्ट व धर्म या तत्त्वों का उपदेश देने वाले हों ऐसे ही शुभ वचन श्रमणों को बोलने चाहिए। छहढालाकार लिखते हैं–

जग सुहित कर सब अहित हर श्रुति सुखद सब संशय हरैं।
भ्रम रोग हर जिनके वचन मुख चन्द्रतैं अमृत झरैं।।

अस्तेय–प्रमत्तयोगात् अदत्तादान परिवर्जनं अस्तेय महाव्रतं-प्रमादवशात् गिरी हुई, भूली हुई, रक्खी हुई किसी भी वस्तु, पुस्तक, उपकरण अथवा शिष्यादि परद्रव्यों को बिना दिये ग्रहण नहीं करना अचौर्य महाव्रत है।

ब्रह्मचर्य–मनुष्यिनी, तिर्यञ्चिनी, देवाङ्गना, काष्ठ, चित्र आदि में स्त्रीजन्य राग परिणामों का त्याग करना ब्रह्मचर्य महाव्रत है।

अपरिग्रह–बाह्य और आभ्यन्तर परिग्रह का त्याग करना अर्थात् श्रमण के अयोग्य सर्ववस्तु का त्याग करना तथा संयम, ज्ञान व शौच के साधनभूत पीछी, कमण्डलु, शास्त्र आदि में भी मूर्च्छा (ममत्व) नहीं रखना परिग्रहत्याग

महाव्रत है ।

पाप क्रियाओं से निवृत्त होने के लिये महान् पुरुषों ने इनका आचरण किया अथवा ये स्वतः ही महान् व्रत हैं इसलिए ये महाव्रत कहलाते हैं ।

पाँच समिति–शिष्य ने आचार्य देव से प्रश्न किया-प्रभो ! सम्पूर्ण लोक जीवों से भरा है यहाँ–

कधं चरे, कधं चिट्ठे कधं मासे, कधं सए ।
कधं भुंजीज्ज भासेज्ज जदो पावं ण बंधई ।।
जदं चरे जदं चिट्ठे जदं मासे जदंसये ।
जदं भुंजीज्ज भासेज्ज एवं पावं ण बंधई ।।

कैसे चलें, कैसे बैठें, कैसे सोएँ, बैठे, खाएँ ? जिससे पाप बन्ध न हो । यत्नाचारपूर्वक सब करो । वसुनन्दी आचार्य ने टीका में स्पष्टीकरण किया कि–

एवं यत्नेन तिष्ठता यत्नेनासीनेन शयनेन यत्नेन भुंजानेन यत्नेन भाषमाणेन नवं कर्म न बध्यते चिरन्तनं च क्षीयते ततः सर्वथा यत्नाचारेण भवितव्यमिति ।

यत्नपूर्वक खड़े होओ, यत्नपूर्वक बैठो, यत्नपूर्वक खाओ, यत्नपूर्वक बोलो जिससे नवीन कर्म का बन्धन न हो और चिरकाल से बँधे कर्म क्षय को प्राप्त हो इसलिये सर्वथा हे साधो ! यत्नाचार से प्रवृत्ति करना चाहिये ।

महाव्रत निवृत्ति रूप हैं तथा समिति प्रवृत्ति रूप हैं–

"सम्यक् प्रवृत्ति को समिति" कहते हैं ।

ईर्या, भाषा, एषणा, निक्षेपादान तथा मलमूत्रादि का प्रतिष्ठापन सम्यक् परित्याग ये पाँच समितियाँ जिनेन्द्रदेव ने कही हैं ।

ईर्या समिति–धार्मिक प्रयोजन के निमित्त चार हाथ आगे जमीन देखकर दिवस में प्रासुक मार्ग से जीवों का परिहार करते हुए गमन करना साधु की ईर्यासमिति है ।

भाषा–चुगली, हँसी, कठोरता, पर निन्दा, अपनी प्रशंसा और विकथा आदि को त्याग कर स्व-पर हितार्थ मित बोलना भाषा समिति है ।

एषणा–छ्यालिस दोषों से रहित शुद्ध, कारण से सहित, मन-वचन-काय व कृत-कारित-अनुमोदना (३ x ३ नवकोटि) विशुद्ध और शीत-उष्ण आदि में समान भाव से भोजन करना निर्दोष एषणा समिति है ।

आदाननिक्षेपण–ज्ञान के उपकरण शास्त्रादि, संयम का उपकरण पिच्छी,

शौच का उपकरण कमण्डलु अथवा अन्य भी उपकरणों को प्रयत्नपूर्वक ग्रहण करना व रखना आदाननिक्षेपण समिति है।

प्रतिष्ठापना–जहाँ पर असंयतजनोंका गमनागमन नहीं है ऐसे निर्जन एकान्त, जीव-जन्तु रहित, दूरस्थित, मर्यादित, विस्तीर्ण और विरोध-रहित स्थान में मल मूत्रादि का त्याग करना प्रतिष्ठापना समिति है।

पञ्चेन्द्रिय निरोध–जीव या अजीव से उत्पन्न हुए, कर्कश-कोमल, शीत-उष्ण, स्निग्ध-रूक्ष, हल्का-भारी आदि भेदों से युक्त, सुख अथवा दुःख में निमित्तभूत स्पर्शेन्द्रिय के विषय में राग-द्वेष का त्याग स्पर्शेन्द्रिय निरोध है।

अशन-पान-खाद्य और स्वाद्य के भेद से भोज्य वस्तु के चार भेद हैं। रोटी-भात आदि अशन हैं दूध आदि पीने योग्य पदार्थ पान हैं, लड्डू आदि खाद्य हैं और इलायची आदि स्वाद्य हैं, इस प्रकार प्रासुक निर्दोष आहार के मिलने पर गृद्धता नहीं होना जिह्वेन्द्रिय जय व्रत कहलाता है।

सुगंधित कस्तूरी, अगरु, कपूर आदि व दुर्गन्धित पदार्थों में राग-द्वेष नहीं करना मुनिवरों का घ्राणेन्द्रिय निरोधव्रत है।

सचेतन और अचेतन पदार्थों के क्रिया आकार और वर्ण के भेदों में मुनि के राग-द्वेष का नहीं करना चक्षु निरोध व्रत है।

षड्ज, ऋषभ, गान्धार, मध्यम, पंचम, धैवत और निषाद आदि शब्द व वीणा आदि अजीव से उत्पन्न हुए शब्दों में राग-द्वेष का त्याग करना कर्णेन्द्रिय निरोध व्रत है।

छः आवश्यक–अवश्य करने योग्य क्रिया को आवश्यक कहते हैं अथवा जो वश में नहीं है (इन्द्रियों के आधीन नहीं है) वह अवश है अवश के कार्य आवश्यक हैं। ६ आवश्यक-सामायिक, वन्दना, स्तव, प्रतिक्रमण, प्रत्याख्यान तथा व्युत्सर्ग हैं।

समभाव को समता कहते हैं अथवा त्रिकाल में पंचनमस्कार मंत्र का जप करना सामायिक है अथवा जीवन-मरण लाभ-अलाभ में, संयोग-वियोग, शत्रु-मित्र में समभाव सामायिक व्रत है।

चतुर्विंशति तीर्थंकरों की स्तुति स्तव है।
एक तीर्थंकर से संबंधित वन्दना है।।

अपने द्वारा किये हुए अशुभ योग से छूटना प्रतिक्रमण है। प्रतिक्रमण में सात प्रसंग से किये गये अपराधों का शोधन किया जाता है। अयोग्य द्रव्य का

त्याग करना प्रत्याख्यान है अथवा तपश्चरण के लिये योग्य द्रव्य का परिहार करना भी प्रत्याख्यान है ।

शरीर से ममत्व का त्याग करना और जिनेन्द्रदेव के गुणों का चिन्तन करना कायोत्सर्ग है ।

लोच मूलगुण–उत्कृष्टतः दो माह, मध्यम तीन माह और जघन्य चार माह में उपवास पूर्वक दिन में हाथों से मस्तक दाढ़ी व मूँछ के बाल उखाड़ना लोच नामक मूलगुण है ।

तुर्य्यामासान्तरे लोचः कर्तव्यो मुनिभिः सदा ।
रोग-क्लेशादि कोटिभिः पंचमेमासि जातु न ।।२३५।।

–मू० प्र० अ० ४

करोड़ों रोग व क्लेश होने पर भी पाँचवें महीने में लोच नहीं करना चाहिये ।

आचेलक्य–ऊन, कपास, रेशम आदि के वस्त्र, चर्मज-हरिण आदि की चर्म, वल्कज-वृक्ष आदि की छाल, शुष्क पत्ते और तृण आदि से शरीर को न ढकना और आभूषणों से शरीर को अलंकृत नहीं करना आचेलक्य (नग्नता) नाम का मूलगुण है ।

अस्नान व्रत–जल्ल-जिस मल से सर्व अंग ढँक जाते हैं उस मल को जल्ल कहते हैं ।

मल्ल–जिससे शरीर का एकादि अंग वा भाग व्याप्त होता है उसे मल्ल कहते हैं ।

स्वेद–रोम छिद्रों में जो जल बाहर निकलता है उसे स्वेद कहते हैं इन जल्ल-मल्लादि से व्याप्त शरीर को स्वच्छ बनाने के लिए स्नान, उबटन, सुगंधित पदार्थ व नेत्रों में अंजन आदि लगाने का त्याग करना, अस्नान व्रत मूलगुण है ।

भूमि शयन–जिनके द्वारा बहुत संयम का विघात न हो ऐसे तृणमय, काष्ठमय, शिलामय और भूमिमय इन चार प्रकार के संस्तर में से किसी एक का संस्तर । अपने शरीर प्रमाण में अथवा अपने द्वारा बिछाये गये ऐसे संस्तरमय, एकान्त रूप प्रासुक भूमि-प्रदेश में दण्डरूप से, धनुषाकार से या एक पसवाड़े से जो मुनि का शयन करना है क्षितिशयन व्रत है ।

अदन्तधावन–अंगुली, नख, दांतोन और तृण विशेष के द्वारा पत्थर या छाल आदि के द्वारा दाँत के मल का शोधन नहीं करना यह संयम की रक्षारूप

अदन्तधावन व्रत है ।

स्थितिभोजन–दीवाल आदि का सहारा न लेकर जीव-जन्तु से रहित तीन स्थान की भूमि समान पैर रखकर खड़े होकर दोनों हाथ की अंजली बनाकर भोजन करना स्थितिभोजन नाम का व्रत है । साधु न लेटकर, न तिरछे स्थित होकर, न बैठकर आहार ले सकते हैं किन्तु दोनों पैरों में चार अंगुल अन्तर से खड़े होकर ही आहार लेते हैं ।

एकभुक्त–उदय और अस्त के काल में से तीन-तीन घड़ी से रहित मध्यकाल के एक दो अथवा तीन मुहूर्त काल में एक बार भोजन करना यह एक भुक्त मूलगुण है ।

उपर्युक्त अट्ठाईस मूलगुण साधु जीवन की आधार शिला हैं । जैसे मूल के बिना वृक्ष हरा-भरा नहीं रह सकता वैसे ही मूलगुणों की रक्षा के बिना साधु का रत्नत्रय वृक्ष कभी भी फलित नहीं हो सकता । सामान्यरूपेण मूलगुण यम रूप ही होते हैं अर्थात् जीवन पर्यन्त पाले जाते हैं; किन्तु इनमें भी महाव्रत, समिति व इन्द्रिय निरोध आदि तो यम रूप ही हैं और सामायिक-प्रतिक्रमण आदि नियम रूप हैं, अवधि लिये होते हैं ।

साधु को अपने मूलगुणों का विधिवत् उत्साहपूर्वक पालन करते हुए, रोग-उपसर्ग, मार्ग परिश्रम से थके होने पर भी अपनी सारी क्रियाएँ-सामाजिक, प्रतिक्रमण, स्तुति, वन्दना आदि छह आवश्यक क्रियाएँ कृति-कर्म पूर्वक ही करना चाहिये ।

ये मूलगुण और कृतिकर्म विधि जो मुनियों के लिए आचार्यों ने कही है वह सर्व चर्या ही अहोरात्रि यथायोग्य आर्यिकाओं को भी करने योग्य है । यथायोग्य यानी उन्हे वृक्षमूल, आतापन, योग तथा वीरचर्या आदि वर्जित किये हैं । उनके लिये शरीर पर एक साड़ी का तथा बैठकर करपात्र में आहार करने का आगम विधान है । आर्यिका भी उपचार से महाव्रती है ।

●

कृतिकर्म का लक्षण

[आर्यिका श्री स्याद्वादमती माताजी]

पापविनाशोपायः तत्कृतिकर्म–पापों के विनाशन का उपाय कृतिकर्म है अथवा जिन अक्षर समूह से वा जिन परिणामों से अथवा जिन क्रियाओं से अष्ट कर्म नाश किये जाते हैं उसे कृतिकर्म कहते हैं अर्थात् आवर्त व शिरोनति पूर्वक जो स्तुति, वन्दना आदि किया जाता है वह कृतिकर्म कहलाता है अथवा जिस क्रिया को करता हुआ साधु कृतकृत्य अवस्था को प्राप्त होता है उसे कृतिकर्म कहते हैं।

साधुओं को अहोरात्रि में किये जाने वाले कृतिकर्म–

चत्तारि पडिक्कमणे, किदियम्मा तिण्णि होंति सज्झाए।

पुव्वण्हे अवरण्हे किदियम्मा चोद्दसा होंति ॥६०२॥

–मूलाचार

चार प्रतिक्रमण में, तीन स्वाध्याय में इस प्रकार सात कृतिकर्म हुए ऐसे पूर्वाह्न और अपराह्न के चौदह कृतिकर्म होते हैं।

मूलाचार में श्री वसुनन्दि आचार्य ने कृतिकर्म को स्पष्ट किया है–"पिछली रात्रि के प्रतिक्रमण में चार कृतिकर्म, स्वाध्याय के तीन और देव वन्दना में दो सूर्योदय के बाद, स्वाध्याय के तीन, मध्याह्न देववन्दना के दो इस प्रकार पूर्वाह्न सम्बन्धी कृतिकर्म चौदह हो जाते हैं। पुनः अपराह्न बेला में स्वाध्याय के तीन, प्रतिक्रमण के चार, देववन्दना के दो रात्रि योग ग्रहण सम्बन्धी योग भक्ति का एक और प्रातः-रात्रि योग निष्ठापन सम्बन्धी एक ऐसे दो और पूर्व रात्रिक स्वाध्याय के तीन, ये अपराह्न के चौदह कृतिकर्म हो जाते हैं। पूर्वाह्न के समीप काल को पूर्वाह्न और अपराह्न के समीप काल को अपराह्न शब्द से लिया जाता है।

२८ कृतिकर्मों का स्पष्टीकरण–साधु पिछली रात्रि में उठकर सर्वप्रथम "अपररात्रिक" स्वाध्याय करते हैं। उसमें स्वाध्याय प्रतिष्ठापन क्रिया में लघु श्रुतभक्ति और लघु आचार्यभक्ति होती है। पुनः स्वाध्याय निष्ठापन क्रिया में मात्र लघु श्रुतभक्ति की जाती है। इसलिये इन तीन भक्ति सम्बन्धी तीन कृतिकर्म होते हैं। पुनः "रात्रिक प्रतिक्रमण" में चार कृतिकर्म हैं। इसमें

सिद्धभक्ति, प्रतिक्रमण, वीर भक्ति और चतुर्विंशति तीर्थंकर भक्ति सम्बन्धी चार कृतिकर्म हैं। पुनः रात्रि योग निष्ठापना हेतु योगिभक्ति का एक कृतिकर्म होता है। अनन्तर "पौर्वाह्निक देववन्दना" में चैत्यभक्ति, पंचगुरु भक्ति के दो कृतिकर्म होते हैं। इसके बाद पूर्वाण्ह के स्वाध्याय में तीन कृतिकर्म, मध्याह्न की देववन्दना में दो, पुनः अपराह्न के स्वाध्यायार्थ में तीन और दैवसिक प्रतिक्रमण में चार, रात्रि योग प्रतिष्ठापना में योगिभक्ति का एक अनन्तर आपराह्निक देववन्दना के दो, और पूर्व रात्रिक स्वाध्याय के तीन कृतिकर्म होते हैं। सब मिलाकर एक स्वाध्याय के ३ तो ४ बार स्वाध्याय के १२, एक देववन्दना के २ तो ३ बार, देववन्दना के ६, एक प्रतिक्रमण के ४ तो २ बार प्रतिक्रमण के ८, और दो बार योगभक्ति के २ = २८ कायोत्सर्ग कृतिकर्म के हो जाते हैं। साधु को ये २८ कायोत्सर्ग अहोरात्रि में अवश्य करने चाहिये।

यहाँ जो मुनियों का कृतिकर्म है वही आर्यिकाओं के लिये भी अनुकरणीय है।

षडावश्यक, २८ कृतिकर्म, अभिषेक, वन्दना, आहारविधि, दीर्घशंका आदि अहोरात्रि की समस्त क्रियाएँ किस विधि से करनी चाहिये ? इसका विवेचन निम्न प्रकार समझें-

साधुगण अहोरात्रि में किये गये ध्यान-अध्ययन, तपश्चरण आदि से उत्पन्न शारीरिक खेद को दूर करने के लिये अल्प निद्रा लेते हैं। साधु की निद्रा का काल अधिक से अधिक चार घड़ी अर्थात् अर्द्धरात्रि (१२ बजे) के दो घड़ी (४८ मिनट) पहले से अर्द्धरात्रि के दो घड़ी (४८ मिनिट) बाद तक माना गया है। इस प्रकार साधु को अर्द्धरात्रि के दो घड़ी बाद निद्रा का त्याग कर १०८ बार अथवा ९ बार णमोकार मंत्र का जाप्य कर पंचपरमेष्ठियों को नमस्कार करना चाहिये। पश्चात् प्रासुक एवं निर्जन्तु भूमि का निर्णय कर लघु शंकादि से निवृत्त हो, यथायोग्य शुद्धि कर कायोत्सर्ग करना चाहिये। इसके बाद योग्य स्थान पर बैठकर उपरि लिखित विधि अनुसार अपर रात्रि स्वाध्याय की प्रतिष्ठापना (प्रारम्भ) कर स्वाध्याय प्रारम्भ कर देना चाहिये। किन्तु यदि प्रकाश न हो तो ध्यान चिन्तन करना चाहिये।

●

विषयानुक्रमणिका

विषय	*पृष्ठ*
प्रथम खण्ड	
स्वाध्याय विधि	१
रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण	६
रात्रि योग निष्ठापन विधि	३४
सामायिक विधि	३९
जयति भगवान स्तोत्र	४५
दश पद स्तोत्रम्	४५
जिन प्रतिमा स्तवनम	४६
विश्व चैत्य चैत्यालय कीर्तन	४८
अर्हन् महानद स्तवन	४८
जिनरूप स्तवन	५०
द्वात्रिंशतिका सामयिक पाठ	५५
समाधि भक्ति	६१
आचार्य वन्दना विधि	६२
लघु आचार्य भक्ति	६२
देव दर्शन प्रयोग विधि	६६
चैत्यालयाष्टक स्तोत्र	६६
दर्शन पाठ	६८
अर्हद् भक्ति	७०
अभिषेक वन्दना क्रिया	७५
शौच क्रिया	७५
पौर्वाह्णिक स्वाध्याय विधि	७७
आहार चर्या	७७
लघु सिद्ध भक्ति	७८
लघु योगि भक्ति	७९
उपवास ग्रहण त्याग विधि	८१

विषय *पृष्ठ*

द्वितीय खण्ड

पंच नमस्कार मन्त्र	८६
श्री भूत, वर्तमान, भविष्यत् विदेह क्षेत्रस्थ तीर्थकराः	८७
श्री नवदेवता स्तोत्रम् मंगलाष्टकम्	८९
संघ सामूहिक पाठ-सुप्रभातस्तोत्रम्	९२
महावीराष्टक स्तोत्रम्	९४
भक्तामर स्तोत्रम्	९६
सरस्वती स्तोत्रम्	१०८
सरस्वती नाम स्तोत्रम्	११०
मंगलाष्टकम्	१११
कल्याणमंदिर स्तोत्रम्	११३
एकीभाव स्तोत्रम्	१२२
विषापहार स्तोत्रम्	१२७
जिन चतुर्विंशतिका	१३५
अकलंक स्तोत्रम्	१४१
अद्याष्टक स्तोत्रम्	१४४
स्वयम्भू स्तोत्रम्	१४५
श्रीजिन सहस्रनाम स्तोत्रम्	१७२
तत्त्वार्थसूत्रम्	१९०
निर्वाणकाण्ड	२०६
वीतराग स्तोत्र	२०९
परमानन्द स्तोत्र	२११
परमात्मस्वरूप	२१३
कल्याणालोचना	२१४

तृतीय खण्ड

ईर्यापथ भक्ति	२२०
सिद्ध भक्ति	२२७
चैत्य भक्ति	२३१
श्रुत भक्ति	२३८

विषय	पृष्ठ
चारित्र भक्ति	२४२
योगि भक्ति	२४५
आचार्य भक्ति	२४७
पंच गुरु भक्ति	२५१
शांति भक्ति	२५३
समाधि भक्ति	२५८
निर्वाण भक्ति	२६०
नन्दीश्वर भक्ति	२६६

चतुर्थ खण्ड

अष्टमी पर्व क्रिया विधि	२८२
चतुर्दशी पर्व क्रिया विधि	२९१
पाक्षिकी क्रिया विधि	२९२
सिद्ध प्रतिमा दर्शन क्रिया	२९४
पूर्व जिनचैत्य वन्दना क्रिया विधि	२९४
अपूर्व चैत्य वन्दना क्रिया विधि	२९५
अनेक अपूर्व चैत्य वन्दना क्रिया विधि	२९६
श्रुतपंचमी क्रिया विधि	२९६
अष्टाह्निक-पर्व क्रिया विधि	२९८
मंगल गोचर मध्याह्न वन्दना क्रिया विधि	२९९
मंगल गोचर भक्त प्रत्याख्यान क्रिया विधि	३००
वर्षायोग धारण-समापन क्रिया विधि	३०२
वीर निर्वाण क्रिया विधि	३१४
लोच करण क्रिया विधि	३१५
कौन-कौन सी भक्ति कहाँ करनी चाहिए (विवरण)	३१८

पंचम खण्ड

पाक्षिकादि प्रतिक्रमणम्	३२४
बृहद् आलोचना	३३५
प्रायश्चित्त याचना विधि	४१५

विषय	*पृष्ठ*
सर्व दोष प्रायश्चित्त विधि	४१६
श्रावक प्रतिक्रमणम्	४१९
सामायिक दण्डक	४२०
निर्ग्रन्थ पद की बांछा	४३३
षष्ठम खण्ड	
दीक्षा नक्षत्राणि	४४१
दीक्षा ग्रहण क्रिया	४४२
लोच क्रिया	४४३
बृहद् दीक्षा विधि	४४३
क्षुल्लक दीक्षा विधि	४४९
लघु दीक्षा विधि	४४९
उपाध्याय (पददान) विधि	४५१
आचार्य पद स्थापन विधि	४५२
रत्नकरण्ड–श्रावकाचार	**४५३**
द्रव्यसंग्रह	**४७८**
इष्टोपदेश	**४८८**
समाधितन्त्र	**४९२**

विमल भक्ति संग्रह

प्रथम खण्ड

विमल भक्ति संग्रह

स्वाध्याय विधि

विज्ञापन

अथ अपर-रात्रि स्वाध्याय प्रतिष्ठापन-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री श्रुतभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

ऐसी प्रतिज्ञा करके भूमि स्पर्श करते हुए नमस्कार करे, पश्चात् तीन आवर्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढ़ें–

सामायिक स्तव

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।।

चत्तारि मंगलं-अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतय-डाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसगाणं, धम्म-णायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहिदेवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं सदा करेमि किरियम्मं ।

करेमि भंते ! सामायियं सव्व-सावज्ज-जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवं (यावत्-कालं, जावन्नियमं) तिविहेण-मणसा वचसा काएण, ण करेमि, ण कारेमि, ण अण्णं करंतं पि समणुमणामि । तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं पज्जुवासं करेमि तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

(यहाँ तीन आवर्त एक शिरोनति करके २७ उच्छ्वासपूर्वक कायोत्सर्ग करें । पश्चात् भूमि नमस्कार करके पुनः तीन आवर्त और एक शिरोनति करें, पश्चात् निम्नलिखित चतुर्विंशतिस्तव पढ़ें ।)

चतुर्विंशति स्तव

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे ।
णर-पवर लोय-महिए विहुय-रय मले महप्पण्णे ।।१।।
लोयस्सुज्जोययरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से चौवीसं चेव केवलिणो ।।२।।
उसह-मजियं च वंदे संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे ।।३।।

सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ।।४।।
कुंथुं च जिणवरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदामिरिट्ठणेमिं तह पासं वड्ढमाणं च ।।५।।
एवं मए अभित्थुआ विहुय-रय-मला पहीण जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।।६।।
कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।७।।
चंदेहिं णिम्मल-यरा; आइच्चेहिं अहिय पया-संता ।
सायर-मिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।८।।

(इसके पश्चात् तीन आवर्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित श्रुत-भक्ति पढ़े ।)

लघु श्रुतभक्ति

कोटी-शतं द्वादश चैव कोट्यो ।
लक्षाण्य-शीतिस् त्र्यधिकानि चैव ।।
पंचाश-दष्टौ च सहस्र-संख्या-
मेतच्छ्रुतं पंच पदं नमामि ।।१।।
अरहंत-भासि-यत्थं गणहर-देवेहिं गंथियं सम्मम् ।
पणमामि भत्ति जुत्तो सुद-णाण-महोवहिं सिरसा ।।२।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! सुदभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्स आलोचेउं अंगो वंगपइण्णए पाहुडय परियम्मसुत्त-पढमाणि ओग पुव्व-गय-चूलिया चेव सुत्तत्थयथुइ-धम्म-कहाइयं

णिच्च-कालं अंचेमि पूजेमि वन्दामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहि-मरणं जिणगुण सम्पत्ति होउमज्झं ।

विज्ञापन

अथ अपर रात्रि स्वाध्याय प्रतिष्ठापन क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं भाव पूजा-वंदना-स्तव-समेतं श्री आचार्य भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(ऐसी प्रतिज्ञा करके नमस्कार करे, पश्चात् तीन आवर्त और एक शिरोनति करके सामायिक दण्डक (णमो अरहंताणं से पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि पर्यन्त) पढ़े । पश्चात् तीन आवर्त एक शिरोनति कर २७ उच्छ्वास पूर्वक कायोत्सर्ग करे, पश्चात् नमस्कार करके तीन आवर्त और एक शिरोनति करे, इसके बाद चतुर्विंशति स्तव थोस्सामि हं जिणवरे से मम दिसंतु पर्यन्त) पढ़े । इसके पश्चात् पुनः तीन आवर्त और शिरोनति करे, बाद में निम्नलिखित आचार्य भक्ति पढ़ें।)

लघु आचार्यभक्ति

श्रुत-जलधि-पार-गेभ्यः स्व-पर-मत विभावना पटु मतिभ्यः ।
सु-चरित-तपो-निधिभ्यो नमो गुरुभ्यो गुण-गुरुभ्यः ।।१।।
छत्तीस-गुण-समग्गे पञ्च-विहाचार-करण-संदरिसे ।
सिस्सा-णुग्गह-कुसले धम्मा-इरिये सदा वन्दे ।।२।।
गुरु-भत्ति संजमेण य तरन्ति संसार-सायरं घोरम् ।
छिण्णंति अट्ठ-कम्मं जम्मण-मरणं ण पावन्ति ।।३।।
ये नित्यं व्रत-मन्त्र-होम-निरता ध्यानाग्नि-होत्रा-कुलाः ।
षट्-कर्माभि-रतास्तपो-धन-धनाः साधु-क्रिया-साधवः ।
शील-प्रावरणागुण-प्रहरणा-श्चन्द्रार्क-तेजोऽधिकाः ।
मोक्ष-द्वार-कपाट-पाटन-भटाः प्रीणंतु मां साधवः ।।४।।

गुरवः पान्तु वो नित्यं ज्ञान-दर्शन-नायकाः।
चारित्रार्णव-गम्भीरा मोक्ष-मार्गोपदेशकाः ।।५।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! आइरिय-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्म चारित्तजुत्ताणं पंच-विहाचाराणं आइरियाणं, आयारादिसुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं, ति-रयण-गुण-पालण-रयाणं सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अंचेमि, पूजेमि, वन्दामि णमस्सामि दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं समाहि-मरणं जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं ।

।। इति स्वाध्याय प्रतिष्ठापन (प्रारम्भ) विधि समाप्त ।।

(इस प्रकार उपर्युक्त विधि सम्पन्न कर स्वाध्याय प्रारम्भ करे और जब सूर्योदय होने में दो घड़ी अवशेष बचे तब निम्नलिखित क्रियापूर्वक स्वाध्याय समाप्त कर देवे) ।

विज्ञापन

अथ अपर रात्रि स्वाध्याय निष्ठापन (समाप्ति) क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं भाव पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री श्रुतभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(इस प्रकार प्रतिज्ञा कर नमस्कार करे, फिर तीन आवर्त और एक शिरोनति करके सामायिक दण्डक पढ़े । पश्चात् तीन आवर्त और एक शिरोनति कर २७ उच्छ्वास पूर्वक कायोत्सर्ग करे, पश्चात् भूमि स्पर्श करते हुए नमस्कार करे, इसके बाद चतुर्विंशति स्तव पढ़कर अन्त में फिर तीन आवर्त और एक शिरोनति करे । पश्चात् "अर्हद्वक्त्र-प्रसूतं से जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं" पर्यंत लघु श्रुत भक्ति बोलकर शास्त्रजी को नमस्कार कर विधिपूर्वक स्थान आदि का समार्जन करते हुए शास्त्रजी को योग्य स्थान पर विराजमान कर देवे ।

।। इति स्वाध्याय निष्ठापन विधि समाप्त ।।

स्वाध्याय समाप्त करने के बाद साधु गण-रात्रि में प्रमाद वश लगे हुए दोषों का परिमार्जन करने के लिये रात्रिक प्रतिक्रमण करें।

रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण

प्रतिज्ञा सूत्र

जीवे प्रमाद-जनिताः प्रचुराः प्रदोषाः,
यस्मात् प्रतिक्रमणतः प्रलयं प्रयान्ति ।
तस्मात्-तदर्थ-ममलं मुनि-बोधनार्थं,
वक्ष्ये विचित्र-भव-कर्म-विशोधनार्थम् ।।१।।

उद्देश्य सूत्र

पापिष्ठेन दुरात्मना जड़धिया मायाविना-लोभिना,
रागद्वेष-मलीमसेन मनसा दुष्कर्म यन्-निर्मितम् ।
त्रैलोक्याधिपते जिनेन्द्र ! भवतः श्री-पाद-मूलेऽधुना,
निन्दा-पूर्वमहं जहामि सततं वर्वर्तिषुः सत्पथे ।।२।।

संकल्प सूत्र

खम्मामि सव्व-जीवाणं सव्वे जीवा खमंतु मे ।
मित्ती मे सव्व-भूदेसु वैरं मज्झं ण केण वि ।।३।।

राग परित्याग सूत्र

राग-बन्ध-पदोसं च हरिसं दीण-भावयं ।
उस्सुगत्तं भयं सोगं रदि-मरदिं च वोस्सरे ।।४।।

पश्चात्ताप सूत्र

हा ! दुट्ठ-कयं हा ! दुट्ठ-चिंतियं भासियं च हा !
दुट्ठं अंतो-अतो डज्झमि पच्छत्तावेण वेदंतो ।।५।।

दव्वे खेत्ते काले भावे च कदावराह-सोहणयं ।
णिंदण-गरहण-जुत्तो मण-वच-कायेण पडिक्कमणं ।।६।।

ए-इंदिया, बे-इंदिया, ते-इंदिया, चतुरिंदिया, पंचिंदिया, पुढवि-काइया-आउ-काइया, तेउ-काइया, वाउ-काइया, वणप्फदि-काइया, तस-काइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वद-समि-दिंदिय रोधो, लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेयभत्तं च ।।१।।
एदे खलु मूल-गुणा, समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तोऽहं ।।२।।

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं

पंचमहाव्रत - पंचसमिति - पंचेन्द्रिय - रोध - लोचादि षडावश्यक - क्रिया अष्टाविंशति - मूलगुणाः, उत्तम - क्षमा-मार्दवार्जव - शौच - सत्य - संयम - तपस् - त्यागाकिंचन्य - ब्रह्मचर्याणि, दश-लाक्षणिको धर्मः, अष्टादश-शील-सहस्त्राणि, चतुरशीति-लक्षगुणाः, त्रयोदश-विधं चारित्रं, द्वादश-विधं तपश्चेति सकलं सम्पूर्ण अर्हत्-सिद्धा-चार्योपाध्याय-सर्व-साधु-साक्षिकं, सम्यक्त्व-पूर्वकं, दृढ़-व्रतं सुव्रतं समारूढं ते मे भवतु ।

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां, कृत-दोष निराकरणार्थं पूर्वाचार्या-

नुक्रमेण, सकल कर्म क्षयार्थं भाव पूजा-वंदना-स्तवसमेतं आलोचना सिद्धभक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम् ।

(यहाँ नमस्कार कर तीन आवर्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढ़ें ।)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।।

चत्तारि मंगलं-अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा केवलि-पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतय-डाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसगाणं, धम्म-णायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं, सदा करेमि, किरियम्मं । करेमि भंते ! सामायियं सव्व-सावज्ज जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवं (जावन्नियमं) तिविहेण मणसा-वचसा, काएण, ण करेमि, ण कारेमि, ण अण्णं करंतं पि समणुमणामि । तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि,

णिंदामि, गरहामि अप्पाणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

(यहाँ तीन आवर्त एक शिरोनति करके २७ उच्छ्वास पूर्वक कायोत्सर्ग करें । पश्चात् नमस्कार कर तीन आवर्त और एक शिरोनति कर चतुर्विंशति स्तव पढ़ें ।)

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे ।
णर-पवर-लोए महिए विहुय-रय-मले महप्पण्णे ।।१।।

लोयस्सुज्जोययरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से चौबीसं चेव केवलिणो ।।२।।

उसह मजियं च वन्दे संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे ।।३।।

सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंत भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ।।४।।

कुंथुं च जिण वरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वदामिरिट्ठ-णेमिं तह पासं वड्ढमाणं च ।।५।।

एवं मए अभित्थुआ विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।।६।।

कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।७।।

चंदेहिं णिम्मल-यरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायर-मिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।८।।

(यहाँ तीन आवर्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित मुख्य मंगल पढ़ें।)

मुख्य मंगल

श्रीमते वर्धमानाय नमो नमित-विद्-विषे ।
यज्ज्ञानान्तर्गतं भूत्वा त्रैलोक्यं गोष्पदायते ।।१।।

सिद्ध-भक्ति

तव-सिद्धे णय-सिद्धे संजम सिद्धे चरित्त-सिद्धे य ।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमंसामि ।।२।।

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण सम्मदंसण-सम्मचारित्तजुत्ताणं, अट्ठविह-कम्म-विप्प-मुक्काणं, अट्ठगुणसंपण्णाणं उड्ढलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तवसिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं अतीताणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं णिच्चकालं अंचेमि पूजेमि वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइ-गमणं समाहिमरणं जिन-गुण संपत्ति होउ मज्झं ।

आलोचना

इच्छामि भंते ! चरित्तायारो तेरस-विहो,परिविहा-विदो, पंच-महव्वदाणि, पंच-समिदीओ तिगुत्तीओ चेदि । तत्थ पढमे महव्वदे, पाणा-दिवादादो वेरमणं से पुढवि-काइया-जीवा - असंखेज्जासंखेज्जा, आउ - काइया - जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, तेउ-काइयाजीवा-असंखेज्जा-संखेज्जा, वाउ-काइया-जीवा-असंखेज्जासंखेज्जा, वणप्फदि-काइया-जीवा-अणंताणंता, हरिया, वीआ, अंकुरा, छिण्णा-भिण्णा

एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

बे-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, कुक्खि-किमि-संख-खुल्लय, वराडय, अक्ख-रिट्ठय-गण्डवाल-संबुक्क-सिप्पि, पुलवि-काइया एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

ते इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, कुन्थूद्देहिय-विंच्छिय-गोभिंद-गोजुव-मक्कुण-पिपीलियाइया एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

चउरिंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, दंसमसय-मक्खि-पयंग-कीड-भमर-महुयर, गोमच्छियाइया, एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पंचिंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुच्छिमा, उब्भेदिमा, उववादिमा, अवि-चउरासीदिजोणि-पमुह-सद-सहस्सेसु, एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

प्रतिक्रमण पीठिका-दण्डक

गद्य

इच्छामि भंते ! राइयम्मि (देवसियम्मि) आलोचेउं, पंच-महव्वदाणि तत्थ पढमं महव्वदं पाणादिवादादो वेरमणं, विदियं महव्वदं मुसावादादो वेरमणं तिदियं महव्वदं अदिण्णा दाणादो वेरमणं, चउत्थं महव्वदं मेहुणादो वेरमणं, पंचमं महव्वदं परिग्गहादो वेरमणं, छट्ठं अणुव्वदं राइ-भोयणादो वेरमणं । इरिया-समिदीए, भासा-समिदीए, एसणा-समिदीए, आदाण-निक्खेवण-समिदीए, उच्चार-पस्स-वण खेल-सिंहाण-वियडि-पइट्ठावणिया समिदीए। मणगुत्तीए, वचि-गुत्तीए, काय-गुत्तीए । णाणेसु, दंसणेसु, चरित्तेसु, बावीसाय-परीसहेसु, पणवीसाय-भावणासु, पणवीसाय-किरियासु, अट्ठारस-सील-सहस्सेसु, चउरासीदि-गुणसय-सहस्सेसु, बारसण्हं संजमाणं, बारसण्हं तवाणं, बारसण्हं अंगाणं, चोदसण्हं पुव्वाणं, दसण्हं मुंडाणं, दसण्हं समण-धम्माणं, दसण्हं धम्मज्झाणाणं, णवण्हं बंभचेर-गुत्तीणं, णवण्हं णोकसायाणं, सोलसण्हंकसायाणं, अट्ठण्हं कम्माणं, अट्ठण्हं पवयण-माउयाणं, अट्ठण्हं सुद्धीणं, सत्तण्हं भयाणं, सत्तविह संसाराणं, छण्हं जीव-णिकायाणं, छण्हं आवासयाणं, पंचण्हं इंदियाणं, पंचण्हं महव्वयाणं, पंचण्हं समिदीणं, पंचण्हं चरित्ताणं, चउण्हं सण्णाणं, चउण्हं पच्चयाणं, चउण्हं उवसग्गाणं, मूलगुणाणं, उत्तरगुणाणं,

दिट्ठियाए, पुट्ठियाए, पदोसियाए, परदावणियाए, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पिम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, एदेसिं अच्चासादणाए, तिण्हं दण्डाणं, तिण्हं लेस्साणं, तिण्हं गारवाणं, तिण्हं अप्पसत्थ-संकिलेस-परिणामाणं, दोण्हं अट्ट-रुद्द-संकिलेस-परिणामाणं, मिच्छा-णाण, मिच्छा-दंसण, मिच्छा-चरित्ताणं, मिच्छत्त-पाउग्गं, असंयम-पाउग्गं, कसाय-पाउग्गं, जोग-पाउग्गं, अपाउग्ग-सेवणदाए, पाउग्-गरहणदाए, इत्थ मे जो कोई राइओ (दैवसिओ) अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो । तस्स भंते ! पडिक्कमामि मए पडिक्कंतं तस्स मे सम्मत्त-मरणं, पंडिय-मरणं, वीरिय-मरणं, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहि-लाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिन-गुण-सम्पत्ति होउ मज्झं ।

वद-समि-दिंदिय रोधो, लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च ।।१।।
एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तोहं ।।२।।

छेदोवट्ठावणं होउ मज्झं

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां कृत-दोष-निराकरणार्थं पूर्वाचार्या-

नुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री प्रतिक्रमण-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(ऐसी प्रतिज्ञा करके भूमि स्पर्श करते हुए नमस्कार करे, पश्चात् तीन आवर्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढ़ें ।)

णमो अरहंताण णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।

चत्तारि मंगलं-अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं केवलि पण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहु सरणं पव्वज्जामि, केवलि पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्मणायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं सदा करेमि, किरियम्मं, करेमि भंते ! सामायियं सव्व-सावज्ज जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण मणसा वचसा काएण, ण करेमि, ण कारेमि ण अण्णं करंतं पि समणुमणामि। तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि

अप्पाणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ तीन आवर्त एक शिरोनति करके २७ उच्छ्वास पूर्वक कायोत्सर्ग करें । पश्चात् नमस्कार कर तीन आवर्त और एक शिरोनति करें, पश्चात् चतुर्विंशति स्तव पढ़ें ।)

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे ।
णर-पवर-लोए महिए विहुय-रय-मले महप्पण्णे ।।१।।

लोयस्सुज्जोययरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से चौबीसं चेव केवलिणो ।।२।।

उसह-मजियं च वन्दे संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे ।।३।।

सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ।।४।।

कुंथुं च जिण वरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदामिरिट्ठ-णेमिं तह पासं वड्ढमाणं च ।।५।।

एवं मए अभित्थुआ विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।।६।।

कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।७।।

चंदेहिं णिम्मल-यरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायर-मिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।८।।

(यहाँ तीन आवर्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित निषिद्धिका दण्डक पढ़े ।)

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।२।।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।३।।

णमो जिणाणं ! णमो जिणाणं ! णमो जिणाणं ! णमो णिस्सिहीए ! णमो णिस्सिहीए ! णमो णिस्सिहीए ! णमोत्थु दे ! णमोत्थु दे ! णमोत्थु दे ! अरहंत ! सिद्ध! बुद्ध ! णीरय ! णिम्मल ! सम-मण ! सुभमण ! सुसमत्थ! समजोग! सम-भाव ! सल्लघट्टाणं सल्लघत्ताण ! णिब्भय! णीराय ! णिद्दोस ! णिम्मोह ! णिम्मम ! णिस्संग, णिस्सल्ल! माण-माय-मोस-मूरण ! तवप्पहाणं ! गुण-रयण-सील-सायर ! अणंत ! अप्पमेय ! महदि-महावीर-वड्ढमाण ! बुद्धि-रिसिणो ! चेदि ! णमोत्थु ए ! णमोत्थु ए ! णमोत्थु ए !

मम मंगलं-अरहंता य, सिद्धा य, बुद्धा य, जिणा य, केवलिणो, ओहिणाणिणो, मणपज्जवणाणिणो, चउदस-पुव्व-गामिणो, सुद-समिदि-समिद्धा य, तवो य, बारह-विहो तवस्सी, गुणा य, गुणवंतो य, महरिसी, तित्थं,

तित्थंकरा य, पवयणं, पवयणी य, णाणं, णाणी य, दंसणं, दंसणी य, संजमो, संजदा य, विणओ, विणदा य, बंभचेरवासो, बंभचारी य, गुत्तीओ चेव, गुत्ति-मंतो य, मुत्तीओ चेव, मुत्तिमंतो य, समिदीओ चेव, समिदि-मंतो य, सुसमय-परसमय-विदु, खंति, खंतिवंतो य, खवगाय, खीण-मोहाय, खीणवंतो य, बोहिय-बुद्धा य, बुद्धिमंतो य, चेइय-रुक्खा-य, चेइयाणि ।

उड्ढ-मह-तिरिय-लोए, सिद्धायदणाणी-णमस्सामि, सिद्ध-णिसीहियाओ, अट्ठावय-पव्वये, सम्मेदे, उज्जंते, चंपाए, पावाए, मज्झिमाए, हत्थिवालियसहाय, जाओ अण्णाओ काओ वि-णिसीहियाओ, जीव-लोयम्मि, इसिपब्भार-तल-गयाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, कम्म-चक्क-मुक्काणं, णीरयाणं, णिम्मलाणं, गुरु-आइरिय-उवज्झायाणं, पव्व-तित्थेर-कुलयराणं, चउवण्णो य, समण-संघो य, दससु भरहेरावएसु, पंचसु महाविदेहेसु, जे लोए संति-साहवो-संजदा, तवसी एदे, मम मंगलं, पवित्तं, एदेहं मंगलं करेमि, भावदो विसुद्धो सिरसा अहि-वंदिऊण सिद्धे काऊण अंजलिं मत्थयम्मि, तिविहं तियरण सुद्धो ।

।। इति निषिद्धिका दण्डकाः ।।

अथ रात्रि-दिवस दोषालोचना

पडिक्कमामि भंते ! राइयस्स (देवसियस्स) अइचारस्स, अणाचारस्स, मण-दुच्चरियस्स, वचि-दुच्चरियस्स, काय

दुच्चरियस्स, णाणाइचारस्स, दंसणाइचारस्स, तवाइचारस्स, वीरियाइचारस्स, चारित्ताइचारस्स, पंचण्हं-महव्वयाणं, पंचण्हं-समिदीणं, तिण्हं-गुत्तीणं, छण्हं-आवासयाणं, छण्हं-जीवणिकायाणं, विराहणाए, पील-कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! अइगमणे, णिग्गमणे, ठाणे, गमणे, चंकमणे, उवत्तणे, आउट्टणे, पसारणे, आमासे, परिमासे, कुइदे, कक्कराइदे, चलिदे, णिसण्णे, सयणे, उव्वट्टणे, परियट्टणे, एइंदियाणं, बेइंदियाणं, तेइंदियाणं, चउरिंदियाणं, पंचिंदियाणं, जीवाणं, संघट्टणाए, संघादणाए, उद्दावणाए, परिदावणाए, विराहणाए, एत्थ मे जो कोई राइयो (देवसिओ) अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! इरियावहियाए, विराहणाए, उड्ढमुहं चरंतेण वा, अहोमुहं चरंतेण वा, तिरियमुहं चरंतेण वा, दिसिमुहं चरंतेण वा, विदिसिमुहं चरंतेण वा, पाणचंकमणदाए, वीयचंकमणदाए, हरिय चंकमणदाए, उत्तिंग-पणय-दय-मट्टिय-मक्कडय-तन्तु-संत्ताणु-चंकमणदाए, पुढवि-काइय-संघट्टणाए, आउ-काइय-संघट्टणाए, तेऊ-काइय-संघट्टणाए, वाउ काइय-संघट्टणाए, वणप्फदि-काइय-संघट्टणाए, तसकाइय-संघट्टणाए उद्दावणाए, परिदावणाए, विराहणाए,

इत्थ मे जो कोई इरियावहियाए, अइचारो, अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाण-वियडि-पइट्ठावणियाए, पइट्ठावंतेण जो कोई पाणा वा, भूदा वा, जीवा वा, सत्ता वा, संघट्टिदा वा, संघादिदा वा, उद्दाविदा वा, परिदाविदा वा, इत्थ मे जो कोई राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! अणेस-णाए, पाण-भोयणाए, पणय-भोयणाए, बीय भोयणाए, हरिय-भोयणाए, आहा-कम्मेण वा, पच्छा-कम्मेण वा, पुराकम्मेण वा, उद्दिट्ठयडेण वा, णिद्दिट्ठयडेण वा, दयसंसिट्ठयडेण वा, रस-संसिट्ठयडेण वा, परिसादणियाए, पइट्ठावणियाए, उद्देसियाए, णिद्देसियाए, कीदयडे, मिस्से, जादे, ठविदे, रइदे, अणसिट्ठे, बलिपाहुडदे, पाहुडदे, घट्टिदे, मुच्छिदे, अइमत्त-भोयणाए इत्थ मे जो कोई गोयरिस्स अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! सुमणिंदियाए, विराहणाए, इत्थि-विप्परियासियाए, दिट्ठिविप्परियासियाए, मणिविप्परियासियाए, वचि-विप्परियासियाए, काय-विप्परियासियाए, भोयण-विप्परियासियाए, उच्चावयाए, सुमण-दंसण-विप्परियासियाए, पुव्वरए, पुव्वखेलिए, णाणा-चिंतासु, विसोतियासु इत्थ मे जो कोई राइओ (देवसियो) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! इत्थी-कहाए, अत्थ-कहाए, भत्त-कहाए, राय कहाए, चोर-कहाए, वेर-कहाए, पर-पासंड-कहाए, देस-कहाए, भास-कहाए, अ-कहाए, वि-कहाए, निठुल्ल-कहाए, पर-पेसुण्ण-कहाए, कन्द-प्पियाए, कुक्कुच्चियाए, डंबरियाए, मोक्खरियाए, अप्प-पसंणदाए, पर-परिवादणाए, पर-दुगंछणदाए, पर-पीडा-कराए, सावज्जा-णुमोयणियाए, इत्थ मे जो कोई राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! अट्टज्झाणे, रुद्दज्झाणे, इह-लोय-सण्णाए, पर-लोय-सण्णाए, आहार-सण्णाए, भय-सण्णाए, मेहुण-सण्णाए, परिग्गह-सण्णाए, कोह-सल्लाए, माण-सल्लाए, माया-सल्लाए, लोह-सल्लाए, पेम्म-सल्लाए, पिवास सल्लाए, णियाण सल्लाए, मिच्छा-दंसण-सल्लाए, कोह-कसाए, माण-कसाए, माया-कसाए, लोह-कसाए, किण्ह-लेस्स-परिणामे, णील-लेस्स-परिणामे, काउ-लेस्स-परिणामे, आरम्भ-परिणामे, परिग्गह-परिणामे, पडिसयाहिलास-परिणामे, मिच्छादंसण-परिणामे, असंजम-परिणामे, पाव-जोग-परिणामे, काय-सुहाहिलास-परिणामे, सद्देसु, रूवेसु, गंधेसु, रसेसु, फासेसु, काइयाहिकरणियाए, पदोसियाए, परदावणियाए, पाणाइवाइयासु, इत्थ मे जो कोई राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पडिक्कमामि भंते ! एक्के भावे अणाचारे, दोसु राय-दोसेसु, तीसु दंडेसु, तीसु गुत्तीसु, तीसु गारवेसु, चउसु कसाएसु, चउसु सण्णासु, पंचसु महव्वएसु, पंचसु समिदीसु, छसुजीव-णिकाएसु, छसु आवासएसु, सत्तसु भएसु, अट्ठसु मएसु, णवसु बंभचेर-गुत्तीसु, दसविहेसु समण-धम्मेसु, एयारस-विहेसु, उवासयपडिमासु, बारह-विहेसु भिक्खु-पडिमासु, तेरस-विहेसु किरिया-ट्ठाणेसु, चउदस-विहेसु भूदगामेसु, पणरस-विहेसु पमाय-ठाणेसु, सोलह-विहेसु पवयणेसु, सत्तारस-विहेसु असंजमेसु, अट्ठा-रस-विहेसु असंपराएसु, उणवीसाय णाहज्झाणेसु, वीसाए असमाहि-ट्ठाणेसु, एक्कवीसाए, सवलेसु, बावीसाए परीसहेसु, तेवीसाय सुद्दयडज्झाणेसु, चउवीसाए अरहंतेसु, पणवीसाए भावणासु, पणवीसाए किरियाट्ठाणेसु, छव्वीसाए पुढवीसु, सत्तावी-साए अणगार-गुणेसु, अट्ठावीसाए आयार-कप्पेसु, एउणतीसाए पाव-सुत्त-पसंगेसु, तीसाए मोहणी-ठाणेसु, एकत्तीसाए कम्म-विवाएसु, बत्तीसाए जिणो-वएसेसु, तेतीसाए अच्चासणदाए, संखेवेण जीवाण-अच्चासणदाए, अजीवाण अच्चासणदाए, णाणस्स अच्चासणदाए, दंसणस्स अच्चासणदाए, चरित्तस्स अच्चासणदाए, तवस्स अच्चासणदाए, वीरियस्स अच्चासणदाए, तं सव्वं पुव्वं दुच्चरियं गरहामि, आगामेसीएसु पच्चुप्पण्णं इक्कंतं पडिक्कमामि, अणागयं पच्चक्खामि, अगरहियं गरहामि, अणिंदियं णिंदामि, अणालोचियं आलोचेमि, आराहण-

मब्भुट्ठेमि, विराहणं पडिक्कमामि, इत्थ मे जो कोई राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

निर्ग्रन्थ पद को मैं स्वेच्छा से ग्रहण करता हूँ–

इच्छामि भंते ! इमं णिग्गंथं पवयणं अणुत्तरं केवलियं, पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइय, संसुद्धं, सल्लघट्टाणं, सल्लघत्ताणं, सिद्धिमग्गं, सेढिमग्गं, खंतिमग्गं, मुत्तिमग्गं, पमुत्तिमग्गं, मोक्खमग्गं, पमोक्खमग्गं, णिज्जाणमग्गं, णिव्वाणमग्गं, सव्व-दुक्खपरिहाणि-मग्गं, सुचरिय-परिणिव्वाण-मग्गं, अवित्तहं, अविसंति-पवयणं, उत्तमं तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदोत्तरं अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि, णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, इदो जीवा सिज्झंति, बुज्झंति, मुच्चंति, परि-णिव्वाण-यंति, सव्व-दुक्खाण मंतं-करेंति, पडि-वियाणंति, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि, उवहि-णियडि-माण-माय-मोस-मिच्छाणाण-मिच्छा-दंसण-मिच्छाचरित्तं च पडिविरदोमि, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचमि, जं जिणवरेहिं पण्णत्तं, इत्थ मे जो कोई राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

सार्वकालिक दोषों की आलोचना

पडिक्कमामि भंते ! सव्वस्स, सव्वकालियाए, इरियासमिदीए, भासा-समिदीए, एसणा-समिदीए, आदाण-

निक्खेवण-समिदीए, उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाणय-वियडि-पइ-ट्ठावणि-समिदीए, मण-गुत्तीए, वचि-गुत्तीए, काय-गुत्तीए, पाणा दिवादादो-वेरमणाए, मुसावादादो-वेरमणाए, अदिण्ण-दाणादो-वेरमणाए, मेहुणादो-वेरमणाए, परिग्गहादो-वेरमणाए, राइभोयणादो-वेरमणाए, सव्व-विराहणाए, सव्व-धम्म-अइक्कमणदाए, सव्व-मिच्छा-चरियाए, इत्थ मे जो कोई राइओ (देवसिओ) अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वीर-भक्ति कायोत्सर्ग की आलोचना

इच्छामि भंते ! वीर भक्ति काउस्सग्गो जो मे राइओ (देवसिओ) अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो, काइओ, वाइओ, माणसिओ, दुच्चिंतिओ, दुब्भासिओ, दुप्परिणामिओ, दुस्समणीओ, णाणे, दंसणे, चरित्ते, सुत्ते, सामाइए, पंचण्हं महव्वयाणं, पंचण्हं समिदीणं, तिण्हं गुत्तीणं, छण्हं जीव-णिकायाणं, छण्हं आवासयाणं, विराहणाए, अट्ठ-विहस्स कम्मस्स-णिग्घादणाए, अण्णहा उस्सासिएण वा, णिस्सासिएण वा, उम्मिसिएण वा, णिम्मि-सिएण वा, खासिएण वा, छिक्किएण वा, जंभाइएण वा, सुहुमेहिं-अंग-चलाचलेहिं, दिट्ठि-चलाचलेहिं, एदेहिं सव्वेहिं [1] आयरेहिं, अ समाहिं-पत्तेहिं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं,

१. धर्मध्यान दीपकों में "एदेहिं सव्वेहिं असमाहिं पत्तेहिं आयरेहिं" पाठ छपा हुआ है, किन्तु "प्रतिक्रमण ग्रन्थत्रयी" में एदेहिं सव्वेहिं (एतैः प्रागुक्तैः सर्वैः) आयारेहिं (आचारैर्व्यापारैर्यः कश्चिद्दोषो जातः) पाठ है जो प्रसंगानुसार होने से ठीक मालूम होता है ।

पज्जुवासं करेमि, ताव कालं पाव कम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

वद-समि-दिंदिय रोधो, लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च ।।१।।
एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तोहं ।।२।।
छेदोवट्ठावणं होउ मज्झं

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां कृत-दोष-निराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री निष्ठितकरण-वीर भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(ऐसी प्रतिज्ञा करके भूमि-स्पर्श करते हुए नमस्कार करें, पश्चात् तीन आवर्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढ़ें ।)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।।

चत्तारि मंगलं-अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस-कम्मभूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतय-डाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्म-णायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं सदा करेमि किरियम्मं, करेमि भंते ! सामायियं सव्व-सावज्ज-जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण मणसा वचसा काएण, ण करेमि, ण कारेमि, ण अण्णं करंतं पि समणुमणामि। तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं, जाव अरहंताण, भयवंताणं पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ तीन आवर्त एक शिरोनति करके रात्रिक प्रतिक्रमण में ५४ उच्छ्वास पूर्वक दो कायोत्सर्ग और दैवसिक प्रतिक्रमण में १०८ उच्छ्वास पूर्वक चार कायोत्सर्ग करें पश्चात् नमस्कार करके पुनः तीन आवर्त और एक शिरोनति करें, पश्चात् निम्नलिखित चतुर्विंशति स्तव पढ़ें ।)

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे ।
णर-पवर-लोय-महिए विहुय-रय मले महप्पण्णे ।।१।।

लोयस्सुज्जोय-यरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से चौवीस चेव केवलिणो ।।२।।

उसह-मजियं च वंदे संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे ।।३।।

सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ।।४।।

कुंथुं च जिण वरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदामिरिट्ठणेमिं तह पासं वड्ढमाणं च ।।५।।

एवं मए अभित्थुआ विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।।६।।

कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।७।।

चंदेहिं णिम्मल-यरा आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायर-मिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।८।।

(यहाँ तीन आवर्त और एक शिरोनति करें, पश्चात् वीरभक्ति पढ़ें ।)

वीरभक्ति

(शार्दूलविक्रीडित छन्द)

यः सर्वाणि चराचराणि विधि-वद्, द्रव्याणि तेषां गुणान्,
पर्यायानपि भूत-भावि-भवितः सर्वान् सदा सर्वदा ।
जानीते युगपत्-प्रतिक्षण-मतः सर्वज्ञ इत्युच्यते,
सर्वज्ञाय जिनेश्वराय महते वीराय तस्मै नमः ।।१।।

वीरः सर्व-सुरासुरेन्द्र-महितो वीरं बुधाः संश्रिता,
वीरेणाभिहतः स्व-कर्म-निचयो वीराय भक्त्या नमः ।
वीरात् तीर्थ-मिदं प्रवृत्त-मतुलं वीरस्य घोरं तपो,
वीरे श्री-द्युति-कांति-कीर्ति-धृतयो, हे वीर ! भद्रं त्वयि ।।२।।

ये वीर-पादौ प्रणमन्ति नित्यम्,
ध्यान-स्थिताः संयम-योग-युक्ताः ।
ते वीत-शोका हि भवन्ति लोके,
संसार-दुर्गं विषमं तरन्ति ॥३॥

व्रत-समुदय-मूलः संयम-स्कंध-बंधो,
यम-नियम-पयोभि-र्वर्धितः शील-शाखः ।
समिति-कलिक-भारो गुप्ति-गुप्त-प्रवालो,
गुण-कुसुम-सुगंधिः सत्-तपश्चित्र-पत्रः ॥४॥

शिव-सुख-फल-दायी यो दया-छाय-योद्धः,
शुभ-जन-पथिकानां खेद-नोदे समर्थः ।
दुरित-रविज-तापं प्रापयन्नन्तभावम्,
स भव-विभव-हान्यै नोऽस्तु चारित्र-वृक्षः ॥५॥

चारित्रं सर्व-जिनैश्चरितं प्रोक्तं च सर्व-शिष्येभ्यः ।
प्रणमामि पञ्च-भेदं पञ्चम-चारित्र-लाभाय ॥६॥

धर्मः सर्व-सुखाकरो हित-करो, धर्मं बुधाश्चिन्वते,
धर्मेणैव समाप्यते शिव-सुखं धर्माय तस्मै नमः ।
धर्मान्-नास्त्य-परः सुहृद्-भव-भृतां धर्मस्य मूलं दया,
धर्मे चित्त-महं दधे प्रतिदिनं हे धर्म ! मां पालय ॥७॥

धम्मो मंगल-मुक्किट्ठं अहिंसा संयमो तवो ।
[1]देवा वि तं णमंसंति जस्स धम्मे सया मणो ॥८॥

---

१. "देवा वि तस्स पणमंति" पाठ में एक अक्षर अधिक है ।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! पडिक्कमणादिचार-मालोचेउं सम्मणाण सम्मदंसण-सम्मचारित्त-तव-वीरियाचारेसु, जम-णियम-संजम-सील-मूलुत्तर-गुणेसु, सव्व-मइचारं सावज्ज-जोगं पडिविरदोमि, असंखेज्ज-लोग-अज्झव-साय-ठाणाणि, अप्पसत्थ-जोग-सण्णा-णिंदिय-कसाय-गारव-किरियासु, मण-वयण-काय-करण-दुप्पणिहा-णाणी, परि-चिंतियाणि, किण्ह-णील-काउ-लेस्साओ, विकहा-पालिकुंचिएण, उम्मग-हस्स-रदि-अरदि-सोय-भय-दुगंछ-वेयण-विज्झंभ-जम्भाइ-आणि, अट्ट-रुद्द-संकिलेस-परिणामाणि-परिणामदाणि, अणिहुद-कर-चरण-मण-वयण-काय-करणेण, अक्खित्त-बहुल-पराय-णेण, अपडि-पुण्णेण वा सरक्खरावय-परिसंघाय-पडिवत्तिएण, अच्छा-कारिदं मिच्छा-मेलिदं, आ-मेलिदं, वा-मेलिदं, अण्णहा-दिण्णं, अण्णहा-पडिच्छिदं, आवास-एसु-परिहीणदाए, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा से दुक्कडं ।

वद-समि-दिंदिय रोधो, लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेयभत्तं च ।।१।।
एदे खलु मूल-गुणा, समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तोऽहं ।।२।।

छेदोवट्ठावणं होउ मज्झं

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं रात्रिक (दैवसिक)

प्रतिक्रमण-क्रियायां, कृत-दोष-निराकरणार्थं पूर्वाचार्या-नुक्रमेण, सकल कर्म-क्षयार्थं भाव-पूजा-वंदना-स्तव-समेतं चतुर्विंशति-तीर्थंकर-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(ऐसी प्रतिज्ञा करके भूमि स्पर्श पूर्वक नमस्कार करें, पश्चात् तीन आवर्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढ़ें ।)

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।।

चत्तारि मंगलं-अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतय-डाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्म-णायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं, सदा करेमि, किरियम्मं । करेमि भंते ! सामायियं सव्व-सावज्ज जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवं (जावन्नियमं) तिविहेण मणसा-वचसा, काएण, ण करेमि, ण कारेमि,

ण अण्णं करंतं पि समणुमणामि । तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ तीन आवर्त एक शिरोनति करके २७ उच्छ्वासों में एक कायोत्सर्ग करें । पश्चात् भूमि नमस्कार करके पुनः तीन आवर्त और एक शिरोनति करें, पश्चात् चतुर्विंशति स्तव पढ़ें ।)

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे ।
णर-पवर-लोए महिए विहुय-रय-मले महप्पण्णे ।।१।।
लोयस्सुज्जोययरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से चौबीसं चेव केवलिणो ।।२।।
उसह-मजियं च वन्दे संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे ।।३।।
सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ।।४।।
कुंथुं च जिण वरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदामिरिट्ठ-णेमिं तह पासं वड्ढमाणं च ।।५।।
एवं मए अभित्थुआ विहुय-रय-मला पहीण जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।।६।।
कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्य-णाण-लाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।७।।
चंदेहिं णिम्मल-यरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायर-मिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।८।।

(यहाँ तीन आवर्त और एक शिरोनति करें, पश्चात् चतुर्विंशति तीर्थंकर भक्ति पढ़ें ।)

[1]चउवीसं तित्थयरे उसहाइ-वीर-पच्छिमे वन्दे ।
सव्वे सगण-गण-हरे सिद्धे सिरसा णमंसामि ।।१।।

ये लोकेऽष्ट-सहस्र लक्षण-धरा, ज्ञेयार्णवान्तर्गता,
ये सम्यग्-भव-जाल-हेतु-मथनाश्चन्द्रार्क-तेजोऽधिकाः ।
ये साध्विन्द्र-सुराप्सरो-गण-शतै-र्गीत-प्रणूतार्चितास्,
तान् देवान् वृषभादि-वीर-चरमान् भक्त्या नमस्याम्यहम् ।।

नाभेयं देवपूज्यं, जिनवर-मजितं सर्व-लोक-प्रदीपम् ।
सर्वज्ञं संभवाख्यं, मुनि-गण-वृषभं नन्दनं देवदेवम् ।।

कर्मारिघ्नं सुबुद्धि, वर-कमल-निभं पद्म-पुष्पाभि-गंधम् ।
क्षान्तं दान्तं सुपार्श्वं, सकल-शशि-निभं चंद्रनामान-मीडे
विख्यातं पुष्पदन्तं, भव-भय-मथनं शीतलं लोक-नाथम्
श्रेयांसं शील-कोशं, प्रवर-नर-गुरुं वासुपूज्यं सुपूज्यम् ।।

मुक्तं दान्तेंद्रियाश्वं, विमल-मृषि-पतिं सिंहसेन्यं मुनींद्रम्
धर्मं सद् धर्म-केतुं, शम-दम-निलयं स्तौमि शांति शरण्यम्
कुन्थुं सिद्धालयस्थं, श्रमण-पतिमरं त्यक्त-भोगेषु चक्रम् ।
मल्लिं विख्यात-गोत्रं, खचर-गण-नुतं सुव्रतं सौख्य-राशिम्
देवेन्द्रार्च्यं नमीशं, हरि-कुल-तिलकं नेमिचन्द्रं भवान्तम्
पार्श्वं नागेंद्र-वंद्यं, शरण-मह-मितो वर्धमानं च भक्त्या।।५।।

---

१. क्रियाकलाप पृ० ६७ के अनुसार ।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! चउवीस-तित्थयर-भत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं पंच-महा-कल्लाण-संपण्णाणं, अट्ठ-महा-पाडिहेर-सयाणं, चउतीसातिसय-विसेस-संजुत्ताणं, बत्तीस-देविंद-मणि-मउड-मत्थय-महिदाणं, बलदेव-वासुदेव-चक्कहर-रिसि-मुणि-जइ-अणगारोव-गूढाणं, थुइ-सय-सहस्स-णिलयाणं-उस-हाइ-वीर-पच्छिम-मंगल-महा-पुरिसाणं, णिच्च-कालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं ।

वद-समि-दिंदिय रोधो,लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं, ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च ।।१।।
एदे खलु मूलगुणा, समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो, अइचारादो णियत्तो हं ।।२।।

छेदोवट्ठावणं होउ मज्झं

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां कृत-दोष-निराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव समेतं श्री सिद्धभक्ति, प्रतिक्रमणभक्ति, निष्ठित-करण-वीर-भक्ति, चतुर्विंशति तीर्थंकर भक्तिः कृत्वा तद्धीनाधिक-दोष-विशुद्ध्यर्थं, आत्म-पवित्री-करणार्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(इति विज्ञाप्य-णमो अरहंताणं इत्यादि दण्डकं पठित्वा कायोत्सर्गं कुर्यात् । थोस्सामीत्यादि स्तवं पठेत्)

अथेष्ट प्रार्थना

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

शास्त्राभ्यासो जिनपति-नुतिः संगतिः सर्वदार्यैः,
सद्-वृत्तानां गुण-गण-कथा दोष-वादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रिय-हित-वचो भावनाचात्म-तत्त्वे,
सम्पद्यन्तां मम भव-भवे यावदेतेऽपवर्गः ।।१।।

तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पद-द्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्-यावन्-निर्वाण-सम्प्राप्तिः ।।२।।

अक्खर-पयत्थ-हीणं, मत्ता-हीणं च जं मए भणियम् ।
तं खमउ णाण-देव ! य मज्झवि दुक्खक्खयं कुणउ ।।३।।

आलोचना

इच्छामि भंते ! समाहि-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, रयणत्तय-सरूव-परमप्प-झाणलक्खण-समाहि-भत्तीए णिच्च कालं अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ गमणं, समाहि-मरणम्, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं ।

।। इति रात्रिक (दैवसिक) प्रतिक्रमण समाप्तम् ।।

रात्रि-योग-निष्ठापन-विधि

अब रात्रिक प्रतिक्रमण क्रिया की समाप्ति के बाद, कल सायंकाल प्रतिक्रमण के पश्चात् जो रात्रि-योग प्रतिष्ठापन ("आज रात्रि को मैं इसी वसतिका में रहूँगा" ऐसा नियम विशेष) किया था, उसका निष्ठापन (रात्रि को जो इसी वसतिका में रहने का नियम किया था उसको समाप्त) करने के लिए निम्नलिखित प्रयोग विधि करना चाहिए ।

विज्ञापन

अथ रात्रियोग-निष्ठापन-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वंदना-स्तव-समेतं योगि-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(ऐसी प्रतिज्ञा करके नमस्कार करें, पश्चात् तीन आवर्त और शिरोनति करके निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढ़ें ।)

सामायिक स्तव

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।

चत्तारि मंगलं-अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं,

जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतय-डाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्म-णायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहिदेवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं सदा करेमि किरियम्मं, करेमि भंते ! सामायियं सव्व-सावज्ज-जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवं (यावत् कालं) तिविहेण मणसा-वचसा-काएण, ण करेमि, ण कारेमि, ण अण्णं करंतं पि समणुमणामि । तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं पज्जुवासं करेमि, ताव कालं, पाव कम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ तीन आवर्त एवं एक शिरोनति करके ९ बार णमोकार मन्त्र जप कर कायोत्सर्ग करें, पश्चात् नमस्कार करें । उसके बाद तीन आवर्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित चतुर्विंशति स्तव पढ़ें ।)

चतुर्विंशति-स्तव

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे ।
णर-पवर-लोय-महिए विहुय-रय मले महप्पण्णे ।।१।।
लोयस्सुज्जोय-यरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से चौवीसं चेव केवलिणो ।।२।।
उसह-मजियं च वंदे संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे ।।३।।
सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ।।४।।

कुंथुं च जिण वरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदामिरिट्ठणेमिं तह पासं वड्ढमाणं च ।।५।।
एवं मए अभित्थुआ विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।।६।।
कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाह दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।७।।
चंदेहिं णिम्मल-यरा आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायर-मिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।८।।

(यहाँ तीन आवर्त और एक शिरोनति करें । पश्चात् योगि भक्ति पढ़ें)

योगि-भक्ति

जाति-जरोरु-रोग-मरणातुर-शोक-सहस्र-दीपिताः ।
दुःसह-नरक-पतन संत्रस्त-धियः प्रतिबुद्ध-चेतसः ।।
जीवित-मम्बु-बिन्दु-चपलं, तडि-दभ्र-समा विभूतयः ।
सकल-मिदं विचिन्त्य मुनयः प्रशमाय वनान्त-माश्रिताः ।
व्रत-समिति-गुप्ति-संयुताः,
शम-सुखमाधाय मनसि वीतमोहाः ।
ध्यानाध्ययन वशंगताः,
विशुद्धये कर्मणां तपश्चरन्ति ।।२।।
दिनकर-किरण-निकर संतप्त-शिला-निचयेषु निस्पृहाः
मल-पटलावलिप्त-तनवः, शिथिली-कृत-कर्म-बंधनाः ।।
व्यपगत-मदन-दर्प-रति-दोष-कषाय-विरक्त-मत्सराः ।
गिरि-शिखरेषु चण्ड-किरणाभिमुख-स्थितयो-दिगम्बराः

सज्ज्ञानामृत-पायिभिः क्षांति-पयः सिंच्यमान-पुण्य-कायै
धृत-सन्तोष-च्छत्रकै-स्ताप-स्तीव्रोऽपि सह्यते मुनीन्द्रैः
शिखि-गल कज्जलालि-मलिनै-र्विबुधाधिप-चाप-चित्रितैः
भीम-रवै-र्विसृष्ट-चण्डाशनि-शीतल वायु-वृष्टिभिः ।
गगन-तलं विलोक्य जलदैः, स्थगितं सहसा तपोधनाः ।
पुन-रपि तरु-तलेषु विषमासु निशासु विशंक-मासते ।।५।।
जल-धारा-शर-ताडिता न चलन्ति चरित्रतः सदा नृ-सिंहाः
संसार-दुःख-भीरवः परीषहाराति-घातिनः प्रवीराः ।।६।।
अविरत-बहल-तुहिन-कण-वारिभि-रंघ्रिप पत्र पातनै-
रनवरत-प्रमुक्त-झंकार-रवैः
परुषै-रथानिलैः शोषित-गात्र-यष्टयः ।।
इह श्रमणा धृति-कम्बलावृताः शिशिर-निशाम् ।
तुषार-विषमां गमयन्ति चतुः पथे स्थिताः ।।७।।
इति योग-त्रय-धारिणः सकल-तपः
शालिनः प्रवृद्ध-पुण्य-कायाः ।
परमानन्द-सुखैषिणः समाधि-
मग्र्यं दिशन्तु नो भदन्ताः ।।८।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! योगि भत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णा-रस-कम्म-भूमिसु, आदावण-रुक्खमूल-अब्भोवास-ठाण-मोण-वीरासणेक्कपास कुक्कुडासण-चउ-छ-पक्ख-खवणादि-

जोग-जुत्ताणं, सव्व साहूणं, णिच्चकालं, अंचेमि, पूजेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं।

उपर्युक्त प्रतिक्रमण एवं रात्रियोग निष्ठापन कर चुकने के बाद गोधूलि बेला में अर्थात् सूर्योदय होने के २४ मिनिट पूर्व से सूर्योदय होने के २४ मिनिट पश्चात् (सामायिक का यह ४८ मिनिट का जघन्य काल है) तक निम्नलिखित विधि के अनुसार प्रातःकालीन सामायिक करना चाहिए ।

सामायिक विधि

सामायिक के पूर्व की जाने वाली चतुर्दिग्वंदना

पूर्व दिशा में–सर्व प्रथम नौ बार णमोकार मंत्र का जाप्य कर नमस्कार करते हुये–

प्राग्-दिग्-विदिगन्तरे, केवलि-जिन-सिद्ध-साधु-गण-देवाः ये सर्वर्द्धि-समृद्धा, योगि-गणाँस्तानहं वन्दे ।।१।।

दक्षिण दिशा में–नौ बार णमोकार मंत्र का जाप्यकर नमस्कार करते हुये–

दक्षिण दिग्-विदिगंतरे, केवलि-जिन-सिद्ध-साधु-गण-देवाः ये सर्वर्द्धि-समृद्धा, योगि-गणाँस्तानहं वन्दे।।२।।

पश्चिम दिशा में–नौ बार णमोकार मन्त्र का जाप्य कर नमस्कार करते हुये–

पश्चिम-दिग्-विदिगंतरे, केवलि-जिन-सिद्ध-साधु-गण-देवाः ये सर्वर्द्धि-समृद्धा, योगि-गणाँस्तानहं वन्दे ।।३।।

उत्तर दिशा में–नौ बार णमोकार मंत्र का जाप्य कर नमस्कार करते हुये–

उत्तर-दिग्-विदिगंतरे, केवलि-जिन-सिद्ध-साधु-गण देवाः ये सर्वर्द्धि-समृद्धा, योगि-गणाँस्तानहं वन्दे ।।४।।

प्रतिज्ञा :- पिच्छिका युक्त दोनों हाथों को मुकुलित कर और कुहनियों को उदर पर रखकर यथास्थान मस्तक झुकाते हुए प्रतिज्ञा करें–

तीर्थंकर केवलि, सामान्य केवलि, समुद्घात केवलि, उपसर्ग केवलि, मूक केवलि, अन्तःकृत मुण्डकेवलिभ्यो नमो नमः । तीर्थंकरोपदिष्ट-श्रुताय नमो नमः । सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र-धारकाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुभ्यो नमो नमः ।

श्री मूल-संघे, कुन्दकुन्दाम्नाये, बलात्कार-गणे, सेन- गच्छं नन्दी-संघस्य परम्परायाम्, श्री-महावीरकीर्तिआचार्या-जातास्तत् शिष्याः श्रीविमलसागराचार्या-जातास्तत् शिष्याः......... अहम् (अपना नाम बोलना) जम्बूवृक्षोपलक्षित जम्बूद्वीपे, भरतक्षेत्रे, आर्य-खण्डे, भारतदेशे, ...प्रान्ते, ...नगरे, १००८ श्री ....जिन-चैत्यालयमध्ये, अद्य, वीर निर्वाण सं०.......... वि०सं०........... मासोत्तममासे......... मासे........ पक्षे........ शुभ तिथौ......... वासरे पौर्वाह्णिक (माध्याह्निक) (आपराह्णिक) काले, घटिका-द्वय (४८ मि०) पर्यन्तं सर्व-सावद्य-योग-विरतोऽस्मि ।

ईर्या-पथ-शुद्धि

पडिक्कमामि भंते ! इरिया वहियाए, विराहणाए, अणागुत्ते, अइ गमणे, णिग्गमणे, ठाणे, गमणे, चंकमणे, पाणुग्गमणे, बीजुग्गमणे, हरिदुग्गमणे, उच्चारपस्सवण-खेल-सिंहाण-वियडि-पइट्ठावणियाए, जे जीवा एइन्दिया वा, बेइंदिया वा, तेइंदिया वा, चउरिंदिया वा, पंचिंदिया वा, णोल्लिदा वा, पेल्लिदा वा, संघट्टिदा वा, संघादिदा वा, उद्दाविदा वा, परिदाविदा वा, किरिंच्छिदा वा, लेस्सिदा वा, छिंदिदा वा, भिंदिदा वा, ठाणदो वा, ठाण-चंकमणदो वा, तस्स उत्तर-गुणं तस्स पायच्छित्त-करणं, तस्स विसोहि-

करणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, णमोक्कारं, पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ २७ उच्छ्वासों में ९ जाप्य करें)

ईर्यापथ आलोचना

ईर्या-पथे प्रचलताद्य मया प्रमादा-
देकेन्द्रिय-प्रमुख-जीव-निकाय बाधा ।
निर्वर्तिता यदि भवेदयुगान्तरेक्षा,
मिथ्या तदस्तु दुरितं गुरु-भक्तितो मे ।।१।।

इच्छामि भंते ! इरियावहियस्स आलोचेउं, पुव्वुत्तर-दक्खिण-पच्छिम-चउदिस-विदिसासु, विहरमाणेण जुगंतर-दिट्ठिणा, भव्वेण दट्ठव्वा । पमाद-दोषेण, डव-डव-चरियाए, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

कृत्य प्रतिज्ञा

नमोऽस्तु भगवन् ! देव-वन्दनां करिष्यामि ।

(इति सामायिक स्वीकार)

मुख्य मंगल

सिद्धं सम्पूर्ण-भव्यार्थ सिद्धेः कारण-मुत्तमम् ।
प्रशस्त-दर्शन-ज्ञान-चारित्र-प्रतिपादनम् ।।१।।
सुरेन्द्र-मुकुटाश्लिष्ट-पाद-पद्मांशु-केशरम् ।
प्रणमामि महावीरं लोक-त्रितय मंगलम् ।।२।।

सामायिक स्वीकार

खम्मामि सव्व-जीवाणं, सव्वे जीवा खमन्तु मे।
मित्ती मे सव्व-भूदेसु वैरं मज्झं ण केणवि ।।१।।
राय-बंध-पदोसं च हरिसं दीण-भावयं।
उस्सुगत्तं भयं सोगं, रदि-मरदिं च वोस्सरे ।।२।।
हा ! दुट्ठ-कयं हा ! दुट्ठ-चिंतियं भासियं च हा ! दुट्ठं।
अंतो-अंतो डज्झमि पच्छत्तावेण वेयंतो ।।३।।
दव्वे खेत्ते काले भावे य कदा-वराह-सोहणयं।
णिंदण-गरहण-जुत्तो, मण-वच-काएण पडिक्कमणं ।।४।।
समता सर्व-भूतेषु संयमः शुभ-भावना।
आर्त्त-रौद्र-परित्याग-स्तद्धि सामायिकं मतं ।।५।।

अथ कृत्य-विज्ञापना

भगवन् ! नमोस्तु प्रसीदन्तु, प्रभू-पादा-वंदिष्येऽहं। एषोऽहं सर्व-सावद्य-योगाद्-विरतोऽस्मि।

अथ पौर्वाह्णिक (माध्याह्निक) (आपराह्णिक) देववन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्म-क्षयार्थं भाव-पूजा-वंदना-स्तव-समेतं श्री चैत्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(यहाँ सर्वप्रथम भूमि-स्पर्शनात्मक पंचांग नमस्कार करें, पश्चात् तीन आवर्त और एक शिरोनति कर निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढ़ें।)

१. नमस्कार मन्त्र पाठ

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।।

२. मंगलोत्तम-शरण-दण्डक पाठ

चत्तारि मंगलं-अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलि पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वजामि, केवलि-पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

३. कृति-कर्म-दण्डक पाठ

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस-कम्मभूमिसु, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्मणायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं, सदा करेमि, किरियम्मं ।

४. सामायिक-ग्रहण-प्रतिज्ञा-पाठ

करेमि भंते ! सामायियं सव्व-सावज्ज जोगं पच्चक्खामि, जावज्जीवं, तिविहेण-मणसा-वचसा, काएण, ण करेमि, ण कारेमि, ण अण्णं करंतं पि समणुमणामि। तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं जाव अरहंताणं, भयवंताणं पज्जुवासं करेमि, ताव कालं, पाव कम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ तीन आवर्त एवं शिरोनति करके २७ उच्छ्वासों में ९ बार णमोकार मन्त्र पूर्वक कायोत्सर्ग करें। पश्चात् पंचांग नमस्कार करें। तदनंतर तीन आवर्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित चतुर्विंशति स्तव पढ़ें।)

चतुर्विंशति-स्तव पाठ

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे।
णर-पवर-लोय-महिए विहुय-रय मले महप्पण्णे॥१॥
लोयस्सुज्जोय-यरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे।
अरहंते कित्तिस्से चौबीसं चेव केवलिणो॥२॥
उसह-मजियं च वंदे संभव-मभिणंदणं च सुमइं च।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे॥३॥
सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च।
विमल-मणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि॥४॥
कुंथुं च जिण वरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं।
वंदामिरिट्ठणेमिं तह पासं वड्ढमाणं च॥५॥
एवं मए अभित्थुआ विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु॥६॥
कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा।
आरोग्ग-णाण-लाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं॥७॥
चंदेहिं णिम्मल-यरा आइच्चेहिं अहिय-पया-संता।
सायर-मिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु॥८॥

(यहाँ तीन आवर्त और एक शिरोनति करें। पश्चात् पिच्छिका युक्त दोनों हाथों को मुकुलित कर एवं उनकी कुहनियों को उदर पर रख कर "जयति भगवान् स्तोत्र" (चैत्यभक्ति) पढ़ें।)

१. जयति भगवान् स्तोत्रम्

देव-धर्म-वचन-ज्ञान स्तुति

जयति भगवान् हेमाम्भोज-प्रचार-विजृम्भिता-
वमर-मुकुट-च्छायोद्गीर्ण-प्रभा-परिचुम्बितौ ।
कलुष-हृदया मानोद्भ्रान्ताः परस्पर-वैरिणः,
विगत-कलुषाः पादौ यस्य प्रपद्य-विशश्वसुः ॥१॥
तदनु जयति श्रेयान्, धर्मः प्रवृद्ध-महोदयः,
कुगति-विपथ-क्लेशाद्योसौ विपाशयति प्रजाः ।
परिणत-नय-स्यांगी-भावाद् विविक्त-विकल्पितम्,
भवतु भवतस्त्रातृ त्रेधा जिनेन्द्र-वचोऽमृतम् ॥२॥
तदनु जयताज्जैनी वित्तिः प्रभंग-तरंगिणी,
प्रभव-विगम-ध्रौव्य-द्रव्य-स्वभाव-विभाविनी ।
निरुपम-सुख-स्येदं द्वारं विघटय्य निरर्गलम्,
विगत-रजसं मोक्षं देयान्-निरत्यय-मव्ययम् ॥३॥

२. दश-पद-स्तोत्रम्

पञ्च-परमेष्ठियों को नमस्कार

अर्हत्-सिद्धाचार्योपाध्यायेभ्य-स्तथा च साधुभ्यः ।
सर्व-जगद्-वंद्येभ्यो नमोऽस्तु सर्वत्र सर्वेभ्यः ॥४॥

अरहंतदेव को नमस्कार

मोहादि-सर्व-दोषारिघातकेभ्यः सदा हत-रजोभ्यः ।
विरहित-रहस् -कृतेभ्यः पूजार्हेभ्यो नमोऽर्हद्भ्यः ॥५॥

धर्म को नमस्कार

क्षान्त्यार्जवादि-गुण-गण-सुसाधनं सकल-लोकहित-हेतुम् ।
शुभ-धामनि धातारं, वन्दे धर्मं जिनेन्द्रोक्तम् ।।६।।

जिनवाणी की स्तुति

मिथ्या-ज्ञान-तमो-वृत-लोकैक-ज्योति-रमित-गम-योगि ।
सांगोपांग-मजेयं जैनं वचनं सदा वन्दे ।।७।।

जिन-प्रतिमाओं को नमस्कार

भवन-विमान-ज्योति-व्यंतर-नर-लोक-विश्व चैत्यानि ।
त्रिजग-दभिवन्दितानां, त्रेधा वन्दे जिनेन्द्राणाम् ।।८।।

चैत्यालय की स्तुति

भुवन-त्रयेऽपि भुवन-त्रयाधिपाभ्यर्च्य-तीर्थ-कर्तृणाम् ।
वन्दे भवाग्नि-शान्त्यै विभवाना मालयाली-स्ताः ।।९।।

स्तुति करने का फल

इति पञ्च-महापुरुषाः प्रणुता-जिन-धर्म-वचन-चैत्यानि ।
चैत्यालयाश्च विमलां दिशन्तु बोधिं बुध-जनेष्टाम् ।।१०।।

३. जिन-प्रतिमा-स्तवनम्

कृत्रिम-अकृत्रिम जिन प्रतिमाओं की स्तुति

अकृतानि-कृतानि-चाप्रमेय-
द्युति-मन्ति द्युतिमत्सु-मन्दिरेषु ।
मनुजामर-पूजितानि वन्दे,
प्रतिबिम्बानि जगत्त्रये जिनानाम् ।।११।।

द्युति-मण्डल-भासुरांग-यष्टीः,
प्रतिमा अप्रतिमा जिनोत्तमानाम् ।
भुवनेषु विभूतये प्रवृत्ता वपुषा
प्राञ्जलि-रस्मि वन्दमानः ।।१२।।
विगतायुध-विक्रिया-विभूषाः
प्रकृतिस्थाः कृतिनां जिनेश्वराणाम् ।
प्रतिमाः प्रतिमा-गृहेषु कान्त्या-
प्रतिमाः कल्मष-शान्तयेऽभिवन्दे ।।१३।।
कथयन्ति कषाय-मुक्ति-लक्ष्मीं,
परया शान्ततया भवान्तकानाम् ।
प्रणमाम्यभिरूप-मूर्तिमन्ति,
प्रति-रूपाणि विशुद्धये जिनानाम् ।।१४।।

स्तुति के फल की प्रार्थना

यदिदं मम सिद्ध-भक्ति-नीतं,
सुकृतं दुष्कृत-वर्त्म-रोधि तेन ।
पटुना जिन-धर्म-एव-भक्ति-
र्भवताज्जन्मनि जन्मनि स्थिरा मे ।।१५।।

४. विश्व-चैत्य-चैत्यालय-कीर्तन

अर्हतां सर्व-भावानां दर्शन-ज्ञान-सम्पदाम् ।
कीर्तयिष्यामि चैत्यानि यथा बुद्धि विशुद्धये ।।१६।।
श्रीमद्-भवन-वासस्थाः स्वयं भासुर-मूर्तयः ।
वन्दिता नो विधेयासुः प्रतिमा परमां गतिम् ।।१७।।

यावन्ति सन्ति लोकेऽस्मिन्नाकृतानि कृतानि च ।
तानि सर्वाणि चैत्यानि वन्दे भूयांसि भूतये ।।१८।।
ये व्यन्तर-विमानेषु स्थेयांसः प्रतिमा-गृहाः ।
ते च संख्या-मतिक्रान्ताः सन्तु नो दोष-विच्छिदे ।।१९।।
ज्योतिषा-मथ लोकस्य भूतयेऽद्भुत-सम्पदः ।
गृहाः स्वयंभुवः सन्ति विमानेषु नमामि तान् ।।२०।।
वन्दे सुर-किरीटाग्र-मणिच्छायाभिषेचनम् ।
याः क्रमेणैव सेवन्ते तदर्च्चाः सिद्धि लब्धये ।।२१।।

स्तुति के फल की प्रार्थना

इति स्तुति-पथातीत-श्री-भृता-मर्हतां मम ।
चैत्याना-मस्तु संकीर्ति सर्वास्रव-निरोधिनी ।।२२।।

५. अर्हन्-महानद-स्तवन

अर्हन्-महा-नदस्य, त्रिभुवन-
भव्य-जन-तीर्थ-यात्रिक-दुरितम् ।
प्रक्षालनैक-कारण-मतिलौकिक-
कुहक-तीर्थ-मुत्तम तीर्थम् ।।२३।।
लोकालोक-सुतत्त्व-प्रत्यव-
बोधन-समर्थ-दिव्य-ज्ञान-
प्रत्यह-वहत्-प्रवाहं, व्रत-
शीलामल-विशाल-कूल-द्वितयम् ।।२४।।
शुक्ल-ध्यान-स्तिमित-स्थित-
राजद्-राज-हंस-राजित-मसकृत् ।

स्वाध्याय-मन्द्र-घोषं नाना-गुण-
समिति-गुप्ति-सिकता-सुभगम् ।।२५।।
क्षान्त्यावर्त-सहस्रं सर्व-दया-
विकच-कुसुम-विलसल्-लतिकम् ।
दुःसह-परिषहाख्य-द्रुततर-
रंगत्तरंग-भंगुर-निकरम् ।।२६।।
व्यपगत-कषाय-फेनं राग-
द्वेषादि-दोष-शैवल-रहितम् ।
अत्यस्त-मोह-कर्दम-मतिदूर-
निरस्त-मरण-मकर-प्रकरम् ।।२७।।
ऋषि-वृषभ-स्तुति-मन्द्रोद्रेकित-
निर्घोष-विविध-विहग-ध्वानम् ।
विविध-तपो-निधि-पुलिनं-सास्रव
संवरण-निर्जरा-निःस्रवणम् ।।२८।।
गणधर-चक्र-धरेन्द्र-प्रभृति-
महा भव्य-पुण्डरीकैः पुरुषैः ।
बहुभिः स्नातं भक्त्या कलि-
कलुष-मलापकर्षणार्थ-ममेयम् ।।२९।।
अवतीर्णवतः स्नातुं ममापि
दुस्तर-समस्त-दुरितं दूरम् ।
व्यपरहतु परम-पावन-मनन्य-
जय्य-स्वभाव-भाव-गम्भीरम् ।।३०।।

६. जिनरूप स्तवन

अताम्र-नयनोत्पलं सकल-कोप-वह्ने-र्जयात्,
कटाक्ष-शर-मोक्ष-हीन-मविकारतो-द्रेकतः ।
विषाद-मद-हानितः प्रहसितायमानं सदा,
मुखं कथयतीव ते हृदय-शुद्धि-मात्यंतिकीम् ।।३१।।
निराभरण-भासुरं विगत-राग-वेगोदयात्,
निरम्बर-मनोहरं प्रकृति-रूप निर्दोषतः ।
निरायुध-सुनिर्भयं विगत-हिंस्य-हिंसा-क्रमात्,
निरामिष-सुतृप्ति-मद्-विविध-वेदनानां क्षयात् ।।३२।।
मित-स्थित-नखांगजं गत-रजो-मल-स्पर्शनम्,
नवाम्बुरुह-चन्दन-प्रतिम-दिव्य-गन्धोदयम् ।
रवीन्दु-कुलिशादि-दिव्य-बहु-लक्षणालङ्कृतम्,
दिवाकर-सहस्त्र-भासुर-मपीक्षणानां प्रियम् ।।३३।।
हितार्थ-परिपंथिभिः प्रबल-राग-मोहादिभिः,
कलंकित-मना-जनो यदभिवीक्ष्य शोशुद्ध्यते ।
सदाभिमुख-मेव यज्जगति पश्यतां सर्वतः,
शरद्-विमल-चन्द्र-मण्डल-मिवोत्थितं दृश्यते ।।३४।।
तदेत-दमरेश्वर-प्रचल-मौलि-माला-मणि-
स्फुरत्-किरण-चुम्बनीय-चरणारविन्द-द्वयम् ।
पुनातु भगवज्जिनेन्द्र तव रूप मन्धी-कृतम्,
जगत्-सकल-मन्य-तीर्थ-गुरु-रूप-दोषोदयैः।।३५।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! चेइय-भक्ति काउस्सग्गो कओ तस्सा-लोचेउं अहलोय, तिरिय-लोय, उड्ढ-लोयम्मि, किट्टिमा किट्टिमाणि, जाणि, जिण-चेइयाणि, ताणि सव्वाणि, तिसु वि लोएसु, भवण-वासिय, वाणविन्तर, जोइसिय, कप्पवासियत्ति, चउविहा-देवा, सपरिवारा दिव्वेण ण्हाणेण, दिव्वेण गन्धेण, दिव्वेण अक्खेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण दीवेण, दिव्वेण धूवेण, दिव्वेण वासेण णिच्चकालं अंचंति, पुज्जंति, वंदंति, णमंसंति । अहमवि इह संतो तत्थ संताइं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वन्दामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं।

अथ कृत विज्ञापन

अथ पौर्वाह्णिक देव वन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री पंचमहागुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(यहाँ सर्वप्रथम भूमि-स्पर्शनात्मक पंचांग नमस्कार करें, पश्चात् तीन आवर्त और एक शिरोनति कर निम्नलिखित सामायिक दण्डक पढ़ें ।)

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं ।।

चत्तारि मंगलं-अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा,

अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलि-पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतय-डाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्म-णायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहिदेवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं, सदा करेमि, किरियम्मं ।

करेमि भंते ! सामायियं सव्व-सावज्ज-जोगं पच्चक्खामि, जावज्जीवं-तिविहेण मणसा-वचसा-काएण, ण करेमि, ण कारेमि, ण अण्णं करंतं पि समणुमणामि । तस्स भंते! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं जाव अरहंताणं भयवंताणं पज्जुवासं करेमि, ताव कालं पाव कम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ तीन आवर्त एवं एक शिरोनति करके २७ उच्छ्वासों में ९ बार णमोकार मन्त्र पूर्वक कायोत्सर्ग करें । पश्चात् पंचांग नमस्कार करें । तदनंतर तीन आवर्त और एक शिरोनति कर निम्नलिखित चतुर्विंशति-स्तव पढ़ें ।)

चतुर्विंशति-स्तव

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे ।
णर-पवर-लोए महिए विहुय-रय-मले महप्पण्णे ।।१।।
लोयस्सुज्जोय-यरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से चौबीसं चेव केवलिणो ।।२।।
उसह मजियं च वन्दे संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे ।।३।।
सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ।।४।।
कुंथुं च जिण वरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदामिरिट्ठ-णेमिं तह पासं वड्ढमाणं च ।।५।।
एवं मए अभित्थुआ विहुय-रय-मला पहीण जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।।६।।
कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणासिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।७।।
चंदेहिं णिम्मल-यरा, आइच्चेहिंअहिय-पया-संता ।
सायर-मिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।८।।

(यहाँ तीन आवर्त एवं शिरोनति करें । पश्चात् वन्दना मुद्रा पूर्वक पंचमहागुरु भक्ति पढ़ें ।)

पंच महागुरु भक्ति

मणुय-णाइंद-सुर-धरिय-छत्तत्तया,
पंचकल्लाण-सोक्खावली-पत्तया ।
दंसणं णाण झाणं अणंतं बलं,
ते जिणा दिंतु अम्हं वरं मंगलं ।।१।।

जेहिं झाणग्गि-वाणेहिं अइ-दड्ढयं,
जम्म-जर मरण-णयर-त्तयं दड्ढयं ।
जेहिं पत्तं सिवं सासयं ठाणयं,
ते महं दिंतु सिद्धा वरं णाणयं ॥२॥

पंच-आचार-पंचग्गि-संसाहया,
बारसंगाइ-सुअ-जलहि-अवगाहया ।
मोक्ख-लच्छी महंती महंते सया,
सूरिणो दिंतु मोक्खं-गया-संगया ॥३॥

घोर-संसार-भीमाडवी-काणणे,
तिक्ख-वियराल-णह-पाव-पंचाणणे ।
णट्ठ-मग्गाण जीवाण पहदेसिया,
वंदिमो ते उवज्झाय अम्हे सया ॥४॥

उग्ग-तव-चरण-करणेहिं झीणं गया,
धम्म वर-झाण-सुक्केक्क-झाणं-गया ।
णिब्भरं तव-सिरी-ए-समा-लिंगया,
साहवो ते महा-मोक्ख-पथ-मग्गया ॥५॥

एण थोत्तेण जो पंचगुरु वंदए,
गुरुय-संसार-घण-वेल्लि सो छिंदए ।
लहइ सो सिद्ध-सोक्खाइ बहु-माणणं,
कुणइ कम्मिंधणं पुंज-पज्जालणं ॥६॥

अरुहा सिद्धा इरिया उवझाया साहु पंचपरमेट्ठी ।
एदे पंच-णमोयारा भवे भवे मम सुहं दिंतु ॥७॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! पंचमहागुरु-भत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं । अट्ठा-महा-पाडिहेर-संजुत्ताणं अरहंताणं; अट्ठ-गुण-संपण्णाणं उड्ढ-लोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं सिद्धाणं; अट्ठ-पवयण-मउ-संजुत्ताणं आइरियाणं, आयारादि-सुद-णाणोवदेसयाणं, उवज्झायाणं; ति-रयण-गुण-पालण-रदाणं सव्वसाहूणं; णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं ।

अथ पौर्वाह्णिक (माध्याह्निक) (आपराह्णिक) देववन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्म-क्षयार्थं भाव-पूजा-वंदना-स्तव-समेतं श्री चैत्यभक्ति, पंचगुरु भक्ति कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादि-दोष-विशुद्ध्यर्थं आत्म-पवित्री-करणार्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(यहाँ पंचांग नमस्कार कर ३ आवर्त्त और एक शिरोनति कर सामायिक स्तव पढ़ें । पश्चात् तीन आवर्त और एक शिरोनति कर २७ उच्छ्वासों में कायोत्सर्ग करके पंचांग नमस्कार करें । पश्चात् ३ आवर्त, १ शिरोनति कर थोस्सामि स्तव पढ़कर पुनः ३ आवर्त, १ शिरोनति कर समाधिभक्ति पढ़ें ।)

द्वात्रिंशतिका-सामायिक पाठ

सत्त्वेषु मैत्रीं गुणिषु प्रमोदं,
क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम् ।
माध्यस्थभावं विपरीतवृत्तौ,
सदाममात्मा विदधातु देव ।।१।।

शरीरतः कर्त्तुमनन्तशक्तिं,
विभिन्नमात्मानमपास्तदोषम् ।
जिनेन्द्र ! कोषादिव खड्गयष्टिं,
तव प्रसादेन ममास्तु शक्तिः ।।२।।

दुःखे सुखे वैरिणि बन्धुवर्गे,
योगे वियोगे भवने वने वा ।
निराकृताशेष ममत्वबुद्धेः-
समं मनोमेऽस्तु सदापि नाथ ।।३।।

मुनीश ! लीनाविव कीलिताविव,
स्थिरौ निषाताविव विम्बिताविव ।
पादौ त्वदीयौ मम तिष्ठतां सदा,
तमोधुनानौ हृदि दीपकाविव ।।४।।

एकेन्द्रियाद्या यदि देव ! देहिनः,
प्रमादतः सञ्चरता इतस्ततः ।
क्षता विभिन्ना मिलिता निपीडिताः,
तदस्तु मिथ्या दुरनुष्ठितं तदा ।।५।।

विमुक्तिमार्ग प्रतिकूल वर्तिना,
मया कषायाक्षवशेन दुर्धिया ।
चारित्रशुद्धेर्यदकारि लोपनं,
तदस्तु मिथ्या मम दुष्कृतं प्रभो ! ।।६।।

विनिन्दनालोचनगर्हणैरहं,
मनोवचः कायकषाय निर्मितम् ।

निहन्मि पापं भवदुःखकारणं,
भिषग्विषं मन्त्रगुणै रिवाखिलम् ।।७।।
अतिक्रमं यद्विमतेर्व्यतिक्रमं,
जिनातिचारं सुचरित्र कर्मणः ।
व्यधामनाचार मपि प्रमादतः-
प्रतिक्रमं तस्य करोमि शुद्धये ।।८।।
क्षतिं मनःशुद्धि विधेरतिक्रमं-
व्यतिक्रमं शील व्रतेर्विलंघनम् ।
प्रभोऽतिचारं विषयेषु वर्तनं-
वदन्त्यनाचारमिहातिसक्तताम् ।।९।।
यदर्थमात्रा पदवाक्यहीनं-
मया प्रमादाद्यदि किञ्चनोक्तम् ।
तन्मे क्षमित्वा विदधातु देवी-
सरस्वती केवलबोधलब्धिम् ।।१०।।
बोधिः समाधिः परिणामशुद्धिः-
स्वात्मोपलब्धिः शिवसौख्यसिद्धिः ।
चिन्तामणिं चिन्तितवस्तुदाने-
त्वां वन्द्यमानस्य ममास्तु देवि ।।११।।
यः स्मर्यते सर्वमुनीन्द्रवृन्दैः
यः स्तूयते सर्वनरामरेन्द्रैः ।
यो गीयते वेदपुराणशास्त्रैः-
स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ।।१२।।

यो दर्शनज्ञान सुखस्वभाव:-
समस्तसंसार विकारवाह्य: ।
समाधिगम्य: परमात्मसंज्ञ:-
स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ।।१३।।

निषूदते यो भवदु:ख जालं-
निरीक्षते यो जगदन्तरालं ।
योऽन्तर्गतो योगिनिरीक्षणीय:-
स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ।।१४।।

विमुक्ति मार्ग प्रतिपादको यो-
यो जन्ममृत्यु व्यसनाद्यतीत:-
त्रिलोक लोकी विकलोऽकलंक:-
स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ।।१५।।

क्रोडीकृता शेषशरीरवर्गा:-
रागादयो यस्य न सन्ति दोषा: ।
निरिन्द्रियो ज्ञानमयोऽनपाय:-
स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ।।१६।।

यो व्यापको विश्वजनीन वृत्ते:-
सिद्धो विबुद्धो धुतकर्मबन्ध: ।
ध्यातो धुनीते सकलं विकारं-
स देवदेवो हृदये ममास्ताम् ।।१७।।

न स्पृश्यते कर्मकलंकदोषै:-
यो ध्वान्तसंघैरिव तिग्मरश्मि: ।

निरञ्जनं नित्यमनेक मेकं-
तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ।।१८।।
विभासते यत्र मरीचिमाली-
न विद्यमाने भुवनावभासि ।
स्वात्मस्थितं बोधमयप्रकाशं-
तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ।।१९।।
विलोक्यमाने सति यत्र विश्वं-
विलोक्यते स्पष्टमिदं विविक्तम् ।
शुद्धं शिवं शान्तमनाद्यनन्तं-
तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ।।२०।।
येन क्षता मन्मथमानमूर्च्छा-
विषादनिद्रा भयशोकचिन्ता ।
क्षयोऽनलेनेव तरुप्रपञ्च-
स्तं देवमाप्तं शरणं प्रपद्ये ।।२१।।
न संस्तरोऽश्मा न तृणं न मेदिनी-
विधानतो नो फलको विनिर्मितः ।
यतो निरस्ताक्षकषाय विद्विषः-
सुधीभिरात्मैव सुनिर्मलो मतः ।।२२।।
न संस्तरो भद्र ! समाधिसाधनं-
न लोकपूजा न च संघमेलनम् ।
यतस्ततोऽध्यात्मरतो भवानिशं-
विमुच्य सर्वामपि बाह्यवासनाम् ।।२३।।

न सन्ति बाह्या मम केचनार्थाः-
भवामि तेषां न कदाचनाहम् ।
इत्थं विनिश्चित्य विमुच्य बाह्यं-
स्वस्थः सदा त्वं भव भद्र मुक्तयै ।।२४।।
आत्मानमात्मन्यवलोकमानः-
त्वं दर्शनज्ञानमयो विशुद्धः ।
एकाग्रचित्तः खलु यत्र तत्र-
स्थितोपि साधुर्लभते समाधिम् ।।२५।।
एकः सदा शाश्वतिको ममात्मा-
विनिर्मलः साधिगम स्वभावः ।
बहिर्भवाः सन्त्यपरे समस्ता-
न शाश्वताः कर्मभवाः स्वकीयाः ।।२६।।
यस्यास्ति नैक्यं वपुषापि सार्द्धं-
तस्यास्ति किं पुत्रकलत्रमित्रैः ।
पृथक्कृते चर्मणि रोमकूपाः-
कुतोहि तिष्ठन्ति शरीरमध्ये ।।२७।।
संयोगतो दुःखमनेकभेदं-
यतोऽश्नुते जन्मवने शरीरी ।
ततस्त्रिधासौ परिवर्जनीयो-
यियासुना निर्वृतिमात्मनीनाम् ।।२८।।
सर्वं निराकृत्य विकल्पजालं-
संसारकान्तारनिपात हेतुम् ।

विविक्त मात्मानमवेक्ष्यमाणो-
निलीयसे त्वं परमात्मतत्त्वे ।।२९।।
स्वयं कृतं कर्म यदात्मना पुरा-
फलं तदीयं लभते शुभाशुभम् ।
परेणदत्तं यदि लभ्यते स्फुटं-
स्वयं कृतं कर्म निरर्थकं तदा ।।३०।।
निजार्जितं कर्म विहाय देहिनो-
न कोपि कस्यापि ददाति किञ्चन ।
विचारयन्नेवमनन्य मानसः-
परो ददातीति विमुञ्च शेमुषीम् ।।३१।।
यैः परमात्माऽमितगतिवन्द्यः ।
सर्व विविक्तो भृशमनवद्यः ।
शश्वदधीतो मनसि लभन्ते-
मुक्तिनिकेतं विभववरं ते ।।३२।।
इति द्वात्रिंशतावृत्तैः परमात्मानमीक्षते ।
योऽनन्यगत चेतस्को यात्यसौ पदमव्ययम् ।।३३।।

।। इत्यमितगतिसूरि विरचिता द्वात्रिंशतिका: ।।

समाधि भक्ति

अथेष्ट प्रार्थना

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः

शास्त्राभ्यासो जिनपति-नुतिः संगतिः सर्वदार्यैः,
सद्-वृत्तानां गुण-गण-कथा दोष वादे च मौनम् ।

सर्वस्यापि प्रिय-हित-वचो भावना चात्म-तत्त्वे,
सम्पद्यन्तां मम भव-भवे यावदेतेऽपवर्गः ।।१।।
तव पादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पद-द्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्-यावन्-निर्वाण-सम्प्राप्तिः ।।२।।
अक्खर-पयत्थ-हीणं, मत्ता-हीणं च जं मए भणियम् ।
तं खमहु णाण-देव ! य मज्झवि दुक्खक्खयं दिंतु ।।३।।

आञ्चलिका

इच्छामि भंते ! समाहि-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, रयणत्तय-सरूव-परमप्प-झाण-लक्खणं-समाहि-भत्तीए णिच्च कालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणम्, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं ।

(अनन्तर यथावकाश आत्मध्यान करें)

।। इति देववन्दना (सामायिक) विधि समाप्त ।।

आचार्य-वन्दना-विधि

सामायिक क्रिया समाप्त होने के बाद सर्व शिष्य एवं साधर्मी मुनिराज आचार्य के समीप गवासन से बैठें तथा हे भगवन् ! वन्देऽहं (हे भगवन् ! मैं आपकी वन्दना करता हूँ) ऐसी विज्ञप्ति करें इसके बाद जब आचार्य, वन्दस्व (वन्दना करो) ऐसी आज्ञा कर दें तब नीचे लिखी लघु सिद्ध भक्ति और लघु-आचार्य भक्ति द्वारा वन्दना करना चाहिए । यदि आचार्य सिद्धान्त वेत्ता हों तो उनकी वन्दना लघु सिद्ध भक्ति, लघु श्रुत भक्ति और लघु-आचार्य भक्ति के द्वारा करना चाहिए । आचार्य के सिवा यदि अन्य साधु सिद्धान्तवेत्ता हों तो उनकी वन्दना भी गवासन से बैठ कर लघु सिद्ध और लघु श्रुत भक्ति बोलकर तथा अन्य दूसरे जेष्ठ (बड़े) साधुओं की वन्दना, मात्र लघु सिद्ध भक्ति बोलकर करना चाहिए ।

विज्ञापन

अथ पौर्वाह्णिक (आपराह्णिक) आचार्य वन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्ध भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(२७ उच्छ्वास में कायोत्सर्ग करना)

सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं ।
अगुरु-लघु-मव्वावाहं, अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ।।१।।
तव-सिद्धे णय-सिद्धे संजम-सिद्धे चरित्त-सिद्धे य ।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमंसामि ।।२।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! सिद्ध भत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचारित्त-जुत्ताणं, अट्ठविह-कम्म-विप्पमुक्काणं, अट्ठ-गुण-संपण्णाणं, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तव-सिद्धाणं, णय सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं, अतीताणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं ।

विज्ञापन

अथ पौर्वाह्णिक आचार्य-वन्दना-क्रियायां पूर्वा-

चार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वंदना-स्तव-समेतं श्री श्रुत भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(२७ उच्छ्‌वास में कायोत्सर्ग करना)

कोटी-शतं द्वादश चैव कोट्यो,
लक्षाण्यशीति-स्त्र्यधिकानि चैव ।
पञ्चाशदष्टौ च सहस्र-संख्या-
मेतच्छ्रुतं पञ्च-पदं नमामि ।।१।।

अरहंत-भासियत्थं गणहर-देवेहिं गंथियं सम्मं ।
पणमामि भत्तिजुत्तो सुद-णाण-महोवहिं सिरसा ।।२।।

आञ्चलिका

इच्छामि भंते ! सुदभत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं अंगोवंग-पइण्णय-पाहुडय-परियम्म-सुत्त-पढमाणिओग-पुव्वगय-चूलिया चेव सुत्तत्थय-थुइधम्म-कहाइयं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं ।

विज्ञापन

अथ पौर्वाह्णिक आचार्य वन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना स्तव-समेतं, श्री आचार्य भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(२७ उच्छ्‌वासों में कायोत्सर्ग करना)

लघु आचार्य भक्ति

श्रुत-जलधि-पारगेभ्यः, स्व-पर-मत-विभावना-पटु-मतिभ्यः।
सुचरित-तपो-निधिभ्यो, नमो गुरुभ्यो गुण-गुरुभ्यः ।।१।।

छत्तीस-गुण-समग्गे, पञ्च-विहाचार-करण-संदरिसे ।
सिस्साणुग्गह-कुसले, धम्माइरिए सदा वन्दे ।।२।।

गुरु-भत्ति संजमेणाय, तरन्ति संसार-सायरं घोरम् ।
छिण्णंति अट्ठ-कम्मं, जम्मण-मरणं ण पावेंति ।।३।।

ये नित्यं व्रत-मन्त्र-होम-निरता, ध्यानाग्नि-होत्राकुलाः ।
षट्-कर्माभि-रतास्तपोधन-धनाः, साधु-क्रियाः साधवः ।।
शील-प्रावरणा-गुण-प्रहरणाश्-चन्द्रार्क-तेजोऽधिका ।
मोक्ष-द्वार-कपाट-पाटन-भटाः, प्रीणन्तु माम् साधवः ।।४।।

गुरवः पांतु नो नित्यं, ज्ञान-दर्शन-नायकाः ।
चारित्रार्णव-गम्भीरा, मोक्ष-मार्गोपदेशकाः ।।५।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! आइरिय-भत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचारित्त जुत्ताणं, पंच-विहाचाराणं, आइरियाणं; आयारादिसुद-णाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं; ति-रयण-गुण-पालण-रयाणं सव्वसाहूणं; णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं ।

"त्रिसन्ध्यं वन्दने युञ्ज्याच्चैत्य- पंच-गुरुस्तुति"तथा "जिणदेव-वन्दणाए चेदिय-भत्ती य पञ्चगुरुभत्ती" इन आगम सूत्रों से तथा मूलाचार आदि अन्य ग्रन्थों से ऐसा प्रतीत होता है कि आचार्यों ने त्रिकाल सामायिक और भगवान् जिनेन्द्र के दर्शन इन दोनों को देव-वन्दना शब्द से अर्थात् दोनों को एक ही कहा है ।

अनगार धर्मामृत अध्याय ७ के "श्रुतदृष्ट्यात्मनि स्तुत्यं.....नि:सही गिरा" ।।१७।। "चैत्यालोकोद्य.......मुद्रया पठन्" ।।१८।। "कृत्वेर्यापथसंशुद्धि.......पर्यङ्कस्थोग्रमङ्गलम्'।। १९।। आदि श्लोकों में भगवान् जिनेन्द्र के दर्शन करने के बाद "नमोस्तु भगवन् ! देववन्दनां करिष्यामि" कहकर सामायिक करने की प्रतिज्ञा कराई है, और इसी के बाद सामायिक विधि का प्रतिपादन किया है। किन्तु वर्तमान में साधुजन प्रात:कालीन सामायिक के बाद और सन्ध्याकालीन सामायिक के पूर्व देवदर्शन करते हैं, इसी क्रिया को लक्ष्य में रखकर यहाँ प्रात:कालीन देववन्दना (सामायिक) के अनन्तर जिनेन्द्र दर्शन विधि का क्रम रखा जा रहा है ।

देवदर्शन प्रयोग विधि

द्रव्य, क्षेत्र, काल और भावों की शुद्धि पूर्वक साधुजन देव-दर्शन के लिए जिनमन्दिर जावें, वहाँ प्रासुक एवं योग्य स्थान पर बैठ कर अपने कमण्डलु के जल से हाथ-पैर धोवें अनन्तर (ॐ) जय जय जय, नि:सही नि:सही नि:सही शब्दों का उच्चारण करते हुए मन्दिरजी में प्रवेश करें । वहाँ पहुँच कर जिनेन्द्र देव की वीतराग मुद्रा का अवलोकन कर तीन बार नमस्कार करें पश्चात् पिच्छिका युक्त दोनों हाथों को मुकुलित कर और कुहनियों को उदर पर रख कर गर्भगृह अथवा वेदी की तीन प्रदक्षिणाएँ देते हुये निम्नलिखित स्तोत्र पाठों में से कोई एक दर्शन पाठ बोलें । विशेष इतना है कि प्रदक्षिणा देते समय प्रत्येक प्रदक्षिणा एवं प्रत्येक दिशा में तीन-तीन आवर्त और एक-एक शिरोनति करते जाना चाहिए।

चैत्यालयाष्टक-स्तोत्र

दृष्टं जिनेन्द्र-भवनं भव-ताप-हारि,
भव्यात्मनां विभव-सम्भव-भूरि-हेतु ।
दुग्धाब्धि-फेन-धवलोज्ज्वल-कूट-कोटी,
नद्ध-ध्वज-प्रकर-राजि-विराजमानम् ।।१।।

दृष्टं जिनेन्द्र-भवनं भुवनैक-लक्ष्मी-
धामर्द्धि-वर्धित-महामुनि-सेव्यमानम् ।
विद्याधरामर-वधू-जन-मुक्त-दिव्य-
पुष्पाञ्जलि-प्रकर-शोभित-भूमि-भागम् ।।२।।
दृष्टं जिनेन्द्र भवनं भवनादि-वास-
विख्यात-नाक-गणिका-गण-गीयमानम् ।
नाना-मणि-प्रचय-भासुर-रश्मि-जाल-
व्यालीढ-निर्मल-विशाल-गवाक्ष-जालम् ।।३।।
दृष्टं जिनेन्द्र-भवनं सुर-सिद्ध-यक्ष-
गन्धर्व-किन्नर-करार्पित-वेणु-वीणा ।
संगीत-मिश्रित-नमस्कृत-धीर-नादै-
रापूरिताम्बरतलोरु-दिगन्तरालम् ।।४।।
दृष्टं जिनेन्द्र-भवनं विलसद्-विलोल-
माला-कुलालि-ललितालक-विभ्रमाणाम् ।
माधुर्य-वाद्य-लय-नृत्य-विलासिनीनां
लीला-चलद्-वलय-नूपुर-नाद-रम्यम् ।।५।।
दृष्टं जिनेन्द्र-भवनं मणि-रत्न-हेम-
सारोज्ज्वलैः कलश-चामर-दर्पणाद्यैः ।
सन्मंगलैः सतत-मष्ट-शत-प्रभेदै-
र्विभ्राजितं विमल-मौक्तिक-दाम-शोभम् ।।६।।
दृष्टं जिनेन्द्र-भवनं वर-देवदारु-
कर्पूर-चन्दन-तरुष्क-सुगन्धि-धूपैः ।

मेघायमान-गगने पवनाभिघात-
चञ्चच्-चलद्-विमल-केतन-तुंग-शालम् ।।७।।
दृष्टं जिनेन्द्र-भवनं धवलातपत्र-
च्छाया-निमग्न-तनु-यक्षकुमार-वृन्दैः ।
दोधूयमान-सित-चामर-पंक्ति-भासं,
भामण्डल-द्युति-युत प्रतिमाभिरामम् ।।८।।
दृष्टं जिनेन्द्र भवनं विविध-प्रकार-
पुष्पोपहार-रमणीय-सुरत्न-भूमि ।
नित्यं वसन्त-तिलक-श्रिय-मादधानं,
सन्-मंगलं सकल-चन्द्र-मुनीन्द्र-वन्द्यम् ।।९।।
दृष्टं मयाद्य मणि-काञ्चन-चित्र-तुंग-
सिंहासनादि-जिनबिम्ब-विभूति-युक्तम् ।
चैत्यालयं यदतुलं परिकीर्तितं मे,
सन्-मंगलं सकल-चन्द्र-मुनींद्र-वन्द्यम् ।।१०।।

।। चैत्यालयाष्टक-स्तोत्र-समाप्तं ।।

(अथवा नीचे लिखा दर्शन पाठ बोलकर भगवान के दर्शन करना चाहिए)

अथ दर्शन पाठ

दर्शनं देव देवस्य दर्शनं पाप-नाशनं,
दर्शनं स्वर्ग-सोपानं दर्शनं मोक्ष-साधनम् ।।१।।
दर्शनेन जिनेन्द्राणां साधूनां वन्दनेन च,
न तिष्ठति चिरं पापं छिद्र-हस्ते यथोदकम् ।।२।।

वीतराग-मुखं दृष्ट्वा, पद्म-राग-सम-प्रभं,
नैकजन्मकृतं पापं दर्शनेन विनश्यति ।।३।।
दर्शनं जिन-सूर्यस्य संसार-ध्वान्त-नाशनं,
बोधनं चित्त-पद्मस्य समस्तार्थ प्रकाशनम् ।।४।।
दर्शनं जिन चन्द्रस्य सद्-धर्मामृत-वर्षणं,
जन्म-दाह-विनाशाय, वर्धनं सुख-वारिधेः ।।५।।

जीवादि तत्त्व प्रतिपादकाय,
सम्यक्त्व-मुख्याष्ट-गुणार्णवाय ।
प्रशान्त-रूपाय-दिगम्बराय,
देवाधि-देवाय नमो जिनाय ।।६।।

चिदानन्दैक-रूपाय जिनाय परमात्मने ।
परमात्म-प्रकाशाय नित्यं सिद्धात्मने नमः ।।७।।
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात् कारुण्य-भावेन, रक्ष रक्ष जिनेश्वर ।।८।।
नहि त्राता नहि त्राता नहि त्राता जगत्-त्रये ।
वीतरागात् परो देवो न भूतो न भविष्यति ।।९।।
जिनेभक्ति-र्जिनेभक्ति-र्जिनेभक्ति-र्दिने-दिने ।
सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु भवे भवे ।।१०।।
जिन-धर्म-विनिर्मुक्तो मा भूवं-चक्रवर्त्यपि ।
स्याच्चेटोऽपि दरिद्रोऽपि जिन-धर्मानुवासितः ।।११।।
जन्म-जन्म-कृतं पापं जन्म-कोटिभि-रर्जितम् ।
जन्म-मृत्यु-जरा-रोगो हन्यते जिन-दर्शनात् ।।१२।।

अद्याभवत्-सफलता, नयन-द्वयस्य
देव ! त्वदीय-चरणाम्बुज-वीक्षणेन ।।
अद्य त्रिलोक-तिलक-प्रतिभासते मे
संसार-वारिधि-रयं चुलुक-प्रमाणः ।।१३।।

(अथवा निम्नलिखित अर्हद्-भक्ति बोलते हुए दर्शन करना चाहिए)

अथ अर्हद्-भक्ति

स्रग्धरा

निःसंगोऽहं जिनानां सदन-
मनुपमं त्रिःपरीत्येत्य भक्त्या,
स्थित्वा गत्वा निषद्यो-च्चरण-
परिणतोऽन्तः शनै-र्हस्त-युग्मम् ।
भाले संस्थाप्य बुद्ध्या मम
दुरित-हर कीर्तये शक्र-वन्द्यम्,
निन्दा-दूरं सदाप्तं क्षय-रहित-
ममुं ज्ञान-भानुं जिनेन्द्रम् ।।१।।

वसन्ततिलका

श्रीमत्-पवित्रमकलंक-मनन्त-कल्पम्,
स्वायंभुवं सकल-मंगलमादि-तीर्थम् ।
नित्योत्सवं मणिमयं निलयं जिनानाम्,
त्रैलोक्य-भूषणमहं शरणं प्रपद्ये ।।२।।

अनुष्टुप्

श्रीमत्-परम-गम्भीर-स्याद्वादामोघ-लाञ्छनम् ।
जीयात्-त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिन-शासनम् ।।३।।
श्री-मुखालोकनादेव, श्री-मुखालोकनं भवेत् ।
आलोकन-विहीनस्य, तत् सुखावाप्तयः कुतः ।।४।।

वसन्ततिलका

अद्याभवत्-सफलता नयन-द्वयस्य,
देव ! त्वदीय-चरणाम्बुज-वीक्षणेन ।
अद्य-त्रिलोक-तिलक ! प्रतिभासते मे,
संसार-वारिधि-रयं चुलुक प्रमाणः ।।५।।

अनुष्टुप्

अद्य मे क्षालितं गात्रं नेत्रे च विमलीकृते ।
स्नातोऽहं धर्म-तीर्थेषु जिनेन्द्र ! तवदर्शनात् ।।६।।

उपेन्द्रवज्रा छंद

नमो नमः सत्त्व-हितंकराय,
वीराय भव्याम्बुज-भास्कराय ।
अनन्त-लोकाय सुरार्चिताय,
देवाधि-देवाय नमो जिनाय ।।७।।
नमो जिनाय त्रिदशार्चिताय,
विनष्ट-दोषाय गुणार्णवाय ।
विमुक्ति-मार्ग-प्रतिबोधनाय,
देवाधि-देवाय नमो जिनाय ।।८।।

वसन्ततिलका

देवाधिदेव ! परमेश्वर ! वीतराग !
सर्वज्ञ ! तीर्थंकर ! सिद्ध ! महानुभाव !
त्रैलोक्यनाथ ! जिन-पुंगव ! वर्धमान !
स्वामिन् ! गतोऽस्मि शरणं चरण-द्वयं ते ।।९।।

आर्या

जित-मद-हर्ष-द्वेषा, जित-मोह -परिषहाः जित-कषायः ।
जित-जन्म-मरण-रोगा, जित-मात्सर्या जयन्तु जिनाः।।१०।।

जयतु जिन वर्धमान-स्त्रिभुवन हित-धर्म-चक्र-नीरज बन्धुः।
त्रिदशपति-मुकुट भासुर, चूड़ामणि-रश्मि-रञ्जितारुण-चरण ।।११।।

हरिणी

जय जय जय त्रैलोक्य-काण्ड-शोभि-शिखामणे,
नुद नुद नुद स्वान्त-ध्वान्तं जगत्-कमलार्क नः ।
नय नय नय स्वामिन् ! शान्तिं नितान्त-मनन्तिमाम्,
नहि नहि नहि त्राता, लोकैक-मित्र-भवत्-परः।।१२।।

वसन्ततिलका

चित्ते मुखे शिरसि पाणि-पयोज-युग्मे,
भक्तिं स्तुतिं विनतिमञ्जलिमञ्जसैव ।
चेक्रीयते चरिकरीति चरीकरीति,
यश्चर्करीति तव देव ! स एव धन्यः ।।१३।।

मन्दाक्रान्ता

जन्मोन्मार्ज्यं भजतु भवतः पाद-पद्मं न लभ्यम् ,
तच्चेत्-स्वैरं चरतु न च दुर्देवतां सेवतां सः ।
अश्नात्यन्नं यदिह सुलभं दुर्लभं चेन्मुधा-स्ते ,
क्षुद्-व्यावृत्यै कवलयति कः कालकूटं बुभुक्षः ।।१४।।

शार्दूल-विक्रीड़ित

रूपं ते निरुपाधि-सुन्दर-मिदं, पश्यन् सहस्रेक्षणः,
प्रेक्षा-कौतुक-कारिकोऽत्र भगवन् नोपेत्यवस्थान्तरम् ।
वाणीं गद्गद्यन् वपुः पुलकयन्, नेत्र-द्वयं श्रावयन्,
मूर्द्धानं नमयन् करौ मुकुलयंश्चेतोऽपि निर्वापयन्।।१५।।
त्रस्तारातिरिति त्रिकालविदिति त्राता त्रिलोक्या इति,
श्रेयः सूति-रिति श्रियां निधिरिति, श्रेष्ठः सुराणामिति ।
प्राप्तोऽहं शरणं शरण्य-मगतिस्त्वां तत् त्यजोपेक्षणम्,
रक्ष क्षेम-पदं प्रसीद जिन किं, विज्ञार्पितै र्गोपितैः ।।१६।।

उपजाति

त्रिलोक-राजेन्द्र-किरीट-कोटि-
प्रभाभि-रालीढ-पदार-विन्दम् ।
निर्मूल-मुन्मूलित-कर्म वृक्षं,
जिनेन्द्र-चन्द्रं प्रणमामि भक्त्या ।।१७।।

(इस प्रकार भक्ति भाव से अभिषिक्त किन्हीं भी एक दो स्तोत्रों द्वारा जिनेन्द्र देव के दर्शन करें, पश्चात् भगवान् के समक्ष खड़े रहकर, दोनों पैरों को समान कर, चार अंगुल का अन्तर रख कर और दोनों हाथों को मुकुलित कर "कृत्वेर्यापथ संशुद्धि......" इस आगम वचन के अनुसार नीचे लिखा ऐर्यापथिक दोष विशुद्धि पाठ पढ़ें ।)

ईर्या-पथ-विशुद्धि

पडिक्कमामि भंते ! इरिया वहियाए, विराहणाए, अणागुत्ते, अइगमणे, णिग्गमणे, ठाणे, गमणे, चंकमणे, पाणुग्गमणे, बीजुग्गमणे, हरिदुग्गमणे, उच्चारपस्सवण-खेल-सिंहाण-वियडि-पइट्ठावणियाए, जे जीवा एइंदिया वा, बेइंदिया वा, तेइंदिया वा, चउरिंदिया वा, पंचिंदिया वा, णोल्लिदा वा, पेल्लिदा वा, संघट्टिदा वा, संघादिदा वा, उद्दाविदा वा, परिदाविदा वा, किरिंच्छिदा वा, लेस्सिदा वा, छिंदिदा वा, भिंदिदा वा, ठाणदो वा, ठाण-चंकमणदो वा, तस्स उत्तर-गुणं, तस्स पायच्छित्त-करणं, तस्स विसोहि-करणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, णमोक्कारं, पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ २७ उच्छ्वासों में ९ जाप्य करें)

ईर्यापथ-आलोचना

ईर्या-पथे प्रचलताद्य मया प्रमादा-
देकेन्द्रिय-प्रमुख-जीव-निकाय बाधा ।
निर्वर्तिता यदि भवेदयुगान्तरेक्षा,
मिथ्या तदस्तु दुरितं गुरु-भक्तितो मे ।।१।।

इच्छामि भंते ! इरियावहियस्य, आलोचेउं, पुव्वुत्तर-दक्खिण-पच्छिम-चउदिस-विदिसासु, विहरमाणेण जुगन्तर-दिट्ठिणा, भव्वेण दट्ठव्वा । पमाददोषेण, डव-डव-चरियाए, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

अभिषेक-वन्दना-क्रिया

इस प्रकार दर्शन क्रिया समाप्ति के बाद "सिद्धभक्त्यादिशान्त्यन्ता पूजाभिषवमंगले" अथवा "अहिसेयवंदणासिद्धचेदियपंचगुरुसन्तिभत्तीहिं" अथवा "सा नन्दीश्वरपदकृतचैत्यालयाभिषेकवन्दनास्ति तथा" इत्यादि आगम-वचनानुसार निम्नलिखित भक्तियों द्वारा भगवान् जिनेन्द्र की अभिषेक क्रिया देखना चाहिए। यथा-

विज्ञापन

अथ पौर्वाह्णिक अभिषेक-वन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना स्तव-समेतं, श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(९ बार णमोकार मन्त्र का जाप)

[नोट :-अभिषेक वन्दना क्रिया में दण्डक बोलना चाहिए या नहीं ? इसका स्पष्ट उल्लेख आगम में मुझे कहीं देखने में नहीं आया । अतः गुरुजन विचार कर दण्डक पूर्वक अथवा बिना दण्डक बोले ही कायोत्सर्ग करके सिद्ध भक्ति, चैत्य भक्ति, पञ्च महागुरु भक्ति, शान्ति भक्ति व समाधि भक्ति पढ़ें ।]

।। इति अभिषेक क्रिया विधि समाप्त ।।

शौच-क्रिया

अभिषेक क्रिया के बाद, ईर्या समिति पूर्वक शौच क्रिया को जाना चाहिए और जो प्रदेश वनाग्नि से जले हुए हों, जो कई बार विदारण किये जा चुके हों, जो श्मशान की अग्नि से जले हों, जो पथिकाग्नि से जले हों, जो प्रदेश ठोस हों, छिद्र या दराचों से रहित हों, जो द्वीन्द्रियादि जीवों से रहित हों, कूड़ा कचरादि अपवित्रता से रहित हों, निर्जन अर्थात् स्त्री-पुरुषों आदि के आवागमन से रहित हों, आर्द्र न हों, पशुओं एवं मनुष्यों आदि के बैठने एवं रहने के (स्थान) न हों, हरे तृण, फल, पुष्प आदि से रहित हों, प्रकाश युक्त हों, स्वामी के द्वारा निषिद्ध न हों तथा जहाँ स्त्री, बालक एवं नपुंसकों आदि का आवागमन न हो वहाँ मल-मूत्र आदि का विसर्जन करना चाहिए । मल-मूत्र

का विसर्जन करने से पूर्व प्रासुक प्रदेश को सर्वप्रथम नेत्रों से भलीप्रकार देखना चाहिए, पश्चात् पीछी से मार्जन कर पुनः बैठना चाहिए। बैठने के पूर्व निःसही निःसही निःसही शब्दों का और शौच क्रिया से उठने के बाद असही असही असही शब्दों का उच्चारण करना चाहिए।

शौच के बाद अपने अपवित्र अंगों को एवं हाथों को बानी (राख) या ईंट के चूर्ण से पवित्र करना चाहिए। इसप्रकार शुद्धि कर लेने के बाद ["प्रस्रावे च तथोच्चारे उच्छ्वासा पञ्चविंशति" तथा "मूत्रोच्चाराध्वभक्तार्हत्, साधुशय्याभिवन्दने। पञ्चाग्रा विंशतिः ....।" इन आगमोक्त वचनों के अनुसार] २५ उच्छ्वासों में कायोत्सर्ग करना चाहिए, किन्तु संघ में गुरुजनों से यह सुना है कि लघु शंका (मूत्र) क्रिया के बाद तो मात्र कायोत्सर्ग करना किन्तु शौच क्रिया के बाद नीचे लिखी ईर्यापथ भक्ति पढ़कर कायोत्सर्ग करना। यथा–

ईर्यापथ शुद्धि

पडिक्कमामि भंते ! इरिया-वहियाए, विराहणाए, अणागुत्ते, अइ-गमणे, णिग्गमणे, ठाणे, गमणे, चंकमणे, पाणुग्गमणे, बीजुग्गमणे, हरिदुग्गमणे, उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाण-वियडि-पइट्ठावणियाए, जे जीवा एइंदिया वा, बे इंदिया वा, तेइंदिया वा, चउरिंदिया वा, पंचिंदिया वा, णोल्लिदा वा, पेल्लिदा वा, संघट्टिदा वा, संघादिदा वा, उद्दाविदा वा, परिदाविदा वा, किरिंच्छिदा वा, लेस्सिदा वा, छिंदिदा वा, भिंदिदा वा, ठाणदो वा, ठाण चंकमणदो वा, तस्स उत्तरगुणं, तस्स पायच्छित्त-करणं, तस्स विसोहिकरणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, णमोक्कारं पज्जुवासं करेमि, तावकालं, पावकालं दुच्चरियं वोस्सरामि।

यहाँ २५ उच्छ्वासों में कायोत्सर्ग करना चाहिए।

इस प्रकार शौचक्रिया से निवृत्त हो और भलीप्रकार कमण्डलु को साफ कर उसे सुखा देना चाहिए, पश्चात् निम्नलिखित विधि के अनुसार पौर्वाह्णिक स्वाध्याय की विधि करना चाहिये।

पौर्वाह्णिक स्वाध्याय विधि

पृष्ठ १ पर जो स्वाध्याय विधि लिखी गई है, उसी विधि के अनुसार यहाँ भी स्वाध्याय का प्रतिष्ठापन (प्रारम्भ) और निष्ठापन (समाप्ति) करना चाहिए। विशेष इतना है कि विज्ञापन में "अपर रात्रि" स्वाध्याय के स्थान पर "पौर्वाह्णिक स्वाध्याय" बोलना चाहिए।

आहार-चर्या

चारित्र के अन्य ग्रन्थों में तथा कुन्दकुन्दाचार्य विरचित मूलाचार के पृष्ठ १७४ पर आचार्य लिखते हैं कि साधु मध्याह्नकाल में जब दो घटिका अवशेष रहें तब स्वाध्याय की समाप्ति कर अपनी वसतिका से दूर जाकर शौचविधि करें। तदनन्तर वहाँ से लौटकर हाथ-पैरों की शुद्धि कर पीछी-कमण्डलु लेकर जिन मन्दिर जाकर मध्याह्न देववन्दना (सामायिक) करें तदनन्तर आहार के लिए निकलें। अर्थात् आगम में दोपहर की सामायिक के बाद भी आहार करने का विधान प्राप्त होता है, किन्तु, "उदयत्थमणे काले णालीतियवज्जियम्हि मज्झम्हि............(३७ अ० १ मूला०) अर्थात् सूर्योदय की तीन-घटिका और सूर्यास्त की तीन घटिका छोड़कर (मध्याह्न सामायिक का काल छोड़कर) मध्य के काल में साधुओं का आहार ग्रहण करना एक भक्त है" इस नियम के अनुसार वर्तमान में साधुगण प्रातः ९ बजे से ११ ½ बजे के अन्तर्गत ही प्रायः आहार चर्या करते हैं इसी बात को ध्यान में रखकर प्रातःकालीन स्वाध्याय समाप्ति के बाद और मध्याह्न देववन्दना के पूर्व आहारचर्या की विधि लिखी जा रही है।

दिगम्बर साधु बलवृद्धि, आयुवृद्धि, मांसवृद्धि, कांतिवृद्धि तथा यहाँ स्वादिष्ट आहार मिलता है, इस इच्छा से अर्थात् गृद्धता वृद्धि के लिए आहार ग्रहण नहीं करते अपितु क्षुधावेदना का परिहार, स्व-पर वैयावृत्य, षट् आवश्यकों की प्रतिपालना, प्राणि एवं इन्द्रिय संयम का रक्षण, उत्तम क्षमादि दशधर्मों की प्रतिपालना और स्वाध्याय, संयम तथा ध्यान की सिद्धि के लिए आहार ग्रहण करते हैं। वह भी यदि नव-कोटिओं से शुद्ध हो, १६ उद्गम, १६ उत्पादन, १० एषणादोषों एवं संयोजना, अप्रमाण (आगम में भोजन का जो प्रमाण बतलाया है अर्थात् पेट के दो भाग भोजन से, एक भाग जल, दूध, छाछ आदि पेय पदार्थों से भरना तथा एक भाग खाली रखना, इस प्रमाण का उल्लंघन नहीं करना), अंगार

(लम्पटतापूर्ण भोजन) और सधूम (मन में भोज्य पदार्थों की निंदा करते हुए आहार करना) दोषों से रहित हो, तो ग्रहण करते हैं, अन्यथा नहीं ।

आहार-विधि

आहार ग्रहण करने के उपर्युक्त छह कारणों में से किन्हीं एक-दो कारणों के उपस्थित हो जाने पर मुनिजन, आहार को उठते हैं । साधुओं को सर्वप्रथम अपने कमण्डलु के प्रासुक और शुद्धजल से हाथ (कुहनी पर्यंत), पैर (घुटनों पर्यन्त) आदि धोकर शुद्धि करना चाहिए, पश्चात् श्री मन्दिर में जिनेन्द्र भगवान् के दर्शन कर पृष्ठ ५ पर छपी हुई विज्ञापन सहित लघु आचार्य भक्ति बोल कर गुरु वन्दना करना चाहिए । पश्चात् पूर्व दिन ग्रहण किये हुए उपवास अथवा प्रत्याख्यान का निष्ठापन (समापन) करने के लिए निम्नलिखित लघु सिद्धभक्ति एवं लघु योगिभक्ति बोलना चाहिए । यथा–

विज्ञापन

अथ चतुर्विधाहार (उपवास) प्रत्याख्यान निष्ठापन क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

(कायोत्सर्ग करें)

लघु सिद्धभक्ति

सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं ।
अगुरु-लघु-मव्वावाहं, अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ।।१।।
तव-सिद्धे णय-सिद्धे संजम-सिद्धे चरित्त-सिद्धे य ।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमस्सामि ।।२।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! सिद्ध भत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं,

अट्ठविह-कम्म-विप्पमुक्काणं, अट्ठ-गुण-संपण्णाणं, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तव-सिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं, अतीताणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहिमरणं, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं ।

विज्ञापन

अथ चतुर्विधाहार प्रत्याख्यान निष्ठापन क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं भाव-पूजा-वंदना-स्तव-समेतं श्री योगिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(कायोत्सर्ग करना)

लघु योगिभक्ति

प्रावृट्-काले सविद्युत्-प्रपतित-
सलिले वृक्ष-मूलाधिवासाः ।
हेमन्ते रात्रि-मध्ये प्रति-विगत-
भयाः काष्ठवत्-त्यक्त-देहाः ।।१।।
ग्रीष्मे सूर्यांशु-तप्ता गिरि-शिखर-
गताः स्थान-कूटान्तरस्थास् ।
ते मे धर्मं प्रदद्यु-र्मुनि-गण-
वृषभा-मोक्ष-निःश्रेणि-भूताः ।।२।।

गिम्हे गिरि-सिहरत्था, वरिसायाले रुक्ख-मूल-रयणीसु ।
सिसिरे बाहिर-सयणा ते साहू वंदिमो णिच्चं ।।३।।

गिरि-कन्दर-दुर्गेषु ये वसन्ति दिगम्बराः ।
पाणि-पात्र-पुटाहारास् ते यान्ति परमां गतिम् ।।४।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! योगि भत्ति काउस्सग्गो, कओ, तस्सालोचेउं, अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस-कम्म-भूमिसु, आदावण-रुक्ख-मूल-अब्भोवास-ठाण-मोण-वीरा-सणेक्कपास-कुक्कुडासण-चउ-छ-पक्ख-खवणादि जोग-जुत्ताणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होदु मज्झं[1] ।

भगवान् जिनेन्द्र के समक्ष उपर्युक्त दोनों भक्तियाँ बोलकर तथा मुद्रा (बायें हाथ में पीछी-कमण्डलु और दाहिना हाथ कंधे पर) धारणकर आहार के लिए निकलें तथा व्रतपरिसंख्यान मिल जानेपर योग्य श्रावक के गृह पडगाहनविधि पूर्ण होनेपर गृह में प्रवेश करें और नवधा भक्तिपूर्ण हो जाने के बाद एवं आहार ग्रहण के पूर्व हस्त प्रक्षालन करें, पश्चात्-अथ चतुर्विधाहार निष्ठापन......... इत्यादि विज्ञापनकर कायोत्सर्ग करें, तदनन्तर पृष्ठ ७८ पर लिखी हुई लघु सिद्धभक्ति पढ़कर बिना किसी के सहारे, नाभि से ऊपर दोनों हाथों को रखते हुए खड़ा होवें, पश्चात् आहार ग्रहण करें । आहार हो चुकने के बाद बैठकर मुख एवं हस्त पैर आदि की शुद्धि करें । पश्चात् श्रावक के हाथ से पिच्छिका ग्रहणकर आहार त्याग हेतु निम्नलिखित लघु सिद्धभक्ति बोलें । यथा-

अथ चतुर्विधाहारप्रत्याख्यानप्रतिष्ठापनक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

---

१. उपर्युक्त ये दोनों लघु भक्तियाँ बोलने का स्पष्ट विधान आगम में दृष्टिगत नहीं हुआ । गुरुपरम्परा के आधार पर लिखा है ।

यहाँ पर कायोत्सर्ग करें, पश्चात् पृष्ठ ७८ पर लिखी हुई लघु सिद्धभक्ति पढ़कर चारों प्रकार के आहार-जलका त्यागकर कमण्डलु लेकर वापिस आवें। मन्दिरजी में आकर भगवान् अथवा गुरु के समक्ष "अथ चतुर्विधाहारप्रतिष्ठापन क्रियायां......... इत्यादि विज्ञापन पूर्वक कायोत्सर्ग करें, पश्चात् लघु सिद्धभक्ति बोलें । पश्चात् पुनः विज्ञापन पूर्वक कायोत्सर्ग कर पूर्व के सदृश लघु योगिभक्ति बोल कर दूसरे दिन ९½ या १० बजे पर्यन्त के लिए चारों प्रकार के आहार-जल का त्याग करें । विशेष इतना है कि यह विधि आचार्य परमेष्ठी के समीप न रहने पर ही करना चाहिए । यदि आचार्य श्री पास में हों तो आहार से आकर सर्व प्रथम–अथ आचार्य वन्दना क्रियायां................ इत्यादि विज्ञापन एवं कायोत्सर्ग कर पृ० ६४ पर लिखी हुई "श्रुतजलधि पारगेभ्य..........." लघु आचार्य भक्ति बोलकर उनकी वन्दना करना चाहिए पश्चात् लघु सिद्धभक्ति और लघु योगिभक्ति बोल कर आहार-जल का त्याग अर्थात् प्रत्याख्यानादि का प्रतिष्ठापन करना चाहिए ।

अनगारधर्मामृत, अध्याय ९, श्लोक नं० ३९ "प्रतिक्रम्याथ गोचार दोषं....... अर्थात् प्रत्याख्यानादि ग्रहण (आहार-जल का त्याग) करने के बाद गोचार अर्थात् भोजन सम्बन्धी लगे हुए दोषों (अतीचारों) का प्रतिक्रमण करना चाहिए ।" इस गोचार प्रतिक्रमण का अर्थ समझ में नहीं आया कि किस विधि से और क्या बोलकर गोचार प्रतिक्रमण करना चाहिए ? हाँ ! गुरुकुल में मुनिराजों को आहार के उपरान्त ईर्यापथशुद्धि बोलते अवश्य सुना है, सम्भव है, ईर्यापथ शुद्धि बोलने का नाम ही गोचर-प्रतिक्रमण हो । विद्वज्जन विचार करें और यदि योग्य हो तो पृष्ठ ३९ पर लिखी हुई ईर्यापथशुद्धि बोलकर कायोत्सर्ग करें ।

उपवास-ग्रहण-त्याग-विधि

आहार के बाद यदि उपवास ग्रहण करने की इच्छा हो और आचार्य श्री समक्ष न हों तो–अथ उपवास प्रतिष्ठापन क्रियायां............... । इत्यादि विज्ञापन बोलकर एवं कायोत्सर्ग करके लघुसिद्धभक्ति बोलकर उपवास ग्रहण करें और इसी विधि से ग्रहण किये हुए उपवास का निष्ठापन (समापन) करें, किन्तु आचार्य श्री समीप हों तो निम्नलिखित विधि से उपवास का ग्रहण और त्याग करें । यथा–

विज्ञापन

अथ उपवास-प्रतिष्ठापन-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् । (कायोत्सर्ग करें) ।

सम्मत्तणाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं ।
अगुरुलघु-मव्वाबाहं, अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ।।१।।
तव-सिद्धे णयसिद्धे संजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य ।
णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसा णमंसामि ।।२।।

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित-जुत्ताणं, अट्ठ-विह-कम्म-विप्प-मुक्काणं, अट्ठगुण-संपण्णाणं उड्ढलोय, मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तव-सिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त सिद्धाणं अतीताणागद-वट्टमाण-कालत्तय सिद्धाणं, सव्वसिद्धाणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहिमरणम्, जिण-गुण-संपत्ति होदु मज्झं।

अथ उपवास-प्रतिष्ठापन-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वंदना-स्तव-समेतं श्री योगिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् । (यहाँ कायोत्सर्ग करें)।

प्रावृट्-काले सविद्युत्-प्रपतित-
सलिले वृक्ष-मूलाधिवासाः ।
हेमन्ते रात्रि-मध्ये प्रति-विगत-
भयाः काष्ठवत्-त्यक्त-देहाः ।।१।।

ग्रीष्मे सूर्यांशु-तप्ता गिरि-शिखर-
गताः स्थान-कूटान्तरास्थास् ।
ते मे धर्मं प्रदद्यु-मुंनि-गण-
वृषभा-मोक्ष-निःश्रेणि-भूताः ॥२॥
गिम्हे गिरि-सिहरत्था, वरिसायाले रुक्ख-मूल-रयणीसु ।
सिसिरे बाहिर-सयणा, ते साहू वंदिमो णिच्चं ॥३॥
गिरि-कन्दर-दुर्गेषु, ये वसन्ति दिगम्बराः ।
पाणि-पात्र-पुटाहारास्ते, यान्ति परमां गतिम् ॥४॥

इच्छामि भंते ! योगिभत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं अड्डाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णा-रस-कम्म-भूमिसु, आदावण-रुक्ख-मूल-अब्भोवास-ठाण-मोण-वीरासणेक्कपास-कुक्कुडासण-चउ-छ-पक्ख-खवणादि-जोग-जुत्ताणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं।

आचार्य परमेष्ठी के समीप उपवास समाप्त करते समय भी ये ही दोनों भक्तियाँ बोलना चाहिए । विशेष इतना है कि–"अथ उपवास प्रतिष्ठापन" के स्थान पर "अथ उपवास निष्ठापन............." बोला जावेगा ।

॥ इति आहार एवं उपवास-ग्रहण-त्याग विधि समाप्त ॥

मध्याह्न देव-वन्दना (सामायिक) विधि

आहार क्रिया के बाद मध्याह्न के एक घड़ी पूर्व से (१२ बजने में २४ मिनिट अवशेष रहें तब से) मध्याह्न के एक घड़ी पश्चात् (१२ बज कर २४ मिनिट) तक अर्थात् दो घड़ी ४८ मिनिट (यह सामायिक का जघन्य काल है) तक पृ० ३८ से ६१ तक लिखी हुई सामायिक विधि के अनुसार ही सामायिक

करें । अन्तर केवल इतना है कि विज्ञापन बोलते समय पौर्वाह्णिक देववन्दना के स्थान पर माध्याह्निक देववन्दना बोलें ।

मध्याह्न-स्वाध्याय-विधि

माध्याह्निक सामायिक के बाद मध्याह्न से दो घड़ी अधिक समय व्यतीत हो जाने के बाद पृष्ठ १ पर लिखी हुई विधि के अनुसार स्वाध्याय प्रारम्भ करना चाहिए और जब सूर्यास्त में दो घड़ी (४८ मिनिट) काल अवशेष रहे तब पृष्ठ ५ पर लिखी विधि के अनुसार स्वाध्याय समाप्त कर देना चाहिए।

दैवसिक-प्रतिक्रमण-विधि

अपराह्णिक स्वाध्याय निष्ठापन (समाप्त) कर देने के बाद दिन भर में लगे हुए दोषों (अतीचारों) का संशोधन करने के लिए पृ० ६ से पृ० ३३ तक लिखी विधि के अनुसार प्रतिक्रमण करें । विशेष इतना है कि "रात्रिक प्रतिक्रमण" के स्थान पर "दैवसिक प्रतिक्रमण" पद बोलना चाहिए ।

रात्रि-योग-प्रतिष्ठापन-विधि

दैवसिकप्रतिक्रमणक्रिया की समाप्ति के बाद पृ० ३३ से ३७ पर्यन्त लिखी विधि के अनुसार रात्रि-योग प्रतिष्ठापन (रात्रि भर इसी वसतिका में रहूँगा) करना चाहिए । विशेष इतना है कि पूर्व में रात्रियोग निष्ठापन पद का प्रयोग है किन्तु यहाँ रात्रियोग प्रतिष्ठापन पद बोलना चाहिए ।

आपराह्णिक आचार्यवन्दना विधि

रात्रियोग प्रतिष्ठापन कर चुकने के बाद पृ० ६२ से ६४ पर्यन्त लिखी हुई सम्पूर्ण विधि के अनुसार आचार्य परमेष्ठी की वन्दना करना चाहिए, किन्तु पौर्वाह्णिक के स्थान पर आपराह्णिक पद बोलना चाहिए ।

आपराह्णिक देव-वन्दना विधि

आचार्यवन्दना कर चुकने के उपरान्त पृ० ३८ से पृ० ६१ पर्यन्त लिखी हुई देववन्दना विधि को ही पूर्णरूपेण यहाँ करना चाहिए, अन्तर केवल इतना है कि पौर्वाह्णिक के स्थान पर आपराह्णिक पद बोलना चाहिए ।

पूर्व-रात्रि-स्वाध्यायविधि

देव-वन्दना विधि कर चुकने के पश्चात् प्रदोष-संध्या समय के अनन्तर दो घड़ी काल व्यतीत हो जाने पर पृ० १ से ५ पर्यन्त लिखी हुई विधि के

अनुसार स्वाध्याय प्रारम्भ कर देना चाहिए और जब अर्धरात्रि में दो घड़ी अवशेष रहें तब पृ० ५ पर लिखी विधि के अनुसार स्वाध्याय समाप्त कर देना चाहिए। अन्तर केवल इतना है कि "अपररात्रि" के स्थान पर "पूर्वरात्रि" पद का प्रयोग करना चाहिए।

अर्धरात्रि के दो घड़ी पूर्व से लेकर अर्धरात्रि के दो घड़ी पश्चात् तक अर्थात् १ घंटा ३६ मिनिट का काल अस्वाध्याय का काल है। इस काल में भी ध्यान, तत्त्व चिन्तन, पंच परावर्तनों का चिन्तन एवं संसार के भयावह दुःख चिन्तन आदि के द्वारा निद्रा पर विजय प्राप्त करना चाहिए, किन्तु यदि निद्रा पर विजय प्राप्त न कर सकें तो अल्प निद्रा द्वारा श्रम दूर कर लेना चाहिए।

इसप्रकार मुनि, आर्यिकाओं को अहोरात्रि (२४ घंटों) में समयानुसार उपर्युक्त २८ कृतिकर्म करने चाहिये। कुन्दकुन्दाचार्य विरचित मूलाचार में कृतिकर्म का लक्षण कहते हुए आचार्य लिखते हैं कि–

दोणदं तु जधाजादं बारसावत्तमेव य।
चदुस्सिरं तिसुद्धं च किदियम्मं पउंजदे ।।१२८।।अ. ७

अर्थात्–जहाँ पंचनमस्कार पाठ के प्रारम्भ में एक अवनति अर्थात् भूमि स्पर्श पूर्वक नमस्कार, मन, वचन, काय की शुभ प्रवृति रूप तीन आवर्त और एक शिरोनति, सामायिकदण्डक के अन्त में तीन आवर्त, एक शिरोनति, चतुर्विंशितिस्तव के पूर्व एक अवनति, तीन आवर्त और एक शिरोनति, तथा अन्त में भी तीन आवर्त और एक शिरोनति होती है, उसे कृतिकर्म कहते हैं। जो अहोरात्रि में नियमरूप से अट्ठाईस बार होना चाहिए क्योंकि 'पुरिमचरिमा............. अंधलयघोडयदिट्ठंता ।।१५८।। अ० ७ मूला० ।। जैसे राजा के अंधे घोड़े को औषधिज्ञान से रहित वैद्य बालक ने नेत्ररोग हरण सम्बन्धी सर्व औषधियों का प्रयोग करके स्वस्थ कर लिया था उसी प्रकार महावीर तीर्थंकर के तीर्थगत जो साधु हैं वे चंचलचित्त, अदृढमन, मोह से आवृत्त और वक्र व जड़ स्वभावी हैं, अतः उन्हें प्रत्येक (२८) कायोत्सर्ग, दण्डक पूर्वक ही करना चाहिए, क्योंकि यदि एक दण्डक में मन स्थिर नहीं होगा तो दूसरे में, तीसरे में, चतुर्थ आदि में होगा। अर्थात् कोई न कोई दण्डक कर्मोपशमन में कारण अवश्य होगा, क्योंकि सर्व (२८) दण्डक कर्म क्षय करने में समर्थ हैं।

द्वितीय खण्ड

पंच नमस्कार मन्त्रः

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्व साहूणं ॥१॥

मन्त्रं संसारसारं, त्रिजगदनुपमं सर्वपापारिमन्त्रम्,
संसारोच्छेदमन्त्रं, विषमविषहरं कर्मनिर्मूलमन्त्रम् ।
मन्त्रं सिद्धि प्रदानं, शिवसुखजननं केवलज्ञानमन्त्रम्,
मन्त्रं श्री जैनमन्त्रं, जपजप जपितं जन्म निर्वाणमन्त्रम्॥२॥

आकृष्टिं सुरसंपदां, विदधते मुक्तिश्रियोवश्यता,
मुच्चाटं विपदां चतुर्गतिभुवां विद्वेषमात्मैनसाम् ।
स्तम्भं दुर्गमनं प्रति, प्रयततो मोहस्य संमोहनम्,
पायात्पञ्चनमस्क्रियाक्षरमयी साराधना देवता ॥३॥

अनन्तानन्तसंसारसन्ततिच्छेदकारणम् ।
जिनराजपदाम्भोजस्मरणं शरणं मम ॥४॥

अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात्कारुण्यभावेन रक्ष रक्ष जिनेश्वर ॥५॥

न हि त्राता न हि त्राता न हि त्राता जगत्त्रये ।
वीतरागात्परो देवो न भूतो न भविष्यति ॥६॥

जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्जिने भक्तिर्दिने दिने ।
सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु सदा मेऽस्तु भवे भवे ॥७॥

श्री भूत, वर्तमान, भविष्यत्, विदेहक्षेत्रस्थतीर्थंकराः

भूतकाल तीर्थंकराः

१-श्रीनिर्वाण	२-सागर	३-महासाधु
४-विमलप्रभ	५-श्रीधर	६-सुदत्त
७-अमलप्रभ	८-उद्धर	९-अंगिर
१०-सन्मति	११-सिंधु	१२-कुसुमांजलि
१३-शिवगण	१४-उत्साह	१५-ज्ञानेश्वर
१६-परमेश्वर	१७-विमलेश्वर	१८-यशोधर
१९-कृष्णमति	२०-ज्ञानमति	२१-शुद्धमति
२२-श्रीभद्र	२३-अतिक्रांत	२४-शांताश्चेति

भूत-काल-सम्बन्धी चतुर्विंशतितीर्थंकरेभ्यो नमो नमः ।

वर्तमानकाल तीर्थंकराः

१-ऋषभनाथ	२-अजित	३-संभव	४-अभिनन्दन
५-सुमति	६-पद्मप्रभ	७-सुपार्श्व	८-चन्द्रप्रभ
९-पुष्पदन्त	१०-शीतल	११-श्रेयान् (श्रेयांस)	
१२-वासुपूज्य	१३-विमल	१४-अनन्त	१५-धर्म
१६-शान्ति	१७-कुन्थु	१८-अर	१९-मल्लि
२०-मुनिसुव्रत	२१-नमि	२२-नेमि	२३-पार्श्व

२४-वर्द्धमानश्चेति वर्तमानकालसम्बन्धी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमो नमः ।

भविष्यत्काल तीर्थंकरा:

१-श्री महापद्म	२-सुरदेव	३-सुपार्श्व
४-स्वयंप्रभ	५-सर्वात्मभूत	६-देवपुत्र
७-कुलपुत्र	८-उदंक	९-प्रोष्ठिल
१०-जयकीर्ति	११-मुनिसुव्रत	१२-अर (अमम)
१३-निष्पाप	१४-निष्कषाय	१५-विपुल
१६-निर्मल	१७-चित्रगुप्त	१८-समाधिगुप्त
१९-स्वयंभू	२०-अनिवर्तक	२१-जय
२२-विमल	२३-देवपाल	२४-अनन्तवीर्याश्चेति

भविष्यत्कालसम्बन्धी चतुर्विंशति तीर्थंकरेभ्यो नमो नमः ।

विदेहक्षेत्रस्थ विंशति तीर्थंकरा:

१-सीमंधर	२-युगमंधर	३-बाहु
४-सुबाहु	५-सुजात	६-स्वयंप्रभु
७-वृषभानन	८-अनन्तवीर्य	९-सूरप्रभ
१०-विशालकीर्ति	११-वज्रधर	१२-चन्द्रानन
१३-भद्रबाहु	१४-भुजंगम	१५-ईश्वर
१६-नेमप्रभ (नेमि)	१७-वीरसेन	१८-महाभद्र

१९-देवयश २०-अजितवीर्याश्चेति विदेहक्षेत्रस्थविंशति-तीर्थंकरेभ्यो नमो नमः ।

श्री नवदेवता स्तोत्रम्-मंगलाष्टकम्

अर्हन्तः

श्रीमन्तो जिनपाजगत्त्रयनुता, दोषैर्विमुक्तात्मकाः,
लोकालोकविलोकनैक चतुराश्शुद्धाः परं निर्मलाः ।
दिव्यानन्तचतुष्टयादिकयुताः, सत्यस्वरूपात्मकाः ।
प्राप्तायैर्भुविप्रातिहार्यविभवाः, कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।१।।

सिद्धाः

श्रीमन्तो नृसुरा सुरेन्द्र महिता, लोकाग्रसंवासिनः,
नित्याः सर्व सुखाकरा भयहरा, विश्वेषु कामप्रदाः ।
कर्मातीतविशुद्ध भावसहिता, ज्योतिःस्वरूपात्मकाः,
श्रीसिद्धाजननार्ति मृत्युरहिताः, कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।२।।

आचार्याः

पञ्चाचार परायणाः सुविमलाश्चारित्र संद्योतकाः,
अर्हद्रूपधराश्च निस्पृहपराः, कामादिदोषोज्झिताः ।
बाह्याभ्यंतर संगमोहरहिताः शुद्धात्मसंराधकाः,
आचार्या नरदेवपूजितपदाः, कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।३।।

उपाध्यायाः

वेदांगं निखलागमं शुभतरं, पूर्णं पुराणं सदा,
सूक्ष्मासूक्ष्मसमस्ततत्त्वकथकं, श्री द्वादशांग शुभम् ।
स्वात्मज्ञानविवृद्धये गतमलाः, येऽध्यायपन्तीश्वराः,
निर्द्वन्द्वावरपाठकाः सुविमलाः, कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।४।।

साधवः

त्यक्त्वाशां भव भोग पुत्रतनुजां, मोहं परं दुस्त्यजं,
निःसंगाकरुणालयाश्च विरता दैगम्बरा धीधनाः ।
शुद्धाचाररतानिजात्मरसिका, ब्रह्मस्वरूपात्मका,
देवेन्द्रैरपि पूजिताः सुमुनयः, कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।५।।

जिनधर्मः

जीवानामभयप्रदः सुसदयः, संसारदुःखापहः,
सौख्यंयोनित्तरां ददाति सकलं, दिव्यं मनोवाञ्छितम् ।
तीर्थेशैरपिधारितोह्यनुपमः, स्वर्मोक्षसंसाधकः,
धर्मःसोऽत्र जिनोदितोहितकरः, कुर्यात्सदा मंगलम् ।।६।।

जिनागमः

स्याद्वादांकधरं त्रिलोकमहितं, देवैः सदा संस्तुतं,
सन्देहादि विरोध भाव रहितं, सर्वार्थ सन्देशकम् ।
याथातथ्यमजेयमाप्तकथितं, कोटिप्रभाभासितं,
श्रीमज्जैनसुशासनं हितकरं, कुर्यात्सदा मंगलम् ।।७।।

जिनप्रतिमाः

सौम्याः सर्वविकार भावरहिताः, शान्ति स्वरूपात्मकाः,
शुद्धध्यानमयाः प्रशान्तवदनाः, श्रीप्रातिहार्यान्विताः ।
स्वात्मानन्द विकाशकाश्च सुभगाश्चैतन्य भावावहाः,
पञ्चानांपरमेष्ठिनां हि कृतयाः, कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।८।।

जिनालयाः

घण्टातोरणदामधूपघटकै, राजन्ति सन्मंगलैः,
स्तोत्रैश्चित्तहरैर्महोत्सव शतै, वांदित्र संगीत कैः ।
पूजारम्भ महाभिषेक यजनैः पुण्योत्करैः सत्क्रियैः,
श्रीचैत्यायतनानितानि कृतिनां, कुर्वन्तु सन्मंगलम् ।।९।।

निखिल नव देवता

इत्थंमंगलदायका जिनवराः, सिद्धाश्च सूर्यादयाः,
पूज्यास्ता नव देवता अघहरास्तीर्थोत्तमास्तारकाः ।
चारित्रोज्वलतांविशुद्ध शमतां, बोधिं समाधिं तथा,
श्री जैनेन्द्र 'सुधर्म' मात्मसुखदं, कुर्वन्तु सन्मंगलम् ।।१०।।

।। इति वीतराग-तपोमूर्ति स्व० आचार्य 'श्री सुधर्मासागरजी' विरचितं नव देवता स्तोत्रम् ।।

संघ सामूहिक पाठ

सुप्रभात स्तोत्रम्

यत्स्वर्गावतरोत्सवे यदभवज्जन्माभिषेकोत्सवे,
यद्दीक्षा ग्रहणोत्सवे यदखिल, ज्ञानप्रकाशोत्सवे।
यन्निर्वाणगमोत्सवे जिनपतेः, पूजाद्भुतं तद्भवैः,
संगीत स्तुति मंगलैः प्रसरतां मे सुप्रभातोत्सवः ।।१।।

श्रीमन्नतामर किरीट मणिप्रभाभि-
रालीढपाद युग, दुर्द्धर कर्मदूर।
श्रीनाभिनन्दन ! जिनाजित ! शम्भवाख्य !
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ।।२।।

छत्रत्रय प्रचल चामर वीज्यमान,
देवाभिनन्दनमुने ! सुमते ! जिनेन्द्र।
पद्मप्रभा रुणमणि द्युतिभासुरांग,
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ।।३।।

अर्हन् सुपार्श्व कदलीदलवर्ण गात्र,
प्रालेयतारगिरि मौक्तिक वर्णगौर।
चन्द्रप्रभ स्फटिक पाण्डुर पुष्पदन्त !
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ।।४।।

सन्तप्त कांचनरुचे जिनशीतलाख्य,
श्रेयान्विनष्ट दुरिताष्ट कलंक पंक।

बंधूकबंधुररुचे जिनवासुपूज्य,
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ।।५।।
उद्दण्डदर्प करिपो विमलामलांग,
स्थेमन्ननन्तजिदनन्त सुखाम्बुराशे ।
दुष्कर्मकल्मषविवर्जितधर्मनाथ,
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ।।६।।
देवामरीकुसुमसन्निभशान्तिनाथ,
कुन्थो ! दयागुण विभूषण भूषितांग ।
देवाधिदेव भगवन्नरतीर्थनाथ,
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ।।७।।
यन्मोह मल्लमदभञ्जनमल्लिनाथ,
क्षेमंकरावितथशासन सुव्रताख्य ।
सत्सम्पदा प्रशमितो नमि नामधेय,
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ।।८।।
तापिच्छ गुच्छरुचिरोज्ज्वल नेमिनाथ,
घोरोपसर्ग-विजयिन् जिनपार्श्वनाथ ।
स्याद्वाद सूक्ति मणिदर्पण वर्द्धमान,
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ।।९।।
प्रालेयनील हरितारुण पीतभासं,
यन्मूर्तिमव्यय सुखावसथं मुनीन्द्राः ।
ध्यायन्ति सप्ततिशतं जिनवल्लभानां,
त्वद्ध्यानतोऽस्तु सततं मम सुप्रभातम् ।।१०।।

सुप्रभातं सुनक्षत्रं, मांगल्यं परिकीर्तितम् ।
चतुर्विंशति तीर्थाणां, सुप्रभातं दिने दिने ।।११।।
सुप्रभातं सुनक्षत्रं, श्रेयः प्रत्यभिनन्दितम् ।
देवता ऋषयः सिद्धाः, सुप्रभातं दिने दिने ।।१२।।
सुप्रभातं तवैकस्य, वृषभस्य महात्मनः !
येन प्रवर्तितं तीर्थं, भव्यसत्त्व सुखावहम् ।।१३।।
सुप्रभातं जिनेन्द्राणां, ज्ञानोन्मीलित चक्षुषाम् ।
अज्ञान तिमिरांधानां, नित्यमस्तमितो रविः ।।१४।।
सुप्रभातं जिनेन्द्रस्य, वीरः कमललोचनः ।
येन कर्माटवी दग्धा, शुक्लध्यानोग्र वह्निना ।।१५।।
सुप्रभातं सुनक्षत्रं, सुकल्याणं सुमंगलम् ।
त्रैलोक्यहितकर्त्तृणां, जिनानामेव शासनम् ।।१६।।

।। इति सुप्रभातं स्तोत्रम् ।।

महावीराष्टक स्तोत्रम्

शिखरिणी छन्द

यदीये चैतन्ये मुकुर इव भावाश्चिदचितः,
समं भान्ति ध्रौव्यव्ययजनिलसंतोऽन्तरहिताः ।
जगत्साक्षी मार्गप्रकटनपरो भानुरिव यो,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ।।१।।
अताम्रं यच्चक्षुः कमलयुगलं स्पन्दरहितं,
जनान्कोपापायं प्रकटयति वाभ्यन्तरमपि ।

स्फुटं मूर्तिर्यस्य प्रशमितमयी वातिविमला,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ।।२।।

नमन्नाकेन्द्राली मुकुटमणि भाजालजटिलं,
लसत्पादाम्भोज द्वयमिह यदीयं तनुभृतां ।
भवज्वाला शान्त्यै प्रभवति जलं वा स्मृतमपि,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ।।३।।

यदर्चाभावेन प्रमुदितमना दर्दुर इह,
क्षणादासीत्स्वर्गी गुणगणसमृद्धः सुखनिधिः ।
लभंतेसद्भक्ताः शिवसुखसमाजं किमुतदा,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ।।४।।

कनत्स्वर्णाभासोऽप्यपगततनुर्ज्ञाननिवहो,
विचित्रात्माप्येको नृपतिवरसिद्धार्थतनयः ।
अजन्मापि श्रीमान् विगतभवरागोद्भुत गतिः,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ।।५।।

यदीया वाग्गंगा विविधनयकल्लोलविमला,
वृहज्ज्ञानांभोभिर्जगति जनतां या स्नपयति ।
इदानीमप्येषा बुधजनमरालैः परिचिता,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ।।६।।

अनिर्वारोद्रेकस्त्रिभुवनजयी काम सुभटः,
कुमारावस्थायामपि निजबलाद्येनविजितः ।
स्फुरन्नित्यानन्द प्रशमपद राज्याय स जिनः,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ।।७।।

महामोहातंकप्रशमनपरा-कस्मिकभिषङ्,
निरापेक्षो बन्धुर्विदित महिमा मंगलकरः ।
शरण्यः साधूनां भवभयभृतामुत्तमगुणो,
महावीरस्वामी नयनपथगामी भवतु मे (नः) ।।८।।

महावीराष्टकं स्तोत्रं, भक्त्या भागेन्दुना कृतं ।
यः पठेच्छ्रणुयाच्चापि, स याति परमां गतिम् ।।९।।

।। इति महावीराष्टकं स्तोत्रम् ।।

भक्तामर स्तोत्रम्

युगादिकर्त्ता को नमन

भक्तामर प्रणतमौलि-मणि-प्रभाणा-
मुद्योतकं दलित पाप तमोवितानम् ।
सम्यक्प्रणम्य जिन-पाद-युगं युगादा-
वालम्बनं भव-जले पततां जनानाम् ।।१।।

यः संस्तुतः सकल वाङ्मय तत्त्व-बोधा-
दुद्भूत-बुद्धि-पटुभिः सुर-लोक-नाथैः ।
स्तोत्रैर्जगत्त्रितय-चित्त-हरै-रुदारैः
स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम् ।।२।।

असमर्थता प्रकट

बुद्ध्या विनापि विबुधार्चित-पाद-पीठ,
स्तोतुं समुद्यत-मतिर्विगत-त्रपोऽहम् ।
बालं विहाय जल संस्थितमिन्दु-बिम्ब,
मन्यः क इच्छति जनः सहसा ग्रहीतुम् ।।३।।

अल्पज्ञता ज्ञापन

वक्तुं गुणान्-गुण समुद्र शशांक-कान्तान्,
कस्ते क्षमः सुरगुरु प्रतिमोऽपि बुद्ध्या ।
कल्पान्त-काल पवनोद्धत-नक्र-चक्रं,
को वा तरीतु-मलमम्बुनिधिं भुजाभ्यां ।।४।।

भक्ति और शक्ति

सोऽहं तथापि तव भक्ति-वशान्मुनीश,
कर्तुं स्तवं विगत-शक्तिरपि प्रवृत्तः ।
प्रीत्यात्म-वीर्य-मविचार्य मृगो मृगेन्द्रम्,
नाभ्येति किं निजशिशोः परिपालनार्थम् ।।५।।

लघुता प्रदर्शन

अल्पश्रुतं श्रुतवतां परिहासधाम,
त्वद्भक्तिरेव मुखरी कुरुते बलान्माम् ।
यत्कोकिलः किल मधौ मधुरं विरौति,
तच्चाम्र चारु कलिकानिकरैकहेतु ।।६।।

स्तुति का फल

त्वत्संस्तवेन भवसन्ततिसन्निबद्धं,
पापं क्षणात्क्षयमुपैति शरीरभाजाम् ।
आक्रान्तलोकमलिनीलमशेषमाशु,
सूर्यांशुभिन्नमिव शार्वरमन्धकारम् ।।७।।

स्वाभिमानता

मत्वेति नाथ ! तव संस्तवनं मयेद,
मारभ्यते तनुधियापि तव प्रभावात् ।
चेतो हरिष्यति सतां नलिनी-दलेषु,
मुक्ताफल-द्युतिमुपैति ननूद-बिन्दुः ।।८।।

जिननाम भी पाप-नाशक

आस्तां तव स्तवन-मस्त-समस्त-दोषम्,
त्वत्संकथापि जगतां दुरितानि हन्ति ।
दूरे सहस्र-किरणः कुरुते प्रभैव,
पद्माकरेषु जलजानि विकास-भाञ्जि ।।९।।

जिनशासन में भक्ति का उदार फल, भक्त का आह्वान

नात्यद्भुतं भुवन-भूषण ! भूत-नाथ,
भूतै-र्गुणै-र्भुवि भवन्त-मभिष्टुवन्तः ।
तुल्या भवन्ति भवतो ननु तेन किं वा,
भूत्याश्रितं य इह नात्म-समं करोति ।।१०।।

भावपूर्वक जिन दर्शन की महिमा

दृष्ट्वा भवन्तमनिमेष विलोकनीयम्,
नान्यत्र तोषमुपयाति जनस्य चक्षुः ।
पीत्वा पयः शशिकर-द्युति-दुग्धसिन्धोः,
क्षारं जलं जलनिधे-रसितुं क-इच्छेत् ।।११।

अद्वितीय सुन्दररूप

यैः शान्त-राग-रुचिभिः परमाणुभिस्त्वम्,
निर्मापित-स्त्रिभुवनैक-ललामभूत ।
तावन्त एव खलु तेऽप्यणवः पृथिव्याम्,
यत्ते समान-मपरं नहि रूप-मस्ति ।।१२।।

अनुपम रूप

वक्त्रं क्व ते सुर-नरोरग-नेत्र-हारि,
निःशेष-निर्जित जगत्-त्रितयोपमानम् ।
बिम्बं कलंक-मलिनं क्व निशाकरस्य,
यद्वासरे भवति पाण्डु-पलाश-कल्पम् ।।१३।।

जिनाश्रय की महिमा

सम्पूर्ण-मण्डल-शशांक कला-कलाप,
शुभ्रा गुणा-स्त्रिभुवनं तव लंघयन्ति ।
ये संश्रिता-स्त्रिजगदीश्वर ! नाथमेकम्,
कस्तान् निवारयति संचरतो यथेष्टम् ? ।।१४।।

मेरुवत् अचल

चित्र किमत्र यदि ते त्रिदशांगनाभि-
र्नीतं मनागपि मनो न विकार-मार्गम् ।
कल्पान्त-काल-मरुता चलिताचलेन,
किं मन्दराद्रि-शिखरं चलितं कदाचित् ।।१५।।

अपूर्व दीपक

निर्धूम-वर्ति-रपवर्जित-तैल-पूरः,
कृत्स्नं जगत् त्रय-मिदं प्रकटी-करोषि ।
गम्यो न जातु मरुतां चलिताचलानाम्,
दीपोऽपरस्त्व-मसिनाथ ! जगत् प्रकाशः ।।१६।।

अपूर्व सूर्य

नास्तं कदाचि-दुपयासि न राहु-गम्यः,
स्पष्टी-करोषि सहसा युगपज्जगन्ति ।
नाम्भोधरोदर-निरुद्ध-महा-प्रभावः,
सूर्यातिशायि-महिमासि मुनीन्द्र ! लोके ।।१७।।

अपूर्व चन्द्रमा

नित्योदयं दलित-मोह-महान्धकारम्,
गम्यं न राहु-वदनस्य न वारिदानाम् ।
विभ्राजते तव मुखाब्ज-मनल्प-कान्ति,
विद्योतयज्जग-दपूर्व-शशांक-बिम्बम् ।।१८।।

अन्धकार-नाशक

किं शर्वरीषु शशिनाह्नि विवस्वता वा ?
युष्मन् मुखेन्दु-दलितेषु तमः सु नाथ ।
निष्पन्न-शालि-वन-शालिनि जीव-लोके,
कार्यं कियज्जलधरै-र्जलभार-नम्रैः ।।१९।।

अनुपम ज्ञानी

ज्ञानं यथा त्वयि विभाति कृतावकाशम्,
नैवं तथा हरि-हरादिषु नायकेषु ।
तेजो स्फुरन्-मणिषु याति यथा महत्त्वम्,
नैवं तु काच-शकले किरणाकुलेऽपि ।।२०।

संतोषप्रदाता

मन्ये वरं हरि-हरादय एव दृष्टा,
दृष्टेषु येषु हृदयं त्वयि तोष-मेति ।
किं वीक्षितेन भवता भुवि येन नान्यः,
कश्चिन् मनो हरति नाथ ! भवान्तरेऽपि ।।२१।

अनुपम जननी-सुत

स्त्रीणां शतानि शतशो जनयन्ति पुत्रान्,
नान्या सुतं त्वदुपमं जननी प्रसूता ।
सर्वा दिशो दधति भानि सहस्त्र रश्मिम्,
प्राच्येव दिग्जनयति स्फुर-दंशु-जालम् ।।२२।।

मार्गदर्शक

त्वामामनन्ति मुनयः परमं पुमांस-
मादित्य-वर्ण-ममलं तमसः पुरस्तात् ।
त्वामेव सम्यगुपलभ्य जयन्ति मृत्युं,
नान्यः शिवः शिव-पदस्य मुनीन्द्र ! पन्थाः ।।२३।।

सहस्रनाम से स्तुति

त्वा-मव्ययं विभु-मचिन्त्य मसंख्य-माद्यम्,
ब्रह्माण-मीश्वर-मनन्त-मनंग-केतुम् ।
योगीश्वरं विदित-योग-मनेक-मेकम्,
ज्ञान-स्वरूप-ममलं प्रवदन्ति सन्तः ।।२४।।

जिन ही बुद्ध, शंकर, ब्रह्मा

बुद्धस्त्व-मेव विबुधार्चित-बुद्धि-बोधात्,
त्वं शंकरोऽसि भुवनत्रय-शंकरत्वात् ।
धातासि धीर ! शिव-मार्ग-विधे-र्विधानात्,
व्यक्तं त्वमेव भगवन् ! पुरुषोत्तमोऽसि ।।२५।।

नमस्कार

तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्ति-हराय नाथ !
तुभ्यं नमः क्षिति-तलामल भूषणाय ।
तुभ्यं नमस्त्रिजगतः परमेश्वराय,
तुभ्यं नमो जिन ! भवोदधि-शोषणाय ।।२६।।

पूर्ण निर्दोष

को विस्मयोऽत्र यदि नामगुणै-रशेषै-
स्त्वं संश्रितो निरवकाश-तया मुनीश ।
दोषै-रुपात्त-विविधाश्रय-जात गर्वैः,
स्वप्नान्तरेऽपि न कदाचिदपीक्षितोऽसि ।।२७।।

अशोकवृक्ष

उच्चैरशोक-तरु-संश्रित-मुन्मयूख-
माभाति रूप-ममलं भवतो नितान्तम् ।
स्पष्टोल्लसत् किरण-मस्त-तमो-वितानम्,
बिम्बं रवे-रिव पयोधर-पार्श्ववर्ति ।।२८।।

सिंहासन

सिंहासने मणि-मयूख-शिखा-विचित्रे,
विभ्राजते तव वपुः कनकावदातम् ।
बिम्बं वियद्-विलसदंशु-लता-वितानम्,
तुंगोदयाद्रि-शिरसीव सहस्त्ररश्मेः ।।२९।।

चामर

कुन्दावदात-चलचामर चारु शोभम्,
विभ्राजते तव वपुः कलधौत-कान्तम् ।
उद्यच्छशांक-शुचि-निर्झर-वारिधार-
मुच्चै-स्तटं-सुरगिरे-रिव शातकौम्भम् ।।३०।।

छत्रत्रय

छत्र-त्रयं तव विभाति शशांककान्त-
मुच्चै स्थितं स्थगित-भानुकर-प्रतापम् ।
मुक्ताफल-प्रकर-जाल-विवृद्ध-शोभम्,
प्रख्यापयत् त्रिजगतः परमेश्वरत्वम् ।।३१।।

दुंदुभिनाद

गम्भीर-तार-रव-पूरित-दिग्विभाग-
स्त्रैलोक्य-लोक-शुभ-संगम-भूति-दक्षः ।
सद्-धर्मराज-जय-घोषण-घोषकः सन्,
खे दुन्दुभि-र्ध्वनति ते यशसः प्रवादी ।।३२।।

पुष्पवृष्टि

मन्दार-सुन्दर-नमेरु-सुपारिजात-
सन्तानकादि-कुसुमोत्कर-वृष्टि-रुद्धा ।
गन्धोद-बिन्दु-शुभ-मन्द-मरुत् प्रपाता,
दिव्या दिवः पतति ते वचसां तति-र्वा ।।३३।।

भामंडल

शुम्भत् प्रभा-वलय-भूरि विभा विभोस्ते,
लोक-त्रये द्युतिमतां द्युति-माक्षिपन्ती ।
प्रोद्यद्-दिवाकर-निरन्तर-भूरि-संख्या,
दीप्त्या जयत्यपि निशा-मपि सोम-सौम्याम्।।३४।।

दिव्यध्वनि

स्वर्गापवर्ग-गम-मार्ग-विमार्गणेष्टः,
सद्धर्म-तत्र-कथनैक-पटु-स्त्रिलोक्याः ।
दिव्यध्वनि-र्भवति ते विशदार्थ-सर्व-
भाषा-स्वभाव-परिणाम-गुणैः प्रयोज्यः ।।३५।।

चरण तल में कमल रचना

उन्निद्र-हेमनव-पंकज-पुञ्जकान्ति-
पर्युल्लसन् नख-मयूख सिखाभिरामौ ।
पादौ पदानि तव यत्र जिनेन्द्र ! धत्तः,
पद्मानि तत्र विबुधाः परिकल्पयन्ति ।।३६।।

सूर्य और ग्रह

इत्थं यथा तव विभूति-रभूज्जिनेन्द्र,
धर्मोपदेशन-विधौ न तथा परस्य ।
यादृक्प्रभा दिनकृतः प्रहतान्धकारा,
तादृक् कुतो ग्रह-गणस्य विकासिनोऽपि ।।३७।।

हाथी का भय

श्च्योतन् मदाविल-विलोल-कपोल मूल-
मत्त-भ्रमद्-भ्रमर-नाद-विवृद्ध-कोपम् ।
ऐरावताभमिभमुद्धतमापतन्तम्,
दृष्ट्वा भयं भवति नो भवदाश्रितानाम् ।।३८।।

सिंह भय

भिन्नेभ-कुम्भ-गलदुज्ज्वल-शोणिताक्त,
मुक्ताफल-प्रकर-भूषित-भूमिभागः ।
बद्धक्रमः क्रमगतं हरिणाधिपोऽपि,
नाक्रामति क्रमयुगाचल-संश्रितं ते ।।३९।।

अग्नि भय

कल्पान्त-काल-पवनोद्धत-वह्नि कल्पम्,
दावानलं ज्वलित-मुज्ज्वल-मुत्स्फुलिंगम् ।
विश्वं जिघत्सुमिव सम्मुख मापतन्तम्,
त्वन्नाम-कीर्तन-जलं शमयत्यशेषम् ।।४०।।

सर्पभय

रक्तेक्षणं समद-कोकिल कण्ठ-नीलम्,
क्रोधोद्धतं फणिन-मुत्फण-मापतन्तम् ।
आक्रामति क्रमयुगेण निरस्त-शंक-
स्त्वन्नाम-नागदमनी-हृदि यस्य पुंसः ।।४१।।

युद्धभय

वल्गत्तुरंग-गज-गर्जित-भीमनाद-
माजौ बलं बलवता-मपि भूपतीनाम्।
उद्यद् दिवाकर-मयूख-शिखापविद्धम्,
त्वत् कीर्तनात्तम इवाशु भिदा-मुपैति ।।४२।।

कुन्ताग्र-भिन्न-गज-शोणित वारिवाह-
वेगावतार-तरणातुर-योध-भीमे ।
युद्धे जयं विजित-दुर्जय-जेय-पक्षा-
स्त्वत्पाद-पंकज-वनाश्रयिणो लभन्ते ।।४३।।

समुद्र-भय

अम्भोनिधौ क्षुभित-भीषण-नक्र-चक्र-
पाठीन-पीठ-भय-दोल्वण-वाडवाग्नौ ।
रंगत्तरंग-शिखर-स्थित-यान-पात्रा-
स्त्रासं विहाय भवतः स्मरणाद् व्रजन्ति ।।४४।।

रोग-भय

उद्भूत-भीषण-जलोदर-भार-भुग्नाः
शोच्यां दशा-मुपगताश्च्युत-जीविताशाः ।
त्वत्पाद-पंकज-रजोऽमृत-दिग्ध-देहा,
मर्त्या भवन्ति मकरध्वज-तुल्य-रूपाः ।।४५।।

बन्धन-भय

आपादकण्ठ-मुरु-शृंखल-वेष्टितांगा,
गाढं बृहन्-निगड-कोटि-निघृष्ट-जंघा ।
त्वन्नाम-मन्त्र-मनिशं मनुजाः स्मरन्तः,
सद्यः स्वयं विगत-बन्ध-भया भवन्ति ।।४६।।

स्तुति से अष्टभय-मुक्ति

मत्त-द्विपेन्द्र-मृगराज-दवानलाहि-
संग्राम-वारिधि-महोदर-बन्धनोत्थम् ।
तस्याशु नाशमुपयाति भयं भियेव,
यस्तावकं स्तवमिमं मतिमानधीते ।।४७।।

जिन-स्तुति के कंठस्थ करने का फल

स्तोत्रस्त्रजं तव जिनेन्द्र ! गुणै-र्निबद्धाम्,
भक्त्या मया विविध-वर्ण-विचित्र-पुष्पाम् ।
धत्ते जनो य इह कण्ठगता-मजस्त्रम् ,
तं मानतुंग-मवशा समुपैति लक्ष्मीः ।।४८।।

।। इति श्री मानतुंगाचार्य विरचितं भक्तामर (आदिनाथ) स्तोत्रं समाप्तम् ।।

श्री सरस्वती स्तोत्रम्

चन्द्रार्ककोटिघटितोज्ज्वलदिव्यमूर्ते,
श्रीचन्द्रिका कलित निर्मल शुभ्रवस्त्रे ।
कामार्थदायि कलहंस समाधि रूढे,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ।।१।।

देवा सुरेन्द्र नतमौलिमणि प्ररोचि,
श्री मंजरी निविड रंजित पादपद्मे ।
नीलालके प्रमदहस्ति समानयाने,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ।।२।।

केयूरहार मणिकुण्डल मुद्रिकाद्यैः,
सर्वांगभूषण नरेन्द्र मुनीन्द्र वंद्ये ।
नानासुरत्न वर निर्मल मौलियुक्ते,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ।।३।।

मंजीरकोत्कनककंकणकिंकणीनां,
कांच्याश्च झंकृत रवेण विराजमाने।
सद्धर्म वारिनिधि संतति वर्द्धमाने,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ।।४।।

कंकेलिपल्लव विर्निदित पाणि युग्मे,
पद्मासने दिवस पद्मसमान वक्त्रे।
जैनेन्द्र वक्त्र भवदिव्य समस्त भाषे,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ।।५।।

अर्द्धेन्दु मण्डितजटा ललित स्वरूपे,
शास्त्र प्रकाशिनि समस्त कलाधिनाथे।
चिन्मुद्रिका जपसराभय पुस्तकांके,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ।।६।।

डिंडीरपिंड हिमशंखसिताभ्रहारे,
पूर्णेन्दु बिम्बरुचि शोभित दिव्यगात्रे।
चांचल्यमान मृगशावललाट नेत्रे,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ।।७।।

पूज्ये पवित्रकरणोन्नत कामरूपे,
नित्यं फणीन्द्र गरुडाधिप किन्नरेन्द्रैः,
विद्याधरेन्द्र सुरयक्ष समस्त वृन्दैः,
वागीश्वरि प्रतिदिनं मम रक्ष देवि ।।८।।

।। इति सरस्वती स्तोत्रम् ।।

श्री सरस्वती नाम स्तोत्रम्

सरस्वत्याः प्रसादेन, काव्यं कुर्वन्ति मानवाः ।
तस्मान्निश्चल भावेन, पूजनीया सरस्वती ।।१।।

श्री सर्वज्ञ मुखोत्पन्ना, भारती बहुभाषिणी ।
अज्ञान तिमिरं हन्ति, विद्या बहुविकासिनी ।।२।।

सरस्वतीमया दृष्टा, द्विव्या कमललोचना ।
हंसस्कन्ध समारूढा, वीणा पुस्तक धारिणी ।।३।।

प्रथमं भारती नाम, द्वितीयं च सरस्वती ।
तृतीयं शारदा देवी, चतुर्थं हंसगामिनी ।।४।।

पंचमं विदुषांमाता, षष्ठं वागीश्वरि तथा ।
कुमारी सप्तमं प्रोक्तं, अष्टमं ब्रह्मचारिणी ।।५।।

नवमं च जगन्माता, दशमं ब्राह्मिणी तथा ।
एकादशं तु ब्रह्माणी, द्वादशं वरदा भवेत् ।।६।।

वाणी त्रयोदशं नाम, भाषाचैव चतुर्दशं ।
पंचदशं च श्रुतदेवी, षोडशं गौर्निगद्यते ।।७।।

एतानि श्रुतनामानि, प्रातरुत्थाय यः पठेत् ।
तस्य संतुष्यति माता, शारदा वरदा भवेत् ।।८।।

सरस्वती नमस्तुभ्यं, वरदे काम रूपिणी ।
विद्यारंभ करिष्यामि, सिद्धिर्भवतु मे सदा ।।९।।

।। इति श्री सरस्वती नाम स्तोत्रम् ।।

मंगलाष्टकम्

अर्हन्तो भगवन्त इन्द्र-महिताः सिद्धाश्च सिद्धीश्वराः,
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः ।
श्रीसिद्धान्त-सुपाठका मुनिवरा रत्नत्रयाराधकाः,
पञ्चैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।

श्रीमन्नम्र-सुरासुरेन्द्र-मुकुट-प्रद्योत-रत्नप्रभा-
भास्वत्पाद-नखेन्दवः प्रवचनाऽम्भोधीन्दवः स्थायिनः ।
ये सर्वे जिन सिद्ध-सूर्यनुगतास्ते पाठकाः साधवः,
स्तुत्या योगिजनैश्च पञ्चगुरवः कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।१।।

सम्यग्दर्शन-बोध-वृत्तममलं रत्नत्रयं पावनम्,
मुक्ति-श्री-नगराऽधिनाथ-जिनपत्युक्तोऽपवर्गप्रदः ।
धर्मः सूक्तिसुधा च चैत्यमखिलं चैत्यालयं श्र्यालयं,
प्रोक्तं च त्रिविधं चतुर्विधममी कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।२।।

नाभेयादि-जिनाधिपास्त्रिभुवनख्याताश्चतुर्विंशतिः,
श्रीमन्तो भरतेश्वरप्रभृतयो ये चक्रिणो द्वादश ।
ये विष्णु-प्रतिविष्णु-लांगलधराः सप्तोत्तरा विंशति-
स्त्रैकाल्ये प्रथितास्त्रिषष्टिपुरुषाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।३।।

देव्योऽष्टौ च जयादिका द्विगुणिता विद्यादिका देवता,
श्रीतीर्थंकरमातृकाश्च जनका यक्षाश्च यक्ष्यस्तथा ।
द्वात्रिंशत् त्रिदशाऽधिपास्तिथिसुरा दिक्कन्यकाश्चाष्टधा,
दिक्पाला दश चेत्यमी सुरगणाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।४।।

ये सर्वौषधऋद्धयः सुतपसो वृद्धिंगताः पञ्च ये,
ये चाष्टांग-महानिमित्त-कुशला येऽष्टौ वियच्चारिणः ।
पञ्चज्ञानधरास्त्रयोऽपि बलिनो ये बुद्धिऋद्धीश्वराः,
सप्तैते सकलार्चिता गणभृतः कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।५।।

कैलासे वृषभस्य निर्वृतिमही वीरस्य पावापुरे,
चम्पायां वसुपूज्यसज्जिनपतेः सम्मेदशैलेऽर्हताम् ।
शेषाणामपि चोर्जयन्तशिखरे नेमीश्वरस्यार्हतो,
निर्वाणाऽवनयः प्रसिद्धविभवाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।६।।

ज्योतिर्व्यन्तर-भावनाऽमरगृहे मेरौ कुलाद्रौ तथा,
जम्बू-शाल्मलि-चैत्यशाखिषु तथा वक्षार-रूप्याद्रिषु ।
इष्वाकारगिरौ च कुण्डलनगे द्वीपे च नन्दीश्वरे,
शैले ये मनुजोत्तरे जिनगृहाः कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।७।।

यो गर्भाऽवतरोत्सवो भगवतां जन्माऽभिषेकोत्सवो,
यो जातः परिनिष्क्रमेण विभवो यः केवलज्ञानभाक् ।
यः कैवल्यपुरप्रवेशमहिमा संभावितः स्वर्गिभिः,
कल्याणनि च तानि पञ्च सततं कुर्वन्तु ते मंगलम् ।।८।।

इत्थं श्रीजिनमंगलाष्टकमिदं सौभाग्य-संपत्प्रदं,
कल्याणेषु महोत्सवेषु सुधियस्तीर्थंकराणामुषः ।
ये श्रृण्वन्ति पठन्ति तैश्च सुजनैर्धर्मार्थकामान्विता,
लक्ष्मीराश्रयते व्यपाय रहिता निर्वाणलक्ष्मीरपि ।।९।।

।। इति मंगलाष्टकम् ।।

कल्याणमन्दिर स्तोत्रम्

श्रीमदाचार्यकुमुदचन्द्रदेवप्रणीतम्

कल्याण-मन्दिरमुदारमवद्य-भेदि,
भीताभय-प्रदमनिन्दितमङ्घ्रि-पद्मम् ।
संसार-सागर-निमज्जदशेष-जन्तु-
पोतायमानमभिनम्य जिनेश्वरस्य ।।१।।

यस्य स्वयं सुरगुरु-र्गरिमाम्बुराशेः,
स्तोत्रं सुविस्तृत-मति-र्न विभु-र्विधातुम् ।
तीर्थेश्वरस्य कमठ-स्मय-धूमकेतो-
स्तस्याहमेष किल संस्तवनं करिष्ये ।।२।।

सामान्यतोऽपि तव वर्णयितुं स्वरूप-
मस्मादृशः कथमधीश ! भवन्त्यधीशाः ।
धृष्टोऽपि कौशिक-शिशु-र्यदि वा दिवान्धो,
रूपं प्ररूपयति किं किल घर्मरश्मेः ।।३।।

मोह-क्षयादनुभवन्नपि नाथ मर्त्यो,
नूनं गुणान्गणयितुं न तव क्षमेत ।
कल्पान्त-वान्त-पयसः प्रकटोऽपि यस्मा-
न्मीयेत केन जलधे-र्ननु रत्नराशिः ।।४।।

अभ्युद्यतोऽस्मि तव नाथ जडाशयोऽपि,
कर्तुं स्तवं लसदसंख्य-गुणाकरस्य ।
बालोऽपि किं न निज-बाहु-युगं वितत्य,
विस्तीर्णतां कथयति स्वधियाम्बुराशेः ।।५।।

ये योगिनामपि न यान्ति गुणास्तवेश !
वक्तुं कथं भवति तेषु ममावकाशः ।
जाता तदेवमसमीक्षित-कारितेयं,
जल्पन्ति वा निज-गिरा ननु पक्षिणोऽपि ।।६।।

आस्तामचिन्त्य-महिमा जिन संस्तवस्ते,
नामापि पाति भवतो भवतो जगन्ति ।
तीव्राऽऽतपोपहत पान्थ-जनान्निदाघे-
प्रीणाति पद्म-सरसः स-रसोऽनिलोऽपि ।।७।।

हृद्वर्तिनि त्वयि विभो शिथिलीभवन्ति,
जन्तोः क्षणेन निबिडा अपि कर्म-बन्धाः ।
सद्यो भुजंगम-मया इव मध्य-भाग-
मभ्यागते वन-शिखण्डिनि चन्दनस्य ।।८।।

मुच्यन्त एव मनुजाः सहसा जिनेन्द्र !
रौद्रै-रुपद्रव-शतैस्त्वयि वीक्षितेऽपि ।
गो-स्वामिनि स्फुरित-तेजसि दृष्टमात्रे,
चौरैरिवाऽऽशु पशवः प्रपलायमानैः ।।९।।

त्वं तारको जिन कथं भविनां त एव,
त्वामुद्वहन्ति हृदयेन यदुत्तरन्तः ।
यद्वा दृतिस्तरति यज्जलमेष नून-
मन्तर्गतस्य मरुतः स किलानुभावः ।।१०।।

यस्मिन्हर-प्रभृतयोऽपि हत-प्रभावाः,
सोऽपि त्वया रति-पतिः क्षपितः क्षणेन ।
विध्यापिता हुतभुजः पयसाथ येन,
पीतं न किं तदपि दुर्धर-वाडवेन ।।११।।

स्वामिन्ननल्प-गरिमाणमपि प्रपन्ना-
स्त्वां जन्तवः कथमहो हृदये दधानाः ।
जन्मोदधिं लघु तरन्त्यतिलाघवेन,
चिन्त्यो न हन्त महतां यदि वा प्रभावः ।।१२।।

क्रोधस्त्वया यदि विभो प्रथमं निरस्तो,
ध्वस्तास्तदा वद कथं किल कर्म-चौराः ।
प्लोषत्यमुत्र यदि वा शिशिरापि लोके,
नील-द्रुमाणि विपिनानि न किं हिमानी ।।१३।।

त्वां योगिनो जिन सदा परमात्मरूप-
मन्वेषयन्ति हृदयाम्बुज कोष-देशे ।
पूतस्य निर्मल-रुचे र्यदि वा किमन्य-
दक्षस्य संभव-पदं ननु कर्णिकायाः ।।१४।।

ध्यानाज्जिनेश भवतो भविनः क्षणेन,
देहं विहाय परमात्म-दशां व्रजन्ति ।
तीव्रानलादुपल-भावमपास्य लोके,
चामीकरत्वमचिरादिव धातु-भेदाः ।।१५।।

अन्तः सदैव जिन यस्य विभाव्यसे त्वं,
भव्यैः कथं तदपि नाशयसे शरीरम् ।
एतत्स्वरूपमथ मध्य-विवर्तिनो हि,
यद्विग्रहं प्रशमयन्ति महानुभावाः ।।१६।।

आत्मा मनीषिभिरयं त्वदभेद-बुद्ध्या,
ध्यातो जिनेन्द्र ! भवतीह भवत्प्रभावः ।
पानीयमप्यमृतमित्यनुचिन्त्यमानं,
किं नाम नो विष-विकारमपाकरोति ।।१७।।

त्वामेव वीत-तमसं परवादिनोऽपि,
नूनं विभो हरि-हरादि-धिया प्रपन्नाः ।
किं काच-कामलिभिरीश सितोऽपि शंखो,
नो गृह्यते विविध-वर्ण-विपर्ययेण ।।१८।।

धर्मोपदेश-समये सविधानुभावा-
दास्तां जनो भवति ते तरुरप्यशोकः ।
अभ्युद्गते दिनपतौ समहीरुहोऽपि,
किं वा विबोधमुपयाति न जीव-लोकः ।।१९।।

चित्रं विभो कथमवाङ्मुख-वृन्तमेव,
विष्वक्पतत्यविरला सुर-पुष्प-वृष्टिः ।
त्वद्गोचरे सुमनसां यदि वा मुनीश !
गच्छन्ति नूनमध एव हि बन्धनानि ।।२०।।

स्थाने गभीर-हृदयोदधि-सम्भवायाः,
पीयूषतां तव गिरः समुदीरयन्ति।
पीत्वा यतः परम-सम्मद-संग-भाजो,
भव्या व्रजन्ति तरसाप्यजरामरत्वम् ।।२१।।

स्वामिन्सुदूरमवनम्य समुत्पतन्तो,
मन्ये वदन्ति शुचयः सुर-चामरौघाः।
येऽस्मै नर्ति विदधते मुनि-पुंगवाय,
ते नूनमूर्ध्व-गतयः खलु शुद्ध-भावाः ।।२२।।

श्यामं गभीर-गिरमुज्ज्वल-हेम-रत्न-
सिंहासनस्थमिह भव्य-शिखण्डिनस्त्वाम्।
आलोकयन्ति रभसेन नदन्तमुच्चै-
श्चामीकराद्रि-शिरसीव नवाम्बुवाहम् ।।२३।।

उद्गच्छता तव शिति-द्युति-मण्डलेन,
लुप्त-च्छद-च्छविरशोक-तरुर्बभूव।
सान्निध्यतोऽपि यदि वा तव वीतराग,
नीरागतां व्रजति को न सचेतनोऽपि ।।२४।।

भो भोः प्रमादमवधूय भजध्वमेन-
मागत्य निर्वृति-पुरीं प्रति सार्थवाहम्।
एतन्निवेदयति देव जगत्त्रयाय,
मन्ये नदन्नभिनभः सुरदुन्दुभिस्ते ।।२५।।

उद्योतितेषु भवता भुवनेषु नाथ,
तारान्वितो विधुरयं विहताधिकारः ।
मुक्ता-कलाप-कलितोरु-सितातपत्र-
व्याजात्त्रिधा धृत-तनुर्ध्रुवमभ्युपेतः ।।२६।।

स्वेन प्रपूरित-जगत्त्रय-पिण्डितेन,
कान्ति-प्रताप-यशसामिव संचयेन ।
माणिक्य-हेम-रजत-प्रविनिर्मितेन,
सालत्रयेण भगवन्नभितो विभासि ।।२७।।

दिव्य-स्रजो जिन नमत्त्रिदशाधिपाना-
मुत्सृज्य रत्न-रचितानपि मौलि-बन्धान् ।
पादौ श्रयन्ति भवतो यदि वापरत्र,
त्वत्संगमे सुमनसो न रमन्त एव ।।२८।।

त्वं नाथ जन्म-जलधेर्विपराङ्मुखोऽपि,
यत्तारयस्यसुमतो निज-पृष्ठ-लग्नान् ।
युक्तं हि पार्थिव-निपस्य सतस्तवैव,
चित्रं विभो यदसि कर्म-विपाक-शून्यः ।।२९।।

विश्वेश्वरोऽपि जन-पालक दुर्गतस्त्वं,
किं वाऽक्षर-प्रकृतिरप्यलिपिस्त्वमीश !
अज्ञानवत्यपि सदैव कथंचिदेव,
ज्ञानं त्वयि स्फुरति विश्व-विकास-हेतुः ।।३०।।

प्राग्भार-संभृत-नभांसि रजांसि रोषा-
दुत्थापितानि कमठेन शठेन यानि ।
छायापि तैस्तव न नाथ हता हताशो,
ग्रस्तस्त्वमीभिरयमेव परं दुरात्मा ।।३१।।

यद्गर्जदूर्जित-घनौघमदभ्र-भीम-
भ्रश्यत्तडिन् मुसल-मांसल-घोरधारम् ।
दैत्येन मुक्तमथ दुस्तर-वारि दध्रे,
तेनैव तस्य जिन दुस्तर-वारि कृत्यम् ।।३२।।

ध्वस्तोर्ध्व-केश-विकृताकृति-मर्त्य-मुण्ड-
प्रालम्बभृद्-भयदवक्त्र-विनिर्यदग्निः ।
प्रेतव्रजः प्रति भवन्तमपीरितो यः,
सोऽस्याभवत्प्रतिभवं भव-दुःख-हेतुः ।।३३।।

धन्यास्त एव भुवनाधिप ये त्रिसंध्य-
माराधयन्ति विधिवद्विधुतान्य-कृत्याः ।
भक्त्योल्लसत्पुलक-पक्ष्मल-देह-देशाः,
पाद-द्वयं तव विभो भुवि जन्मभाजः ।।३४।।

अस्मिन्नपार-भव-वारि-निधौ मुनीश !
मन्ये न मे श्रवण-गोचरतां गतोऽसि ।
आकर्णिते तु तव गोत्र-पवित्र-मन्त्रे,
किं वा विपद्विषधरी सविधं समेति ।।३५।।

जन्मान्तरेऽपि तव पाद-युगं न देव,
मन्ये मया महितमीहित-दान-दक्षम् ।
तेनेह जन्मनि मुनीश पराभवानां,
जातो निकेतनमहं मथिताशयानाम् ।।३६।।

नूनं न मोह-तिमिरावृतलोचनेन,
पूर्वं विभो सकृदपि प्रविलोकितोऽसि ।
मर्मा विभो विधुरयन्ति हि मामनर्थाः,
प्रोद्यत्प्रबन्ध-गतयः कथमन्यथैते ।।३७।।

आकर्णितोऽपि महितोऽपि निरीक्षितोऽपि,
नूनं न चेतसि मया विधृतोऽसि भक्त्या ।
जातोऽस्मि तेन जन-बान्धव दुःखपात्रं,
यस्मात्क्रियाः प्रतिफलन्ति न भाव-शून्याः ।।३८।।

त्वं नाथ दुःखि-जन-वत्सल हे शरण्य,
कारुण्य-पुण्य-वसते वशिनां वरेण्य ।
भक्त्या नते मयि महेश दयां विधाय,
दुःखांकुरोद्दलन-तत्परतां विधेहि ।।३९।।

निःसख्य-सार-शरणं शरणं शरण्य-
मासाद्य सादित-रिपु प्रथितावदानम् ।
त्वत्पाद-पंकजमपि प्रणिधान-वन्ध्यो,
वन्ध्योऽस्मि चेद्भुवन पावन हा हतोऽस्मि ।।४०।।

देवेन्द्र-वन्द्य विदिताखिल-वस्तुसार !
संसार-तारक विभो भुवनाधिनाथ।
त्रायस्व देव करुणा-ह्रद मां पुनीहि,
सीदन्तमद्य भयद-व्यसनाम्बु-राशेः ।।४१।।

यद्यस्ति नाथ भवदङ्घ्रि-सरोरुहाणां,
भक्तेः फलं किमपि सन्तत-सञ्चितायाः।
तन्मे त्वदेक-शरणस्य शरण्य भूयाः,
स्वामी त्वमेव भुवनेऽत्र भवान्तरेऽपि ।।४२।।

इत्थं समाहित-धियो विधिवज्जिनेन्द्र !
सान्द्रोल्लसत्पुलक-कञ्चुकितांगभागाः।
त्वद्बिम्ब-निर्मल-मुखाम्बुज-बद्ध-लक्ष्या,
ये संस्तवं तव विभो रचयन्ति भव्याः ।।४३।।

आर्या छन्द

जन नयन-'कुमुदचन्द्र'-प्रभास्वराः स्वर्ग-संपदो भक्त्वा।
ते विगलित-मल-निचया अचिरान्मोक्षं प्रपद्यन्ते ।।४४।।

एकीभावस्तोत्रम्

[श्रीमदाचार्यवादिराजदेवप्रणीतम्]

एकीभावं गत इव मया यः स्वयं कर्म-बन्धो,
घोरं दुःखं भव-भव गतो दुर्निवारः करोति।
तस्याप्यस्य त्वयि जिन-रवे भक्तिरुन्मुक्तये चेत्,
जेतुं शक्यो भवति न तया कोऽवरस्तापहेतुः ॥१॥

ज्योतीरूपं दुरित-निवह-ध्वान्त-विध्वंस-हेतुं,
त्वामेवाहुर्जिनवर चिरं तत्त्व-विद्याभियुक्ताः।
चेतोवासे भवसि च मम स्फार-मुद्भासमान-
स्तस्मिन्नंहः कथमिव तमो वस्तुतो वस्तुमीष्टे ॥२॥

आनन्दाश्रु-स्नपित-वदनं गद्गदं चाभिजल्पन्,
यश्चायेत त्वयि दृढ़-मनाः स्तोत्र-मन्त्रैर्भवन्तम्।
तस्याभ्यस्तादपि च सुचिरं देह-वल्मीक-मध्यान्,
निष्कास्यन्ते विविध-विषम-व्याधयः काद्रवेयाः ॥३॥

प्रागेवेह त्रिदिव-भवनादेष्यता-भव्य-पुण्यात्,
पृथ्वी-चक्रं कनकमयतां देव निन्ये त्वयेदम्।
ध्यान-द्वारं मम रुचिकरं स्वान्त-गेहं प्रविष्ट-
स्तत्किं चित्रं जिन वपुरिदं यत्सुवर्णीकरोषि ॥४॥

लोकस्यैकस्त्वमसि भगवन्निर्निमित्तेन बन्धु-
स्त्वय्येवासौ सकल-विषया शक्तिरप्रत्यनीका ।
भक्ति-स्फीतां चिरमधिवसन्मामिकां चित्त-शय्यां,
मय्युत्पन्नं कथमिव ततः क्लेश-यूथं सहेथाः ।।५।।

जन्माटव्यां कथमपि मया देव दीर्घं भ्रमित्वा,
प्राप्तैवेयं तव नय-कथा स्फार-पीयूष-वापी ।
तस्या मध्ये हिमकर-हिम-व्यूह-शीते नितान्तं,
निर्मग्नं मां न जहति कथं दुःख दावोपतापाः ।।६।।

पाद-न्यासादपि च पुनतो यात्रया ते त्रिलोकीं,
हेमाभासो भवति सुरभिः श्रीनिवासश्च पद्मः ।
सर्वांगेण स्पृशति भगवंस्त्वय्यशेषं मनो मे,
श्रेयः किं तत्स्वयमहरहर्यन्न मामभ्युपैति ।।७।।

पश्यन्तं त्वद्वचनममृतं भक्ति-पात्र्या पिबन्तं,
कर्मारण्यात्पुरुषमसमानन्द-धाम-प्रविष्टम् ।
त्वां दुर्वार-स्मर-मद-हरं त्वत्प्रसादैक-भूमिं,
क्रूराकाराः कथमिव रुजा कण्टका निर्लुठन्ति ।।८।।

पाषाणात्मा तदितरसमः केवलं रत्न-मूर्ति-
र्मानस्तम्भो भवति च परस्तादृशो रत्न-वर्गः ।
दृष्टि-प्राप्तो हरति स कथं मान-रोगं नराणां,
प्रत्यासत्तिर्यदि न भवतस्तस्य तच्छक्ति-हेतुः ।।९।।

हृद्यः प्राप्तो मरुदपि भवन्मूर्ति-शैलोपवाही,
सद्यः पुंसां निरवधि-रुजा-धूलिबन्धं धुनोति ।
ध्यानाहूतो हृदय-कमलं यस्य तु त्वं प्रविष्ट-
स्तस्याशक्यः क इह भुवने देव लोकोपकारः ॥१०॥

जानासि त्वं मम भव-भवे यच्च यादृक्च दुःखं,
जातं यस्य स्मरणमपि मे शस्त्रवन्निष्पिनष्टि ।
त्वं सर्वेशः सकृप इति च त्वामुपेतोऽस्मि भक्त्या,
यत्कर्तव्यं तदिह विषये देव एव प्रमाणम् ॥११॥

प्रापद्दैवं तव नुति-पदैर्जीवकेनोपदिष्टैः,
पापाचारी मरण-समये सारमेयोऽपि सौख्यम् ।
कः सन्देहो यदुपलभते वासव-श्री प्रभुत्वं,
जल्पञ्जाप्यैर्मणिभिरमलैस्त्वन्नमस्कार-चक्रम् ॥१२॥

शुद्धे ज्ञाने शुचिनि चरिते सत्यपि त्वय्यनीचा,
भक्तिर्नो चेदनवधि सुखावञ्चिका कुञ्चिकेयम् ।
शक्योद्धाटं भवति हि कथं मुक्ति-कामस्य पुंसो,
मुक्ति-द्वारं परिदृढ़-महामोह-मुद्रा-कवाटम् ॥१३॥

प्रच्छन्नः खल्वयमघमयैरन्धकारैः समन्तात्,
पन्था मुक्तेः स्थपुटित-पदः क्लेश-गर्तैरगाधैः ।
तत्कस्तेन व्रजति सुखतो देव तत्त्वावभासी,
यद्यग्रेऽग्रे न भवति भवद्भारती रत्न-दीपः ॥१४॥

आत्म-ज्योतिर्निधिरनवधिर्द्रष्टुरानन्द-हेतुः,
कर्म-क्षोणी-पटल-पिहितो योऽनवाप्यः परेषाम् ।
हस्ते कुर्वन्त्यनतिचिरतस्तं भवद्भक्तिभाजः,
स्तोत्रै र्बद्ध-प्रकृति-परुषोद्दाम-धात्री-खनित्रैः ।।१५।।

प्रत्युत्पन्ना नय-हिमगिरेरायता चामृताब्धेः,
या देव त्वत्पद-कमलयोः संगता भक्ति-गंगा ।
चेतस्तस्यां मम रुचि-वशादाप्लुतं क्षालितांहः,
कल्माषं यद्भवति किमियं देव सन्देह-भूमिः ।।१६।।

प्रादुर्भूत-स्थिर-पद-सुख त्वामनुध्यायतो मे,
त्वय्येवाहं स इति मतिरुत्पद्यते निर्विकल्पा ।
मिथ्यैवेयं तदपि तनुते तृप्तिमभ्रेषरूपां,
दोषात्मानोऽप्यभिमत-फलास्त्वत्प्रसादाद् भवन्ति ।।१७।।

मिथ्यावादं मलमपनुदन्सप्तभंगी-तरंगै-
र्वागम्भोधिर्भुवनमखिलं देव पर्येति यस्ते ।
तस्यावृत्तिं सपदि विबुधाश्चेतसैवाचलेन,
व्यातन्वन्तः सुचिरममृतासेवया तृप्नुवन्ति ।।१८।।

आहार्येभ्यः स्पृहयति परं यः स्वभावादहृद्यः,
शस्त्र-ग्राही भवति सततं वैरिणा यश्च शक्यः ।
सर्वांगेषु त्वमसि सुभगस्त्वं न शक्यः परेषां,
तत्किं भूषा-वसन-कुसुमैः किं च शस्त्रैरुदस्त्रैः ।।१९।।

इन्द्रः सेवां तव सुकुरुतां किं तया श्लाघनं ते,
तस्यैवेयं भव-लय-करी श्लाघ्यतामातनोति ।
त्वं निस्तारी जनन-जलधेः सिद्धि-कान्ता-पतिस्त्वं,
त्वं लोकानां प्रभुरिति तव श्लाघ्यते स्तोत्रमित्थम् ।।२०।।

वृत्तिर्वाचामपर-सदृशी न त्वमन्येन तुल्यः,
स्तुत्युद्गाराः कथमिव ततस्त्वय्यमी नः क्रमन्ते ।
मैवं भूवंस्तदपि भगवन्भक्ति पीयूष-पुष्टा-
स्ते भव्यानामभिमत-फलाः पारिजाता भवन्ति ।।२१।।

कोपावेशो न तव न तव क्वापि देव प्रसादो,
व्याप्तं चेतस्तव हि परमोपेक्षयैवानपेक्षम् ।
आज्ञावश्यं तदपि भुवनं सन्निधि वैर-हारी,
क्वैवंभूतं भुवन-तिलकं प्राभवं त्वत्परेषु ।।२२।।

देव ! स्तोतुं त्रिदिव गणिका-मण्डली-गीत-कीर्तिं,
तोतूर्ति त्वां सकल-विषय-ज्ञान-मूर्तिं जनो यः ।
तस्य क्षेमं न पदमटतो जातु जाहूर्ति पन्था-
स्तत्त्वग्रन्थ-स्मरण-विषये नैष मोमूर्ति मर्त्यः ।।२३।।

चित्ते कुर्वन्निरवधि-सुख-ज्ञान-दृग्वीर्य-रूपं,
देव ! त्वां यः समय-नियमादाऽऽदरेण स्तवीति ।
श्रेयोमार्गं स खलु सुकृती तावता पूरयित्वा,
कल्याणानां भवति विषयः पञ्चधा पञ्चितानाम् ।।२४।।

शार्दूलविक्रीडित छन्द

भक्ति-प्रह्व-महेन्द्र-पूजित-पद त्वत्कीर्तने न क्षमाः,
सूक्ष्म-ज्ञान-दृशोऽपि संयमभृतः के हन्त मन्दा वयम् ।
अस्माभिःस्तवन-च्छलेन तु परस्त्वय्यादरस्तन्यते,
स्वात्माधीन सुखैषिणां स खलु नः कल्याण-कल्पद्रुमः।।२५।।

स्वागता छन्द

वादिराजमनु शाब्दिक-लोकोवादिराजमनु तार्किक-सिंहः ।
वादिराजमनु काव्यकृतस्ते वादिराजमनु भव्य-सहायः ।।२६।।

विषापहारस्तोत्रम्

[श्रीमद् धनञ्जयकविना प्रणीतम्]

उपजातिछन्द

स्वात्म-स्थितः सर्व-गतः समस्त-
व्यापार-वेदी विनिवृत्त-संगः ।
प्रवृद्ध-कालोऽप्यजरो वरेण्यः,
पायादपायात्पुरुषः पुराणः ।।१।।

परैरचिन्त्यं युग-भारमेकः,
स्तोतुं वहन्योगिभिरप्यशक्यः ।
स्तुत्योऽद्य मेऽसौ वृषभो न भानोः,
किमप्रवेशे विशति प्रदीपः ।।२।।

तत्याज शक्रः शकनाभिमानं,
नाहं त्यजामि स्तवनानुबन्धम् ।
स्वल्पेन बोधेन ततोऽधिकार्थं,
वातायनेनेव निरूपयामि ।।३।।

त्वं विश्वदृश्वा सकलैरदृश्यो,
विद्वानशेषं निखिलैरवेद्यः ।
वक्तुं कियान्कीदृश मित्यशक्यः,
स्तुतिस्ततोऽशक्तिकथा तवास्तु ।।४।।

व्यापीडितं बालमिवात्म-दोषै-
रुल्लाघतां लोकमवापिपस्त्वम् ।
हिताहितान्वेषणमान्द्यभाजः,
सर्वस्य जन्तोरसि बाल-वैद्यः ।।५।।

दाता न हर्ता दिवसं विवस्वा-
नद्यश्व इत्यच्युत दर्शिताशः ।
सव्याजमेवं गमयत्यशक्तः,
क्षणेन दत्सेऽभिमतं नताय ।।६।।

उपैति भक्त्या सुमुखः सुखानि,
त्वयि स्वभावाद् विमुखश्च दुःखम् ।
सदावदात-द्युतिरेकरूप-
स्तयोस्त्वमादर्श इवावभासि ।।७।।

अगाधताब्धेः स यतः पयोधि-
मेरोश्च तुंगा प्रकृतिः स यत्र ।
द्यावापृथिव्योः पृथुता तथैव,
व्याप त्वदीया भुवनान्तराणि ।।८।।

तवानवस्था परमार्थ-तत्त्वं,
त्वया न गीतः पुनरागमश्च ।
दृष्टं विहाय त्वमदृष्टमैषी-
विरुद्ध वृत्तोऽपि समञ्जसस्त्वम् ।।९।।

स्मरः सुदग्धो भवतैव तस्मि-
न्नुद्धूलितात्मा यदि नाम शम्भुः ।
अशेत वृन्दापहतोऽपि विष्णुः,
किं गृह्यते येन भवानजागः ।।१०।।

स नीरजाः स्यादपरोऽघवान्वा,
तद्दोषकीर्त्यैव न ते गुणित्वम् ।
स्वतोऽम्बुराशेर्महिमा न देव !
स्तोकापवादेन जलाशयस्य ।।११।।

कर्मस्थितिं जन्तुरनेक-भूमिं,
नयत्यमुं सा च परस्परस्य ।
त्वं नेतृ-भावं हि तयोर्भवाब्धौ,
जिनेन्द्र नौ-नाविकयोरिवाख्यः ।।१२।।

सुखाय दुःखानि गुणाय दोषान्,
धर्माय पापानि समाचरन्ति।
तैलाय बालाः सिकता-समूहं,
निपीडयन्ति स्फुटमत्वदीयाः ।।१३।।

विषापहारं मणिमौषधानि,
मन्त्रं समुद्दिश्य रसायनं च।
भ्राम्यन्त्यहो न त्वमिति स्मरन्ति,
पर्याय-नामानि तवैव तानि ।।१४।।

चित्ते न किञ्चित्कृतवानसि त्वं,
देवः कृतश्चेतसि येन सर्वम्।
हस्ते कृतं तेन जगद्विचित्रं,
सुखेन जीवत्यपि चित्तबाह्यः ।।१५।।

त्रिकाल-तत्त्वं त्वमवैस्त्रिलोकी,
स्वामीति संख्या-नियतेरमीषाम्।
बोधाधिपत्यं प्रति नाभविष्यं,
स्तेऽन्येपि चेद्व्याप्स्यदमूनपीदम् ।।१६।।

नाकस्य पत्युः परिकर्म रम्यं,
नागम्यरूपस्य तवोपकारि।
तस्यैव हेतुः स्वसुखस्य भानो-
रुद्बिभ्रतच्छत्रमिवादरेण ।।१७।।

क्वोपेक्षकस्त्वं क्व सुखोपदेशः,
स चेत्किमिच्छा-प्रतिकूल-वादः ।
क्वासौ क्व वा सर्वजगत्प्रियत्वं,
तन्नो यथातथ्यमवेविजं ते ॥१८॥

तुंगात्फलं यत्तदकिञ्चनाच्च,
प्राप्यं समृद्धान्न धनेश्वरादेः ।
निरम्भसोऽप्युच्चतमादिवाद्रे-
र्नैकापि निर्याति धुनी पयोधेः ॥१९॥

त्रैलोक्य-सेवा नियमाय दण्डं,
दध्रे यदिन्द्रो विनयेन तस्य ।
तत्प्रातिहार्यं भवतः कुतस्त्यं,
तत्कर्म योगाद्यदि वा तवास्तु ॥२०॥

श्रिया परं पश्यति साधु निःस्वः,
श्रीमान्न कश्चित् कृपणं त्वदन्यः ।
यथा प्रकाश-स्थितमन्धकार-
स्थायीक्षतेऽसौ न तथा तमःस्थम् ॥२१॥

स्ववृद्धिनिःश्वास-निमेषभाजि,
प्रत्यक्षमात्मानुभवेऽपि मूढः ।
किं चाखिल-ज्ञेय-विवर्ति-बोध-
स्वरूपमध्यक्षमवैति लोकः ॥२२॥

तस्यात्मजस्तस्य पितेति देव !
त्वां येऽवगायन्ति कुलं प्रकाश्य ।
तेऽद्यापि नन्वाश्मनमित्यवश्यं,
पाणौ कृतं हेम पुनस्त्यजन्ति ।।२३।।

दत्तस्त्रिलोक्यां पटहोऽभिभूताः,
सुराऽसुरास्तस्य महान् स लाभः ।
मोहस्स मोहस्त्वयि को विरोद्धु-
र्मूलस्य नाशो बलवद्विरोधः ।।२४।।

मार्गस्त्वयैको ददृशे विमुक्ते-
श्चतुर्गतीनां गहनं परेण ।
सर्वं मया दृष्टमिति स्मयेन,
त्वं मा कदाचिद्-भुजमालुलोकः ।।२५।।

स्वर्भानुरर्कस्य हविर्भुजोऽम्भः,
कल्पान्तवातोऽम्बुनिधेर्विघातः ।
संसार-भोगस्य वियोग-भावो,
विपक्ष-पूर्वाभ्युदयास्त्वदन्ये ।।२६।।

अजानतस्त्वां नमतः फलं यत्-
तज्जानतोऽन्यं न तु देवतेति ।
हरिन्मणिं काचधिया दधान-
स्तं तस्य बुद्ध्या वहतो न रिक्तः ।।२७।।

प्रशस्त-वाचश्चतुराः कषायै-
दग्धस्य देव-व्यवहारमाहुः ।
गतस्य दीपस्य हि नन्दितत्वं,
दृष्टं कपालस्य च मंगलत्वम् ।।२८।।

नानार्थमेकार्थमदस्त्वदुक्तं,
हितं वचस्ते निशमय्य वक्तुः ।
निर्दोषतां के न विभावयन्ति,
ज्वरेण मुक्तः सुगमः स्वरेण ।।२९।।

न क्वापि वाञ्छा ववृते च वाक् ते,
काले क्वचित् कोऽपि तथा नियोगः ।
न पूरयाम्यम्बुधिमित्युदंशुः,
स्वयं हि शीतद्युतिरभ्युदेति ।।३०।।

गुणा गभीराः परमाः प्रसन्ना,
बहु-प्रकारा बहवस्तवेति ।
दृष्टोऽयमन्तः स्तवने न तेषां,
गुणो गुणानां किमतः परोऽस्ति ।।३१।।

स्तुत्या परं नाभिमतं हि भक्त्या,
स्मृत्या प्रणत्या च ततो भजामि ।
स्मरामि देवं प्रणमामि नित्यं,
केनाप्युपायेन फलं हि साध्यम् ।।३२।।

ततस्त्रिलोकी-नगराधिदेवं,
नित्यं परं ज्योतिरनन्त-शक्तिम् ।
अपुण्य-पापं पर-पुण्य-हेतुं,
नमाम्यहं वन्द्यमवन्दितारम् ।।३३।।

अशब्दमस्पर्शमरूप-गन्धं,
त्वां नीरसं तद्विषयावबोधम् ।
सर्वस्य मातार-ममेयमन्यै-
र्जिनेन्द्रमस्मार्यमनुस्मरामि ।।३४।।

अगाधमन्यैर्मनसाप्यलंघ्यं,
निष्किञ्चनं प्रार्थितमर्थवद्भिः ।
विश्वस्य पारं तमदृष्टपारं,
पतिं जनानां शरणं व्रजामि ।।३५।।

त्रैलोक्य-दीक्षा-गुरवे नमस्ते,
यो वर्धमानोऽपि निजोन्नतोऽभूत् ।
प्राग्गण्डशैलः पुनरद्रि-कल्पः,
पश्चान्न मेरुः कुल-पर्वतोऽभूत् ।।३६।।

स्वयंप्रकाशस्य दिवा निशा वा,
न बाध्यता यस्य न बाधकत्वम् ।
न लाघवं गौरवमेकरूपं,
वन्दे विभुं कालकलामतीतम् ।।३७।।

इति स्तुतिं देव विधाय दैन्याद्-
वरं न याचे त्वमुपेक्षकोऽसि ।
छाया तरुं संश्रयतः स्वतः स्यात्-
कश्छायया याचितयात्मलाभः ।।३८।।

अथास्ति दित्सा यदि वोपरोध-
स्त्वय्येव सक्तां दिश भक्ति-बुद्धिम् ।
करिष्यते देव तथा कृपां मे,
को वात्मपोष्ये सुमुखो न सूरिः ।।३९।।

वितरति विहिता यथाकथंचि-
ज्जिन विनताय मनीषितानि भक्तिः ।
त्वयि नुति-विषया पुनर्विशेषाद्,
दिशति सुखानि यशो 'धनं जयं' च ।।४०।।

।। इति विषापहारस्तोत्रम् ।।

जिनचतुर्विंशतिका

[श्रीमद्भूपालकविना विरचिता]

शार्दूलविक्रीडितछन्दः

श्रीलीलायतनं मही-कुल-गृहं कीर्ति-प्रमोदास्पदं,
वाग्देवी-रति-केतनं जय-रमा-क्रीडा-निधानं महत् ।
स स्यात् सर्व-महोत्सवैक-भवनं यः प्रार्थितार्थ-प्रदं,
प्रातः पश्यति कल्प-पादप-दल-च्छायं जिनाङ्घ्रि-द्वयम् ।।१।।

वसन्ततिलका छन्दः

शान्तं वपुः श्रवण-हारि वचश्चरित्रं,
सर्वोपकारि तव देव ततः श्रुतज्ञाः ।
संसार-मारव-महास्थल-रुन्द-सान्द्र-
च्छाया-महीरुह ! भवन्तमुपाश्रयन्ते ।।२।।

शार्दूलविक्रीडित छन्दः

स्वामिन्नद्य विनिर्गतोऽस्मि जननी-गर्भान्ध-कूपोदरा-
दद्योद्घाटित दृष्टिरस्मि फलवज्जन्मास्मि चाद्य स्फुटम् ।
त्वामद्राक्षमहं यदक्षय-पदानन्दाय लोकत्रयी-
नेत्रेन्दीवर-काननेन्दुममृत-स्यन्दि-प्रभा-चन्द्रिकम् ।।३।।

निःशेष-त्रिदशेन्द्र-शेखर-शिखा-रत्न प्रदीपावली-
सान्द्रीभूत-मृगेन्द्र-विष्टर-तटी-माणिक्य-दीपावलिः ।
क्वेयं श्रीः क्व च निःस्पृहत्वमिदमित्यूहातिगस्त्वादृशः,
सर्व-ज्ञान-दृशश्चरित्र-महिमा लोकेश ! लोकोत्तरः ।।४।।

राज्यं शासनकारि-नाकपति यत् त्यक्तं तृणावज्ञया,
हेला-निर्दलित-त्रिलोक-महिमा सम्मोह-मल्लो जितः ।
लोकालोकमपि स्वबोध-मुकुरस्यान्तः कृतं यत् त्वया,
सैषाऽश्चर्य परम्परा जिनवर क्वान्यत्र संभाव्यते ।।५।।

दानं ज्ञान-धनाय दत्तमसकृत् पात्राय सद्वृत्तये,
चीर्णान्युग्र-तपांसि तेन सुचिरं पूजाश्च बह्व्यः कृताः ।
शीलानां निचयः सहामलगुणैः सर्वैः समासादितो,
दृष्टस्त्वं जिन येन दृष्टि-सुभगः श्रद्धा परेण क्षणम् ।।६।।

प्रज्ञा-पारमितः स एव भगवान् पारं स एव श्रुत-
स्कन्धाब्धेर्गुण-रत्न-भूषण इति श्लाघ्यः स एव ध्रुवम् ।
नीयन्ते जिन येन कर्ण-हृदयालंकारतां त्वद्गुणाः,
संसाराहि-विषापहार-मणयस्त्रैलोक्य-चूडामणे ।।७।।

मालिनी छन्दः

जयति दिविज-वृन्दान्दोलितैरिन्दुरोचि-
र्निचय-रुचिभिरुच्चैश्चामरै र्वीज्यमानः ।
जिनपतिरनुरज्यन्मुक्ति-साम्राज्य-लक्ष्मी-
युवति-नव कटाक्ष-क्षेप-लीलां दधानैः ।।८।।

स्रग्धरा छन्दः

देवः श्वेतातपत्र-त्रय-चमरिरुहाऽशोक-भाश्चक्र-भाषा-
पुष्पौघासार-सिंहासन-सुरपटहैरष्टभिः प्रातिहार्यैः ।
साश्चर्यैर्भ्राजमानः सुर-मनुज-सभाम्भोजिनी-भानुमाली,
पायान्नः पादपीठीकृत-सकल-जगत्पाल-मौलि र्जिनेन्द्रः ।।९।।

नृत्यत्स्वर्दन्ति-दन्ताम्बुरुह-वन-नटन्नाक-नारी-निकायः,
सद्यस्त्रैलोक्य-यात्रोत्सव-कर-निनदातोद्यमाद्यन्निलिम्पः ।
हस्ताम्भोजात-लीला विनिहित सुमनोदाम-रम्यामर स्त्री-
काम्यः कल्याण-पूजाविधिषु विजयते देव देवागमस्ते।।१०।।

शार्दूलविक्रीडित छन्दः

चक्षुष्मानहमेव देव भुवने नेत्रामृत-स्यन्दिनं,
त्वद्वक्त्रेन्दुमतिप्रसाद-सुभगैस्तेजोभिरुद्भासितम् ।
येनालोकयता मयानति-चिराच्चक्षुः कृतार्थीकृतं,
द्रष्टव्यावधि-वीक्षण-व्यतिकर-व्याजृम्भमाणोत्सवम् ।।११।।

वसन्ततिलका छन्दः

कन्तोः सकान्तमपि मल्लमवैति कश्चिन्-
मुग्धो मुकुन्द-मरविन्दज-मिन्दुमौलिम् ।
मोघीकृत-त्रिदश-योषिदपांगपात-
स्तस्य त्वमेव विजयी जिनराज मल्लः ।।१२।।

मालिनी छन्दः

किसलयितमनल्पं त्वद्विलोकाभिलाषात्,
कुसुमितमतिसान्द्रं त्वत्समीप-प्रयाणात् ।
मम फलितममन्दं त्वन्मुखेन्दोरिदानीं,
नयन-पथमवाप्ताद्देव ! पुण्यद्रुमेण ।।१३।।

त्रिभुवन-वन-पुष्पात्पुष्प-कोदण्ड-दर्प-
प्रसर-दव-नवाम्भो-मुक्ति-सूक्ति-प्रसूतिः ।
स जयति जिनराज-व्रात-जीमूत-संघः,
शतमख-शिखि-नृत्यारम्भ-निर्बन्ध-बन्धुः ।।१४।।

स्रग्धरा छन्दः

भूपाल-स्वर्ग-पाल-प्रमुख-नर-सुर-श्रेणि-नेत्रालिमाला-
लीला-चैत्यस्य चैत्यालयमखिलजगत्कौमुदीन्दो र्जिनस्य ।
उत्तंसीभूत-सेवाञ्जलि-पुट-नलिनी-कुड्मलस्त्रिः परीत्य,
श्रीपाद-च्छाययापस्थितभवदवथुः संश्रितोऽस्मीव मुक्तिम् ।।१५।।

वसन्ततिलका छन्दः

देव त्वदङ्घ्रि-नख-मण्डल-दर्पणेऽस्मि-
न्नर्ध्ये निसर्ग-रुचिरे चिर-दृष्ट-वक्त्रः ।
श्रीकीर्ति-कान्ति-धृति-संगम-कारणानि,
भव्यो न कानि लभते शुभ-मंगलानि ।।१६।।

मालिनी छन्दः

जयति सुर-नरेन्द्र-श्रीसुधा-निर्झरिण्याः,
कुलधरणि-धरोऽयं जैन-चैत्याभिरामः ।
प्रविपुल-फल-धर्मानोकहाग्र-प्रवाल-
प्रसर-शिखर-शुम्भत्केतनः श्रीनिकेतः ।।१७।।

विनमदमरकान्ता-कुन्तलाक्रान्त-कान्ति-
स्फुरित-नख-मयूख-द्योतिताशाऽन्तरालः ।
दिविज-मनुज राज-व्रात-पूज्य-क्रमाब्जो,
जयति विजित-कर्मारातिजालो-जिनेन्द्रः ।।१८।।

वसन्ततिलका छन्दः

सुप्तोत्थितेन सुमुखेन सुमंगलाय,
द्रष्टव्यमस्ति यदि मंगलमेव वस्तु ।
अन्येन किं तदिह नाथ तवैव वक्त्रं,
त्रैलोक्य-मंगल-निकेतनमीक्षणीयम् ।।१९।।

शार्दूलविक्रीडितछन्दः

त्वं धर्मोदय-तापसाश्रम-शुकस्त्वं काव्य-बन्ध-क्रम-
क्रीडानन्दन-कोकिलस्त्वमुचितःश्रीमल्लिका-षट्पदः ।
त्वं पुन्नाग-कथारविन्द-सरसी-हंसस्त्वमुत्तंसकैः
कैर्भूपाल न धार्यसे गुण-मणि-स्रङ् मालिभि मौलिभिः ॥२०॥

मालिनीछन्दः

शिव-सुखमजर-श्री-संगमं चाभिलष्य,
स्वमभिनियमयन्ति क्लेश-पाशेन केचित् ।
वयमिह तु वचस्ते भूपते भावयन्त-
स्तदुभयमपि शश्वल्लीलया निर्विशामः ।।२१।।

शार्दूलविक्रीडित छन्दः

देवेन्द्रास्तव मज्जनानि विदधुर्देवांगना मंगला-
न्यापेठुः शरदिन्दु-निर्मल-यशो गन्धर्व-देवा जगुः ।
शेषाश्चापि यथानियोगमखिलाः सेवां सुराश्चक्रिरे,
तत्किं देव वयं विदध्म इति नश्चित्तं तु दोलायते ।।२२।।

देव त्वज्जननाभिषेक-समये रोमाञ्च-सत्कञ्चुकै-
र्देवेन्द्रैर्यदनर्ति नर्तनविधौ लब्ध-प्रभावैः स्फुटम् ।
कश्चान्यत्सुर-सुन्दरी कुच-तट-प्रान्तावनद्धोत्तम-
प्रेङ्खद्वल्लकि-नाद-झंकृतमहो तत्केन संवर्ण्यते ।।२३।।

देव त्वत्प्रतिबिम्बमम्बुज-दलस्मेरेक्षणं पश्यतां,
यत्रास्माकमहो महोत्सव-रसो दृष्टेरियान्वर्तते ।
साक्षात्तत्र भवन्तमीक्षितवतां कल्याण-काले तदा,
देवानामनिमेष-लोचनतया वृत्तः स किं वर्ण्यते ।।२४।।

दृष्टं धाम रसायनस्य महता दृष्टं निधीनां पदं,
दृष्टं सिद्ध-रसस्य सद्म सदनं दृष्टं च चिन्तामणेः ।
किं दृष्टैरथवानुषंगिक-फलैरेभिर्मयाद्य ध्रुवं,
दृष्टं मुक्ति-विवाह-मंगल-गृहं दृष्टे जिन-श्री-गृहे ।।२५।।

दृष्टस्त्वं जिनराज-चन्द्र विकसद् भूपेन्द्र-नेत्रोत्पले,
स्नातं त्वन्नुति-चन्द्रिकाम्भसि भवद् विद्वच्चकोरोत्सवे,
नीतश्चाद्य निदाघजः क्लमभरः शान्तिं मया गम्यते,
देव त्वद्गत-चेतसैव भवतो भूयात् पुनर्दर्शनम् ।।२६।।

।। इति श्रीमद्भूपालकविविरचिता जिनचतुर्विंशतिका ।।

अकलंकस्तोत्रम्

शार्दूलविक्रीडित छन्दः

त्रैलोक्यं सकलं त्रिकालविषयं सालोकमालोकितं,
साक्षाद् येन यथा स्वयं करतले रेखात्रयं सांगुलि।
रागद्वेषभयामयान्तक-जरा-लोलत्व-लोभादयो,
नालं यत्पद-लंघनाय स महादेवो मया वंद्यते ।।१।।

दग्धं येन पुरत्रयं शरभुवा तीव्रार्चिषा वह्निना,
यो वा नृत्यति मत्तवत्पितृवने यस्यात्मजो वा गुहः।
सोऽयं किं मम शंकरो भय-तृषा-रोषार्ति-मोह-क्षयं,
कृत्वा यः स तु सर्ववित्तनुभृतां क्षेमंकरः शंकरः ।।२।।

यत्नाद्येन विदारितं कररुहै-र्दैत्येन्द्र-वक्षःस्थलं,
सारथ्येन धनञ्जयस्य समरे योऽमारयत् कौरवान्।
नासौ विष्णुरनेककालविषयं यज्ज्ञानमव्याहतं,
विश्वं व्याप्य विजृम्भते स तु महाविष्णुः सदेष्टो मम ।।३।।

उर्वश्यामुदपादि रागबहुलं चेतो यदीयं पुनः,
पात्री-दण्ड-कमण्डलु-प्रभृतयो यस्याकृतार्थ-स्थितिम्।
आविर्भावयितुं भवन्ति स कथं ब्रह्मा भवेन्मादृशां,
क्षुत्तृष्णा-श्रमरागरोगरहितो ब्रह्मा कृतार्थोऽस्तु नः ।।४।।

यो जग्ध्वा पिशितं समत्स्यकवलं जीवं च शून्यं वदन्,
कर्त्ता कर्मफलं न भुङ्क्त इति यो वक्ता स बुद्धः कथम्।
यज्ज्ञानं क्षणवर्ति वस्तु सकलं ज्ञातुं न शक्तं सदा,
यो जानन्युगपज्जगत्त्रयमिदं साक्षात् स बुद्धो मम ।।५।।

स्रग्धरा छन्दः

ईशः किं छिन्नलिंगो यदि विगतभयः शूलपाणिः कथं स्यात्,
नाथः किं भैक्ष्यचारी यतिरिति स कथं सांगनः सात्मजश्च ।
आर्द्राजः किन्त्वजन्मा सकलविदिति किं वेत्ति नात्मान्तरायं,
संक्षेपात्सम्यगुक्तं पशुपतिमपशुः कोऽत्र धीमानुपास्ते ।।६।।

ब्रह्मा चर्माक्षसूत्री सुरयुवतिरसावेशविभ्रान्तचेताः,
शम्भुः खट्वांगधारी गिरिपति-तनयापांग-लीलानुविद्धः ।
विष्णुश्चक्राधिपः सन्दुहितरमगमद् गोपनाथस्य मोहा-
दर्हन्विध्वस्तरागो जितसकलभयः कोऽयमेष्वाप्तनाथः ।।७।।

एको नृत्यति विप्रसार्य ककुभां चक्रे सहस्रं भुजा-
नेकः शेषभुजंगभोगशयने व्यादाय निद्रायते ।
दृष्टुं चारुतिलोत्तमामुखमगादेकश्चतुर्वक्त्रता-
मेते मुक्तिपथं वदन्ति विदुषामित्येतदत्यद्भुतम् ।।८।।

यो विश्वं वेद वेद्यं जननजलनिधेर्भंगिनः पारदृश्वा,
पौर्वापर्याविरुद्धं वचनमनुपमं निष्कलंकं यदीयम् ।
तं वन्दे साधुवंद्यं सकलगुणनिधिं ध्वस्तदोषद्विषन्तं,
बुद्धं वा वर्द्धमानं-शतदलनिलयं केशवं वा शिवं वा ।।९।।

माया नास्ति जटा-कपाल-मुकुटं चन्द्रो न मूर्धावली,
खट्वांगं न च वासुकिर्न च धनुः शूलं न चोग्रं मुखम्।
कामो यस्य न कामिनी न च वृषो-गीतं न नृत्यं पुनः,
सोऽस्मान् पातु निरंजनो जिनपतिः सर्वत्र सूक्ष्मः शिवः।।१०।।

नो ब्रह्मांकितभूतलं न च हरेः शम्भोर्न मुद्रांकितं,
नो चन्द्रार्ककरांकितं सुरपतेर्वज्रांकितं नैव च।
षडवक्त्रांकितबौद्धदेवहुतभुग्यक्षोरगैर्नांकितं,
नग्नं पश्यत वादिनो जगदिदं जैनेन्द्रमुद्रांकितम् ।।११।।

मौञ्जी दण्ड-कमण्डलु-प्रभृतयो नो लाञ्छनं ब्रह्मणो,
रुद्रस्यापि जटा-कपाल मुकुट-कौपीन-खट्वांगनाः ।
विष्णोश्चक्र-गदादि-शंख-मतुलं बुद्धस्य रक्ताम्बरं,
नग्नं पश्यत वादिनो जगदिदं जैनेन्द्र-मुद्राङ्कितम् ।।१२।।

नाहंकारवशीकृतेन मनसा न द्वेषिणा केवलं,
नैरात्म्यं प्रतिपद्य नश्यति जने कारुण्यबुद्ध्या मया ।
राज्ञः श्रीहिमशीतलस्य सदसि प्रायो विदग्धात्मनो,
बौद्धौघान्सकलान् विजित्य स घटः पादेन विस्फालितः।।१३।।

खट्वांगं नैव हस्ते न च हृदि रचिता लम्बते मुण्डमाला,
भस्मांगं नैव शूलं न च गिरिदुहिता नैव हस्ते कपालं ।
चन्द्रार्द्धं नैव मूर्धन्यपि वृषगमनं नैव कण्ठे फणीन्द्रः,
तं वन्दे त्यक्तदोषं भवभयमथनं चेश्वरं देवदेवं ।।१४।।

किं वाद्यो भगवानमेयमहिमा देवोऽकलङ्कः कलौ,
काले यो जनतासु धर्मनिहितो देवोऽकलङ्को जिनः ।
यस्य स्फारविवेकमुद्रलहरीजाले प्रमेयाकुला,
निर्मग्ना तनुतेतरा भगवती ताराशिरःकम्पनम् ।।१५।।

सा तारा खलुदेवताभगवती मन्याऽपि मन्यामहे,
षण्मासावधिजाड्यसांख्यभगवद् भट्टाकलङ्कप्रभोः ।
वाक्कल्लोलपरंपराभिरमते नूनं मनोमज्जन-
व्यापारं सहतेस्म विस्मितमतिः संताडितेतस्ततः ।।१६।।

।। इत्यकलङ्कस्तोत्रम् ।।

अद्याष्टकस्तोत्रम्

[श्रीगुणनन्दिकृत]

अद्य मे सफलं जन्म, नेत्रे च सफले मम ।
त्वामद्राक्षं यतो देव, हेतुमक्षयसंपदः ॥१॥
अद्य संसार-गंभीर, पारावारः सुदुस्तरः ।
सुतरोऽयं क्षणेनैव, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ॥२॥
अद्य मे क्षालितं गात्रं, नेत्रे च विमले कृते ।
स्नातोऽहं धर्म-तीर्थेषु, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ॥३॥
अद्य मे सफलं जन्म, प्रशस्तं सर्वमंगलम् ।
संसाराऽर्णव-तीर्णोऽहं, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ॥४॥
अद्य कर्माष्टक-ज्वालं, विधूतं सकषायकम् ।
दुर्गतेर्विनिवृत्तोऽहं, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ॥५॥
अद्य सौम्या ग्रहाः सर्वे, शुभाश्चैकादश-स्थिताः ।
नष्टानि विघ्न-जालानि, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ॥६॥
अद्य नष्टो महाबन्धः, कर्मणां दुःखदायकः ।
सुख-संगं समापन्नो, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ॥७॥
अद्य कर्माष्टकं नष्टं, दुःखोत्पादन-कारकम् ।
सुखाम्भोधि-निमग्नोऽहं, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ॥८॥
अद्य मिथ्यान्धकारस्य, हन्ता ज्ञान-दिवाकरः ।
उदितो मच्छरीरेऽस्मिन्, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ॥९॥
अद्याहं सुकृतीभूतो, निर्धूताशेषकल्मषः ।
भुवन-त्रय-पूज्योऽहं, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ॥१०॥
अद्याष्टकं पठेद्यस्तु, गुणाऽऽनन्दित-मानसः ।
तस्य सर्वार्थसंसिद्धि, जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ॥११॥

॥ इत्यद्याष्टकम् स्तोत्रम् ॥

स्वयम्भू-स्तोत्रम्

(चतुर्विंशति जिनस्तोत्रम्)

[श्रीमत्समन्तभद्राचार्य विरचितम्]

श्री वृषभजिनस्तवनम्

वंशस्थ-छन्द

स्वयम्भुवा भूत-हितेन भू-तले,
समञ्जस-ज्ञान-विभूति-चक्षुषा ।
विराजितं येन विधुन्वता तमः,
क्षपाकरेणेव गुणोत्करैः करैः ।।१।।

प्रजापतिर्यः प्रथमं जिजीविषूः,
शशास कृष्यादिषु कर्मसु प्रजाः ।
प्रबुद्ध-तत्त्वः पुनरद्भुतोदयो,
ममत्वतो निर्विविदे विदांवरः ।।२।।

विहाय यः सागर-वारि-वाससं,
वधूमिवेमां वसुधा वधूं सतीम् ।
मुमुक्षुरिक्ष्वाकु-कुलादिरात्मवान्,
प्रभुः प्रवव्राज सहिष्णुरच्युतः ।।३।।

स्व-दोष-मूलं स्व-समाधि-तेजसा,
निनाय यो निर्दय-भस्मसात्क्रियाम् ।
जगाद तत्त्वं जगतेऽर्थिनेऽञ्जसा,
बभूव च ब्रह्मपदामृतेश्वरः ।।४।।

स विश्व-चक्षुर्वृषभोऽर्चितः सतां,
समग्र-विद्याऽऽत्म-वपुर्निरञ्जनः ।
पुनातु चेतो मम नाभिनन्दनो,
जिनो जितक्षुल्लक-वादि-शासनः ।।५।।

इति वृषभ-जिन-स्तवनम्

भगवदजितजिनस्तवनम्

उपजाति छन्द

यस्य प्रभावात् त्रिदिव-च्युतस्य,
क्रीडास्वपि क्षीव-मुखाऽरविन्दः ।
अजेय-शक्तिर्भुवि बन्धु-वर्ग-
श्चकार नामाऽजित इत्यबन्ध्यम् ।।६।।
अद्यापि यस्याऽजित शासनस्य,
सतां प्रणेतुः प्रतिमंगलार्थम् ।
प्रगृह्यते नाम परं पवित्रं,
स्व-सिद्धि-कामेन जनेन लोके ।।७।।
यः प्रादुरासीत्प्रभु-शक्ति-भूम्ना,
भव्याशयालीन-कलंक-शान्त्यै ।
महामुनिर्मुक्त-घनोपदेहो,
यथारविन्दाभ्युदयाय भास्वान् ।।८।।
येन प्रणीतं पृथु-धर्म-तीर्थं,
ज्येष्ठं जनाः प्राप्य जयन्ति दुःखम् ।
गाङ्गं ह्रदं चन्दन-पङ्क-शीतं,
गजप्रवेका इव घर्म-तप्ताः ।।९।।

स ब्रह्म-निष्ठः सम-मित्र-शत्रु-
विद्या-विनिर्वान्त-कषाय-दोषः ।
लब्धात्मलक्ष्मीरजितोऽजितात्मा,
जिनश्रियं मे भगवान् विधत्ताम् ॥१०॥

इत्यजित-जिन-स्तवनम्

श्रीशम्भवजिनस्तवनम्

इन्द्रवज्रा-छन्दः

त्वं शम्भवः संभव-तर्ष-रोगैः,
संतप्यमानस्य जनस्य लोके ।
आसीरिहाकस्मिक एव वैद्यो,
वैद्यो यथाऽनाथ रुजां प्रशान्त्यै ॥११॥

उपेन्द्रवज्रा-छन्दः

अनित्यमत्राणमहं-क्रियाभिः,
प्रसक्त-मिथ्याऽध्यवसाय-दोषम् ।
इदं जगज्जन्म-जराऽन्तकाऽऽर्तं,
निरञ्जनां शान्तिमजीगमस्त्वम् ॥१२॥
शतह्रदोन्मेष-चलं हि सौख्यं,
तृष्णा मयाऽप्याऽऽयन-मात्र-हेतुः ।
तृष्णाऽभिवृद्धिश्च तपत्यजस्रं,
तापस्तदाऽऽयासयतीत्यवादीः ॥१३॥
बन्धश्च मोक्षश्च तयोश्च हेतू,
बद्धश्च मुक्तश्च फलं च मुक्तेः ।

स्याद्वादिनो नाथ ! तवैव युक्तं,
नैकान्त-दृष्टेस्त्वमतोऽसि शास्ता ॥१४॥
शक्रोऽप्यशक्तस्तव पुण्यकीर्तेः,
स्तुत्यां प्रवृत्तः किमु मादृशोऽज्ञः ।
तथापि भक्त्या स्तुत-पाद-पद्मो,
ममार्य ! देयाः शिव-तातिमुच्चैः ॥१५॥

इति श्रीशम्भव-जिन स्तवनम्

अभिनन्दनजिनस्तवनम्

वंशस्थ-छन्दः

गुणाभिनन्दादभिनन्दनो भवान्,
दयावधूं क्षान्ति-सखीमशिश्रियत् ।
समाधि-तन्त्रस्तदुपोपपत्तये,
द्वयेन नैर्ग्रन्थ्य-गुणेनऽऽचाऽऽयुजत् ॥१६॥
अचेतने तत्कृत-बन्धजेऽपि च,
ममेदमित्याऽभिनिवेशिक-ग्रहात् ।
प्रभङ्गुरे स्थावर-निश्चयेन च,
क्षतं जगत्तत्त्वमजिग्रहद् भवान् ॥१७॥
क्षुधादि-दुःख-प्रतिकारतः स्थिति-
र्न चेन्द्रियार्थ-प्रभवाऽल्प-सौख्यतः ।
ततो गुणो नास्ति च देह-देहिनो-
रितीदमित्थं भगवान् व्यजिज्ञपत् ॥१८॥

जनोऽतिलोलोऽप्यनुबन्ध दोषतो,
भयादकार्येष्विह न प्रवर्तते ।
इहाऽप्यमुत्राऽप्यनुबन्ध-दोष-वित्,
कथं सुखे संसजतीति चाऽब्रवीत् ।।१९।।

स चाऽनुबन्धोऽस्य जनस्य तापकृत्,
तृषोऽभिवृद्धिः सुखतो न च स्थितिः ।
इति प्रभो लोकहितं यतो मतं,
ततो भवानेव गतिः सतां मतः ।।२०।।

इत्यभिनन्दन-जिन-स्तवनम्

श्रीसुमतिजिनस्तवनम्

उपजाति-छन्दः

अन्वर्थ-संज्ञः सुमतिर्मुनि-स्त्वं,
स्वयं मतं येन सुयुक्ति-नीतम् ।
यतश्च शेषेषु मतेषु नास्ति,
सर्व-क्रिया-कारक-तत्त्व-सिद्धिः ।।२१।।

अनेकमेकं च तदेव तत्त्वं,
भेदान्वय-ज्ञानमिदं हि सत्यम् ।
मृषोपचारोऽन्यतरस्य लोपे,
तच्छेष-लोपोऽपि ततोऽनुपाख्यम् ।।२२।।

सतः कथञ्चित्तदसत्त्व-शक्तिः,
खे नास्ति पुष्पं तरुषु प्रसिद्धम् ।

सर्व-स्वभाव-च्युतमप्रमाणं,
स्व-वाग्विरुद्धं तव दृष्टितोऽन्यत् ।।२३।।
न सर्वथा नित्यमुदेत्यपैति,
न च क्रिया-कारकमत्र युक्तम् ।
नैवाऽसतो जन्म सतो न नाशो,
दीपस्तमः पुद्गल-भावतोऽस्ति ।।२४।।
विधि र्निषेधश्च कथञ्चिदिष्टौ,
विवक्षया मुख्य-गुण-व्यवस्था ।
इति प्रणीतिः सुमतेस्तवेयं,
मति-प्रवेकः स्तुवतोऽस्तु नाथ ।।२५।।

इति श्रीसुमति-जिन-स्तवनम्

श्रीपद्मप्रभजिनस्तवनम्

उपजाति-छन्दः

पद्मप्रभः पद्म-पलाश-लेश्यः,
पद्माऽऽलयाऽऽलिंगित-चारु-मूर्तिः।
बभौ भवान् भव्य-पयोरुहाणां,
पद्माऽऽकराणामिव पद्म-बन्धुः ।।२६।।
बभार पद्मां च सरस्वतीं च,
भवान् पुरस्तात् प्रतिमुक्ति-लक्ष्म्याः ।
सरस्वतीमेव समग्र-शोभां,
सर्वज्ञ-लक्ष्मीं ज्वलितां विमुक्तः ।।२७।।

शरीर-रश्मि-प्रसरः प्रभोस्ते,
बालाऽर्क-रश्मि-च्छविरालिलेप ।
नराऽमराऽऽकीर्ण-सभां प्रभाव-
च्छैलस्य पद्माऽऽभ-मणेः स्व-सानुम् ॥२८॥

नभस्तलं पल्लवयन्निव त्वं,
सहस्र-पत्राऽम्बुज-गर्भचारैः ।
पादाऽम्बुजैः पातित-मार-दर्पो,
भूमौ प्रजानां विजहर्थ भूत्यै ॥२९॥

गुणाऽम्बुधेर्विप्रुषमप्यजस्रं,
नाऽऽखण्डलः स्तोतुमलं तवर्षेः ।
प्रागेव मादृक् किमुताऽतिभक्ति-
र्मां बालमालाऽऽपयतीदमित्थम् ॥३०॥

इति श्रीपद्मप्रभ-जिन-स्तवनम्

श्रीसुपार्श्वजिनस्तवनम्

उपजाति छन्दः

स्वास्थ्यं यदाऽऽत्यन्तिकमेष पुंसां,
स्वार्थो न भोगः परिभङ्गुराऽऽत्मा ।
तृषोऽनुषङ्गान्न च ताप-शान्ति-
रितीदमाख्यद् भगवान् सुपार्श्वः ॥३१॥

अजङ्गमं जङ्गम-नेय यन्त्रं,
यथा तथा जीव-धृतं शरीरम् ।

बीभत्सु पूति क्षयि तापकं च,
स्नेहो वृथाऽत्रेति हितं त्वमाख्याः ॥३२॥
अलङ्घ्य-शक्तिर्भवितव्यतेयं,
हेतु-द्वयाऽऽविष्कृत-कार्यलिङ्गा ।
अनीश्वरो जन्तुरहं-क्रियाऽऽर्तः,
संहत्य कार्येष्विति साध्ववादीः ॥३३॥
बिभेति मृत्योर्न ततोऽस्ति मोक्षो,
नित्यं शिवं वाञ्छति नाऽस्य लाभः ।
तथापि बालो भय-काम-वश्यो,
वृथा स्वयं तप्यत इत्यवादीः ॥३४॥
सर्वस्य तत्त्वस्य भवान् प्रमाता,
मातेव बालस्य हिताऽनुशास्ता ।
गुणाऽवलोकस्य जनस्य नेता,
मयापि भक्त्या परिणूयसेऽद्य ॥३५॥

इति श्रीसुपार्श्व-जिन-स्तवनम्

श्रीचन्द्रप्रभजिनस्तवनम्

उपजाति छन्दः

चन्द्रप्रभं चन्द्र-मरीचि-गौरं,
चन्द्रं द्वितीयं जगतीव कान्तम् ।
वन्देऽभिवन्द्यं महतामृषीन्द्रं,
जिनं जित-स्वान्त-कषायबन्धम् ॥३६॥

यस्याङ्ग-लक्ष्मी-परिवेष-भिन्नं,
तमस्तमोऽरेरिव रश्मि-भिन्नम् ।
ननाश बाह्यं बहुमानसं च,
ध्यान-प्रदीपाऽतिशयेन भिन्नम् ।।३७।।

स्व-पक्ष-सौस्थित्य-मदाऽवलिप्ता,
वाक्-सिंहनादैर्विमदा बभूवुः ।
प्रवादिनो यस्य मदाऽऽर्द्र-गण्डा,
गजा यथा केशरिणो निनादैः ।।३८।।

यः सर्वलोके परमेष्ठितायाः,
पदं बभूवाऽद्भुत-कर्म-तेजाः ।
अनन्त-धामाऽक्षर-विश्वचक्षुः,
समन्त-दुःख-क्षय-शासनश्च ।।३९।।

स चन्द्रमा भव्य-कुमुद्वतीनां,
विपन्न-दोषाऽभ्र-कलंक-लेपः ।
व्याकोश-वाङ्-न्याय-मयूख-मालः,
पूयात् पवित्रो भगवान् मनो मे ।।४०।।

इति श्रीचन्द्रप्रभजिनस्तवनम्

श्रीसुविधिजिनस्तवनम्

उपजाति छन्दः

एकान्तदृष्टि-प्रतिषेधि तत्त्वं,
प्रमाण-सिद्धं तदतत्स्वभावम् ।
त्वया प्रणीतं सुविधे ! स्वधाम्ना,
नैतत् समालीढ-पदं त्वदन्यैः ।।४१।।

तदेव च स्यान्न तदेव च स्यात्,
तथा प्रतीतेस्तव तत् कथञ्चित् ।
नाऽत्यन्तमन्यत्व-मनन्यता च,
विधेर्निषेधस्य च शून्य-दोषात् ।।४२।।

नित्यं तदेवेदमिति प्रतीते-
र्न नित्यमन्यत् प्रतिपत्ति-सिद्धेः ।
न तद्विरुद्धं बहिरन्तरंग-
निमित्त-नैमित्तिक-योगतस्ते ।।४३।।

अनेकमेकं च पदस्य वाच्यं,
वृक्षा इति प्रत्ययवत् प्रकृत्या ।
आकाङ्क्षिणः स्यादिति वै निपातो,
गुणाऽनपेक्षे नियमेऽपवादः ।।४४।।

गुण-प्रधानाऽर्थमिदं हि वाक्यं,
जिनस्य ते तद् द्विषतामपथ्यम् ।
ततोऽभिवन्द्यं जगदीश्वराणां,
ममापि साधोस्तव पाद-पद्मम् ।।४५।।

इति श्रीसुविधिजिनस्तवनम्

श्री शीतलजिनस्तवनम्

वंशस्थ छन्दः

न शीतलाश्चन्दन-चन्द्र-रश्मयो,
न गाङ्गमम्भो न च हार-यष्टयः ।
यथा मुनेस्तेऽनघ-वाक्य-रश्मयः,
शमाऽम्बु-गर्भाः शिशिरा विपश्चिताम् ।।४६।।

सुखाऽभिलाषानल-दाह-मूर्च्छितं,
मनो निजं ज्ञानमयाऽमृताम्बुभिः ।
व्यदिध्यपस्त्वं विष-दाह-मोहितं-
यथा भिषग्-मन्त्र-गुणैः स्व-विग्रहम् ।।४७।
स्व-जीविते कामसुखे च तृष्णया,
दिवा श्रमाऽऽर्ता निशि शेरते प्रजाः ।
त्वमार्य ! नक्तं दिवमप्रमत्तवा-
नजागरेवाऽऽत्म-विशुद्ध-वर्त्मनि ।।४८।।
अपत्य-वित्तोत्तर-लोक-तृष्णया,
तपस्विनः केचन कर्म कुर्वते ।
भवान् पुनर्जन्म-जरा-जिहासया,
त्रयीं प्रवृत्तिं सम-धीरवारुणत् ।।४९।।
त्वमुत्तम-ज्योतिरजः क्व निर्वृतः,
क्व ते परे बुद्धि-लवोद्धव-क्षताः ।
ततः स्व-निःश्रेयस-भावना-परै-
र्बुधप्रवेकैर्जिन ! शीतलेड्यसे ।।५०।।

इति श्रीशीतलजिनस्तवनम्

श्री श्रेयोजिनस्तवनम्

उपजाति छन्दः

श्रेयान् जिनः श्रेयसि वर्त्मनीमाः,
श्रेयः प्रजाः शासदजेय-वाक्यः ।
भवांश्चकासे भुवनत्रयेऽस्मिन्,
नेको यथा वीत-घनो विवस्वान् ।।५१।।

विधिर्विषक्तप्रतिषेधरूपः,
प्रमाणमत्रान्यतरत् प्रधानम् ।
गुणोऽपरो मुख्य-नियाम-हेतु-
र्नयः स दृष्टान्तसमर्थनस्ते ।।५२।।

विवक्षितो मुख्य इतीष्यतेऽन्यो,
गुणोऽविवक्षो न निरात्मकस्ते ।
तथाऽरि-मित्राऽनुभयादि-शक्ति-
र्द्वयाऽवधिः कार्यकरं हि वस्तु ।।५३।।

दृष्टान्तसिद्धावुभयोर्विवादे,
साध्यं प्रषिध्येन्न तु तादृगस्ति ।
यत् सर्वथैकान्त-नियामि दृष्टं,
त्वदीय दृष्टिर्विभवत्यशेषे ।।५४।।

एकान्तदृष्टि-प्रतिषेधसिद्धि-
र्न्यायेषुभिर्मोहरिपुं निरस्य ।
असिस्म कैवल्य-विभूति-सम्राट्,
ततस्त्वमर्हन्नसि मे स्तवार्हः ।।५५।।

इति श्रेयोजिनस्तवनम्

श्रीवासुपूज्यस्तवनम्

उपजाति छन्दः

शिवासु पूज्योऽभ्युदयक्रियासु,
त्वं वासुपूज्यस्त्रिदशेन्द्र-पूज्यः ।
मयाऽपि पूज्योऽल्पधिया मुनीन्द्र !
दीपार्चिषा किं तपनो न पूज्यः ।।५६।।

न पूजयाऽर्थस्त्वयि वीतरागे,
 न निन्दया नाथ ! विवान्त-वैरे ।
तथापि ते पुण्य-गुण-स्मृति र्नः,
 पुनातु चित्तं दुरिताञ्जनेभ्यः ।।५७।।
पूज्यं जिनं त्वाऽर्चयतो जनस्य,
 सावद्य-लेशो बहु-पुण्य राशौ ।
दोषाय नालं कणिका विषस्य,
 न दूषिका शीत-शिवाऽम्बु-राशौ ।।५८।।
यद् वस्तु बाह्यं गुण-दोष-सूते-
 र्निमित्तमभ्यन्तर-मूल-हेतोः ।
अध्यात्मवृत्तस्य तदंगभूत-
 मभ्यन्तरं केवलमप्यलं ते ।।५९।।
बाह्येतरोपाधि-समग्रतेयं,
 कार्येषु ते द्रव्यगतः स्वभावः ।
नैवाऽन्यथा मोक्षविधिश्च पुंसां,
 तेनाऽभिवन्द्यस्त्वमृषिर्बुधानाम् ।।६०।।

इति श्रीवासुपूज्यजिनस्तवनम्

श्रीविमलजिनस्तवनम्

वंशस्थ छन्दः

य एव नित्य-क्षणिकाऽऽदयो नया,
 मिथोऽनपेक्षाः स्व-पर-प्रणाशिनः ।
त एव तत्त्वं विमलस्य ते मुनेः,
 परस्परेक्षाः स्व-परोपकारिणः ।।६१।।

यथैकशः कारकमर्थ-सिद्धये,
समीक्ष्य शेषं स्व-सहाय-कारकम् ।
तथैव सामान्य-विशेष-मातृका,
नयास्तवेष्टा गुण-मुख्य-कल्पतः ।।६२।।
परस्परेक्षाऽन्वयभेदलिंगतः,
प्रसिद्ध-सामान्यविशेषयोस्तव ।
समग्रताऽस्ति स्व-पराऽवभासकं,
यथा प्रमाणं भुवि बुद्धिलक्षणम् ।।६३।।
विशेष्य वाच्यस्य विशेषणं वचो,
यतो विशेष्यं विनियम्यते च यत् ।
तयोश्च सामान्यमतिप्रसज्यते,
विवक्षितात् स्यादिति तेऽन्य-वर्जनम् ।।६४।।
नयास्तव स्यात्पद-सत्य-लाञ्छिता,
रसोपविद्धा इव लोह-धातवः ।
भवन्त्यभिप्रेत गुणा यतस्ततो,
भवन्तमार्याः प्रणता हितैषिणः ।।६५।।

इति श्रीविमलजिनस्तवनम्

भगवदनन्तजिनस्तवनम्

वंशस्थ छन्दः

अनन्त-दोषाऽशय-विग्रहो ग्रहो,
विषङ्गवान् मोहमयश्चिरं हृदि ।
यतो जितस्तत्त्व रुचौ प्रसीदता,
त्वया ततोऽभूर्भगवाननन्तजित् ।।६६।।

कषाय-नाम्नां द्विषतां प्रमाथिना-
मशेयन्नाम भवानशेषवित् ।
विशोषणं मन्मथ-दुर्मदाऽऽमयं,
समाधि भैषज्य-गुणैर्व्यलीनयत् ।।६७।।
परिश्रमाऽम्बुर्भय-वीचि-मालिनी,
त्वया स्व-तृष्णा-सरिदाऽऽर्य ! शोषिता ।
असङ्ग-घर्माऽर्क-गभस्ति-तेजसा,
परं ततो निर्वृति-धाम तावकम् ।।६८।।
सुहृत् त्वयि श्रीसुभगत्वमश्नुते,
द्विषंस्त्वयि प्रत्ययवत् प्रलीयते ।
भवानुदासीनतमस्तयोरपि,
प्रभो परं चित्रमिदं तवेहितम् ।।६९।।
त्वमीदृशस्तादृश इत्ययं मम,
प्रलाप-लेशोऽल्पमतेर्महामुने ! ।
अशेष-माहात्म्यमनीरयन्नपि,
शिवाय संस्पर्श इवाऽमृताम्बुधेः ।।७०।।

इत्यनन्तजिनस्तवनम्

श्रीधर्मजिनस्तवनम्

रथोद्धता छन्दः

धर्म-तीर्थमनघं प्रवर्तयन्,
धर्म इत्यनुमतः सतां भवान् ।
कर्म-कक्षमदहत् तपोऽग्निभिः,
शर्म शाश्वतमवाप शंकरः ।।७१।।

देव-मानव-निकाय-सत्तमै,
　　रेजिषे परिवृतो वृतो बुधैः ।
तारका-परिवृतोऽतिपुष्कलो,
　　व्योमनीव शश-लाञ्छनोऽमलः ।।७२।।
प्रातिहार्य-विभवैः परिष्कृतो,
　　देहतोऽपि विरतो भवानभूत् ।
मोक्षमार्गमशिषन् नराऽमरान्,
　　नापि शासन-फलैषणाऽऽतुरः ।।७३।।
काय-वाक्य-मनसां प्रवृत्तयो,
　　नाऽभवंस्तव मुनेश्चिकीर्षया ।
नाऽसमीक्ष्य भवतः प्रवृत्तयो ,
　　धीर ! तावकमचिन्त्यमीहितम् ।।७४।।
मानुषीं प्रकृतिमभ्यतीतवान्,
　　देवतास्वपि च देवता यतः ।
तेन नाथ ! परमाऽसि देवता,
　　श्रेयसे जिनवृष ! प्रसीद नः ।।७५।।

इति श्रीधर्मजिन-स्तवनम्

श्रीशान्तिजिनस्तवनम्

उपजाति छन्दः

विधाय रक्षां परतः प्रजानां,
　　राजा चिरं योऽप्रतिम-प्रतापः ।
व्यधात् पुरस्तात् स्वत एव शान्ति-
　　र्मुनिर्दयामूर्तिरिवाऽघ-शान्तिम् ।।७६।।

चक्रेण यः शत्रु-भयंकरेण,
जित्वा नृपः सर्व-नरेन्द्र-चक्रम् ।
समाधि-चक्रेण पुनर्जिगाय,
महोदयो दुर्जय-मोह-चक्रम् ।।७७।।
राज-श्रिया राजसु राज-सिंहो,
रराज यो राज-सुभोग-तन्त्रः ।
आर्हन्त्य-लक्ष्म्या पुनरात्म-तन्त्रो,
देवाऽसुरोदार-सभे रराज ।।७८।।
यस्मिन्नभूद्राजनि राज-चक्रं,
मुनौ दया-दीधिति धर्म-चक्रम् ।
पूज्ये मुहुः प्राञ्जलि देव-चक्रं,
ध्यानोन्मुखे ध्वंसि कृतान्त-चक्रम् ।।७९।।
स्व-दोष-शान्त्या विहितात्म-शान्तिः,
शान्तेर्विधाता शरणं गतानाम् ।
भूयाद् भव-क्लेश-भयोपशान्त्यै,
शान्तिर्जिनो मे भगवान् शरण्यः ।।८०।।

इति श्रीशान्तिजिनस्तवनम्

श्रीकुन्थुजिनस्तवनम्

वसन्ततिलका छन्दः

कुन्थु-प्रभृत्यखिल-सत्व-दयैक-तानः,
कुन्थुर्जिनो ज्वर-जरा-मरणोपशान्त्यै ।
त्वं धर्मचक्रमिह वर्तयसिस्म भूत्यै,
भूत्वा पुरा क्षिति-पतीश्वर-चक्रपाणिः ।।८१।।

तृष्णार्चिषः परिदहन्ति न शान्तिरासा-
मिष्टेन्द्रियार्थ-विभवैः परिवृद्धिरेव ।
स्थित्यैव काय-परिताप-हरं निमित्त-
मित्यात्मवान् विषय-सौख्य-पराङ्मुखोऽभूत् ।।८२।।

बाह्यं तपः परम-दुश्चरमाचरंस्त्व-
माध्यात्मिकस्य तपसःपरिबृंहणार्थम् ।
ध्यानं निरस्य कलुष-द्वयमुत्तरस्मिन्,
ध्यान-द्वये ववृतिषेऽतिशयोपपन्ने ।।८३।।

हुत्वा स्व-कर्म-कटुक-प्रकृतीश्चतस्रो,
रत्नत्रयाऽतिशय-तेजसि जात-वीर्यः ।
बभ्राजिषे सकल-वेद-विधेर्विनेता,
व्यभ्रे यथा वियति दीप्त-रुचिर्विवस्वान् ।।८४।।

यस्मान् मुनीन्द्र ! तव लोकपितामहाद्या,
विद्या-विभूति-कणिकामपि नाऽऽप्नुवन्ति ।
तस्माद् भवन्तमजमप्रतिमेयमार्याः,
स्तुत्यं स्तुवन्ति सुधियः स्व-हितैक-तानाः ।।८५।।

इति श्रीकुन्थुजिनस्तवनम्

भगवदर-जिनस्तवनम्

पथ्यावक्त्रं छन्दः

गुण-स्तोकं सदुल्लङ्घ्य-तद्बहुत्व-कथा स्तुतिः ।
आनन्त्यात्ते गुणा वक्तुमशक्यास्त्वयि सा कथम् ।।८६।।

तथापि ते मुनीन्द्रस्य यतो नामापि कीर्तितम्।
पुनाति पुण्य-कीर्तेर्नस्ततो ब्रूयाम किञ्चन।।८७।।
लक्ष्मी-विभव-सर्वस्वं मुमुक्षोश्चक्र-लाञ्छनम्।
साम्राज्यं सार्वभौमं ते जरत्तृणमिवाऽभवत्।।८८।।
तव रूपस्य सौन्दर्यं दृष्ट्वा तृप्तिमनापिवान्।
द्व्यक्षः शक्रः सहस्राक्षो बभूव बहुविस्मयः।।८९।।
मोहरूपो रिपुः पापः कषाय-भट-साधनः।
दृष्टि-संपदुपेक्षाऽस्त्रैस्त्वया धीर ! पराजितः।।९०।।
कन्दर्पस्योद्धरो दर्पस्त्रैलोक्य-विजयाऽर्जितः।
ह्रेपयामास तं धीरे त्वयि प्रतिहतोदयः।।९१।।
आयत्यां च तदात्वे च दुःख-योनिर्दुरुत्तरा।
तृष्णा-नदी त्वयोत्तीर्णा विद्या-नावा विविक्तया।।९२।।
अन्तकः क्रन्दको नृणां जन्म-ज्वर-सखा सदा।
त्वामन्तकान्तकं प्राप्य व्यावृत्तः काम-कारतः।।९३।।
भूषा-वेषाऽऽयुध-त्यागि विद्या-दम-दया-परम्।
रूपमेव तवाचष्टे धीर ! दोष-विनिग्रहम्।।९४।।
समन्ततोऽङ्ग-भासां ते परिवेषेण भूयसा।
तमो बाह्यमपाकीर्णमध्यात्मध्यान-तेजसा।।९५।।
सर्वज्ञ-ज्योतिषोद्भूतस्तावको महिमोदयः।
कं न कुर्यात् प्रणम्रं ते सत्त्वं नाथ ! सचेतनम्।।९६।।
तव वागमृतं श्रीमत् सर्वभाषा-स्वभावकम्।
प्रीणयत्यमृतं यद्वत् प्राणिनो व्यापि संसदि।।९७।।

अनेकान्तात्म-दृष्टिस्ते सती शून्यो विपर्ययः ।
ततः सर्वं मृषोक्तं स्यात् तदयुक्तं स्व-घाततः ।।९८।।
ये पर-स्खलितोन्निद्राः स्व-दोषेभ-निमीलिनः ।
तपस्विनस्ते किं कुर्युरपात्रं त्वन्मतश्रियः ।।९९।।
ते तं स्व-घातिनं दोषं शमीकर्तुमनीश्वराः ।
त्वद्द्विषः स्वहनो बालास्तत्त्वाऽवक्तव्यतां श्रिताः ।।१००।।
सदेक-नित्य-वक्तव्यास्तद्विपक्षाश्च ये नयाः ।
सर्वथेति प्रदुष्यन्ति पुष्यन्ति स्यादितीह ते ।।१०१।।
सर्वथा-नियम-त्यागी यथादृष्टमपेक्षकः ।
स्याच्छब्दस्तावके न्याये नाऽन्येषामात्म-विद्विषाम् ।।१०२।।
अनेकान्तोऽप्यनेकान्तः प्रमाण-नय-साधनः ।
अनेकान्तः प्रमाणात् ते तदेकान्तोऽर्पितान्नयात् ।।१०३।।

अपरवक्त्रं छन्दः

इति निरुपम-युक्ति-शासनः,
प्रिय-हित-योगगुणाऽनुशासनः ।
अरजिन ! दम-तीर्थ-नायक-
स्त्वमिव सतां प्रतिबोधनाय कः ।।१०४।।
मतिगुण-विभवाऽनुरूपत-
स्त्वयि वरदाऽऽगम-दृष्टिरूपतः ।
गुणकृशमपि किञ्चनोदितं,
मम भवताद् दुरिताऽसनोदितम् ।।१०५।।

इत्यर-जिनस्तवनम्

श्रीमल्लिजिनस्तवनम्

(सान्द्रपदंछन्दः) अथवा (श्रीछन्दः) अथवा (वनवासिकाछन्दः)

यस्य महर्षेः सकल-पदार्थ-
प्रत्यवबोधः समजनि साक्षात् ।
साऽमर-मर्त्यं जगदपि सर्वं,
प्राञ्जलि भूत्वा प्रणिपतति स्म ॥१०६॥

यस्य च मूर्तिः कनकमयीव,
स्वस्फुरदाऽऽभा-कृत-परिवेषा ।
वागपि तत्त्वं कथयितु-कामा,
स्यात्पद्-पूर्वा रमयति साधून् ॥१०७॥

यस्य पुरस्ताद् विगलित-माना,
न प्रतितीर्थ्या भुवि विवदन्ते ।
भूरपि रम्या प्रतिपदमासी-
ज्जात-विकोशाऽम्बुज-मृदु-हासा ॥१०८॥

यस्य समन्ताज्जिन-शिशिरांशोः,
शिष्यक-साधु-ग्रह-विभवोऽभूत् ।
तीर्थमपि स्वं जनन-समुद्र-
त्रासित-सत्वोत्तरण-पथोऽग्रम् ॥१०९॥

यस्य च शुक्लं परम-तपोऽग्नि-
र्ध्यानमनन्तं दुरितमधाक्षीत् ।
तं जिनसिंहं कृत-करणीयं,
मल्लिमशल्यं शरणमितोऽस्मि ॥११०॥

इति श्रीमल्लिजिनस्तवनम्

श्रीमुनिसुव्रतजिनस्तवनम्

वैतालीयं छन्दः

अधिगत-मुनि-सुव्रत-स्थिति-
मुनि-वृषभो मुनिसुव्रतोऽनघः ।
मुनि-परिषदि निर्बभौ भवा-
नुडु-परिषत्परिवीत-सोमवत् ।।१११।।

परिणत-शिखि-कण्ठ-रागया,
कृत-मद-निग्रह-विग्रहाऽऽभया ।
तव जिन ! तपसः प्रसूतया,
ग्रह-परिवेष-रुचेव शोभितम् ।।११२।।

शशि-रुचि-शुचि-शुक्ल-लोहितं,
सुरभितरं विरजो निजं वपुः ।
तव शिवमऽतिविस्मयं यते !
यदपि च वाङ्मनसीयमीहितम् ।।११३।।

स्थिति-जनन-निरोध-लक्षणं,
चरमचरं च जगत् प्रतिक्षणम् ।
इति जिन ! सकलज्ञ-लाञ्छनं,
वचनमिदं वदतांवरस्य ते ।।११४।।

दुरित-मल-कलंकमष्टकं,
निरुपम-योगबलेन निर्दहन् ।
अभवदभव-सौख्यवान् भवान्,
भवतु ममाऽपि भवोपशान्तये ।।११५।।

इति श्रीमुनिसुव्रतजिस्तवनम्

श्रीनमिजिनस्तवनम्

शिखरिणी छन्दः

स्तुतिः स्तोतुः साधोः कुशल-परिणामाय स तदा,
भवेन्मा वा स्तुत्यः फलमपि ततस्तस्य च सतः ।
किमेवं स्वाधीन्याज्जगति सुलभे श्रायस-पथे,
स्तुयान्न त्वां विद्वान् सततमभिपूज्यं नमिजिनम् ।।११६।।
त्वया धीमन् ! ब्रह्म-प्रणिधिमनसा जन्म-निगलं,
समूलं निर्भिन्नं त्वमसि विदुषां मोक्षपदवी ।
त्वयि ज्ञानज्योति-र्विभव-किरणैर्भाति भगव-
न्नभूवन् खद्योता इव शुचिरवावन्यमतयः ।।११७।।
विधेयं वार्यं चानुभयमुभयं मिश्रमपि तद्,
विशेषैः प्रत्येकं नियमविषयैश्चाऽपरिमितैः ।
सदाऽन्योऽन्यापेक्षैः सकल-भुवन-ज्येष्ठगुरुणा,
त्वया गीतं तत्त्वं बहुनयविवक्षेतर-वशात् ।।११८।।
अहिंसा भूतानां जगति विदितं ब्रह्म परमं,
न सा तत्राऽऽरम्भोऽस्त्यणुरपि च यत्राऽऽश्रमविधौ ।
ततस्तत्सिद्ध्यर्थं परम-करुणो ग्रन्थमुभयं,
भवानेवाऽत्याक्षीन्न च विकृत-वेषोपधि-रतः ।।११९।।
वपुर्भूषा-वेष-व्यवधिरहितं शान्तकरणं,
यतस्ते संचेष्टे स्मर-शर-विषाऽऽतंक-विजयम् ।
विना भीमैः शस्त्रैरदय-हृदयाऽऽमर्ष-विलयं,
ततस्त्वं निर्मोहः शरणमसि नः शान्तिनिलयः ।।१२०।।

इति श्रीनमिजिनस्तवनम्

भगवदरिष्टनेमिजिनस्तवनम्

विषमजातावुग्दता-छन्दः

भगवानृषिः परम-योग-
दहन-हुत-कल्मषेन्धनः ।
ज्ञान-विपुल-किरणैः सकलं,
प्रतिबुद्ध्य बुद्ध-कमलायतेक्षणः ।।१२१।।

हरिवंश-केतुरनवद्य-
विनय-दम-तीर्थ-नायकः ।
शील-जलधिरभवो विभव-
स्त्वमरिष्ट-नेमि-जिन-कुञ्जरोऽजरः ।।१२२।।

त्रिदशेन्द्र-मौलि-मणि-रत्न-
किरण-विसरोपचुम्बितम् ।
पाद-युगलममलं भवतो,
विकसत्कुशेशय-दलाऽरुणोदरम् ।।१२३।।

नख-चन्द्र-रश्मि-कवचाऽति-
रुचिर-शिखराङ्गुलि-स्थलम् ।
स्वार्थ-नियत-मनसः सुधियः,
प्रणमन्ति मन्त्र-मुखरा महर्षयः ।।१२४।।

द्युतिमद्रथांग-रवि-बिम्ब-
किरण-जटिलांशु-मण्डलः ।
नील-जलद-जलराशि-वपुः,
सह बन्धुभिर्गरुडकेतुरीश्वरः ।।१२५।।

हलभृच्च ते स्वजनभक्ति-
मुदित-हृदयौ जनेश्वरौ ।
धर्म-विनय-रसिकौ सुतरां,
चरणाऽरविन्द-युगलं प्रणेमतुः ।।१२६।।

ककुदं भुवः खचरयोषि-
दुषित-शिखरैरलङ्कृतः ।
मेघ-पटल-परिवीत-तट-
स्तव लक्षणानि लिखितानि वज्रिणा ।।१२७।।

वहतीति तीर्थमृषिभिश्च,
सतत मभिगम्यतेऽद्य च ।
प्रीति-वितत-हृदयैः परितो,
भृशमूर्जयन्त इति विश्रुतोऽचलः ।।१२८।।

बहिरन्तरप्युभयथा च,
करणमविघाति नार्थकृत् ।
नाथ ! युगपदखिलं च सदा,
त्वमिदं तलाऽमलकवद् विवेदिथ ।।१२९।।

अत एव ते बुधनुतस्य,
चरित-गुणमद्भुतोदयं ।
न्याय-विहितमवधार्य जिने,
त्वयि सुप्रसन्न-मनसः स्थिता वयम् ।।१३०।।

इत्यरिष्टनेमिजिनस्तवनम्

श्रीपार्श्वजिनस्तवनम्

वंशस्थ छन्दः

तमाल-नीलैः सधनुस्तडिद्गुणैः,
प्रकीर्ण-भीमाऽशनि-वायु-वृष्टिभिः ।
बलाहकैर्वैरि-वशैरुपद्रुतो,
महामना यो न चचाल योगतः ।।१३१।।

बृहत्फणा-मण्डल-मण्डपेन यं,
स्फुरत्तडित्पिंग-रुचोपसर्गिणम् ।
जुगूह नागो धरणो धरा-धरं,
विराग-सन्ध्या-तडिदम्बुदो यथा ।।१३२।।

स्व-योग-निस्त्रिंश-निशात-धारया,
निशात्य यो दुर्जय-मोह-विद्विषम् ।
अवापदाऽऽर्हन्त्यमचिन्त्यमद्भुतं,
त्रिलोक-पूजाऽतिशयाऽऽस्पदं पदम् ।।१३३।।

यमीश्वरं वीक्ष्य विधूत-कल्मषं,
तपोधनास्तेऽपि तथा बुभूषवः ।
वनौकसः स्व-श्रम-वन्ध्य-बुद्धयः,
शमोपदेशं शरणं प्रपेदिरे ।१३४।।

स सत्यविद्यातपसां प्रणायकः,
समग्रधीरुग्रकुलाम्बरांशुमान् ।
मया सदा पार्श्वजिनः प्रणम्यते,
विलीन-मिथ्या-पथ-दृष्टि-विभ्रमः ।।१३५।।

इति श्रीपार्श्वजिनस्तवनम्

श्री वीरजिनस्तवनम्

स्कन्धक छन्दः अथवा आर्यागीति छन्दः

कीर्त्या भुवि भासि तया,
वीर ! त्वं गुणसमुच्छ्रया भासितया ।
भासोडु-सभाऽऽसितया,
सोम इव व्योम्नि कुन्द-शोभा-सितया ।।१३६।।

तव जिन ! शासन-विभवो,
जयति कलावपि गुणानुशासन-विभवः ।
दोष-कशाऽसन-विभवः,
स्तुवन्ति चैनं प्रभाऽऽकृशाऽऽसन-विभवः ।।१३७।।

अनवद्यः स्याद्वादस्तव,
दृष्टेष्टाऽविरोधतः स्याद्वादः ।
इतरो न स्याद्वादो,
स द्वितय-विरोधान् मुनीश्वराऽस्याद्वादः ।।१३८।।

त्वमसि सुराऽसुर-महितो,
ग्रन्थिक-सत्त्वाऽऽशय-प्रणामाऽऽमहितः ।
लोकत्रय-परम-हितो-
ऽनावरणज्योतिरुज्ज्वलद्धाम-हितः ।।१३९।।

सभ्यानामभिरुचितं,
दधासि गुण-भूषणं श्रिया चारु-चितम् ।
मग्नं स्वस्यां तं रुचितं
जयसि च मृगलाञ्छनं स्व-कान्त्या रुचितम् ।।१४०।।

त्वं जिन ! गत-मद-माय-
स्तव भावानां मुमुक्षु कामद-मायः ।
श्रेयान् श्री-मद-माय-
स्त्वया समादेशि सप्रयाम-दमाऽऽयः ।।१४१।।
गिरिभित्त्यऽवदानवतः,
श्रीमत इव दन्तिनः स्त्रवद्दानवतः ।
तव शमवादानऽवतो,
गतमूर्जितमपगतप्रमा-दान-वतः ।।१४२।।
बहु-गुण-सम्पदऽसकलं,
परमतमपि मधुर-वचन-विन्यास-कलम् ।
नयभक्त्यवतंसक-लं,
तव देव ! मतं समन्तभद्रं सकलम् ।।१४३।।

इति श्रीवीरजिनस्तवनम्

श्री जिनसहस्त्रनाम स्तोत्रम्

स्वयंभुवे नमस्तुभ्यमुत्पाद्यात्मानमात्मनि ।
स्वात्मनैव तथोद्भूत-वृत्तयेऽचिन्त्यवृत्तये ।।१।।

नमस्ते जगतां पत्ये, लक्ष्मीभर्त्रे नमोऽस्तु ते ।
विदांवर नमस्तुभ्यं, नमस्ते वदतांवर ।।२।।
कामशत्रुहणं देव, मानमन्ति मनीषिणः ।
त्वामानमन्सुरेणमौलि-भा-मालाऽभ्यर्चितक्रमम् ।।३।।
ध्यान-द्रुघण-निर्भिन्न, घन-घाति महातरुः ।
अनन्त-भव-सन्तान, जयादासीदनन्तजित् ।।४।।

त्रैलोक्य-निर्जयावाप्त-दुर्दर्पमतिदुर्जयम् ।
मृत्युराजं विजित्यासीज्जिन ! मृत्युं जयो भवान् ।।५।।

विधूताशेष-संसार-बन्धनो भव्यबान्धवः ।
त्रिपुराऽरिस्त्वमेवासि, जन्म मृत्यु-जराऽन्तकृत् ।।६।।

त्रिकाल-विषयाऽशेष-तत्त्वभेदात् त्रिधोत्थितम् ।
केवलाख्यं दधच्चक्षुस्त्रिनेत्रोऽसि त्वमीशितः ।।७।।

त्वामन्धकाऽन्तकं प्राहु, र्मोहान्धाऽसुर-मर्दनात् ।
अर्द्धं ते नारयो यस्मादर्धनारीश्वरोऽस्यतः ।।८।।

शिवः शिवपदाध्यासाद्, दुरिताऽरि-हरो हरः ।
शंकरः कृतशं लोके, शंभवस्त्वं भवन्सुखे ।।९।।

वृषभोऽसि जगज्ज्येष्ठः पुरुः पुरुगुणोदयैः ।
नाभेयो नाभि-सम्भूतेरिक्ष्वाकु-कुल-नन्दनः ।।१०।।

त्वमेकः पुरुषस्कन्धस्त्वं, द्वे लोकस्य लोचने ।
तवं त्रिधा बुद्ध-सन्मार्गस्त्रिज्ञस्त्रिज्ञान-धारकः ।।११।।

चतुःशरण-मांगल्य-मूर्त्तिस्त्वं चतुरस्त्रधीः ।
पञ्च-ब्रह्ममयो देव, पावनस्त्वं पुनीहि माम् ।।१२।।

स्वर्गाऽवतारिणे तुभ्यं, सद्योजातात्मनें नमः ।
जन्माभिषेकवामाय, वामदेव नमोऽस्तु ते ।।१३।।

सन्निष्क्रान्तावघोराय, पदं परममीयुषे ।
केवलज्ञान-संसिद्धावीशानाय नमोऽस्तु ते ।।१४।।

पुरस्तत्पुरूषत्वेन विमुक्तपदभाजिने ।
नमस्तत्पुरुषाऽवस्थां, भाविनीं तेऽद्य बिभ्रते ॥१५॥

ज्ञानावरण-निर्ह्रासान्नमस्तेऽनन्तचक्षुषे ।
दर्शनावरणोच्छेदान्नमस्ते विश्वदृश्वने ॥१६॥

नमो दर्शनमोहघ्ने, क्षायिकाऽमलदृष्टये ।
नमश्चारित्रमोहघ्ने, विरागाय महौजसे ॥१७॥

नमस्तेऽनन्तवीर्याय, नमोऽनन्तसुखात्मने ।
नमस्तेऽनन्तलोकाय, लोकालोक-विलोकिने ॥१८॥

नमस्तेऽनन्तदानाय , नमस्तेऽनन्तलब्धये ।
नमस्तेऽनन्तभोगाय, नमोऽनन्तोपभोगिने ॥१९॥

नमः परमयोगाय नमस्तुभ्यमयोनये ।
नमः परमपूताय नमस्ते परमर्षये ॥२०॥

नमः परमविद्याय नमः पर-मतच्छिदे।
नमः परम-तत्त्वाय नमस्ते परमात्मने ॥२१॥

नमः परम-रूपाय नमः परम-तेजसे ।
नमः परम-मार्गाय नमस्ते परमेष्ठिने ॥२२॥

परमर्द्धिजुषे धाम्ने परमज्योतिषे नमः ।
नमः पारेतमः प्राप्तधाम्ने परतराऽऽत्मने ॥२३॥

नमः क्षीणकलंकाय क्षीणबन्ध ! नमोऽस्तु ते ।
नमस्ते क्षीणमोहाय क्षीणदोषाय ते नमः ॥२४॥

नमः सुगतये तुभ्यं शोभनां गतिमीयुषे ।
नमस्तेऽतीन्द्रिय-ज्ञान-सुखायाऽनिन्द्रियात्मने ॥ २५ ॥

काय-बन्धन-निर्मोक्षादकायाय नमोऽस्तु ते ।
नमस्तुभ्यमयोगाय योगिनामधियोगिने ।।२६।।

अवेदाय नमस्तुभ्यमकषायाय ते नमः ।
नमः परम-योगीन्द्रवन्दिताङ्घ्रिद्वयाय ते ।।२७।।

नमः परम-विज्ञान ! नमः परम-संयम ! ।
नमः परमदृग्दृष्टपरमार्थाय ते नमः ।।२८।।

नमस्तुभ्यमलेश्याय शुक्ललेश्यांशक-स्पृशे ।
नमो भव्येतराऽवस्था-व्यतीताय विमोक्षिणे ।।२९।।

संज्ञ्यसंज्ञिद्वयावस्था-व्यतिरिक्ताऽमलात्मने ।
नमस्ते वीतसंज्ञाय नमः क्षायिकदृष्टये ।।३०।।

अनाहाराय तृप्ताय नमः परमभाजुषे ।
व्यतीताऽशेषदोषाय भवाब्धेः पारमीयुषे ।।३१।।

अजराय नमस्तुभ्यं नमस्तेवीतजन्मने ।
अमृत्यवे नमस्तुभ्यमचलायाऽक्षरात्मने ।।३२।।

अलमास्तां गुणस्तोत्रमनन्तास्तावकागुणाः ।
त्वां नामस्मृतिमात्रेण पर्युपासिसिषामहे ।।३३।।

एवं स्तुत्वा जिनं देवं भक्त्या परमया सुधीः ।
पठेदष्टोत्तरं नाम्नां सहस्त्रं पापशान्तये ।।३४।।

इति प्रस्तावना

प्रसिद्धाऽष्टसहस्त्रेद्धलक्षणं त्वां गिरांपतिम् ।
नाम्नामष्टसहस्त्रेण तोष्टुमोऽभीष्टसिद्धये ।।१।।

श्रीमान् स्वयम्भूर्वृषभः शम्भवः शम्भुरात्मभूः ।
स्वयंप्रभः प्रभुर्भोक्ता विश्वभूरपुनर्भवः ।।२।।

विश्वात्मा विश्वलोकेशो विश्वतश्चक्षुरक्षरः ।
विश्वविद् विश्वविद्येशो विश्वयोनिरनश्वरः ।।३।।

विश्वदृश्वा विभुर्धाता विश्वेशो विश्वलोचनः ।
विश्वव्यापी विधिर्वेधाः शाश्वतो विश्वतोमुखः ।।४।।

विश्वकर्मा जगज्ज्येष्ठो विश्वमूर्तिर्जिनेश्वरः ।
विश्वदृग् विश्वभूतेशो विश्वज्योतिरनीश्वरः ।।५।।

जिनो जिष्णुरमेयात्मा विश्वरीशो जगत्पतिः ।
अनन्तजिदचिन्त्यात्मा भव्यबन्धुरऽबन्धनः ।।६।।

युगादिपुरुषो ब्रह्मा पञ्चब्रह्ममयः शिवः ।
परः परतरः सूक्ष्मः परमेष्ठी सनातनः ।।७।।

स्वयंज्योतिरजोऽजन्मा ब्रह्मयोनिरऽयोनिजः ।
मोहारिविजयी जेता धर्मचक्री दयाध्वजः ।।८।।

प्रशान्तारिरनन्तात्मा योगी योगीश्वराऽर्चितः ।
ब्रह्मविद् ब्रह्मतत्त्वज्ञो ब्रह्मोद्याविद्यतीश्वरः ।।९।।

शुद्धो बुद्धः प्रबुद्धात्मा सिद्धार्थः सिद्धशासनः ।
सिद्धः सिद्धान्तविद् ध्येयः सिद्धसाध्यो जगद्धितः ।।१०।।

सहिष्णुरच्युतोऽनन्तः प्रभविष्णुर्भवोद्भवः ।
प्रभूष्णुरजरोऽजर्यो भ्राजिष्णुर्धीश्वरोऽव्ययः ।।११।।
विभावसुरसम्भूष्णुः स्वयम्भूष्णुः पुरातनः ।
परमात्मा परंज्योतिस्त्रिजगत्परमेश्वरः ।।१२।।

इति श्रीमदादिशतम् ।।१।।

दिव्यभाषापतिर्दिव्यः पूतवाक्पूतशासनः ।
पूतात्मा परमज्योतिर्धर्माध्यक्षो दमीश्वरः ।।१।।
श्रीपतिर्भगवानर्हन्नरजा विरजाः शुचिः ।
तीर्थकृत् केवलीशानः पूजार्हः स्नातकोऽमलः ।।२।।
अनन्तदीप्तिर्ज्ञानात्मा स्वयंबुद्धः प्रजापतिः ।
मुक्तः शक्तो निराबाधो निष्कलो भुवनेश्वरः ।।३।।
निरञ्जनो जगज्ज्योतिर्निरुक्तोर्निरामयः ।
अचलस्थितिरक्षोभ्यः कूटस्थः स्थाणुरक्षयः ।।४।।
अग्रणीर्ग्रामणीर्नेता प्रणेता न्यायशास्त्रकृत् ।
शास्ता धर्मपतिर्धर्म्यो धर्मात्मा धर्मतीर्थकृत् ।।५।।
वृषध्वजो वृषाधीशो वृषकेतुर्वृषायुधः ।
वृषो वृषपतिर्भर्ता वृषभांको वृषोद्भवः ।।६।।
हिरण्यनाभिर्भूतात्मा भूतभृद् भूतभावनः ।
प्रभवो विभवो भास्वान् भवो भावो भवान्तकः ।।७।।
हिरण्यगर्भः श्रीगर्भः प्रभूतविभवोद्भवः ।
स्वयंप्रभुः प्रभूतात्मा भूतनाथो जगत्प्रभुः ।।८।।

सर्वादिः सर्ववृक् सार्वः सर्वज्ञः सर्वदर्शनः ।
सर्वात्मा सर्वलोकेशः सर्ववित् सर्वलोकजित् ।।९।।

सुगतिः सुश्रुतः सुश्रुत् सुवाक् सूरिर्बहुश्रुतः ।
विश्रुतो विश्वतःपादो विश्वशीर्षः शुचिश्रवाः ।।१०।।

सहस्रशीर्षः क्षेत्रज्ञः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
भूतभव्यभवद्भर्ता विश्वविद्यामहेश्वरः ।।११।।

इति दिव्यादिशतम् ।।२।।

स्थविष्ठः स्थविरो ज्येष्ठः पृष्ठः प्रेष्ठो वरिष्ठधीः ।
स्थेष्ठो गरिष्ठो बंहिष्ठः श्रेष्ठोऽणिष्ठो गरिष्ठगीः ।।१।।
विश्वभृद् विश्वसृड् विश्वेड् विश्वभुग् विश्वनायकः ।
विश्वाशीर्विश्वरूपात्मा विश्वजिद्विजितान्तकः ।।२।।
विभवो विभयो वीरो विशोको विजरो जरन् ।
विरागो विरतोऽसंगो विविक्तो वीतमत्सरः ।।३।।
विनेयजनताबन्धुर्विलीनाशेषकल्मषः ।
वियोगो योगविद् विद्वान् विधाता सुविधिः सुधीः ।।४।।
क्षान्तिभाक्पृथ्वीमूर्तिः शान्तिभाक्सलिलात्मकः ।
वायुमूर्तिरसंगात्मा वह्निमूर्तिरधर्मधृक् ।।५।।
सुयज्वा यजमानात्मा सुत्वा सूत्रामपूजितः ।
ऋत्विग्यज्ञपतिर्यज्ञो यज्ञांगममृतं हविः ।।६।।
व्योममूर्तिरमूर्तात्मा निर्लेपो निर्मलोऽचलः ।
सोममूर्तिः सुसौम्यात्मा सूर्यमूर्तिर्महाप्रभः ।।७।।

मन्त्रविन्मन्त्रकृन्मन्त्री मन्त्रमूर्तिरनन्तगः ।
स्वतन्त्रस्तन्त्रकृत्स्वान्तः कृतान्तान्तः कृतान्तकृत् ।।८।।
कृती कृतार्थः सत्कृत्यः कृतकृत्यः कृतक्रतुः ।
नित्यो मृत्युञ्जयो मृत्युरमृतात्माऽमृतोद्भवः ।।९।।
ब्रह्मनिष्ठः परंब्रह्म ब्रह्मात्मा ब्रह्मसम्भवः ।
महाब्रह्मपतिर्ब्रह्मेड् महाब्रह्मपदेश्वरः ।।१०।।
सुप्रसन्नः प्रसन्नात्मा ज्ञानधर्मदमप्रभुः ।
प्रशमात्मा प्रशान्तात्मा पुराणपुरुषोत्तमः ।।११।।

इति स्थविष्ठादिशतम् ।।३।।

महाऽशोकध्वजोऽशोकः कः स्रष्टा पद्मविष्टरः ।
पद्मेशः पद्मसम्भूतिः पद्मनाभिरनुत्तरः ।।१।।
पद्मयोनिर्जगद्योनिरित्यः स्तुत्यः स्तुतीश्वरः ।
स्तवनार्हो हृषीकेशो जितजेयः कृतक्रियः ।।२।।
गणाधिपो गणज्येष्ठो गण्यः पुण्यो गणाग्रणीः ।
गुणाकरो गुणाम्भोधिर्गुणज्ञो गुणनायकः ।।३।।
गुणादरी गुणोच्छेदी निर्गुणः पुण्यगीर्गुणः ।
शरण्यः पुण्यवाक्पूतो वरेण्यः पुण्यनायकः ।।४।।
अगण्यः पुण्यधीर्गुण्यः पुण्यकृत्पुण्यशासनः ।
धर्मारामो गुणग्रामः पुण्यापुण्य-निरोधकः ।।५।।
पापापेतो विपापात्मा विपाप्मा वीतकल्मषः ।
निर्द्वन्द्वो निर्मदः शान्तो निर्मोहो निरुपद्रवः ।।६।।

निर्निमेषो निराहारो निष्क्रियो निरुपप्लवः ।
निष्कलंको निरस्तैना निर्धूतागा निरास्रवः ।।७।।
विशालो विपुलज्योतिरतुलोऽचिन्त्यवैभवः ।
सुसंवृतः सुगुप्तात्मा सुभृत् सुनयतत्त्ववित् ।।८।।
एकविद्यो महाविद्यो मुनिः परिवृढः पतिः ।
धीशो विद्यानिधिः साक्षी विनेता विहतान्तकः ।।९।।
पिता पितामहः पाता पवित्रः पावनो गतिः ।
त्राता भिषग्वरो वर्यो वरदः परमः पुमान् ।।१०।।
कविः पुराणपुरुषो वर्षीयान्वृषभः पुरुः ।
प्रतिष्ठाप्रसवो हेतुर्भुवनैकपितामहः ।।११।।

इति महाशोकध्वजादिशतम् ।।४।।

श्रीवृक्षलक्षणः श्लक्ष्णो लक्षण्यः शुभलक्षणः ।
निरक्षः पुण्डरीकाक्षः पुष्कलः पुष्करेक्षणः ।।१।।
सिद्धिदः सिद्धसंकल्पः सिद्धात्मा सिद्धसाधनः ।
बुद्धबोध्यो महाबोधिर्वर्धमानो महर्द्धिकः ।।२।।
वेदांगो वेदविद् वेद्यो जातरूपो विदांवरः ।
वेदवेद्यः स्वसंवेद्यो विवेदो वदतांवरः ।।३।।
अनादिनिधनोऽव्यक्तो व्यक्तवाग्व्यक्तशासनः ।
युगादिकृद् युगाधारो युगादिर्जगदादिजः ।।४।।
अतीन्द्रोऽतीन्द्रियो धीन्द्रो महेन्द्रोऽतीन्द्रियार्थदृक् ।
अनिन्द्रियोऽहमिन्द्राच्र्यो महेन्द्रमहितो महान् ।।५।।

उद्भवः कारणं कर्ता पारगो भवतारकः ।
अगाह्यो गहनं गुह्यं परार्घ्यः परमेश्वरः ।।६।।
अनन्तर्द्धिरमेयर्द्धिरचिन्त्यर्द्धिः समग्रधीः ।
प्राग्र्यः प्राग्रहरोऽभ्यग्रःप्रत्यग्रोऽग्र्योऽग्रिमोऽग्रजः ।।७।।
महातपा महातेजा महोदर्को महोदयः ।
महायशा महाधामा महासत्वो महाधृतिः ।।८।।
महाधैर्यो महावीर्यो महासंपन्महाबलः ।
महाशक्तिर्महाज्योतिर्महाभूतिर्महाद्युतिः ।।९।।
महामतिर्महानीतिर्महाक्षान्तिर्महोदयः ।
महाप्राज्ञो महाभागो महानन्दो महाकविः ।।१०।।
महामहा महाकीर्तिर्महाकान्तिर्महावपुः ।
महादानो महाज्ञानो महायोगो महागुणः ।।११।।
महामहपतिः प्राप्तमहाकल्याणपञ्चकः ।
महाप्रभुर्महाप्रातिहार्याधीशो महेश्वरः ।।१२।।

इति श्रीवृक्षादिशतम् ।।५।।

महामुनिर्महामौनी महाध्यानी महादमः ।
महाक्षमो महाशीलो महायज्ञो महामखः ।।१।।
महाव्रतपतिर्मह्यो महाकान्तिधरोऽधिपः ।
महामैत्री महामेयो महोपायो महोमयः ।।२।।
महाकारुणिको मन्ता महामन्त्रो महायतिः ।
महानादो महाघोषो महेज्यो महसांपतिः ।।३।।

महाध्वरधरो धुर्य्यो महौदार्यो महिष्ठवाक् ।
महात्मा महसांधाम महर्षिर्महितोदयः ।।४।।

महाक्लेशांकुशः शूरो महाभूतपतिर्गुरुः ।
महापराक्रमोऽनन्तो महाक्रोधरिपुर्वशी ।।५।।

महाभवाब्धिसंतारीर्महामोहाऽद्रिसूदनः ।
महागुणाकरः क्षान्तो महायोगीश्वरः शमी ।।६।।

महाध्यानपतिर्ध्यातामहाधर्मा महाव्रतः ।
महाकर्मारिहाऽऽमज्ञो महादेवो महेशिता ।।७।।

सर्वक्लेशापहः साधुः सर्वदोषहरो हरः ।
असंख्येयोऽप्रमेयात्मा शमात्मा प्रशमाकरः ।।८।।

सर्वयोगीश्वरोऽचिन्त्यः श्रुतात्मा विष्टरश्रवाः ।
दान्तात्मा दमतीर्थेशो योगात्मा ज्ञानसर्वगः ।।९।।

प्रधानमात्मा प्रकृतिः परमः परमोदयः ।
प्रक्षीणबन्धः कामारिः क्षेमकृत्क्षेमशासनः ।।१०।।

प्रणवः प्रणयः प्राणः प्राणदः प्रणतेश्वरः ।
प्रमाणं प्रणिधिर्दक्षो दक्षिणोऽध्वर्युरध्वरः ।।११।।

आनन्दो नन्दनो नन्दो वन्द्योऽनिन्द्योऽभिनन्दनः ।
कामहा कामदः काम्यः कामधेनुररिञ्जयः ।।१२।।

इति महामुन्यादिशतम् ।।६।।

असंस्कृतसुसंस्कारः प्राकृतो वैकृतान्तकृत् ।
अन्तकृत्कान्तगुः कान्तश्चिन्तामणिरभीष्टदः ।।१।।

अजितो जितकामारिरमितोऽमितशासनः ।
जितक्रोधो जितामित्रो जितक्लेशो जितान्तकः ।।२।।

जिनेन्द्रः परमानन्दो मुनीन्द्रो दुन्दुभिस्वनः ।
महेन्द्रवन्द्यो योगीन्द्रो यतीन्द्रो नाभिनन्दनः ।।३।।

नाभेयो नाभिजोऽजातः सुव्रतो मनुरुत्तमः ।
अभेद्योऽनत्ययोऽनाश्वानधिकोऽधिगुरुः सुधीः ।।४।।

सुमेधा विक्रमी स्वामी दुराधर्षो निरुत्सुकः ।
विशिष्टः शिष्टभुक् शिष्टः प्रत्ययः कामनोऽनघः ।।५।।

क्षेमी क्षेमंकरोऽक्षय्यः क्षेमधर्मपतिः क्षमी ।
अग्राह्यो ज्ञाननिग्राह्यो ध्यानगम्यो निरुत्तरः ।।६।।

सुकृती धातुरिज्यार्हः सुनयश्चतुराननः ।
श्रीनिवासश्चतुर्वक्त्रश्चतुरास्यश्चतुर्मुखः ।।७।।

सत्यात्मा सत्यविज्ञानः सत्यवाक्सत्यशासनः ।
सत्याशीः सत्यसन्धानः सत्यः सत्यपरायणः ।।८।।

स्थेयान्स्थवीयान्नेदीयान्दवीयान् दूरदर्शनः ।
अणोरणीयाननणुर्गुरुराद्यो गरीयसाम् ।।९।।

सदायोगः सदाभोगः सदातृप्तः सदाशिवः ।
सदागतिः सदासौख्यः सदाविद्यः सदोदयः ।।१०।।

सुघोषः समुखः सौम्यः सुखदः सुहितः सुहृत् ।
सुगुप्तो गुप्तिभृद् गोप्ता लोकाध्यक्षो दमीश्वरः ।।११।।

इति असंस्कृतादिशतम् ।।७।।

बृहन्बृहस्पतिर्वाग्मी वाचस्पतिरुदारधीः ।
मनीषी धिषणो धीमाञ्छेमुषीशो गिरांपतिः ।।१।।

नैकरूपो नयोत्तुंगो नैकात्मा नैकधर्मकृत् ।
अविज्ञेयोऽप्रतर्क्यात्मा कृतज्ञः कृतलक्षणः ।।२।।

ज्ञानगर्भो दयागर्भो रत्नगर्भः प्रभास्वरः ।
पद्मगर्भो जगद्गर्भो हेमगर्भः सुदर्शनः ।।३।।

लक्ष्मीवांस्त्रिदशाध्यक्षो दृढीयानिन ईशिता ।
मनोहारो मनोज्ञांगो धीरो गम्भीरशासनः ।।४।।

धर्मयूपो दयायागो धर्मनेमिर्मुनीश्वरः ।
धर्मचक्रायुधो देवः कर्महा धर्मघोषणः ।।५।।

अमोघवागमोघाज्ञो निर्मलोऽमोघशासनः ।
सुरूपः सुभगस्त्यागी समयज्ञः समाहितः ।।६।।

सुस्थितः स्वास्थ्यभाक्स्वस्थो नीरजस्को निरुद्धवः ।
अलेपो निष्कलंकात्मा वीतरागो गतस्पृहः ।।७।।

वश्येन्द्रियो विमुक्तात्मा निःसपत्नो जितेन्द्रियः ।
प्रशान्तोऽनन्तधामर्षिर्मंगलं मलहानघः ।।८।।

अनीदृगुपमाभूतो दिष्टिर्दैवमगोचरः ।
अमूर्तो मूर्तिमानेको नैको नानैकतत्त्वदृक् ।।९।।

अध्यात्मगम्योऽगम्यात्मा योगविद्योगिवन्दितः ।
सर्वत्रगः सदाभावी त्रिकालविषयार्थदृक् ।।१०।।

शंकरः शंवदो दान्तो दमी क्षान्तिपरायणः ।
अधिपः परमानन्दः परात्मज्ञः परात्परः ।।११।।

त्रिजगद्वल्लभोऽभ्यर्च्यस्त्रिजगन्मंगलोदयः ।
त्रिजगत्पतिपूज्याङ्घ्रिस्त्रिलोकाग्रशिखामणिः ।।१२।।

इति बृहदादिशतम् ।।८।।

त्रिकालदर्शी लोकेशो लोकधाता दृढव्रतः ।
सर्वलोकातिगः पूज्यः सर्वलोकैकसारथिः ।।१।।

पुराणः पुरुषः पूर्वः कृतपूर्वांगविस्तरः ।
आदिदेवः पुराणाद्यः पुरुदेवोऽधिदेवता ।।२।।

युगमुख्यो युगज्येष्ठो युगादिस्थितिदेशकः ।
कल्याणवर्णः कल्याणः कल्यः कल्याणलक्षणः ।।३।।

कल्याणप्रकृतिर्दीप्तकल्याणात्मा विकल्मषः ।
विकलंकः कलातीतः कलिलघ्नः कलाधरः ।।४।।

देवदेवो जगन्नाथो जगद्बन्धुर्जगद्विभुः ।
जगद्धितैषी लोकज्ञः सर्वगो जगदग्रजः ।।५।।

चराचरगुरुर्गोप्यो गूढात्मा गूढगोचरः ।
सद्योजातः प्रकाशात्मा ज्वलज्ज्वलनसप्रभः ।।६।।

आदित्यवर्णो भर्माभः सुप्रभः कनकप्रभः ।
सुवर्णवर्णो रुक्माभः सूर्यकोटिसमप्रभः ।।७।।

तपनीयनिभस्तुंगो बालार्काभोऽनलप्रभः ।
सन्ध्याभ्रबभ्रुर्हेमाभस्तप्तचामीकरच्छविः ।।८।।

निष्टप्तकनकच्छायः कनत्काञ्चनसन्निभः ।
हिरण्यवर्णः स्वर्णाभः शातकुम्भनिभप्रभः ।।९।।

द्युम्नाभो जातरूपाभस्तप्तजाम्बूनदद्युतिः ।
सुधौतकलधौतश्रीः प्रदीप्तो हाटकद्युतिः ।।१०।।

शिष्टेष्टः पुष्टिदः पुष्टः स्पष्टः स्पष्टाक्षरः क्षमः ।
शत्रुघ्नोऽप्रतिघोऽमोघः प्रशास्ता शासिता स्वभूः ।।११।।

शान्तिनिष्ठो मुनिज्येष्ठः शिवतातिः शिवप्रदः ।
शान्तिदः शान्तिकृच्छान्तिः कान्तिमान्कामितप्रदः ।।१२।।

श्रेयोनिधिरधिष्ठानमप्रतिष्ठः प्रतिष्ठितः ।
सुस्थिरः स्थावरः स्थाणुः प्रथीयान्प्रथितः पृथुः ।।१३।।

इति त्रिकालदर्श्यादिशतम् ।।९।।

दिग्वासा वातरशनो निर्ग्रन्थेशो निरम्बरः ।
निष्किञ्चनो निराशंसो ज्ञानचक्षुरमोमुहः ।।१।।

तेजोराशिरनन्तौजा ज्ञानाब्धिः शीलसागरः ।
तेजोमयोऽमितज्योतिर्ज्योतिर्मूर्तिस्तमोपहः ।।२।।

जगच्चूडामणिर्दीप्तः शंवान्विघ्नविनायकः ।
कलिघ्नः कर्मशत्रुघ्नो लोकालोकप्रकाशकः ।।३।।

अनिद्रालुरतन्द्रालुर्जागरुकः प्रभामयः ।
लक्ष्मीपतिर्जगज्ज्योतिर्धर्मराजः प्रजाहितः ॥४॥

मुमुक्षुर्बन्धमोक्षज्ञो जिताक्षो जितमन्मथः ।
प्रशान्तरसशैलूषो भव्यपेटकनायकः ॥५॥

मूलकर्त्ताऽखिलज्योतिर्मलघ्नो मूलकारणः ।
आप्तो वागीश्वरः श्रेयाञ्छ्रायसोक्तिर्निरुक्तवाक् ॥६॥

प्रवक्ता वचसामीशो मारजिद्विश्वभाववित् ।
सुतनुस्तनुनिर्मुक्तः सुगतो हतदुर्नयः ॥७॥

श्रीशः श्रीश्रितपादाब्जो वीतभीरभयंकरः ।
उत्सन्नदोषो निर्विघ्नो निश्चलो लोकवत्सलः ॥८॥

लोकोत्तरो लोकपतिर्लोकचक्षुरपारधीः ।
धीरधीर्बुद्धसन्मार्गः शुद्धः सूनृतपूतवाक् ॥९॥

प्रज्ञापारमितः प्राज्ञो यतिर्नियमितेन्द्रियः ।
भदन्तो भद्रकृद्भद्रः कल्पवृक्षो वरप्रदः ॥१०॥

समुन्मूलितकर्मारिः कर्मकाष्ठाऽऽशुशुक्षणिः ।
कर्मण्यः कर्मठः प्रांशुर्हेयादेयविचक्षणः ॥११॥

अनन्तशक्तिरच्छेद्यस्त्रिपुरारिस्त्रिलोचनः ।
त्रिनेत्रस्त्र्यम्बकस्त्र्यक्षः केवलज्ञानवीक्षणः ॥१२॥

समन्तभद्रः शान्तारिर्धर्माचार्यो दयानिधिः ।
सूक्ष्मदर्शी जितानंग कृपालुर्धर्मदेशकः ॥१३॥

शुभंयुः सुखसाद्भूतः पुण्यराशिरनामयः ।
धर्मपालो जगत्पालो धर्मसाम्राज्यनायकः ।।१४।।

इति दिग्वासाद्यष्टोत्तरशतम् ।।१०।।

धाम्नांपते तवामूनि नामान्यागमकोविदैः ।
समुच्चितान्यनुध्यायन्पुमान्पूतस्मृतिर्भवेत् ।।१।।

गोचरोऽपि गिरामासां त्वमवाग्गोचरो मतः ।
स्तोता तथाप्यसन्दिग्धं त्वत्तोऽभिष्टफलं भजेत् ।।२।।

त्वमतोऽसि जगद्बन्धुस्त्वमतोऽसि जगद्भिषक् ।
त्वमतोऽसि जगद्धाता त्वमतोऽसि जगद्धितः ।।३।।

त्वमेकं जगतां ज्योतिस्त्वं द्विरूपोपयोगभाक् ।
त्वं त्रिरूपैकमुक्त्यंगः स्वोत्थानन्तचतुष्टयः ।।४।।

त्वं पञ्चब्रह्मतत्त्वात्मा पञ्चकल्याणनायकः ।
षड्भेदभावतत्त्वज्ञस्त्वं सप्तनयसंग्रहः ।।५।।

दिव्याष्टगुणमूर्तिस्त्वं नवकेवललब्धिकः ।
दशावतारनिर्धार्यो मां पाहि परमेश्वर ! ।।६।।

युष्मन्नामावलीदृब्धविलसत्स्तोत्रमालया ।
भवन्तं वरिवस्यामः प्रसीदानुगृहाण नः ।।७।।

इदं स्तोत्रमनुस्मृत्य पूतो भवति भाक्तिकः ।
यः संपाठं पठत्येनं स स्यात्कल्याणभाजनम् ।।८।।

तत: सदेदं पुण्यार्थी पुमान्पठति पुण्यधी: ।
पौरुहूतीं श्रियं प्राप्तुं परमामभिलाषुक: ।।९।।

स्तुत्वेति मघवा देवं चराचरजगद्गुरुम् ।
ततस्तीर्थविहारस्य व्यधात्प्रस्तावनामिमाम् ।।१०।।

स्तुति: पुण्यगुणोत्कीर्ति: स्तोता भव्य: प्रसन्नधी: ।
निष्ठितार्थो भवांस्तुस्य: फलं नैश्रेयसं सुखम् ।।११।।

य: स्तुत्यो जगतां त्रयस्य न पुन: स्तोता स्वयं कस्यचित्,
ध्येयो योगिजनस्य यश्च नितरां ध्याता स्वयं कस्यचित्।
यो नेन्तृन् नयते नमस्कृतिमलं नन्तव्यपक्षेक्षण:,
स श्रीमान् जगतां त्रयस्य य गुरुर्देव: पुरु: पावन: ।।१२।।

तं देवं त्रिदशाधिपार्चितपदं घातिक्षयानन्तरं,
प्रोत्थानन्तचतुष्टयं जिनमिमं भव्याब्जिनीनामिनम् ।
मानस्तम्भविलोकनानत्तजगन्मान्यं त्रिलोकीपतिं,
प्राप्ताचिन्त्यबहिर्विभूतिमनघं भक्त्या प्रवन्दामहे ।।१३।।

इति श्रीभगवज्जिनसहस्रनामस्तोत्रं समाप्तम् ।

तत्त्वार्थसूत्रम्

[श्रीउमास्वामी आचार्य विरचितम्]

मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्मभूभृताम् ।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां वन्दे तद्गुणलब्धये ।।

त्रैकाल्यं द्रव्य-षट्कं नव-पद-सहितं जीव-षट्काय-लेश्याः ,
पञ्चान्ये चास्तिकाया व्रत-समिति-गति-ज्ञान-चारित्र-भेदाः ।
इत्येतन्मोक्षमूलं त्रिभुवन-महितैः प्रोक्तमर्हद्भिरीशैः ,
प्रत्येति श्रद्दधाति स्पृशति च मतिमान यः स वै शुद्धदृष्टिः ।।१।।

सिद्धे जयप्पसिद्धे चउव्विहाराहणाफलं पत्ते ।
वंदित्ता अरहंते वोच्छं आराहणा कमसो ।।२।।

उज्जोवणमुज्जवणं णिव्वहणं साहणं च णिच्छरणं ।
दंसण-णाण-चरित्तं तवाणमाराहणा भणिया ।।३।।

सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्राणि मोक्ष-मार्गः ।।१।। तत्त्वार्थ-श्रद्धानं सम्यग्दर्शनम् ।।२।। तन्निसर्गादधिगमाद्वा ।।३।। जीवाजीवास्रव -बन्ध-संवर-निर्जरा-मोक्षास्तत्त्वम्।।४।। नाम-स्थापना - द्रव्य - भावतस्तन्न्यासः ।।५।। प्रमाण-नयैरधिगमः।।६।। निर्देश-स्वामित्व-साधनाधिकरण-स्थिति-विधानतः ।।७।। सत्संख्या - क्षेत्र - स्पर्शन - कालान्तर-भावाल्पबहुत्वैश्च ।।८।। मति-श्रुतावधि-मनःपर्यय-केवलानि ज्ञानम् ।।९।। तत्प्रमाणे ।।१०।। आद्ये परोक्षम् ।।११।। प्रत्यक्षमन्यत् ।।१२।। मतिः स्मृतिः संज्ञा चिन्ताभिनिबोध इत्यनर्थान्तरम् ।।१३।। तदिन्द्रियानिन्द्रिय-निमित्तम् ।।१४।। अवग्रहेहावाय-धारणाः ।।१५।। बहु-बहुविध-क्षिप्रानिः-

सृतानुक्त-ध्रुवाणां सेतराणाम् ।।१६।। अर्थस्य ।।१७।। व्यञ्जनस्यावग्रहः ।।१८।। न चक्षुरनिन्द्रियाभ्याम् ।।१९।। श्रुतं मति-पूर्वं द्व्यनेक-द्वादश-भेदम् ।।२०।। भव-प्रत्ययोऽवधिर्देव-नारकाणाम् ।।२१।। क्षयोपशम-निमित्तः षड्विकल्पः शेषाणाम् ।।२२।। ऋजु-विपुलमती मनः-पर्ययः ।।२३।। विशुद्ध्यप्रतिपाताभ्यां तद्विशेषः ।।२४।। विशुद्धि-क्षेत्र-स्वामि-विषयेभ्योऽवधि-मनःपर्यययोः ।।२५।। मति-श्रुतयोर्निबन्धो द्रव्येष्वसर्व-पर्यायेषु ।।२६।। रुपिष्ववधेः ।।२७।। तदनन्तभागे-मनःपर्ययस्य ।।२८।। सर्व-द्रव्य-पर्यायेषु केवलस्य ।।२९।। एकादीनि भाज्यानि युगपदेकस्मिन्ना-चतुर्भ्यः ।।३०।। मति-श्रुतावधयो विपर्ययश्च ।।३१।। सदसतोरविशेषाद्यदृच्छोपलब्धेरुन्मत्तवत् ।।३२।। नैगम-संग्रह-व्यवहारर्जुसूत्रशब्द-समभिरूढैवंभूता नयाः।।३३।।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे प्रथमोऽध्यायः ।।१।।

औपशमिक-क्षायिकौ भावौ मिश्रश्च जीवस्य स्वतत्त्व-मौदयिक-पारिणामिकौ च ।।१।। द्वि-नवाष्टा-दशैकविंशति-त्रि-भेदा यथाक्रमम् ।।२।। सम्यक्त्व-चारित्रे ।।३।। ज्ञान-दर्शन-दान-लाभ-भोगोपभोग-वीर्याणि च ।।४।। ज्ञानाऽज्ञानदर्शन लब्धयश्चतुस्त्रित्रि-पञ्च भेदाः सम्यक्त्व-चारित्र-संयमासंयमाश्च ।।५।। गति-कषाय-लिंग-मिथ्यादर्शनाज्ञाना-संयतासिद्ध-लेश्याश्चतुश्चतुस्त्र्येकैकैकैक-षड्भेदाः ।।६।। जीव-भव्या-भव्यत्वानि च ।।७।। उपयोगो

लक्षणम् ।।८।। स द्विविधोऽष्ट-चतुर्भेदः ।।९।। संसारिणो मुक्ताश्च ।।१०।। समनस्कामनस्काः ।।११।। संसारिणस्त्रस-स्थावराः ।।१२।। पृथिव्यपतेजोवायु-वनस्पतयः स्थावराः ।।१३।। द्वीन्द्रियादयस्त्रसाः ।।१४।। पञ्चेन्द्रियाणि ।।१५।। द्विविधानि ।।१६।। निर्वृत्त्युपकरणे द्रव्येन्द्रियम् ।।१७।। लब्ध्युपयोगौ भावेन्द्रियम् ।।१८।। स्पर्शन-रसन-घ्राण-चक्षुः-श्रोत्राणि ।।१९।। स्पर्श-रस-गन्ध-वर्ण-शब्दास्तदर्थाः ।।२०।। श्रुतमनिन्द्रियस्य ।।२१।। वनस्पत्यन्तानामेकम् ।।२२।। कृमिपिपीलिका-भ्रमर-मनुष्यादीनामेकैक-वृद्धानि ।।२३।। संज्ञिनः समनस्काः ।।२४।। विग्रह-गतौ कर्म-योगः ।।२५।। अनुश्रेणी गतिः ।।२६।। अविग्रहा जीवस्य ।।२७।। विग्रहवती च संसारिणः प्राक् चतुर्भ्यः ।।२८।। एकसमयाविग्रहा ।।२९।। एकं द्वौ त्रीन्वानाहारकः ।।३०।। संमूर्च्छन-गर्भोपपादा जन्म ।।३१।। सचित्त-शीत-संवृताः सेतरा मिश्राश्चैकशस्तद्योनयः ।।३२।। जरायु-जाण्डज पोतानां गर्भः ।।३३।। देव-नारकाणा-मुपपादः ।।३४।। शेषाणां संमूर्च्छनम् ।।३५।। औदारिक-वैक्रियिकाहारक-तैजस-कार्मणानि शरीराणि ।।३६।। परं परं सूक्ष्मम् ।।३७।। प्रदेशतोऽसंख्येयगुणं प्राक् तैजसात् ।।३८।। अनन्त-गुणे परे ।।३९।। अप्रतीघाते ।।४०।। अनादिसम्बन्धे च ।।४१।। सर्वस्य ।।४२।। तदादीनि भाज्यानि युग पदेकस्मिन्नाचतुर्भ्यः ।।४३।। निरुपभोगमन्त्यम् ।।४४।। गर्भसंमूर्च्छनजमाद्यम्

।।४५।। औपपादिकं वैक्रियिकम् ।।४६।। लब्धि-प्रत्ययं च ।।४७।। तैजसमपि ।।४८।। शुभं विशुद्धमव्याघाति चाहारकं प्रमत्तसंयतस्यैव ।।४९।। नारक-सम्मूर्च्छिनो नपुंसकानि ।।५०।। न देवाः ।।५१।। शेषास्त्रिवेदाः ।।५२।। औपपादिक-चरमोत्तमदेहासंख्येयवर्षायुषोऽनपवर्त्यायुषः ।।५३।।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे द्वितीयोऽध्यायः ।।२।।

रत्न-शर्करा-बालुका-पंक-धूम-तमो-महातमः-प्रभा-भूमयो घनाम्बुवाताकाश-प्रतिष्ठाः सप्ताधोऽधः ।।१।। तासु त्रिंशत्पञ्चविंशति-पञ्चदश-दश-त्रि-पञ्चोनैकनरक-शतसहस्राणि पञ्च चैव यथाक्रमम् ।।२।। नारका नित्याशुभतर-लेश्या-परिणाम-देह-वेदना-विक्रियाः ।।३।। परस्परोदीरित-दुःखाः।।४।। संक्लिष्टाऽसुरोदीरित-दुःखाश्च प्राक् चतुर्थ्याः ।।५।। तेष्वेक-त्रि-सप्त-दश-सप्तदश-द्वाविंशति-त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमा सत्त्वानां परा स्थितिः ।।६।। जम्बूद्वीप-लवणोदादयः शुभनामानो द्वीप-समुद्राः ।।७।। द्विर्द्विर्विष्कम्भाः पूर्व-पूर्व-परिक्षेपिणो वलयाकृतयः ।।८।। तन्मध्ये मेरु-नाभिर्वृत्तो योजन-शतसहस्र-विषकम्भो जम्बूद्वीपः ।।९।। भरत-हैमवत- हरि-विदेह-रम्यक-हैरण्यवतैरावतवर्षाः क्षेत्राणि ।।१०।। तद्विभाजिनः पूर्वापरायता हिमवन्महाहिमवन्निषधनील-रुक्मि शिखरिणो वर्षधर-पर्वताः ।।११।। हेमार्जुन-तपनीय-वैडूर्य-रजत-हेममयाः ।।१२।।

मणिविचित्र-पार्श्वा उपरिमूले च तुल्य-विस्ताराः ॥१३॥ पद्म-महापद्म-तिगिञ्छ-केशरि-महापुण्डरीक-पुण्डरीका ह्रदास्तेषामुपरि ॥१४॥ प्रथमो योजन-सहस्रायाम-स्तदर्द्धविषकम्भो ह्रदः ॥१५॥ दश-योजनावगाहः ॥१६॥ तन्मध्ये योजन पुष्करम् ॥१७॥ तद्द्विगुण-द्विगुणा ह्रदाः पुष्कराणि च ॥१८॥ तन्निवासिन्यो देव्यः श्री-ह्री-धृति-कीर्ति-बुद्धिलक्ष्म्यः पल्योपमस्थितयः ससामानिक-परिषत्काः ॥१९॥ गंगा-सिन्धु-रोहिद्रोहितास्या-हरिद्धरिकान्ता-सीता-सीतोदा-नारी-नरकान्ता-सुवर्ण-रूप्य-कूला-रक्ता-रक्तोदाः सरितस्तन्मध्यगाः ॥२०॥ द्वयोर्द्वयोः पूर्वाः पूर्वगाः ॥२१॥ शेषास्त्वपरगाः ॥२२॥ चतुर्दश-नदी-सहस्र-परिवृता गंगा-सिन्ध्वादयो नद्यः ॥२३॥ भरतः षड्विंशति-पञ्चयोजनशत-विस्तारः षट् चैकोनविंशतिभागा योजनस्य ॥२४॥ तद्द्विगुण-द्विगुण-विस्तारा वर्षधर-वर्षा विदेहान्ताः ॥२५॥ उत्तरा-दक्षिण-तुल्याः ॥२६॥ भरतैरावतयोर्वृद्धिह्रासौ षट्समयाभ्यामुत्सर्पिण्यवसर्पिणीभ्याम् ॥२७॥ ताभ्यामपरा भूमयोऽवस्थिताः ॥२८॥ एक-द्वि-त्रि-पल्योपम-स्थितयो हैमवतक-हारि-वर्षक-दैवकुरवकाः ॥२९॥ तथोत्तराः ॥३०॥ विदेहेषु संख्येय-कालाः ॥३१॥ भरतस्य विष्कम्भो जम्बूद्वीपस्य नवति-शत-भागः ॥३२॥ द्विर्धातकीखण्डे ॥३३॥ पुष्करार्द्धे च ॥३४॥ प्राङ्मानुषोत्तरान्मनुष्याः ॥३५॥ आर्याम्लेच्छाश्च ॥३६॥ भरतैरावत-विदेहाः

कर्मभूमयोऽन्यत्रदेवकुरूत्तर-कुरुभ्यः ।।३७।। नृस्थिती पराऽवरे त्रिपल्योपमान्तर्मुहूर्ते ।।३८।। तिर्यग्योनिजानां च ।।३९।।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे तृतीयोऽध्यायः ।।३।।

देवाश्चतुर्णिकायाः ।।१।। आदितस्त्रिषु पीतान्तलेश्याः ।।२।। दशाष्ट-पञ्च द्वादश विकल्पाः कल्पोपपन्नपर्यन्ताः ।।३।। इन्द्र-सामानिक-त्रायस्त्रिंश-पारिषदात्मरक्षलोक-पालानीक-प्रकीर्णकाभियोग्य-किल्विषिकाश्चैकशः ।।४।। त्रायस्त्रिंश-लोकपाल-वर्ज्या व्यन्तर-ज्योतिष्काः ।।५।। पूर्वयोर्द्वीन्द्राः ।।६।। काय-प्रवीचारा आ ऐशानात् ।।७।। शेषाः स्पर्श-रूप-शब्द-मनः-प्रवीचाराः ।।८।। परेऽप्रवीचाराः ।।९।। भवनवासिनोऽसुर-नाग-विद्युत्सुपर्णाग्निवात-स्तनितोदधि-द्वीप-दिक्कुमाराः ।।१०।। व्यन्तराः किन्नर-किम्पुरुष-महोरग-गन्धर्व-यक्ष-राक्षस-भूत-पिशाचाः ।।११।। ज्योतिष्काः सूर्याचन्द्रमसौ ग्रहनक्षत्र-प्रकीर्णक-तारकाश्च ।।१२।। मेरु-प्रदक्षिणा नित्य-गतयो नृ-लोके ।।१३।। तत्कृतः काल-विभागः ।।१४।। बहिरवस्थिताः ।।१५।। वैमानिकाः ।।१६।। कल्पोपपन्नाः कल्पातीताश्च ।।१७।। उपर्युपरि ।।१८।। सौधर्मै-शान-सानत्कुमार-माहेन्द्र-ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर-लान्तव-कापिष्ठ-शुक्र-महाशुक्र-शतार-सहस्त्रारेष्वानत-प्राण-तयो-रारणाच्युतयोर्नवसु ग्रैवेयकेषु विजय-वैजयन्त-जयन्तापराजितेषु सर्वार्थसिद्धौ च ।।१९।। स्थिति-प्रभाव-सुख-द्युति-लेश्या-विशुद्धीन्द्रियावधि-विषय-

तोऽधिकाः ।।२०।। गतिशरीर-परिग्रहाऽभिमानतो हीनाः ।।२१।। पीत-पद्म-शुक्ल-लेश्या-द्वि-त्रि-शेषेषु ।।२२।। प्राग्ग्रैवेयकेभ्यः कल्पाः ।।२३।। ब्रह्म-लोकालया लौकान्तिकाः ।।२४।। सारस्वतादित्यवह्नय रुण-गर्दतोयतुषिताव्याबाधारिष्टाश्च ।।२५।। विजयादिषु द्वि-चरमाः ।।२६।। औपपादिक-मनुष्येभ्यः शेषास्तिर्यग्योनयः ।।२७।। स्थितिरसुर-नाग सुपर्ण-द्वीपशेषाणां सागरोपम-त्रिपल्योपमार्द्ध-हीन-मिताः ।।२८।। सौधर्मैशानयोः सागरोपमे अधिके ।।२९।। सानत्कुमार-माहेन्द्रयोः सप्त ।।३०।। त्रि-सप्त-नवैकादश-त्रयोदश-पञ्चदशभिरधिकानि तु ।।३१।। आरणाच्युतादूर्ध्वमेकैकेन नवसु ग्रैवेयकेषु विजयादिषु सर्वार्थसिद्धौ च ।।३२।। अपरा पल्योपममधिकम् ।।३३।। परतः परतः पूर्वा पूर्वाऽनन्तरा ।।३४।। नारकाणां च द्वितीयादिषु ।।३५।। दश-वर्ष-सहस्राणि प्रथमायाम् ।।३६।। भवनेषु च ।।३७।। व्यन्तराणां च ।।३८।। परा पल्योपममधिकम् ।।३९।। ज्योतिष्काणां च ।।४०।। तदष्ट-भागोऽपरा ।।४१।। लौकान्तिकानामष्टौ सागरोपमाणि सर्वेषाम् ।।४२।।

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायः ।।४।।

अजीव-काया धर्माधर्माकाश-पुद्गलाः ।।१।। द्रव्याणि ।।२।। जीवाश्च ।।३।। नित्याऽवस्थितान्यरूपाणि ।।४।। रूपिणः पुद्गलाः ।।५।। आ आकाशादेक-द्रव्याणि ।।६।।

निष्क्रियाणि च ।।७।। असंख्येयाः प्रदेशा धर्माधर्मैकजीवानाम् ।।८।। आकाशस्यानन्ताः ।।९।। संख्येयासंख्येयाश्च पुद्गलानाम्।।१०।। नाणोः ।।११।। लोकाकाशेऽवगाहः ।।१२।। धर्माऽधर्मयोः कृत्स्ने ।।१३।। एकप्रदेशादिषु भाज्यः पुद्गलानाम् ।।१४।। असंख्येय-भागादिषु जीवानाम् ।।१५।। प्रदेश-संहार-विसर्पाभ्यां प्रदीपवत् ।।१६।। गति-स्थित्युपग्रहौ धर्माधर्मयोरुपकारः ।।१७।। आकाशस्यावगाहः ।।१८।। शरीर–वाङ्–मन–प्राणापानाः–पुद्गलानाम् ।।१९।। सुख-दुःख जीवित-मरणोपग्रहाश्च ।।२०।। परस्परोपग्रहो जीवानाम् ।।२१।। वर्तना-परिणाम-क्रियाः परत्वाऽपरत्वे च कालस्य ।।२२।। स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णवन्तः पुद्गलाः ।।२३।। शब्द-बन्ध-सौक्ष्म्य-स्थौल्य-संस्थान-भेद-तमश्छायाऽऽतपोद्योतवन्तश्च ।।२४।। अणवः स्कन्धाश्च ।।२५।। भेद-संघातेभ्य उत्पद्यन्ते ।।२६।। भेदादणुः ।।२७।। भेद-संघाताभ्यां चाक्षुषः ।।२८।। सद् द्रव्य-लक्षणम् ।।२९।। उत्पाद-व्ययध्रौव्य-युक्तं सत् ।।३०।। तद्भावाऽव्ययं नित्यम् ।।३१।। अर्पिताऽनर्पितसिद्धेः ।।३२।। स्निग्ध-रूक्षत्वाद् बन्ध ।।३३।। न जघन्य-गुणानाम् ।।३४।। गुण-साम्ये सदृशानाम् ।।३५।। द्व्यधिकादि-गुणानां तु ।।३६।। बन्धेऽधिकौ पारिणामिकौ च ।।३७।। गुण-पर्ययवद् द्रव्यम् ।।३८।। कालश्च ।।३९।।

सोऽनन्तसमयः ।।४०।। द्रव्याश्रया निर्गुणा गुणाः ।।४१।। तद्भावः परिणामः ।।४२।।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे पञ्चमोऽध्यायः ।।५।।

काय-वाङ्-मनः-कर्म योगः ।।१।। स आस्रवः ।।२।। शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य ।।३।। सकषायाऽकषाययोः साम्परायिकेर्यापथयोः ।।४।। इन्द्रिय-कषायाव्रत-क्रियाः पञ्च-चतुः-पञ्च-पञ्चविंशति-संख्याः पूर्वस्य भेदाः ।।५।। तीव्र-मन्द-ज्ञाताऽज्ञात-भावाऽधिकरण--वीर्य-विशेषेभ्यस्तद्विशेषः ।।६।। अधिकरणं जीवाजीवाः ।।७।। आद्यं संरम्भसमारम्भारम्भ-योग-कृत-कारिताऽनुमत-कषायविशेषैस्त्रिस्त्रिस्त्रिचतुश्चैकशः ।।८।। निर्वर्तना-निक्षेप-संयोग-निसर्गा-द्वि-चतुर्द्वि-त्रि-भेदाः परम् ।।९।। तत्प्रदोषनिह्नव-मात्सर्यान्तरायासादनोपघाता ज्ञान-दर्शनावरणयोः ।।१०।। दुःख-शोक-तापाक्रन्दन-वध-परिदेवना-न्यात्म-परोभय-स्थान्यसद्वेद्यस्य ।।११।। भूतव्रत्यनुकम्पा-दान-सराग-संयमादियोगः क्षान्तिः शौचमिति सद्वेद्यस्य ।।१२।। केवलि-श्रुत-संघ-धर्म-देवाऽवर्णवादो दर्शनमोहस्य ।।१३।। कषायोदयात्तीव्रपरिणामश्चारित्रमोहस्य ।।१४।। बह्वारम्भ-परिग्रहत्वं नारकस्याऽऽयुषः ।।१५।। माया तैर्यग्योनस्य ।।१६।। अल्पारम्भपरिग्रहत्वं मानुषस्य ।।१७।। स्वभाव-मार्दवं च ।।१८।। निःशीलव्रतत्वं च सर्वेषाम् ।।१९।। सरागसंयमसंयमासंयमाकामनिर्जराबालतपांसि दैवस्य ।।२०।।

सम्यक्त्वं च ।।२१।। योगवक्रता विसंवादनं चाऽशुभस्य नाम्नः ।।२२।। तद्विपरीतं शुभस्य ।।२३।। दर्शनविशुद्धि-र्विनयसंपन्नता शील-व्रतेष्वनतीचारोऽभीक्ष्णज्ञानोपयोगसंवेगौ शक्तितस्त्याग-तपसी साधु-समाधिर्वैयावृत्यकरणमर्हदाचार्य-बहुश्रुत-प्रवचन-भक्तिराऽऽवश्यकाऽपरिहाणिर्मार्ग-प्रभावना प्रवचन-वत्सलत्वमिति तीर्थकरत्वस्य ।।२४।। परात्म-निन्दा-प्रशंसे सदसद्गुणोच्छादनोद्भावने च नीचैर्गोत्रस्य ।।२५।। तद्विपर्ययो नीचैर्वृत्त्यनुत्सेकौ चोत्तरस्य ।।२६।। विघ्नकरणमन्तरायस्य ।।२७।।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे षष्ठोऽध्यायः ।।६।।

हिंसाऽनृत-स्तेयाब्रह्म-परिग्रहेभ्यो विरतिर्व्रतम् ।।१।। देशसर्वतोऽणु-महती ।।२।। तत्स्थैर्यार्थं भावनाः पञ्च पञ्च ।।३।। वाङ्मनोगुप्तीर्याऽऽदाननिक्षेपण-समित्यालोकित-पानभोजनानि पञ्च ।।४।। क्रोध-लोभ-भीरुत्व-हास्य-प्रत्याख्यानान्यनुवीचि-भाषणं च पञ्च ।।५।। शून्यागार-विमोचितावास-परोपरोधाकरण भैक्ष्यशुद्धिसधर्माविसंवादाः पञ्च ।।६।। स्त्रीरागकथा-श्रवण-तन्मनोहरांगनिरीक्षण-पूर्वरतानुस्मरण-वृष्येष्ट-रस-स्वशरीर-संस्कार-त्यागाः पञ्च ।।७।। मनोज्ञाऽमनोज्ञेन्द्रिय-विषय-राग-द्वेष-वर्जनानि पञ्च ।।८।। हिंसादिष्विहामुत्राऽपायाऽवद्यदर्शनम् ।।९।। दुःखमेव वा ।।१०।। मैत्री-प्रमोद-कारुण्य-माध्यस्थानि च सत्त्वगुणाधिक-क्लिश्यमानाऽविनयेषु ।।११।।

जगत्कायस्वभावौ वा संवेग-वैराग्यार्थम् ।।१२।।
प्रमत्तयोगात्प्राण-व्यपरोपणं हिंसा ।।१३।। असदभिधानमनृतम्
।।१४।। अदत्तादानं स्तेयम् ।।१५।। मैथुनम-ब्रह्म ।।१६।।
मूर्च्छा परिग्रहः ।।१७।। निशल्यो व्रती ।।१८।। अगार्यनगारश्च
।।१९।। अणुव्रतोऽगारी ।।२०।। दिग्देशाऽनर्थदण्डविरति-
सामायिक प्रोषधोपवासोपभोग- परिभोग परिमाणाऽतिथिसंविभाग
व्रत-संपन्नश्च ।।२१।। मारणान्तिकीं सल्लेखनां
जोषिता ।।२२।। शंका-कांक्षा-विचिकित्सान्यदृष्टि-
प्रशंसासंस्तवाःसम्यग्दृष्टेरतीचाराः ।।२३।। व्रत-शीलेषु पञ्च
पञ्च यथाक्रमम् ।।२४।। बन्ध-वधच्छेदातिभारा-
रोपणाऽन्नपाननिरोधाः ।।२५।। मिथ्योपदेश-रहोभ्याख्यान-
कूटलेखक्रिया-न्यासापहार-साकार-मन्त्रभेदाः ।।२६।।
स्तेनप्रयोग-तदाहृताऽऽदान-विरुद्ध-राज्यातिक्रम-
हीनाधिकमानोन्मान-प्रतिरूपक-व्यवहाराः ।।२७।।
परविवाहकरणेत्वरिका-परिगृहीताऽपरिगृहीता-गमनाऽनंग-
क्रीडा-कामतीव्राभिनिवेशाः ।।२८।। क्षेत्रवास्तु-
हिरण्यसुवर्ण-धनधान्य-दासीदास- कुप्यप्रमाणातिक्रमाः
।।२९।। ऊर्ध्वाधस्तिर्यग्व्यतिक्रम-क्षेत्र वृद्धि-स्मृत्यन्तराधानानि
।।३०।। आनयन-प्रेष्यप्रयोग-शब्द-रूपानुपात-पुद्‌गलक्षेपाः
।।३१।। कन्दर्प-कौत्कुच्य-मौखर्यासमीक्ष्याधिकरणोपभोग
परिभोगाऽऽनर्थक्यानि ।।३२।। योग-दुःप्रणिधानाऽनादर-
स्मृत्यनुपस्थानानि ।।३३।। अप्रत्यवेक्षिताऽप्रमार्जितोत्सर्गादान-

संस्तरोपक्रमणाऽना-दर-स्मृत्यनुपस्थानानि ।।३४।।
सचित्तसम्बन्ध-संमिश्राभि-षव-दुःपक्वाहाराः ।।३५।।
सचित्तनिक्षेपापिधान-पर-व्यपदेश-मात्सर्य्य-कालाऽतिक्रमाः ।।३६।। जीवित-मरणाशंसा-मित्रानुराग-सुखानुबन्ध-निदानानि ।।३७।। अनुग्रहार्थं स्वस्यातिसर्गो दानम् ।।३८।। विधि-द्रव्य-दातृ-पात्र-विशेषात्तद्विशेषः ।।३९।।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे सप्तमोऽध्यायः ।।७।।

मिथ्यादर्शनाऽविरति-प्रमाद-कषाय-योगा बन्ध-हेतवः ।।१।। सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलानाऽऽदत्ते स बन्धः ।।२।। प्रकृति-स्थित्यनुभव-प्रदेशास्तद्विधयः ।।३।। आद्यो ज्ञानदर्शनावरण-वेदनीय-मोहनीयायुर्नाम-गोत्रान्तरायाः ।।४।। पञ्च-नव-द्व्यष्टा-विंशति-चतुर्द्विचत्वारिंशद्-द्वि-पञ्च-भेदा यथाक्रमम् ।।५।। मतिश्रुता-वधिमनःपर्यय-केवलानाम् ।।६।। चक्षु-रचक्षुरवधि-केवलानां निद्रा-निद्रानिद्रा-प्रचला-प्रचलाप्रचला-स्त्यानगृद्धयश्च ।।७।। सदसद्वेद्ये ।।८।। दर्शन-चारित्र-मोहनीया-कषाय-कषायवेदनीयाख्या-स्त्रि-द्वि-नव-षोडशभेदाः सम्यक्त्व-मिथ्यात्व-तदुभयान्यकषायकषायौ हास्य-रत्य-रति-शोक-भय-जुगुप्सा-स्त्री-पुन्नपुंसक-वेदा अनन्तानुबन्ध्यप्रत्याख्यान-प्रत्याख्यान-संज्वलन-विकल्पाश्चैकशः क्रोध-मान-माया-लोभाः ।।९।। नारक-तैर्यग्योन-मानुष-दैवानि ।।१०।। गति-जाति-शरीरांगोपांग-निर्माण-बन्धन-संघात-संस्थान-

संहनन-स्पर्श-रस-गन्ध-वर्णानुपूर्व्यागुरु-लघू-पघात -परघातातपोद्योतोच्छ्वास-विहायोगतय:प्रत्येकशरीर-त्रस-सुभग सुस्वर-शुभ-सूक्ष्म-पर्याप्ति-स्थिरादेय-यश:कीर्ति-सेतराणि तीर्थकरत्वं च ।।११।। उच्चैर्नीचैश्च ।।१२।। दान-लाभ-भोगोपभोग-वीर्याणाम् ।।१३।। आदितस्तिसृणामन्तरायस्य च त्रिंशत्सागरो-पम-कोटीकोट्य: परा स्थिति: ।।१४।। सप्ततिर्मोहनीयस्य ।।१५।। विंशतिर्नाम-गोत्रयो: ।।१६।। त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाण्यायुष: ।।१७।। अपरा द्वादश-मुहूर्ता वेदनीयस्य ।।१८।। नाम-गोत्रयोरष्टौ ।।१९।। शेषाणामन्तर्मुहूर्ता ।।२०।। विपाकोऽनुभव: ।।२१।। स यथानाम् ।।२२।। ततश्च निर्जरा ।।२३।। नाम-प्रत्यया: सर्वतो योग-विशेषात् सूक्ष्मैकक्षेत्रा - वगाहस्थिता: सर्वात्मप्रेदेशेष्वनन्तानन्त-प्रदेशा: ।।२४।। सद्वेद्य-शुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यम् ।।२५।। अतोऽन्यत्पापम् ।।२६।।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रेऽष्टमोध्याय: ।।८।।

आस्रव-निरोध: संवर: ।।१।। स गुप्ति-समिति-धर्मा-नुप्रेक्षापरीषहजय-चारित्रै: ।।२।। तपसा निर्जरा च ।।३।। सम्यग्योगनिग्रहो गुप्ति: ।।४।। ईर्याभाषैषणादान-निक्षेपोत्सर्गा: समितय: ।।५।। उत्तम-क्षमा-मार्दवार्जव-शौच-सत्य-संयम-तप-स्त्यागाकिञ्चन्य-ब्रह्मचर्याणि धर्म: ।।६।। अनित्याशरण-संसारैकत्वान्यत्वाशुच्यास्रवसंवर-निर्जरा-लोक-बोधिदुर्लभ-धर्मस्वाख्यातत्वानुचिन्तनमनुप्रेक्षा: ।।७।।

मार्गाच्यवन-निर्जरार्थं परिषोढव्याः परीषहाः ।।८।। क्षुत्पिपासा-शीतोष्णदंशमशक-नाग्न्यारति-स्त्री-चर्या-निषद्या-शय्या-क्रोशवध-याचनालाभ-रोग-तृण-स्पर्श-मल-सत्कार-पुरस्कार-प्रज्ञाज्ञानाऽदर्शनानि ।।९।। सूक्ष्मसाम्पराय-छद्मस्थवीत-रागयोश्चतुर्दश ।।१०।। एकादश जिने ।।११।। बादर-साम्पराये सर्वे ।।१२।। ज्ञानावरणे प्रज्ञाऽज्ञाने ।।१३।। दर्शनमोहान्तराययोर-दर्शनाऽलाभौ ।।१४।। चारित्रमोहे नाग्न्यारति-स्त्री-निषद्याऽऽक्रोश-याचना-सत्कार-पुरस्काराः ।।१५।। वेदनीये शेषाः ।।१६।। एकादयो भाज्या युगपदेकस्मिन्नै-कोनविंशतेः ।।१७।। सामायिकच्छेदोपस्थापना परिहार-विशुद्धि-सूक्ष्मसाम्पराय-यथाख्यातमिति चारित्रम् ।।१८।। अनशनावमौदर्य-वृत्तिपरिसंख्यान-रस-परित्याग-विविक्तशय्यासन-कायक्लेशा बाह्यं तपः ।।१९।। प्रायश्चित्त-विनय-वैयावृत्त्य-स्वाध्याय-व्युत्सर्ग-ध्यानान्युत्तरम् ।।२०।। नवचतुर्दश-पञ्च-द्विभेदा यथाक्रमं प्राग्ध्यानात् ।।२१।। आलोचना-प्रतिक्रमण-तदुभय-विवेक-व्युत्सर्ग-तपश्छेद-परिहारोपस्थापनाः ।।२२।। ज्ञान-दर्शन-चारित्रोपचाराः ।।२३।। आचार्योपाध्याय-तपस्वि-शैक्ष-ग्लान-गण-कुल-संघ-साधु-मनोज्ञानाम् ।।२४।। वाचना-पृच्छनानुप्रेक्षाम्नाय-धर्मोपदेशाः ।।२५।। बाह्याभ्यन्तरोपध्योः ।।२६।। उत्तम-संहननस्यैकाग्र-चिन्ता-निरोधो ध्यानमान्तर्मुहूर्तात् ।।२७।। आर्त्त-रौद्र-धर्म्य-शुक्लानि ।।२८।। परे मोक्ष-हेतू ।।२९।।

आर्त्तममनोज्ञस्य संप्रयोगे तद्विप्रयोगाय स्मृति-समन्वाहारः ।।३०।। विपरीतं मनोज्ञस्य ।।३१।। वेदनायाश्च ।।३२।। निदानं च ।।३३।। तदविरत-देशविरत-प्रमत्तसंयतानाम् ।।३४।। हिंसानृत-स्तेय-विषयसंरक्षणेभ्यो रौद्रमविरत-देश-विरतयोः ।।३५।। आज्ञाऽपाय-विपाक-संस्थान-विचयाय धर्म्यम् ।।३६।। शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः ।।३७।। परे केवलिनः ।।३८।। पृथक्त्वैकत्ववितर्क-सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति-व्युपरत-क्रियानिवर्तीनि ।।३९।। त्र्येकयोग-काययोगाऽयोगानाम् ।।४०।। एकाश्रये सवितर्क-वीचारे पूर्वे ।।४१।। अवीचारं द्वितीयम् ।।४२।। वितर्कः श्रुतम् ।।४३।। वीचारोऽर्थ-व्यञ्जन योगसङ्क्रान्तिः ।।४४।। सम्यग्दृष्टि-श्रावक-विरतानन्त-वियोजक-दर्शनमोह-क्षपकोपशमकोप-शांतमोह-क्षपक-क्षीणमोह जिनाः क्रमशोऽसंख्येय-गुण-निर्जराः ।।४५।। पुलाक-बकुश-कुशील-निर्ग्रन्थ-स्नातका निर्ग्रन्थाः ।।४६।। संयम-श्रुत-प्रतिसेवना-तीर्थ-लिंग-लेश्योपपाद-स्थान-विकल्पतः साध्याः ।।४७।।

इति तत्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे नवमाऽध्यायः।।९।।

मोहक्षयाज्ज्ञान-दर्शनावरणान्तराय-क्षयाच्च केवलम् ।।१।। बन्धहेत्वभाव-निर्जराभ्यां कृत्स्न-कर्म-विप्रमोक्षो मोक्षः ।।२।। औपशमिकादि-भव्यत्वानां च ।।३।। अन्यत्र केवलसम्यक्त्व-ज्ञान-दर्शन-सिद्धत्वेभ्यः ।।४।। तदनन्तरमूर्ध्वं गच्छत्याऽऽ-

लोकान्तात् ।।५।। पूर्वप्रयोगाद-संगत्वाद् बन्धच्छेदात् तथा-गतिपरिणामाच्च ।।६।। आविद्धकुलालचक्रवद्-व्यपगतलेपाऽ-लांबुवदेरण्ड-बीज-वदग्निशिखावच्च ।।७।। धर्मास्तिकाया-भावात् ।।८।। क्षेत्र-काल-गति-लिंग-तीर्थ-चारित्र-प्रत्येकबुद्धबोधित-ज्ञानाऽवगाहनान्तर-संख्यात्पबहुत्वतः साध्याः ।।९।।

इति तत्त्वार्थाधिगमे मोक्षशास्त्रे दशमोऽध्यायः ।।१०।।

अक्षर-मात्र-पद-स्वरहीनं, व्यञ्जन-सन्धि-विवर्जित-रेफम् ।
साधुभिरत्र मम क्षमितव्यं, को न विमुह्यति शास्त्रसमुद्रे।।१।।

दशाध्याय-परिच्छिन्ने, तत्वार्थे पठिते सति ।
फलं स्यादुपवासस्य, भाषितं मुनिपुङ्गवैः ।।२।।

तत्त्वार्थ-सूत्र-कर्त्तारं, गृद्धपिच्छोपलक्षितम् ।
वन्दे गणीन्द्र-संजातमुमास्वामि-मुनीश्वरम् ।।३।।

जं सक्कइ तं कीरइ जं च ण सक्कइ तहेव सद्दहणं ।
सद्दहमाणो जीवो, पावइ अजरामरं ठाणं ।।४।।

तवयरणं वयधरणं, संजमसरणं च जीव-दया-करणं ।
अंते समाहिमरणं, चउविहदुक्खं णिवारेई ।।५।।

इति तत्त्वार्थसूत्रापरनाम मोक्षशास्त्रं समाप्तम्

निर्वाणकाण्ड

[प्राकृत]

अट्ठावयम्मि उसहो चंपाए वासुपुज्ज-जिणणाहो ।
उज्जंते णेमि-जिणो पावाए णिव्वुदो महावीरो ।।१।।

वीसं तु जिण-वरिंदा अमरासुर-वंदिदा धुद-किलेसा ।
सम्मेदे गिरिसिहरे णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।२।।

वरदत्तो य वरंगो सायरदत्तो य तारवर-णयरे ।
आहुट्ठ य कोडीओ णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।३।।

णेमि-सामी पज्जुण्णो संबुकुमारो तहेव अणिरुद्धो ।
बाहत्तरि-कोडीओ उज्जंते सत्त-सया वंदे ।।४।।

राम-सुआ बिण्णि जणा लाड-णरिंदाण पंच कोडीओ ।
पावाए गिरि-सिहरे णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।५।।

पंडु-सुआ तिण्णि जणा दविड़-णरिंदाण अट्ठ-कोडिओ ।
सत्तुंजय-गिरिसिहरे णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।६।।

सत्तेव य बलभद्दा जदुव-णरिंदाण अट्ठ-कोडीओ ।
गजपंथे गिरि-सिहरे णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।७।।

राम-हणू सुग्गीवो गवय गवक्खो य णील महणीलो ।
णवणवदी-कोडीओ तुंगीगिरि-णिव्वुदे वंदे ।।८।।

णंगाणंगकुमारा विक्खा-पंचद्ध-कोडि-रिसिसहिया ।
सुवण्णगिरि-मत्थयत्थे णिव्वाण गया णमो तेसिं ।।९।।

दहमुह-रायस्स सुआ कोडी-पंचद्ध-मुणिवरे सहिया।
रेवा-उहयम्मि तीरे णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।१०।।

रेवा-णइए तीरे पच्छिम-भायम्मि सिद्धवर-कूडे।
दो चक्की दह कप्पे आहुट्ठ य कोडि णिव्वुदे वंदे ।।११।।

बडवाणी-वर-णयरे दक्खिण-भायम्मि चूलगिरि-सिहरे।
इंदजिय-कुंभयण्णो णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।१२।।

पावागिरि-वर-सिहरे सुवण्णभद्दाइ मुणिवरा चउरो।
चेलणा-णई तडग्गे णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।१३।।

फलहोडी-वर-गामे पच्छिम-भायम्मि दोणगिरि-सिहरे।
गुरुदत्ताइ-मुणिंदा णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।१४।।

णायकुमार-मुणिंदो बालि महाबालि चेव अज्झेया।
अट्ठावय-गिरि-सिहरे-णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।१५।।

अच्चलपुर-वर-णयरे ईसाणभाए मेढ्गिरि सिहरे।
आहुट्ठ य कोडीओ णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।१६।।

बंसत्थल वण-णियरे पच्छिम-भायम्मि कुंथुगिरि-सिहरे।
कुल-देसभूसण-मुणी णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।१७।।

जसरह-रायस्स सुआ पंचसया कलिंग-देसम्मि।
कोडिसिलाए कोडि-मुणी णिव्वाण-गया णमो तेसिं।।१८।।

पासस्स समवसरणे गुरुदत्त-वरदत्त-पंच-रिसि-पमुहा।
रेसिंसदे गिरिसिहरे णिव्वाण-गया णमो तेसिं ।।१९।।

जे जिणु जित्थु तत्था जे दु गया णिव्वुदिं परमं ।
ते वंदामि य णिच्चं तिरयण-सुद्धो णमस्सामि ।।२०।।

सेसाणं तु रिसीणं णिव्वाणं जम्मि जम्मि ठाणम्मि ।
ते हं वंदे सव्वे दुक्खक्खय-कारणट्ठाए ।।२१।।

पासं तह अहिणंदण णायद्दहि मंगलाउरे वंदे ।
अस्सारम्मे पट्टणि मुणिसुव्वओ तहेव वंदामि ।।१।।

बाहूबलि तह वंदमि पोदनपुर-हस्तिनापुरे वंदे ।
संती कुन्थ व अरिहो वाराणसिए सुपास पासं च ।।२।।

महुराए अहिखिंत्ते वीरं पासं तहेव वंदामि ।
जंबु-मुणिंदो वंदे णिव्वुइपत्तो वि जंबुवणगहणे ।।३।।

पंचकल्लाणठाणइ जाणि वि संजाद-मच्चलोयम्मि ।
मण वयण-काय-सुद्धो सव्वे सिरसा णमस्सामि ।।४।।

अग्गलदेवं वंदमि वरणयरे णिवड-कुण्डली वंदे ।
पासं सिरिपुरि वंदमि लोहागिरि संखदीवम्मि ।।५।।

गोम्मटदेवं वंदमि पंचसयं धणुह देह उच्चं तं ।
देवा कुणंति वुट्ठी केसर कुसुमाण तस्स उवरिम्मि ।।६।।

णिव्वाण-ठाण जाणिवि अइसयठाणाणि अइसये सहिया ।
संजाद-मिच्चलोए सव्वे सिरसा णमस्सामि ।।७।।

जो जण पठइ तियालं णिव्वुइकंडंपि भावसुद्धीए ।
भुंजदि णर-सुर-सुक्खं पच्छा सो लहइ णिव्वाणं ।।८।।

इच्छामि भंते ! परिणिव्वाणभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं इमम्मि अवसप्पिणीये, चउत्थसमयस्स पच्छिमे भाए, आउट्ठमासहीणे, वासचउक्कम्मि सेसकालम्मि । पावाए णयरीए, कत्तियमासस्स किण्हचउदसिए । रत्तीए सादीए णक्खत्ते, पच्चूसे, भयवदो महदि महावीरो वड्ढमाणो सिद्धिं गदो तिसुवि लोएसु, भवणवासिय-वाण-विंतर जोइसिय-कप्पवासियत्ति चउव्विहा देवा सपरिवारा दिव्वेण ण्हाणेण, दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण अक्खेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण दीवेण, दिव्वेण धूवेण, दिव्वेण वासेण णिच्चकालं, अच्चंति, पुज्जंति, वंदंति, णमंसंति, परिणिव्वाण-महाकल्लाण-पुज्जं करंति अहमवि इह संतो तत्थ संताइयं सया णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाओ सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

इति श्री निर्वाणकाण्ड [प्राकृतभाषामय]

वीतराग स्तोत्र

शिवं शुद्ध बुद्धं परं विश्वनाथं,
न देवो न बंधुर्न कर्मा न कर्त्ता ।
न अंगं न संगं न स्वेच्छा न कायं,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ।।१।।
न बंधो न मोक्षो न रागादिदोषः,
न योगं न भोगं न व्याधिर्न शोकं ।

न कोपं न मानं न माया न लोभं,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ।।२।।
न हस्तौ न पादौ न घ्राणं न जिह्वा,
न चक्षुर्न कर्णं न वक्त्रं न निद्रा।
न स्वामी न भृत्यः न देवो न मर्त्यः,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ।।३।।
न जन्म न मृत्यु न मोहं न चिंता,
न क्षुद्रो न भीतो न कार्श्यं न तंद्रा।
न स्वेदं न खेदं न वर्णं न मुद्रा,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ।।४।।
त्रिदण्डे त्रिखण्डे हरे विश्वनाथं,
हृषीकेश विध्वस्त कर्मादिजालं।
न पुण्यं न पापं न चाक्षादि गात्रं,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ।।५।।
न बालो न वृद्धो न तुच्छो न मूढो,
न स्वेदं न भेदं न मूर्तिर्न स्नेहः।
न कृष्णं न शुक्लं न मोहं न तन्द्रा,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ।।६।।
न आद्यं न मध्यं न अंतं न मन्या,
न द्रव्यं न क्षेत्रं न कालो न भावः।
न शिष्यो गुरूर्नापि हीनं न दीनं,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ।।७।।

इदं ज्ञानरूपं स्वयं तत्त्व वेदी,
न पूर्णं न शून्यं न चैत्यंस्वरूपी।
न चान्यो न भिन्नं न परमार्थमेकम्,
चिदानन्दरूपं नमो वीतरागम् ।।८।।

आत्माराम गुणाकरं गुणनिधिं चैतन्य रत्नाकरं,
सर्वे भूतगता गते सुख दुःखे ज्ञाते त्वया सर्वगे।
त्रैलोक्याधिपते स्वयं स्वमनसा ध्यायंति योगीश्वराः,
वंदे तं हरिवंश हर्ष हृदयं श्रीमान् हृदाभ्युद्यताम् ।।९।।

परमानन्द स्तोत्र

परमानन्दसंयुक्तं निर्विकारं निरामयम्।
ध्यानहीना न पश्यन्ति, निजदेहे व्यवस्थितम् ।।१।।

अनंतसुखसम्पन्नं, ज्ञानामृतपयोधरम्।
अनंतवीर्यसम्पन्नं, दर्शनं परमात्मनः ।।२।।

निर्विकारं निराबाधं, सर्वसंगविवर्जितम्।
परमानन्दसम्पन्नं, शुद्धचैतन्यलक्षणम् ।।३।।

उत्तमा स्वात्मचिंतास्यान्मोहचिंता च मध्यमा।
अधमा कामचिंता स्यात्, परचिंताऽधमाधमा ।।४।।

निर्विकल्पसमुत्पन्नं ज्ञानमेव सुधारसम्।
विवेकमंजुलिं कृत्वा, तत्पिबंति तपस्विनः ।।५।।

सदानन्दमयं जीवं, यो जानाति स पण्डितः ।
स सेवते निजात्मानं, परमानन्दकारणम् ।।६।।

नलिन्यां च यथा नीरं, भिन्नं तिष्ठति सर्वदा ।
अयमात्मा स्वभावेन, देहे तिष्ठति निर्मलः ।।७।।

द्रव्यकर्ममलैर्मुक्तं, भावकर्मविवर्जितम् ।
नोकर्मरहितं विद्धि, निश्चयेन चिदात्मनः ।।८।।

आनन्दं ब्रह्मणोरूपं, निजदेहे व्यवस्थितम् ।
ध्यानहीना न पश्यन्ति, जात्यन्धा इव भास्करम् ।।९।।

तद्ध्यानं क्रियते भव्यै, र्मनोयेन विलीयते ।
तत्क्षणं दृश्यते शुद्धं, चिच्चमत्कारलक्षणम् ।।१०।।

ये ध्यानशीला मुनयः प्रधाना-
स्तेदुःखहीना नियमाद्भवन्ति ।
सम्प्राप्य शीघ्रं परमात्मतत्त्वम्,
व्रजन्ति मोक्षं क्षणमेकमेव ।।११।।

आनन्दरूपं परमात्मतत्त्वम्,
समस्तसंकल्पविकल्पमुक्तम् ।
स्वभावलीना निवसन्ति नित्यम्,
जानाति योगी स्वयमेव तत्त्वम् ।।१२।।

परमात्म स्वरूप

चिदानन्दमयं शुद्धं, निराकारं निरामयं ।
अनन्तसुखसम्पन्नं, सर्वसंगविवर्जितम् ।।१३।।
लोकमात्रप्रमाणोऽयं, निश्चये न हि संशयः ।
व्यवहारे तनूमात्रः कथितः परमेश्वरैः ।।१४।।
यत्क्षणं दृश्यते शुद्धं, तत्क्षण गतविभ्रमः ।
स्वस्थचित्तः स्थिरीभूत्वा, निर्विकल्प समाधितः ।।१५।।
स एव परमं ब्रह्म, स एव जिनपुंगवः ।
स एव परमं तत्त्वं, स एव परमो गुरुः ।।१६।।
स एव परमं ज्योतिः, स एव परमं तपः ।
स एव परमं ध्यानं, स एव परमात्मकः ।।१७।।
स एव सर्व कल्याणं, स एव सुखभाजनं ।
स एव शुद्धचिद्रूपं, स एव परमं शिवः ।।१८।।
स एव परमानंदः, स एव सुखदायकः ।
स एव परमज्ञानं, स एवगुणसागरः ।।१९।।
परमाह्लादसंपन्नं, रागद्वेषविवर्जितम् ।
सोऽहं तं देहमध्येषु, यो जानाति स पंडितः ।।२०।।
आकाररहितं शुद्ध, स्व स्वरूपे व्यवस्थितम् ।
सिद्धमष्टगुणोपेतं, निर्विकारं निरंजनं ।।२१।।
तत्सदृशं निजात्मानं, यो जानाति स पंडितः ।
सहजानन्दचैतन्य, प्रकाशाय महीयसे ।।२२।।

पाषाणेषु यथा हेम, दुग्धमध्ये यथा घृतम् ।
तिलमध्ये यथा तैलं, देहमध्ये यथा शिवः ।।२३।।

काष्ठमध्ये यथा वह्निः, शक्ति रूपेण तिष्ठति ।
अयमात्मा शरीरेषु, यो जानाति स पण्डितः ।।२४।।

अथ कल्याणालोचना

परमप्पइ वड्डमर्दि परमेट्ठीणं करोमि णवकारं ।
सगपर सिद्धिणिमित्तं कल्लाणालोयणा वोच्छे ।।१।।

रे जीवा-णंत-भवे संसारे संसरंत बहुवारं ।
पत्तो ण बोहिलाहो मिच्छत्तविजंभपयडीहिं ।।२।।

संसारभमणगमणं कुणंत आराहिदो ण जिणधम्मो ।
तेणविणा वरं दुक्खं पत्तोसि अणंतवाराइं ।।३।।

संसारे णिवसंता अणंतमरणाइ पाओसि तुमं ।
केवलिणा विण तेसिं संखापज्जत्ति णो हवदि ।।४।।

तिण्णिसया छत्तीसा छावट्ठिसहस्सवार मरणाइं ।
अंतोमुहुत्तमज्झे पत्तोसि णिगोयमज्झम्मि ।।५।।

वियलिंदिये असीदी सट्ठी चालीसमेव जाणेहिं ।
पंचेंदिय चउवीसं खुद्दभवंतोमुहुत्तस्स ।।६।।

अण्णोण्णं खज्जंता जीवा पावंति दारुणं दुक्खं ।
णहु तेसिं पज्जत्ती कहपावइ धम्ममदिसुण्णो ।।७।।

मायापिया कुडुंबो सुजणजण कोवि णायदि सत्थे ।
एगागी भमदि सदा णहि वीओ अत्थि संसारे ।।८।।

आउक्खए्वि पत्ते ण समत्थो कोवि आउदाणेय ।
देवेंदो ण णरेंदो मणिओसह मंतजालाई ।।९।।

संपडि जिणवरधम्मो लद्धोसि तुमं विसुद्धजोएण ।
खामसु जीवा सव्वे पत्तेसमये पयत्तेण ।।१०।।

तिण्णिसया तेसट्ठि मिच्छत्ता दंसणस्स पडिवक्खा ।
अण्णाणे सद्दहिया मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।११।।

महुमज्जमंसजूआपभिदीवसणाइ सत्तभेयाइं ।
णियमो ण कथं च तेसिं मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।१२।।

अणुवयमहव्वया जे जमणियमासीलसहगुरुदिण्णा ।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।१३।।

णिच्चिदरधादुसत्तय तरुदसवियलिंदिएसु छच्चेव ।
सुरणरयतिरियचउरो चउदस माणुए सदसहस्सा ।।१४।।

एदे सव्वे जीवा चउरासीलक्खजोणिवसि पत्ता ।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।१५।।

पुढवीजलग्गिवाओ तेओवि वणप्फदी य वियलतया ।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।१६।।

मल सत्तरा जिणुत्ता वयविसये जा विराहणा विविहा ।
सामइया खमइया खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।१७।।

फलफुल्लछल्लिवल्लि अणगल ण्हाणं च धोवणादिहिं ।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।१८।।

णो शीलं णेव खमा विणओ तवो ण संजमोवासा।
ण कदा ण भाविकदा मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ॥१९॥

कंदफलमूलबीया सचित्तरयणीयभोयणाहारा।
अण्णाणे जे वि कदा मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ॥२०॥

णो पूया जिणचरणे ण पत्तदाणं न चेइयागमणं।
ण कदा ण भाविद मये मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ॥२१॥

बंभारंभपरिग्गह सावज्जा बहु पमाददोसेण।
जीवा विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ॥२२॥

सत्तातिसदखेत्तभवा तीदाणागदसुवट्टमाणजिणा।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ॥२३॥

अरूहासिद्धाइरिया उवझाया साहु पञ्चपरमेट्ठी।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ॥२४॥

जिणवयणधम्मचेदियजिणपडिमा किट्टियाअकिट्टिमया ।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ॥२५॥

दंसणणाणचरित्ते दोसा अट्ठट्ठपञ्चभेयाइं।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ॥२६॥

मदिसुदओहीमणपज्जयं तहा केवलं च पंचमयं।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ॥२७॥

आयारादी अंगा पुव्वपइण्णा जिणेहिं पण्णत्ता।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ॥२८॥

पंच महव्वदजुत्ताअट्ठादससहस्ससीलकदसोहा ।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।२९।।

लोए पियरसमाणा रिद्धिपवण्णा महागणवइया ।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।३०।।

णिग्गंथ अज्जियाओ सड्ढा सड्ढी य चउविहो संघो ।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।३१।।

देवा सुरा मणुस्सा णेरइयातिरियजोणिगदजीवा ।
जे जे विराहिदा खलु मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।३२।।

कोहो माणो माया लोहो एदेय रायदोसाइं ।
अण्णाणे जे वि कदा मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।३३।।

परवत्थं परमहिला पमादजोगेण अज्जियं पावं ।
अण्णावि अकरणीया मिच्छा मे दुक्कडं हुज्ज ।।३४।।

एगो सहावसिद्धो सोहं अप्पा वियप्पपरिमुक्को ।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।३५।।

अरस अरूव अगंधो अव्वावाहो अणंतणाणमओ ।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।३६।।

णेयपमाणं णाणं समए एगेण हुंति ससहावे ।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।३७।।

एयाणेयवियप्पप्पसाहणे सयसहावसुद्धगदी ।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।३८।।

देहपमाणो णिच्चो लोयपमाणो वि धम्मदो होदि ।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।३९।।

केवलदंसणणाणं समये एगेण दुण्णिउवओगा ।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।४०।।

सगरूव सहजसिद्धो विहावगुणमुक्ककम्मवावारो ।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।४१।।

सुण्णो णेय असुण्णो णोकम्मो कम्मवज्जिओ णाणं ।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।४२।।

णाणाउजोण भिण्णो वियप्पभिण्णो सहावसुक्खमओ ।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।४३।।

अच्छिण्णोवच्छिण्णो पमेय रूवत्त गुरूलहू चेव ।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।४४।।

सुहअसुहभावविगओ सुद्धसहावेण तम्मयं पत्तो ।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।४५।।

णो इत्थी ण णउंसो णो पुंसो णेव पुण्णपावमओ ।
अण्णो ण मज्झ सरणं सरणं सो एग परमप्पा ।।४६।।

ते को ण होदि सुजणो तं कस्स ण बंधवो ण सुजणो वा ।
अप्पा हवेह अप्पा एगागी जाणगो सुद्धो ।।४७।।

जिणदेवो होदु सदा मई सु जिणसासणे सया होऊ ।
सण्णासेण य मरणं भवे भवे मज्झ संपदओ ।।४८।।

जिणो देवो जिणो देवो जिणो देवो जिणो जिणो ।
दयाधम्मो दयाधम्मो दयाधम्मो दया सदा ।।४९।।

महासाहू महासाहू महासाहू दिगंबरा ।
एवं तच्च सया हुज्ज जावण्णो मुत्तिसंगमो ।।५०।।

एवमेव गओकालो अणंतो दुक्खसंगमे ।
जिणोवदिट्ठसण्णासे ण यतारोहणा कया ।।५१।।

संपइ एव संपत्ताराहणा जिणदेसिया ।
किं किं ण जायदे मज्झ सिद्धिसंदोहसंपई ।।५२।।

अहो धम्ममहो धम्मं अहो मे लद्धि णिम्मला ।
संजादा संपया सारा जेण सुक्खमणूपमं ।।५३।।

एवं आराहंतो आलोयणवंदणापडिक्कमणं ।
पावइ फलं च तेसिं णिद्दिट्ठं अजियवम्मेण ।।५४।।

।। इति कल्याणालोचना ।।

द्वितीय खण्ड समाप्त

तृतीय खण्ड

श्री ईर्यापथ भक्ति

स्रग्धरा

निःसंगोऽहं जिनानां सदन-
मनुपमं त्रिःपरीत्येत्य भक्त्या ।
स्थित्वा गत्वा निषद्यो-च्चरण-
परिणतोऽन्तः शनै-र्हस्त-युग्मम् ।।
भाले संस्थाप्य बुद्धया मम,
दुरित-हरं कीर्तये शक्र-वन्द्यम् ।
निन्दा-दूरं सदाप्तं क्षय-रहित-
ममुं ज्ञान-भानुं जिनेन्द्रम् ।।१।।

वसन्ततिलका

श्रीमत् पवित्रमकलंक-मनन्त-कल्पम्,
स्वायंभुवं सकल-मंगलमादि-तीर्थम् ।
नित्योत्सवं मणिमयं निलयं जिनानाम्,
त्रैलोक्य-भूषणमहं शरणं प्रपद्ये ।।२।।

अनुष्टुप्

श्रीमत्परम-गम्भीर, स्याद्वादामोघ-लाञ्छनम् ।
जीयात्-त्रैलोक्यनाथस्य, शासनं जिन-शासनम् ।।३।।
श्री-मुखालोकनादेव, श्री-मुखालोकनं भवेत् ।
आलोकन-विहीनस्य, तत् सुखावाप्तयः कुतः ।।४।।

वसन्ततिलका

अद्याभवत्-सफलता नयन-द्वयस्य,
देव ! त्वदीय-चरणाम्बुज-वीक्षणेन ।
अद्य-त्रिलोक-तिलक ! प्रतिभासते मे,
संसार-वारिधि-रयं चुलुक-प्रमाणः ।।५।।

अनुष्टुप्

अद्य मे क्षालितं गात्रं नेत्रे च विमलीकृते ।
स्नातोऽहं धर्म-तीर्थेषु जिनेन्द्र ! तव दर्शनात् ।।६।।

उपेन्द्रवज्रा छंद

नमो नमः सत्त्व-हितंकराय,
वीराय भव्याम्बुज-भास्कराय ।
अनन्त-लोकाय सुरार्चिताय,
देवाधि-देवाय नमो जिनाय ।।७।।

नमो जिनाय त्रिदशार्चिताय,
विनष्ट-दोषाय गुणार्णवाय ।
विमुक्ति-मार्ग-प्रतिबोधनाय,
देवाधि-देवाय नमो जिनाय ।।८।।

वसन्ततिलका

देवाधिदेव ! परमेश्वर ! वीतराग !
सर्वज्ञ ! तीर्थंकर ! सिद्ध ! महानुभाव !
त्रैलोक्यनाथ ! जिन-पुंगव ! वर्धमान !
स्वामिन् ! गतोऽस्मि शरणं चरण-द्वयं ते ।।९।।

आर्या

जित-मद-हर्ष-द्वेषाजित-मोह-परीषहाः जित-कषायाः ।
जित-जन्म-मरण-रोगाजित-मात्सर्या जयन्तु जिनाः ।।१०।।
जयतु जिन वर्धमानस्त्रिभुवन-हित-धर्म-चक्र-नीरज-बन्धुः।
त्रिदशपति-मुकुट-भासुर, चूड़ामणि-रश्मि-रञ्जितारुण- चरणः।।११।।

हरिणी

जय जय जय त्रैलोक्य-काण्ड-शोभि-शिखामणे,
नुद नुद नुद स्वान्त-ध्वान्तं जगत्-कमलार्क नः ।
नय नय नय स्वामिन् ! शान्तिं नितान्त-मनन्तिमाम्,
नहि नहि नहि त्राता, लोकैक-मित्र-भवत्-परः ।।१२।।

वसन्ततिलका

चित्ते मुखे शिरसि पाणि-पयोज-युग्मे,
भक्तिं स्तुतिं विनतिमञ्जलिमञ्जसैव ।
चेक्रीयते चरिकरीति चरीकरीति,
यश्चर्करीति तव देव ! स एव धन्यः।।१३।।

मन्दाक्रान्ता

जन्मोन्माज्यं भजतु भवतः पाद-पद्मं न लभ्यम्,
तच्चेत्-स्वैरं चरतु न च दुर्देवतां सेवतां सः।
अश्नात्यन्नं यदिह सुलभं दुर्लभं चेन्मुधास्ते,
क्षुद्-व्यावृत्यै कवलयति कः कालकूटं बुभुक्षुः ।।१४।।

शार्दूल-विक्रीडित

रूपं ते निरुपाधि-सुन्दर-मिदं, पश्यन् सहस्रेक्षणः,
प्रेक्षा-कौतुक-कारिकोऽत्र भगवन् नोपैत्यवस्थान्तरम् ।
वाणीं गद्गद्यन् वपुः पुलकयन्, नेत्र-द्वयं श्रावयन्,
मूर्द्धानं नमयन् करौ मुकुलयंश्चेतोऽपि निर्वापयन् ।।१५।।

त्रस्तारातिरिति त्रिकालविदिति त्राता त्रिलोक्या इति,
श्रेयः सूति-रिति श्रियां निधिरिति, श्रेष्ठः सुराणामिति ।
प्राप्तोऽहं शरणं शरण्य-मगतिस्त्वां तत्-त्यजोपेक्षणम्,
रक्ष क्षेमपदं प्रसीद जिन ! किं, विज्ञापितैर्गोपितैः ।।१६।।

उपजाति

त्रिलोक-राजेन्द्र-किरीट-कोटि-
प्रभाभि-रालीढ-पदार-विन्दम् ।
निर्मूल-मुन्मूलित-कर्म-वृक्षं,
जिनेन्द्र-चन्द्रं प्रणमामि भक्त्या ।।१७।।

आर्या

करचरणतनु विघाता, दटतो निहितः प्रमादतः प्राणी ।
ईर्यापथमिति भीत्या, मुञ्चे तद्दोषहान्यर्थम् ।।१८।।

ईर्यापथे प्रचलताऽद्य मया प्रमादा-
देकेन्द्रिय प्रमुख जीव निकायबाधा ।
निर्वर्तिता यदि भवेदयुगान्तरेक्षा,
मिथ्या तदस्तु दुरितं गुरुभक्तितो मे ।।१९।।

गद्य

पडिक्कमामि भंते ! इरिया-वहियाए, विराहणाए, अणागुत्ते, अइग्गमणे, णिग्गमणे, ठाणे, गमणे, चंकमणे, पाणुग्गमणे, बीजुग्गमणे, हरिदुग्गमणे, उच्चारपस्सवण-खेल-सिंहाण-वियडियपइट्ठावणियाए, जे जीवा एइंदिया वा, बेइंदिया वा, तेइंदिया वा, चउरिंदिया वा, पंचिंदिया वा, णोल्लिदा वा, पेल्लिदा वा, संघट्टिदा वा, संघादिदा वा, उद्दाविदा वा, परिदाविदा वा, किरिंच्छिदा वा, लेस्सिदा वा, छिंदिदा वा, भिंदिदा वा, ठाणदो वा, ठाण-चंकमणदो वा, तस्स उत्तरगुणं, तस्स पायच्छित्त-करणं, तस्स विसोहि-करणं, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, णमोक्कारं, पज्जुवासं करेमि, ताव कालं, पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि।

ॐ णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।

जाप्यानि (९ बार)

ॐ नमो परमात्मने नमोऽनेकान्ताय शान्तये ।

गद्य

इच्छामि भंते ! आलोचेउं इरियावहियस्स पुव्वुत्तरदक्खिणपच्छिम चउदिसु विदिसासु विहरमाणेण, जुगंतर दिट्ठिणा, भव्वेण, दट्ठव्वा । पमाददोसेण डवडवचरियाए पाण-भूद जीव-सत्ताणं उवघादो कदो वा कारिदो वा कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

शार्दूलविक्रीडित

पापिष्ठेन दुरात्मना जड़धिया, मायाविना लोभिना,
रागद्वेषमलीमसेन मनसा, दुष्कर्म यन्निर्मितम्।
त्रैलोक्याधिपते ! जिनेन्द्र ! भवत : श्रीपाद मूलेऽधुना,
निन्दापूर्वमहं जहामि सततं, निर्वर्तये कर्मणाम् ।।१।।

जिनेन्द्रमुन्मूलित कर्मबन्धं, प्रणम्य सन्मार्गकृत स्वरूपम् ।
अनन्तबोधादि भवंगुणौघं, क्रियाकलापं प्रकटं प्रवक्ष्ये।।२।।

गद्य

अथार्हत्पूजारम्भक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्म-क्षयार्थं भावपूजा वंदनास्तवसमेतं श्रीमत्सिद्ध-भक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहम् ।

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ।।

चत्तारि मंगलं, अरहन्ता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा, अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि।

अड्ढाइज्जदीवदोस मुद्देसु पण्णारस-कम्म-भूमिसु, जाव अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं,

अंतयडाणं, पारयडाणं, धम्माइरियाणं धम्मदेसयाणं, धम्मणायगाणं, धम्मवरचाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं चरित्ताणं सदा करेमि, किरियम्मं । करेमि भंते ! सामायियं सव्वसावज्जजोगं पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण मणसा-वचसा-काएण, ण करेमि ण कारेमि ण अण्णं करंतं पि समणुमणामि तस्स भंते अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं जाव अरहंताणं भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

चौबीस तीर्थंकरों की स्तुति

थोस्सामि हं जिणवरे, तित्थयरे केवली अणंतजिणे ।
णरपवरलोयमहिए विहुयरयमले महप्पण्णे ।।१।।
लोयस्सुज्जोययरे, धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से, चउवीसं चेव केवलिणो ।।२।।
उसहमजियं च वंदे, संभवमभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं, जिणं च चंदप्पहं वंदे ।।३।।
सुविहिं च पुप्फयंतं, सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमलमणंतं भयवं, धम्मं संति च वंदामि ।।४।।
कुन्थुं च जिणवरिंदं, अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदामिरिट्ठ-णेमिं, तह पासं वड्ढमाणं च ।।५।।
एवंमए अभित्थुआ, विहुय-रय-मला पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसंपि जिणवरा, तित्थयरा मे पसीयंतु ।।६।।

कित्तियवंदिय महिया, एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा।
आरोग्गणाणलाहं, दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।७।।

चंदेहिं णिम्मलयरा, आइच्चेहिं अहिय-पयासंता।
सायर-मिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।८।।

।। इति श्री ईर्यापथ भक्तिः ।।

श्री सिद्ध भक्ति

सिद्धा-नुद्धूत-कर्म-प्रकृति-
समुदयान् साधितात्म-स्वभावान्,
वन्दे सिद्धि-प्रसिद्ध्यै तदनुपम-
गुण-प्रग्रहाकृष्टि-तुष्टः।
सिद्धिः स्वात्मोपलब्धिः,
प्रगुण-गुण-गणोच्छादि-दोषापहाराद्,
योग्योपादान-युक्त्या दृषद्,
इह यथा हेम-भावोपलब्धिः ।।१।।

नाभावः सिद्धि-रिष्टा न,
निज-गुण-हतिस्तत् तपोभिर्न युक्तेः,
अस्त्यात्मानादि-बद्धः,
स्व-कृतज-फल-भुक्-तत्-क्षयान् मोक्षभागी।
ज्ञाता दृष्टा स्वदेह-प्रमिति-
रुपसमाहार-विस्तार-धर्मा,
ध्रौव्योत्पत्ति-व्ययात्मा,
स्व-गुण-युत-इतो नान्यथा साध्य-सिद्धिः ।।२।।

स त्वन्तर्बाह्य-हेतु-प्रभव-
विमल-सद्दर्शन-ज्ञान-चर्या-
संपद्धेति-प्रघात-क्षत-
दुरित-तया व्यञ्जिताचिन्त्य-सारैः ।
कैवल्यज्ञान-दृष्टि-प्रवर-
सुख-महावीर्य सम्यक्त्व-लब्धि-
ज्योति-र्वातायनादि-स्थिर-
परम-गुणै-रद्‌भुतै-र्भासमानः ।।३।।

जानन् पश्यन् समस्तं,
सम-मनुपरतं संप्रतृप्यन् वितन्वन्,
धुन्वन् ध्वान्तं नितान्तं,
निचित-मनुपमं प्रीणयन्नीशभावम् ।
कुर्वन् सर्व-प्रजाना-मपर-
मभिभवन् ज्योति-रात्मानमात्मा,
आत्मन्येवात्मनासौ क्षण-
मुपजनयन्-सत्-स्वयंभूः प्रवृत्तः ।।४।।

छिन्दन् शेषानशेषान्-निगल-
बल-कलीं-स्तैरनन्त-स्वभावैः,
सूक्ष्मत्वाग्र्यावगाहागुरु-
लघुक-गुणैः क्षायिकैः शोभमानः ।
अन्यै-श्चान्य-व्यपोह-प्रवण-
विषय-संप्राप्ति-लब्धि-प्रभावै-

रूर्ध्व-व्रज्या स्वभावात्,
समय-मुपगतो धाम्नि संतिष्ठतेऽग्र्ये ।।५।।
अन्याकाराप्ति-हेतु-र्न च,
भवति परो येन तेनाल्य-हीनः ।
प्रागात्मोपात्त-देह-प्रति-
कृति-रुचिराकार एव ह्यमूर्तः ।
क्षुत्-तृष्णा-श्वास-कास-
ज्वर-मरण-जरानिष्ट-योग-प्रमोह-
व्यापंत्त्याद्युग्र-दुःख-प्रभव-
भव-हतेः कोऽस्य सौख्यस्य माता ।।६।।
आत्मोपादान-सिद्धं स्वय-
मतिशय-वद्-वीत-बाधं विशालम् ।
वृद्धि-ह्रास-व्यपेतं,
विषय-विरहितं निःप्रतिद्वन्द्व-भावम् ।
अन्य-द्रव्यानपेक्षं,
निरुपममितं शाश्वतं सर्व-कालम् ।
उत्कृष्टानन्त-सारं,
परम-सुखमतस्तस्य सिद्धस्य जातम् ।।७।।
नार्थः क्षुत्-तृड्-विनाशाद्,
विविध-रस-युतै-रन्न-पानै-रशुच्या ।
नास्पृष्टे-र्गन्ध-माल्यै-र्नहि,
मृदु-शयनै-र्ग्लानि-निद्राद्यभावात् ।

आतंकार्ते रभावे,
तदुपशमन-सद्भेषजानर्थतावद् ।
दीपा-नर्थक्य-वद् वा,
व्यपगत-तिमिरे दृश्यमाने समस्ते ।।८।।
तादृक्-सम्पत्-समेता,
विविध-नय-तपः-संयम-ज्ञान-दृष्टि-
चर्या-सिद्धाः समन्तात्,
प्रवितत्-यशसो विश्व-देवाधि-देवाः ।
भूता भव्या भवन्तः,
सकल-जगति ये स्तूयमाना विशिष्टै-
स्तान् सर्वान् नौम्यनन्तान्,
निजिग-मिषु-रं तत्स्वरूपं त्रिसन्ध्यम् ।।९।।

कृत्वा कायोत्सर्गं, चतुरष्टदोष विरहितं सु परिशुद्धं ।
अतिभक्ति संप्रयुक्तो, यो वन्दते सो लघु लभते परम सुखम्।।

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-दम्मदंसण सम्मचरित्तजुत्ताणं, अट्ठ-विह-कम्म-विप्प-मुक्काणं, अट्ठ-गुण-सम्पण्णाणं, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं, तव-सिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं, अतीताणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं, णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वन्दामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-सम्पत्ति होदु मज्झं ।

श्री चैत्य भक्ति

श्री गौतमादिपदमद्भुतपुण्यबन्ध मुद्योतिताखिल ममौघमघप्रणाशम्।
वक्ष्ये जिनेश्वरमहं प्रणिपत्य तथ्यं निर्वाणकारणमशेषजगद्धितार्थम् ।।

जयति भगवान् हेमाम्भोज-प्रचार-विजृम्भिता-
वमर-मुकुटच्छायोद्गीर्ण-प्रभा-परिचुम्बितौ ।
कलुष-हृदया मानोद्भ्रांताः परस्पर-वैरिणः,
विगत-कलुषाः पादौ यस्य प्रपद्य विशश्वसुः ।।१।।

तदनु जयति श्रेयान्-धर्मः प्रवृद्ध-महोदयः,
कुगति-विपथ-क्लेशा-द्योसौ विपाशयति प्रजाः ।
परिणत-नयस्यांगी-भावाद्-विविक्त-विकल्पितम्,
भवतु भवतस्त्रातृ त्रेधा जिनेन्द्र-वचोऽमृतम् ।।२।।

तदनु जयताज्जैनी वित्तिः प्रभंग-तरंगिणी,
प्रभव-विगम ध्रौव्य-द्रव्य-स्वभाव-विभाविनी ।
निरुपम-सुखस्येदं द्वारं विघट्य निरर्गलम्,
विगत-रजसं मोक्षं देयान् निरत्यय-मव्ययम् ।।३।।

अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायेभ्यस्तथा च साधुभ्यः ।
सर्व-जगद्-वन्द्येभ्यो नमोऽस्तु सर्वत्र सर्वेभ्यः ।।४।।

मोहादि-सर्व-दोषारि-घातकेभ्यः सदा हत-रजोभ्यः,
विरहित-रहस्-कृतेभ्यः पूजार्हेभ्यो नमोऽर्हद्भ्यः ।।५।।

क्षांत्यार्जवादि-गुण गण-सुसाधनं सकल-लोक-हित-हेतुम् ।
शुभ-धामनि धातारं वन्दे धर्मं जिनेन्द्रोक्तम् ।।६।।

मिथ्याज्ञान-तमोवृत-लोकैक-ज्योति-रमित-गमयोगि ।
सांगोपांग-मजेयं जैनं वचनं सदा वन्दे ।।७।।

भवन-विमान-ज्योति-र्व्यन्तर-नरलोक विश्व-चैत्यानि ।
त्रिजग-दभिवन्दितानां त्रेधा वन्दे जिनेन्द्राणाम् ।।८।।

भुवनत्रयेऽपि भुवनत्रयाधिपाभ्यर्च्य-तीर्थ-कर्तृणाम् ।
वन्दे भवाग्नि-शान्त्यै विभवाना-मालयालीस्ताः ।।९।।

इति पञ्च-महापुरुषाः प्रणुता जिनधर्म-वचन-चैत्यानि ।
चैत्यालयाश्च विमलां दिशन्तु बोधिं बुध-जनेष्टाम् ।।१०।।

अकृतानि कृतानि-चाप्रमेय-
द्युतिमन्ति द्युतिमत्सु मन्दिरेषु ।
मनुजामर-पूजितानि वन्दे,
प्रतिबिम्बानि जगत्त्रये जिनानाम् ।।११।।

द्युति-मण्डल-भासुरांग-यष्टीः,
प्रतिमा अप्रतिमा जिनोत्तमानाम् ।
भुवनेषु विभूतये प्रवृत्ता,
वपुषा प्राञ्जलिरस्मि वन्दमानः ।।१२।।

विगतायुध-विक्रिया-विभूषाः,
प्रकृतिस्थाः कृतिनां जिनेश्वराणाम् ।
प्रतिमाः प्रतिमा-गृहेषु कान्त्याऽ-
प्रतिमाः कल्मष-शान्तयेऽभिवन्दे ।।१३।।

कथयन्ति कषाय-मुक्ति-लक्ष्मीं,
परया शान्ततया भवान्तकानाम् ।
प्रणमाम्यभिरूप-मूर्तिमन्ति,
प्रतिरूपाणि विशुद्धये जिनानाम् ।।१४।।
यदिदं मम सिद्धभक्ति-नीतं,
सुकृतं दुष्कृत-वर्त्म-रोधि तेन ।
पटुना जिनधर्म एव भक्ति-र्भव-
ताज्जन्मनि जन्मनि स्थिरा मे ।।१५।।
अर्हतां सर्वभावानां दर्शन-ज्ञान-सम्पदाम् ।
कीर्तयिष्यामि चैत्यानि यथाबुद्धि विशुद्धये ।।१६।।
श्रीमद्-भवन-वासस्था स्वयं भासुर-मूर्तयः ।
वन्दिता नो विधेयासुः प्रतिमाः परमां गतिम् ।।१७।।
यावन्ति सन्ति लोकेऽस्मिन्नकृतानि कृतानि च ।
तानि सर्वाणि चैत्यानि वन्दे भूयांसि भूतये ।।१८।।
ये व्यन्तर-विमानेषु स्थेयांसः प्रतिमागृहाः ।
ते च संख्या-मतिक्रान्ताः सन्तु नो दोष-विच्छिदे ।।१९।।
ज्योतिषा-मथ लोकस्य भूतयेऽद्भुत-सम्पदः ।
गृहाः स्वयम्भुवः सन्ति विमानेषु नमामि तान् ।।२०।।
वन्दे सुर-किरीटाग्र-मणिच्छायाभिषेचनम् ।
याः क्रमेणैव सेवन्ते तदर्च्चाः सिद्धि-लब्धये ।।२१।।
इति स्तुति पथातीत-श्रीभृता-मर्हतां मम ।
चैत्यानामस्तु संकीर्तिः सर्वास्त्रव-निरोधिनी ।।२२।।

अर्हन्-महा-नदस्य-त्रिभुवन-
भव्यजन-तीर्थ-यात्रिक-दुरित-
प्रक्षालनैक-कारणमति-लौकिक-
कुहक-तीर्थ-मुत्तम-तीर्थम् ।।२३।।

लोकालोक-सुतत्त्व-प्रत्यव-
बोधन-समर्थ-दिव्यज्ञान-
प्रत्यह-वहत्प्रवाहं व्रत-
शीलामल-विशाल-कूल-द्वितयम् ।।२४।।

शुक्लध्यान-स्तिमित स्थित-
राज-द्राजहंस-राजित मसकृत् ।
स्वाध्याय-मन्द्रघोषं नाना-गुण-
समिति-गुप्ति-सिकता-सुभगम् ।।२५।।

क्षान्त्यावर्त-सहस्त्रं सर्व-दया-
विकच-कुसुम-विलसल्लतिकम् ।
दुःसह-परीषहाख्य-द्रुततर-
रंग-त्तरंग-भङ्गुर-निकरम् ।।२६।।

व्यपगत-कषाय-फेनं राग-
द्वेषादि-दोष-शैवल-रहितम् ।
अत्यस्त-मोह-कर्दम-मतिदूर-
निरस्त-मरण-मकर-प्रकरम् ।।२७।।

ऋषि-वृषभ-स्तुति-मन्द्रोद्रेकित-
निर्घोष-विविध-विहग-ध्वानम् ।

विविध-तपोनिधि-पुलिनं सास्त्रव-
संवरण-निर्जरा-निःस्त्रवणम् ।।२८।।
गणधर-चक्र-धरेन्द्र-प्रभृति-
महा-भव्य-पुण्डरीकैः पुरुषैः ।
बहुभिः स्नातं भक्त्या कलि-
कलुष-मलापकर्षणार्थ-ममेयम् ।।२९।।
अवतीर्णवतः स्नातुं ममापि,
दुस्तर-समस्त-दुरितं दूरम् ।
व्यपहरतु परम-पावन-मनन्य,
जय्य-स्वभाव-भाव-गम्भीरम् ।।३०।।

अताम्र-नयनोत्पलं सकल-कोप-वह्ने-र्जयात्,
कटाक्ष-शर-मोक्ष-हीन-मविकारतोद्रेकतः ।
विषाद-मद-हानितः प्रहसितायमानं सदा,
मुखं कथयतीव ते हृदय-शुद्धि-मात्यन्तिकीम् ।।३१।।
निराभरण-भासुरं विगत-राग-वेगोदयात्,
निरम्बर-मनोहरं प्रकृति-रूप-निर्दोषतः ।
निरायुध-सुनिर्भयं विगत-हिंस्य-हिंसा-क्रमात्,
निरामिष-सुतृप्ति-मद्-विविध-वेदनानां क्षयात् ।।३२।।
मितस्थिति-नखांगजं गत-रजोमल-स्पर्शनम्,
नवाम्बुरुह-चन्दन-प्रतिम-दिव्य-गन्धोदयम् ।
रवीन्दु-कुलिशादि-दिव्य-बहु लक्षणालङ्कृतम्,
दिवाकर-सहस्र-भासुर-मपीक्षणानां प्रियम् ।।३३।।

हितार्थ-परिपन्थिभिः प्रबल-राग-मोहादिभिः,
कलंकितमना जनो यदभिवीक्ष्यशो शुद्ध्यते ।
सदाभिमुख-मेव यज्जगति पश्यतां सर्वतः,
शरद्-विमल-चन्द्र-मण्डल-मिवोत्थितं दृश्यते ।।३४।।
तदेत-दमरेश्वर-प्रचल-मौलि-माला-मणि,
स्फुरत्-किरण-चुम्बनीय-चरणारविन्द-द्वयम् ।
पुनातु भगवज्जिनेन्द्र तव रूप-मन्धीकृतम्,
जगत्-सकल-मन्यतीर्थ-गुरु-रूप-दोषोदयैः ।।३५।।

क्षेपक श्लोकाः

मानस्तम्भाः सरांसि प्रविमलजल, सत्खातिका पुष्पवाटी ।
प्राकारो नाट्यशाला द्वितयमुपवनं, वेदिकांत र्ध्वजाद्याः ।।
शालः कल्पद्रुमाणां सुपरिवृत्तवनं, स्तूपहर्म्यावली च ।
प्राकारः स्फाटिकोन्तनृसुरमुनिसभा, पीठिकाग्रे स्वयंभूः।।१।।
वर्षेषु वर्षान्तर पर्वतेषु, नन्दीश्वरे यानि च मंदरेषु,
यावन्ति चैत्यायतनानि लोके, सर्वाणि वन्दे जिनपुंगवानाम्।।२।।

अवनितलगतानां कृत्रिमाऽकृत्रिमाणाम्,
वनभवनगतानां दिव्य वैमानिकानाम् ।
इह मनुज-कृतानां देव राजार्चितानाम्,
जिनवर-निलयानां भावतोऽहं स्मरामि ।।३।।

जम्बू-धातकि-पुष्करार्ध-वसुधा-क्षेत्र-त्रये ये भवा ।
श्चंद्राम्भोज शिखण्डि कण्ठ-कनक-प्रावृंघनाभाजिनाः।
सम्यग्ज्ञान-चरित्र-लक्षणधरा दग्धाष्ट-कर्मेन्धनाः ।
भूतानागत-वर्तमान-समये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ।।४।।

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजतगिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे,
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकर-रुचके कुण्डले मानुषांके।
इष्वाकारेऽञ्जनाद्रौ दधिमुखशिखरे व्यंतरे स्वर्गलोके,
ज्योतिर्लोकेऽभिवंदे भुवनमहितले,यानि चैत्यालयानि ।।५।।

देवा सुरेन्द्र नरनागसमर्चितेभ्यः,
पापप्रणाशकर भव्य मनोहरेभ्यः।
घंटाध्वजादि परिवार विभूषितेभ्यो,
नित्यं नमो जगति सर्व जिनालयेभ्यः ।।६।।

कायोत्सर्ग

इच्छामि भंते ! चेइय-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं । अहलोय-तिरियलोय-उड्ढलोयम्मि, किट्टिमाकिट्टिमाणि जाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि तीसु वि लोएसु भवणवासिय-वाणविंतर-जोइसिय-कप्पवासियत्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण ण्हाणेण, दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण अक्खेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण दीवेण, दिव्वेण धूवेण, दिव्वेण वासेण, णिच्चकालं अंचंति, पुज्जंति, वंदंति, णमंसंति अहमवि इह संतो तत्थ संताइं सया णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-सम्पत्ति होउ-मज्झं ।

।। इति चैत्य भक्तिः ।।

श्री श्रुतभक्ति

स्तोष्ये संज्ञानानि परोक्ष-प्रत्यक्ष-भेद-भिन्नानि ।
लोकालोक-विलोकन-लोलित-सल्लोक-लोचनानि सदा ।।१।।

मतिज्ञान की स्तुति

अभिमुख-नियमित-बोधन-
माभिनिबोधिक-मनिन्द्रियेन्द्रियजम् ।
बह्वाद्यवग्रहादिक-कृत-
षट्त्रिंशत्-त्रिशत-भेदम् ।।२।।

विविधर्द्धि-बुद्धि-कोष्ठ-स्फुट-
बीज-पदानुसारि-बुद्ध्यधिकम् ।
संभिन्न-श्रोतृ-तया,
सार्धं श्रुतभाजनं वन्दे ।।३।।

श्रुतज्ञान की स्तुति

श्रुतमपि-जिनवर-विहितं गणधर-रचितं द्व्यनेक-भेदस्थम् ।
अंगांगबाह्य-भावित-मनन्त-विषयं नमस्यामि ।।४।।

भावश्रुतज्ञान

पर्यायाक्षर-पद-संघात-प्रतिपत्तिकानुयोग-विधीन् ।
प्राभृतक-प्राभृतकं प्राभृतकं वस्तु-पूर्वं च ।।५।।

तेषां समासतोऽपि च विंशति-भेदान् समश्नुवानं तत् ।
वन्दे द्वादशधोक्तं गम्भीर-वर-शास्त्र-पद्धत्या ।।६।।

श्रुतज्ञान के बारह भेद

आचारं सूत्रकृतं स्थानं समवाय-नामधेयं च।
व्याख्या-प्रज्ञप्तिं च ज्ञातृकथोपासकाध्ययने ।।७।।

वन्देऽन्तकृद्दश-मनुत्तरोपपादिकदशं दशावस्थम्।
प्रश्नव्याकरणं हि विपाकसूत्रं च विनमामि ।।८।।

दृष्टिवाद (बारहवें) अंग की स्तुति

परिकर्म च सूत्रं च स्तौमि प्रथमानुयोग-पूर्वगते।
सार्द्धं चूलिकयापि च पंचविधं दृष्टिवादं च ।।९।।

पूर्वगतं तु चतुर्दशधोदित-मुत्पादपूर्व-माद्यमहम्।
आग्रायणीय-मीडे पुरु-वीर्यानुप्रवादं च ।।१०।।

संततमहमभिवन्दे तथास्ति-नास्ति प्रवादपूर्वं च।
ज्ञानप्रवाद-सत्यप्रवाद-मात्मप्रवादं च ।।११।।

कर्मप्रवाद-मीडेऽथ प्रत्याख्यान-नामधेयं च।
दशमं विद्याधारं पृथुविद्यानुप्रवादं च ।।१२।।

कल्याण-नामधेयं प्राणावायं क्रियाविशालं च।
अथ लोकबिंदुसारं वन्दे लोकाग्रसारपदम् ।।१३।।

दश च चतुर्दश चाष्टावष्टादश च द्वयो-र्द्विषट्कं च।
षोडश च विंशतिं च त्रिंशतमपि पञ्चदश च तथा ।।१४।।

वस्तूनि दश दशान्येष्वनुपूर्वं भाषितानि पूर्वाणाम्।
प्रतिवस्तु प्राभृतकानि विंशतिं विंशतिं नौमि ।।१५।।

आग्रायणीय पूर्व के १४ अधिकारों के नाम

पूर्वान्तं ह्यपरान्तं ध्रुव-मध्रुव-च्यवनलब्धि-नामानि ।
अध्रुव-सम्प्रणिधिं चाप्यर्थं भौमावयाद्यं च ।।१६।।

सर्वार्थ-कल्पनीयं ज्ञानमतीतं त्वनागतं कालम् ।
सिद्धि-मुपाध्यं च तथा चतुर्दश-वस्तूनि द्वितीयस्य ।।१७।।

कर्म प्रकृति के २४ अनुयोगों के नाम

पञ्चमवस्तु-चतुर्थ-प्राभृतकस्यानुयोग-नामानि ।
कृतिवेदने तथैव स्पर्शन-कर्मप्रकृतिमेव ।।१८।।

बन्धन-निबन्धन-प्रक्रमानुपक्रम-मथाभ्युदय-मोक्षौ ।
सङ्क्रमलेश्ये च तथा लेश्यायाः कर्म-परिणामौ ।।१९।।

सात-मसातं दीर्घं ह्रस्वं भवधारणीय-संज्ञं च ।
पुरुपुद्गलात्मनाम च निधत्त-मनिधत्त-मभिनौमि ।।२०।।

सनिकाचित-मनिकाचित-मथ-कर्मस्थितिकपश्चिमस्कंधौ ।
अल्पबहुत्वं च यजे तद्द्वाराणां चतुर्विंशम् ।।२१।।

द्वादशांग श्रुतज्ञान की पद संख्या

कोटीनां द्वादशशत-मष्टापञ्चाशतं सहस्राणाम् ।
लक्षत्र्यशीति-मेव च पञ्च च वन्दे श्रुतपदानि ।।२२।।

एक एक पद के अक्षरों की संख्या

षोडशशतं चतुस्त्रिंशत् कोटीनां त्र्यशीति-लक्षाणि ।
शतसंख्याष्टा सप्तति-मष्टाशीतिं च पद-वर्णान् ।।२३।।

अंगबाह्य के भेदों की स्तुति

सामायिकं चतुर्विंशति--स्तवं वन्दना प्रतिक्रमणम् ।
वैनयिकं कृतिकर्म च पृथु-दशवैकालिकं च तथा ।।२४।।

वर-मुत्तराध्ययन-मपि कल्पव्यवहार-मेव-मभिवन्दे ।
कल्पाकल्पं स्तौमि महाकल्पं पुण्डरीकं च ।।२५।।

परिपाट्या प्रणिपतितोऽस्म्यहं महापुण्डरीकनामैव ।
निपुणान्यशीतिकं च प्रकीर्णकान्यंग-बाह्यानि ।।२६।।

अवधिज्ञान की स्तुति

पुद्गल-मर्यादोक्तं प्रत्यक्षं सप्रभेद-मवधिं च ।
देशावधि-परमावधि-सर्वावधि-भेद-मभिवन्दे।।२७।।

मनःपर्ययज्ञान की स्तुति

परमनसि स्थितमर्थं मनसा परिविद्य मन्त्रि-महित-गुणम् ।
ऋजु-विपुलमति-विकल्पं स्तौमि मनःपर्ययज्ञानम् ।।२८।।

केवलज्ञान की स्तुति

क्षायिक-मनन्त-मेकं त्रिकाल-सर्वार्थ-युगपदवभासम् ।
सकल-सुख-धाम सततं वन्देऽहं केवलज्ञानम् ।।२९।।

स्तुति के फल की प्रार्थना

एवमभिष्टुवतो मे ज्ञानानि समस्त-लोक-चक्षूंषि ।
लघु भवताज्ज्ञानर्द्धि--र्ज्ञानफलं सौख्य-मच्यवनम् ।।३०।।

इच्छामि भंते ! सुदभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, अंगोवंग-पइण्णए पाहुडय-परियम्म-सुत्त-पढमाणिओग-पुव्वगय-चूलिया चेव सुत्तत्थय-थुइ-धम्मकहाइयं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

श्री चारित्र भक्ति

येनेन्द्रान् भुवन-त्रयस्य विलसत्-केयूर-हारांगदान्,
भास्वन्-मौलि-मणिप्रभा-प्रविसरोत्-तुंगोत्तमांगान्नतान् ।
स्वेषां पाद-पयोरुहेषु मुनय-श्चक्रुः प्रकामं सदा,
वन्दे पञ्चतयं तमद्य निगदन्-नाचार-मभ्यर्चितम् ।।१।।

ज्ञानाचार का स्वरूप

अर्थ-व्यञ्जन-तद्द्वया-विकलता-कालोपधा-प्रश्रयाः,
स्वाचार्याद्यनपह्नवो बहु-मति-श्चेत्यष्टधा व्याहृतम् ।
श्रीमज्ज्ञाति-कुलेन्दुना भगवता तीर्थस्य कर्त्राऽञ्जसा,
ज्ञानाचार-महं त्रिधा प्रणिपताभ्युद्धूतये कर्मणाम् ।।२।।

दर्शनाचार का स्वरूप

शंका-दृष्टि-विमोह-काङ्क्षणविधि-व्यावृत्ति-सन्नद्धताम्,
वात्सल्यं विचिकित्सना-दुपरतिं धर्मोपबृंह-क्रियाम् ।
शक्त्या शासन-दीपनं हित-पथाद् भ्रष्टस्य संस्थापनम्,
वन्दे दर्शन-गोचरं सुचरितं मूर्ध्ना नमन्नादरात् ।।३।।

तप आचार (बाह्य तप) का स्वरूप

एकान्ते शयनोपवेशन-कृतिः संतापनं तानवम्,
संख्या-वृत्ति-निबन्धना-मनशनं विष्वाण-मर्द्धोदरम्।
त्यागं चेन्द्रिय-दन्तिनो मदयतः स्वादो रसस्यानिशम्,
षोढ़ा बाह्य-महं स्तुवे शिव गति-प्राप्त्यभ्युपायं तपः ।।४।।

अन्तरंग तपों का वर्णन

स्वाध्यायः शुभकर्मणश्च्युतवतः संप्रत्यवस्थापनम्,
ध्यानं व्यापृतिरामयाविनि गुरौ, वृद्धे च बाले यतौ।
कायोत्सर्जन सत्क्रिया विनय-इत्येवं तपः षड्विधं,
वंदेऽभ्यन्तरमन्तरंग बलवद्विद्वेषि विध्वंसनम्।।५।।

वीर्याचार का वर्णन

सम्यग्ज्ञान विलोचनस्य दधतः, श्रद्धानमर्हन्मते,
वीर्यस्याविनिगूहनेन तपसि, स्वस्य प्रयत्नाद्यतेः।
या वृत्तिस्तरणीव नौरविवरा, लघ्वी भवोदन्वतो,
वीर्याचारमहं तमूर्जितगुणं, वन्दे सतामर्चितम्।।६।।

चारित्राचार का वर्णन

तिस्रः सत्तमगुप्तयस्तनुमनो, भाषानिमित्तोदयाः,
पञ्चेर्यादि-समाश्रयाः समितयः पञ्चव्रतानीत्यपि।
चारित्रोपहितं त्रयोदशतयं, पूर्वं न दृष्टं परै-
राचारं परमेष्ठिनो जिनपते, वीरं नमामो वयम्।।७।।

पञ्चाचार पालने वालों की वन्दना

आचारं सह-पञ्चभेदमुदितं, तीर्थं परंमंगलम्,
निर्ग्रन्थानपि सच्चरित्रमहतो, वंदे समग्रान्यतीन् ।
आत्माधीन सुखोदया मनुपमां, लक्ष्मीमविध्वंसिनीम्,
इच्छन्केवलदर्शनावगमन, प्राज्य प्रकाशोज्वलाम् ।।८।।

चारित्र पालन में दोषों की आलोचना

अज्ञानाद्यदवीवृतं नियमिनोऽवर्तिष्यहं चान्यथा,
तस्मिन्नर्जितमस्यति प्रतिनवं, चैनो निराकुर्वति ।
वृत्ते सप्ततयीं निधिं सुतपसामृद्धिं नयत्यद्भुतं,
तन्मिथ्या गुरुदुष्कृतं भवतु मे, स्वंनिंदितो निंदितम् ।।९।।

चारित्र धारण करने का उपदेश

संसार-व्यसनाहतिप्रचलिता, नित्योदय प्रार्थिनः,
प्रत्यासन्न विमुक्तयः सुमतयः, शान्तैनसः प्राणिनः ।
मोक्षस्यैव कृतं विशालमतुलं, सोपानमुच्चैस्तराम्,
आरोहन्तु चरित्र-मुत्तम-मिदं, जैनेन्द्र-मोजस्विनः ।।१०।।

इच्छामि भंते ! चारित्त भत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्स आलोचउं सम्मणाणजोयस्स सम्मत्ताहिट्ठियस्स, सव्वपहाणस्स, णिव्वाणमग्गस्स, कम्मणिज्जरफलस्स, खमाहारस्स, पञ्चमहव्वयसंपण्णस्स, तिगुत्तिगुत्तस्स, पञ्चसमिदिजुत्तस्स, णाणज्झाण साहणस्स, समया इव पवेसयस्स, सम्मचारित्तस्स णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं, समाहिमरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

।। इति श्री चारित्रभक्ति ।।

श्री योगि भक्ति

दुबई छन्द

कैसे साधु वन का आश्रय लेते हैं ?

जातिजरोरुरोग मरणातुर, शोक सहस्रदीपिताः,
दुःसहनरकपतन सन्त्रस्तधियः प्रतिबुद्धचेतसः ।
जीवितमंबु बिंदुचपलं, तडिदभ्रसमा विभूतयः,
सकलमिदंविचिन्त्यमुनयः, प्रशमायवनान्तमाश्रिताः ।।१।।

भद्रिका छन्द

वन में जाकर साधु क्या करता है ?

व्रतसमिति गुप्ति संयुताः,
शमसुखमाधाय मनसि वीतमोहाः ।
ध्यानाध्ययनवशंगताः,
विशुद्धये कर्मणां तपश्चरन्ति ।।२।।

दुबई छन्द

ग्रीष्म ऋतु में मुनिराज क्या करते हैं ?

दिनकर किरणनिकरसंतप्त, शिलानिचयेषु निष्पृहाः,
मलपटलावलिप्त तनवः, शिथिली कृतकर्म बंधनाः ।
व्यपगतमदनदर्प रतिदोष, कषाय विरक्त मत्सराः,
गिरिशिखरेषुचंडकिरणाभि, मुखस्थितयो दिगम्बराः ।।३।।

भद्रिका छन्द

मुनिराज भयंकर आतप की वेदना कैसे सहते हैं ?

सज्ज्ञानामृतपायिभिः, क्षान्तिपयः सिञ्च्यमानपुण्यकायैः ।
धृतसंतोषच्छत्रकैः, तापस्तीव्रोऽपि सह्यते मुनीन्द्रैः ।।४।।

वर्षा ऋतु में मुनिराज क्या करते हैं ?

शिखिगल कज्जलालिमलिनै, र्विबुधाधिपचाप चित्रितैः,
भीमरवैर्विसृष्टचण्डा शनि, शीतल वायु वृष्टिभिः ।
गगनतलं विलोक्य जलदैः, स्थगितं सहसा तपोधनाः,
पुनरपि तरुतलेषु विषमासु, निशासु विशंकमासते ।।५।।

जलधाराशरताडिता,न चलन्ति चरित्रतः सदा नृसिंहाः ।
संसार दुःख भीरवः, परीषहा राति-घातिनःप्रवीराः ।।६।।

दुबई छन्द

शीतकाल में वे मुनिराज क्या करते हैं ?

अविरतबहल तुहिनकण, वारिभिरंघ्रिपपत्र पातनै-
रनवरतमुक्तसात्काररवैः, परुषैरथानिलैः शोषितगात्रयष्टयः।
इह श्रमणा धृतिकंबलावृताः शिशिरनिशां,
तुषार विषमां गमयन्ति, चतुःपथे स्थिताः ।।७।।

स्तुति फल की याचना

इति योगत्रयधारिणः, सकलतपशालिनःप्रवृद्धपुण्यकायाः ।
परमानन्दसुखैषिणः, समाधिमग्र्यं दिशंतु नो भदन्ताः ।।८।।

क्षेपकश्लोकानि:

योगीश्वरान् जिनान्सर्वान्योगनिर्धूत कल्मषान् ।
योगैस्त्रिभिरहं वंदे, योगस्कंध प्रतिष्ठितान् ।।१।।
प्रावृट्कालेसविद्युत्प्रपतितसलिले वृक्षमूलाधिवासाः ।
हेमंते रात्रिमध्ये, प्रतिविगतभयाकाष्ठवत् त्यक्तदेहाः ।।१।।

ग्रीष्मे सूर्यांसुतप्ता, गिरिशिखरगताः स्थानकूटान्तरस्थाः ।
ते मे धर्मं प्रदद्युर्मुनिगणवृषभा मोक्षनिःश्रेणिभूताः ।।२।।
गिम्हे गिरिसिहरत्था, वरिसायालेरुक्खमूलरयणीसु ।
सिसिरे वारिसयणा, ते साहू वंदिमो णिच्चं ।।३।।
गिरिकंदरदुर्गेषु, ये वसंति दिगंबराः ।
पाणिपात्र पुटाहारास्ते यांति परमां गतिम् ।।४।।

कायोत्सर्गः

इच्छामि भंते ! योगि-भत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं अड्ढाइज्जदीवदोसमुद्देसु, पण्णारस-कम्मभूमिसु, आदावणरुक्खमूलअब्भोवासठाणमोण-विरासणेक्कपास कुक्कुडासण चउछपक्खखवणादि जोगजुत्ताणं, सव्वसाहूणं, णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

।। इति श्रीयोगिभक्तिः ।।

आचार्य भक्ति

स्कन्दच्छन्दः

सिद्ध-गुण-स्तुति निरता, नुद्धूत-रुषाग्नि-जालबहुलविशेषान्।
गुप्तिभिरभिसंपूर्णान् मुक्ति युतःसत्यवचनलक्षितभावान् ।।
मुनिमाहात्म्य विशेषान्, जिनशासनसत्प्रदीपभासुरमूर्तीन् ।
सिद्धिं प्रपित्सुमनसो, बद्धरजोविपुलमूलघातनकुशलान् ।।

गुणमणिविरचितवपुषः,षड्द्रव्यविनिश्चितस्यधातृन्सततम् ।
रहितप्रमादचर्यान्, दर्शनशुद्धान् गणस्य संतुष्टि करान् ।।
मोहच्छिदुग्रतपसः, प्रशस्तपरिशुद्धहृदयशोभन व्यवहारान् ।
प्रासुकनिलया ननघानाशा विध्वंसिचेतसो हतकुपथान् ।।
धारितविलसन्मुण्डान्वर्जितबहु दण्डपिण्डमण्डल निकरान् ।
सकलपरीषहजयिनः, क्रियाभिरनिशंप्रमादतः परिरहितान् ।।
अचलान्व्यपेतनिद्रान्, स्थानयुतान्कष्टदुष्टलेश्या हीनान् ।
विधिनानाश्रितवासा, नलिप्तदेहान्विनिर्जितेन्द्रियकरिणः ।।
अतुलानुत्कुटिकासान्विविक्त चित्तानखंडितस्वाध्यायान् ।
दक्षिणभावसमग्रान्, व्यपगतमदरागलोभशठमात्सर्यान् ।।
भिन्नार्तरौद्रपक्षान्संभावित, धर्मशुक्लनिर्मल हृदयान् ।
नित्यंपिनद्धकुगतीन्,पुण्यान्गण्योदयान्विलीनगारवचर्यान् ।।

स्कन्दच्छन्दः

तरुमूलयोगयुक्ता,
नवकाशा तापयोगराग सनाथान् ।
बहुजन हितकर चर्या-
नभयाननघान्महानुभाव विधानान् ।।९।।

ईदृशगुणसंपन्नान्,
युष्मान्भक्त्या विशालया स्थिरयोगान् ।
विधिनानारत मग्र्यान्-
मुकुलीकृतहस्तकमल शोभित शिरसा ।।१०।।

अभिनौमि सकलकलुष,
प्रभवोदय जन्म जरामरण बंधन मुक्तान् ।
शिवमचल मनघमक्षय-
मव्याहत मुक्ति सौख्यमस्त्विति सततम् ।।११।।

क्षेपकश्लोकानि:

श्रुतजलधिपारगेभ्यः, स्वपरमतविभावनापटुमतिभ्यः ।
सुचरित तपोनिधिभ्यो, नमो गुरुभ्यो गुणगुरुभ्यः ।।
छत्तीसगुणसमग्गे, पंचविहाचारकरण संदरिसे ।
सिस्साणुग्गहकुसले, धम्माइरिये सदा वंदे ।।

गुरुभत्ति संजमेण य, तरंति संसारसायरं घोरं ।
छिण्णंति अट्ठकम्मं, जम्मणमरणं ण पावेंति ।।

ये नित्यं व्रतमंत्रहोमनिरता, ध्यानाग्नि होत्राकुलाः ।
षट्कर्माभिरतास्तपोधन धनाः, साधुक्रियाः साधवः ।।

शीलप्रावरणा गुणप्रहरणाश्चंद्रार्क तेजोऽधिकाः ।
मोक्षद्वार कपाट पाटनभटाः प्रीणंतु मां साधवः ।।

गुरवः पान्तु नो नित्यं ज्ञानदर्शन नायकाः ।
चारित्रार्णव गंभीरा, मोक्षमार्गोपदेशकाः ।।

प्राज्ञः प्राप्तसमस्त शास्त्र हृदय, प्रव्यक्तलोकस्थितिः ।
प्रास्ताशः प्रतिभापर प्रशमवान् प्रागेव दृष्टोत्तरः ।।

प्रायः प्रश्नसहः प्रभुः परमनो, हारी परानिन्दया ।
ब्रूयाद्धर्मकथां गणी गुणनिधिः, प्रस्पष्ट मिष्टाक्षरः ।।

श्रुतमविकलं शुद्धा वृत्तिः परप्रतिबोधने ।
परिणतिरुरुद्योगो मार्ग प्रवर्तन सद्विधौ ।।

बुधनुतिरनुत्सेको, लोकज्ञता मृदुताऽस्पृहा ।
यतिपतिगुणा यस्मिन्नन्ये च सोऽस्तु गुरुः सताम् ।।

विशुद्धवंशः परमाभिरूपो जितेन्द्रियोधर्मकथाप्रसक्तः ।
सुखर्द्धिलाभेष्वविसक्तचित्तो बुधैः सदाचार्य इति प्रशस्तः।।

विजितमदनकेतुं निर्मलं निर्विकारं,
रहितसकलसंगं संयमासक्त चित्तं ।
सुनयनिपुणभावं ज्ञाततत्वप्रपञ्चम्,
जननमरणभीतं सद्गुरु नौमि नित्यम् ।।

सम्यग्दर्शन मूलं, ज्ञानस्कंधं चरित्रशाखाढ्यम् ।
मुनिगणविहगाकीर्ण, माचार्य महाद्रुमम् वन्दे ।।

कायोत्सर्गः

इच्छामि भंते ! आइरियभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण, सम्मदंमण सम्मचरित्तजुत्ताणं पंचविहाचाराणं आइरियाणं, आयारादि सुदणाणोवदेसयाणं, उवज्झायाणं, तिरयणगुणपालणरयाणं, सव्वसाहूणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-सम्पत्ति होउ-मज्झं ।

।। इत्याचार्यभक्तिः ।।

श्री पञ्च गुरु भक्ति

श्रीमदमरेन्द्र-मुकुट-प्रघटित-
मणि-किरण-वारि-धाराभिः ।
प्रक्षालित-पद-युगलान्,
प्रणमामि जिनेश्वरान् भक्त्या ।।१।।

अष्टगुणैः समुपेतान्,
प्रणष्ट-दुष्टाष्ट-कर्मरिपु-समितीन् ।
सिद्धान् सतत-मनन्तान्-
नमस्करो मीष्ट तुष्टि संसिद्ध्यै ।।२।।

साचार-श्रुत-जलधीन्-
प्रतीर्य शुद्धोरुचरण-निरतानाम् ।
आचार्याणां पदयुग-
कमलानि दधे शिरसि मेऽहम् ।।३।।

मिथ्या-वादि-मद्रोग्र-ध्वान्त-प्रध्वन्सि-वचन-संदर्भान् ।
उपदेशकान् प्रपद्ये मम दुरितारि-प्रणाशाय ।।४।।

सम्यग्दर्शन-दीप-प्रकाशका-मेय-बोध-सम्भूताः ।
भूरि-चरित्र-पताकास्ते साधु-गणास्तु मां पान्तु ।।५।।

जिन-सिद्ध-सूरि-देशक-साधु-वरानमल गुण गणोपेतान् ।
पञ्चनमस्कार-पदै-स्त्रि-सन्ध्य-मभिनौमि मोक्ष-लाभाय ।।६।।

एषः पञ्चनमस्कारः, सर्वपापप्रणाशनः ।
मंगलानां च सर्वेषां, प्रथमं मंगलं भवेत् ।।७।।

अर्हत्सिद्धाचार्यो-पाध्यायाः सर्वसाधवः ।
कुर्वन्तु मंगलाः सर्वे, निर्वाण परमश्रियम् ।।८।।

सर्वान् जिनेन्द्र चंद्रान्, सिद्धानाचार्य पाठकान् साधून् ।
रत्नत्रयं च वंदे, रत्नत्रयसिद्धये भक्त्या ।।९।।

पांतु श्रीपादपद्मानि, पञ्चानां परमेष्ठिनां ।
लालितानि सुराधीश, चूडामणि मरीचिभिः ।।१०।।

प्रातिहार्यैर्जिनान् सिद्धान्, गुणैः सूरीन् स्वमातृभिः ।
पाठकान् विनयैः साधून्, योगांगैरष्टभिः स्तुवे ।।११।।

कायोत्सर्गः

इच्छामि भंते ! पंचमहागुरु-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, अट्ठ-महा-पाडिहेर-संजुत्ताणं, अरहंताणं, अट्ठ-गुण-सम्पण्णाणं, उड्ढलोय मत्थयम्मि पइट्ठियाणं, सिद्धाणं, अट्ठ-पवयण-मउ संजुत्ताणं आइरियाणं, आयारादि सुदणाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं, ति-रयण-गुण पालणरदाणं सव्वसाहूणं, सया णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-सम्पत्ति होउ मज्झं ।

।। इति पञ्च गुरु भक्तिः ।।

श्री शांति भक्ति

न स्नेहाच्छरणं प्रयान्ति भगवन् ! पादद्वयं ते प्रजाः,
हेतुस्तत्र विचित्र दुःख निचयः संसार घोरार्णवः ।
अत्यन्त स्फुरदुग्र रश्मि निकर व्याकीर्ण भूमण्डलो,
ग्रैष्मः कारयतीन्दु पाद सलिल च्छायानुरागं रविः ।।१।।

प्रणाम करने का ऐहिक फल

क्रुद्धाशीर्विष दष्ट दुर्जय विष ज्वालावली विक्रमो,
विद्या भेषज मन्त्र तोय हवनै र्याति प्रशान्ति यथा ।
तद् वत्ते चरणारुणाम्बुज युग स्तोत्रोन्मुखानां नृणाम्,
विघ्नाःकायविनायकाश्च सहसा शाम्यन्त्यहो विस्मयः ।।२।।

प्रणाम करने का फल

सन्तप्तोत्तम काञ्चन क्षितिधर श्री स्पर्द्धि गौरद्युते,
पुंसां त्वच्चरणप्रणाम करणात्पीडाः प्रयान्तिक्षयं ।
उद्यद्भास्कर विस्फुरत्कर शतव्याघात निष्कासिता,
नाना देहि विलोचन-द्युतिहरा शीघ्रं यथा शर्वरी ।।३।।

मुक्ति का कारण जिन स्तुति

त्रैलोक्येश्वर भंग लब्ध विजयादत्यन्त रौद्रात्मकान्,
नाना जन्म शतान्तरेषु पुरतो जीवस्य संसारिणः ।
को वा प्रस्खलतीह केन विधिना कालोग्र दावानलान्,
न स्याच्चेत्तव पाद पद्म युगल स्तुत्यापगा वारणम् ।।४।।

स्तुति से असाध्य रोगों का नाश

लोकालोक निरन्तर प्रविततत् ज्ञानैक मूर्त्ते विभो !
नाना रत्न पिनद्ध दण्ड रुचिर श्वेतातपत्रत्रय ।
त्वत्पाद द्वय पूत गीत रवतः शीघ्रं द्रवन्त्यामया,
दर्पाध्मातमृगेन्द्रभीम निनदाद् वन्या यथा कुञ्जराः ।।५।।

स्तुति से अनन्त सुख

दिव्य स्त्री नयनाभिराम विपुल श्री मेरु चूडामणे,
भास्वद् बाल दिवाकर-द्युतिहर प्राणीष्ट भामण्डल ।
अव्याबाध मचिन्त्यसार मतुलं त्यक्तोपमं शाश्वतम्,
सौख्यं त्वच्चरणारविन्द युगल स्तुत्यैव सम्प्राप्यते ।।६।।

भगवान् के चरण-कमल प्रसाद से पापों का नाश

यावन्नोदयते प्रभा परिकरः श्रीभास्करो भासयंस्,
तावद् धारयतीह पंकज वनं निद्रातिभार श्रमम् ।
यावत्त्वच्चरणद्वयस्य भगवन् ! न स्यात् प्रसादोदय-
स्तावज्जीव निकाय एष वहति प्रायेण पापं महत् ।।७।।

स्तुति फल याचना

शान्ति शान्ति जिनेन्द्र शान्त,
मनसस्त्वत्पाद पद्माश्रयात् ।
संप्राप्ताः पृथिवी तलेषु बहवः,
शान्त्यर्थिनः प्राणिनः ।।

कारुण्यान् मम भाक्तिकस्य च विभो !
दृष्टिं प्रसन्नां कुरु ।
त्वत्पादद्वय दैवतस्य गदतः,
शान्त्यष्टकं भक्तितः ॥८॥

शान्ति जिनं शशि निर्मल वक्त्रं,
शीलगुण व्रत संयम पात्रम् ।
अष्टशतार्चित लक्षण गात्रं,
नौमि जिनोत्तम मम्बुज नेत्रम् ॥९॥

पञ्चम मीप्सित-चक्रधराणां,
पूजित मिन्द्र-नरेन्द्र-गणैश्च ।
शान्तिकरं गण-शान्ति-मभीप्सुः,
षोडश-तीर्थकरं-प्रणमामि ॥१०॥

दिव्यतरुः सुर-पुष्प-सुवृष्टि-
र्दुन्दुभिरासन-योजन घोषौ ।
आतप-वारण-चामर-युग्मे,
यस्य विभाति च मण्डलतेजः ॥११॥

तं जगदर्चित-शान्ति-जिनेन्द्रं,
शान्तिकरं शिरसा प्रणमामि ।
सर्व गणाय तु यच्छतु शान्तिं,
मह्यमरं पठते परमां च ॥१२॥

येऽभ्यर्चिता मुकुट-कुण्डल-हार-रत्नैः,
शक्रादिभिः सुरगणैःस्तुत-पादपद्माः ।
ते मे जिनाः प्रवर-वंश-जगत्प्रदीपाः,
तीर्थंकराः सतत शान्तिकरा भवन्तु ।।१३।।

सम्पूजकानां प्रतिपालकानां,
यतीन्द्र-सामान्य-तपोधनानाम् ।
देशस्य राष्ट्रस्य पुरस्य राज्ञः,
करोतु शान्ति भगवान्-जिनेन्द्रः ।।१४।।

क्षेमं सर्वप्रजानां प्रभवतु,
बलवान् धार्मिको भूमिपालः ।
काले काले च सम्यग् वितरतु मघवा,
व्याधयो यान्तु नाशम् ।
दुर्भिक्षं चौरमारिः क्षणमपि जगतां,
मास्मभूज्जीव-लोके ।
जैनेन्द्रं धर्मचक्रं प्रभवतु सततं,
सर्व-सौख्य-प्रदायि ।।१५।।

तद् द्रव्यमव्ययमुदेतु शुभ स देशः,
संतन्यतां प्रतपतां सततं सकालः ।
भावः स नन्दतु सदा यदनुग्रहेण,
रत्नत्रयं प्रतपतीह मुमुक्षवर्गे ।।१६।।

प्रध्वस्त घाति कर्माणः, केवलज्ञान भास्कराः ।
कुर्वन्तु जगतां शान्तिं, वृषभाद्या जिनेश्वराः ।।१७।।

क्षेपक श्लोकानि:

शांति शिरोधृत जिनेश्वर शासनानां,
शान्तिः निरन्तर तपोभव भावितानां।
शान्तिः कषाय जय जृम्भित वैभवानां,
शान्तिः स्वभाव महिमानमुपागतानाम् ।।१।।

जीवन्तु संयम सुधारस पान तृप्ता,
नंदंतु शुद्ध सहसोदय सुप्रसन्नाः।
सिद्ध्यंतु सिद्धि सुख संगकृताभियोगाः,
तीव्रं तपन्तु जगतां त्रितयेऽर्हदाज्ञा ।।२।।

शान्तिः शंतनुतां समस्त जगतः, संगच्छतां धार्मिकैः।
श्रेयः श्री परिवर्धतां नयधरा, धुर्यो धरित्री पतिः ।।२।।

सद्विद्यारसमुद्गिरन्तु कवयो, नामाप्य धस्यास्तु मां।
प्रार्थ्यं वा कियदेक एव, शिवकृद्धर्मो जयत्वर्हताम् ।।३।।

इच्छामि भंते ! संतिभत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, पञ्च-महा-कल्लाण-संपण्णाणं, अट्ठमहापाडिहेर-सहियाणं, चउतीसातिसय-विसेस-संजुत्ताणं, बत्तीस-देवेंद-मणिमय मउड मत्थय महियाणं बलदेव वासुदेव चक्कहर रिसि-मुणि-जदि-अणगारोव गूढ़ाणं, थुइ-सय-सहस्स-णिलयाणं, उसहाइ-वीर-पच्छिम-मंगल-महापुरिसाणं णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाओ, सुगइमगणं, समाहि-मरणं जिण-गुण सम्पत्ति होदु मज्झं।

श्री समाधि भक्ति

स्वात्माभिमुख-संवित्ति, लक्षणं श्रुत-चक्षुषा,
पश्यन्पश्यामि देव त्वां केवलज्ञान-चक्षुषा ।।१।।

शास्त्राभ्यासो जिनपति-नुतिः, संगति सर्वदार्यैः,
सद्वृत्तानां गुणगण-कथा, दोषवादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रियहितवचो भावना चात्मतत्त्वे,
संपद्यन्तां मम भवभवे यावदेतेऽपवर्गः ।।२।।

जैनमार्गरुचिरन्यमार्ग निर्वेगता, जिनगुणस्तुतौ मतिः ।
निष्कलंक विमलोक्ति भावनाः, संभवन्तु मम जन्म-जन्मनि ।।३।।

गुरुमूले यति-निचिते-चैत्यसिद्धान्त वार्धिसद्घोषे,
मम भवतु जन्म जन्मनि, सन्यसन समन्वितं मरणम् ।
जन्मजन्मकृतं पापं, जन्मकोटि समार्जितम्,
जन्ममृत्युजरामूलं, हन्यते जिनवंदनात् ।।५।।

आबाल्याज्जिनदेवदेव ! भवतः, श्री पादयोः सेवया,
सेवासक्तविनेयकल्पलतया, कालोऽद्ययावद्गतः ।
त्वां तस्याः फलमर्थये तदधुना, प्राणप्रयाणक्षणे,
त्वन्नामप्रतिबद्धवर्णपठने, कण्ठोऽस्त्वकुण्ठो मम ।।६।।

तवपादौ मम हृदये, मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद्यावन्निर्वाण संप्राप्तिः ।।७।।

एकापि समर्थेयं, जिनभक्ति-दुर्गतिं निवारयितुम् ।
पुण्यानि च पूरयितुं, दातुं मुक्तिश्रियं कृतिनः ।।८।।

पञ्चअरिंजयणामे पञ्च, य मदि-सायरे जिणेवन्दे ।
पञ्च जसोयरणामे, पञ्चय सीमंदरे वन्दे ।।९।।

रयणत्तयं च वंदे, चउवीस जिणे च सव्वदा वंदे ।
पञ्चगुरूणां वंदे, चारणचरणं सदावंदे ।।१०।।

अर्हमित्यक्षरं ब्रह्म, वाचकं परमेष्ठिनः ।
सिद्धचक्रस्य सद्बीजं, सर्वतः प्रणिदध्महे ।।११।।

कर्माष्टकविनिर्मुक्तं, मोक्षलक्ष्मीनिकेतनम् ।
सम्यक्त्वादि गुणोपेतं, सिद्धचक्रं नमाम्यहम् ।।१२।।

आकृष्टिं सुरसंपदां विदधते, मुक्तिश्रियो वश्यताम्,
उच्चाटं विपदां चतुर्गतिभुवां, विद्वेषमात्मैनसाम् ।
स्तम्भं दुर्गमनं प्रति प्रयततो, मोहस्य सम्मोहनम्,
पायात्पञ्च नमस्क्रियाक्षरमयी, साराधना देवता ।।१३।।

अनन्तानन्त संसार, संततिच्छेद कारणम् ।
जिनराजपदाम्भोज, स्मरणं शरणं मम ।।१४।।

अन्यथा शरणं नास्ति, त्वमेव शरणं मम ।
तस्मात् कारुण्यभावेन, रक्ष-रक्ष जिनेश्वर ! ।।१५।।

नहित्राता नहित्राता, नहित्राता जगत्त्रये ।
वीतरागात्परो देवो, न भूतो न भविष्यति ।।१६।।

जिनेभक्ति र्जिनेभक्ति, र्जिनेभक्ति र्दिने दिने ।
सदामेऽस्तु सदामेऽस्तु, सदामेऽस्तु भवे भवे ।।१७।।

याचेऽहं याचेऽहं, जिन ! तव चरणारविंदयोर्भक्तिम् ।
याचेऽहं याचेऽहं, पुनरपि तामेव तामेव ।।१८।।

विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति, शाकिनी-भूत पन्नगाः ।
विषो निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे ।।१९।।

कायोत्सर्गः

इच्छामि भंते ! समाहिभत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, रयणत्तयसरूवपरमप्पज्झाणलक्खणं समाहि-भत्तीये णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइगमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ, मज्झं ।

।। इति-समाधिभक्तिः ।।

श्री निर्वाण भक्ति

आर्या छन्द

विबुधपति-खगपतिनरपतिधनदोरगभूतयक्ष पतिमहितम् ।
अतुलसुखविमलनिरुपमशिवमचलमनामयं हि संप्राप्तम् ।।१।।

कल्याणैः-संस्तोष्ये पञ्चभिरनघं त्रिलोक परमगुरुम् ।
भव्यजनतुष्टिजननैर्दुरवापैः सन्मतिं भक्त्या ।।२।।

आषाढसुसितषष्ठ्यां हस्तोत्तरमध्यमाश्रितेशशिनि ।
आयातः स्वर्गसुखं भुक्त्वापुष्पोत्तराधीशः ।।३।।

सिद्धार्थनृपतितनयो भारतवास्ये विदेहकुण्डपुरे ।
देव्यां प्रियकारिण्यां सुस्वप्नान् संप्रदर्श्य विभुः ।।४।।

चैत्रसितपक्षफाल्गुनि शशांकयोगे दिने त्रयोदश्याम् ।
जज्ञे स्वोच्चस्थेषु ग्रहेषु सौम्येषु शुभलग्ने ।।५।।

हस्ताश्रिते शशांके चैत्र ज्योत्स्ने चतुर्दशीदिवसे ।
पूर्वाह्णे रत्नघटैर्विबुधेन्द्राश्चक्रुरभिषेकम् ।।६।।

भुक्त्वा कुमारकाले त्रिंशद्वर्षाण्यनंत गुणराशिः ।
अमरोपनीतभोगान्सहसाभिनिबोधितोऽन्येद्युः ।।७।।

नानाविधरूपचितां विचित्रकूटोच्छ्रितां मणिविभूषाम् ।
चन्द्रप्रभाख्यशिविकामारुह्य पुराद्विनिः क्रान्तः ।।८।।

मार्गशिरकृष्णदशमी हस्तोत्तर मध्यमाश्रिते सोमे ।
षष्ठेन त्वपराह्णे भक्तेन जिनः प्रवव्राज ।।९।।

ग्रामपुर खेटकर्वटमटंब घोषाकरान्प्रविजहार ।
उग्रैस्तपोविधानैर्द्वादशवर्षाण्यमर पूज्यः ।।१०।।

ऋजुकूलायास्तीरे शाल्मद्रुम संश्रिते शिलापट्टे ।
अपराह्णे षष्ठेनास्थितस्य खलु जृंभिकाग्रामे ।।११।।

वैशाखसितदशम्यां हस्तोत्तरमध्यमाश्रिते चन्द्रे ।
क्षपकश्रेण्यारूढस्योत्पन्नं केवलज्ञानम् ।।१२।।

अथ भगवान् संप्रापद्-दिव्यं वैभारपर्वतं रम्यम् ।
चातुर्वर्ण्य सुसंघस्तत्राभूद् गौतमप्रभृति ।।१३।।

छत्राशोकौ घोषं सिंहासन दुंदुभि कुसुमवृष्टिम् ।
वरचामर भामण्डलदिव्यान्यन्यानि चावापत् ।।१४।।

दसविधमनगाराणामेकादशधोत्तरं तथा धर्मम् ।
देशयमानो व्यवहरंस्त्रिंशद्वर्षाण्यथ जिनेन्द्रः ।।१५।।

पद्मवनदीर्घिकाकुल विविध द्रुमखण्ड मण्डिते रम्ये ।
पावानगरोद्याने व्युत्सर्गेण स्थितः स मुनिः ।।१६।।

कार्तिककृष्ण स्यान्ते स्वातावृक्षे निहत्यकर्मरजः ।
अवशेषं संप्रापद्व्यजरामरमक्षयं सौख्यम् ।।१७।।

परिनिर्वृत्तं जिनेन्द्रं ज्ञात्वा विबुधाह्यथासु चागम्य ।
देवतरुरक्तचन्दन कालागरु सुरभिगो शीर्षैः ।।१८।।

अग्नीन्द्राज्जिनदेहं मुकुटानलसुरभि धूपवरमाल्यैः ।
अभ्यर्च्य गणधरानपि गतादिवं खं च वनभवने ।।१९।।

इत्येवं भगवति वर्धमान चन्द्रे,
य: स्तोत्रं पठति सुसंध्ययोर्द्वयोर्हि ।
सोऽनन्तं परमसुखं नृदेवलोके,
भुक्त्वान्ते शिवपदमक्षयं प्रयाति ।।२०।।

यत्रार्हतां गणभृतां श्रुतपारगाणां,
निर्वाणभूमिरिह भारतवर्षजानाम् ।
तामद्य शुद्धमनसा क्रियया वचोभिः,
संस्तोतुमुद्यतमतिः परिणौमि भक्त्या ।।२१।।

कैलाश शैलशिखरे परिनिर्वृतोऽसौ,
शैलेशिभावमुपपद्य वृषो महात्मा ।
चम्पापुरे च वसुपूज्यसुतः सुधीमान्,
सिद्धिं परामुपगतो गतरागबन्धः ।।२२।।

यत्प्रार्थ्यते शिवमयं विबुधेश्वराद्यैः,
पाखण्डिभिश्च परमार्थगवेष शीलैः ।
नष्टाष्ट कर्म समये तदरिष्टनेमिः,
संप्राप्तवान् क्षितिधरे वृहदूर्जयन्ते ।।२३।।

पावापुरस्य बहिरुन्नत भूमिदेशे,
पद्मोत्पलाकुलवतां सरसां हि मध्ये ।
श्री वर्द्धमान जिनदेव इति प्रतीतो,
निर्वाणमाप भगवान्प्रविधूतपाप्मा ।।२४।।

शेषास्तु ते जिनवरा जितमोहमल्ला,
ज्ञानार्क भूरि किरणैरवभास्य लोकान् ।
स्थानं परं निरवधारित सौख्यनिष्ठं,
सम्मेद पर्वततले समवापुरीशाः ।।२५।।

आद्यश्चतुर्दशदिनैर्विनिवृत्त योगः,
षष्ठेन निष्ठितकृतिर्जिन वर्द्धमानः ।
शेषाविधूत घनकर्म निबद्धपाशाः,
मासेन ते यतिवरांस्त्वभवन्वियोगाः ।।२६।।
माल्यानि वाक्स्तुतिमयैः कुसुमैः सुदृब्धा-
न्यादाय मानसकरैरभितः किरन्तः ।

पर्येम आदृतियुता भगवन्निषद्याः,
संप्रार्थिता वयमिमे परमां गतिं ताः ।।२७।।
शत्रुञ्जये नगवरे दमितारिपक्षाः,
पण्डोः सुताः परमनिर्वृतिमभ्युपेताः ।
तुंग्यां तु संगरहितो बलभद्रनामा,
नद्यास्तटे जिनरिपुश्च सुवर्णभद्रः ।।२८।।
द्रोणीमति प्रबलकुण्डल मेढ्रके च,
वैभारपर्वततले वरसिद्धकूटे ।
ऋष्यद्रिके च विपुलाद्रिबलाहके च,
विन्ध्ये च पोदनपुरे वृषदीपके च ।।२९।।
सह्याचले च हिमवत्यपि सुप्रतिष्ठे,
दण्डात्मके गजपथे पृथुसारयष्टौ ।
ये साधवो हतमलाः सुगतिं प्रयाताः,
स्थानानि तानि जगति प्रथितान्य भूवन् ।।३०।।
इक्षोर्विकार रसपृक्त गुणेन लोके,
पिष्टोऽधिकं मधुरतामुपयाति यद्वत् ।
तद्वच्च पुण्यपुरुषै रुषितानि नित्यं,
स्थानानि तानि जगतामिह पावनानि ।।३१।।
इत्यर्हतां शमवतां च महामुनीनां,
प्रोक्ता मयात्र परिनिर्वृति भूमि देशाः ।
तेमे जिना जितभया मुनयश्च शांताः,
दिश्यासुराशु सुगतिं निरवद्यसौख्याम् ।।३२।।

क्षेपक श्लोकानि

कैलाशाद्रौ मुनीन्द्रः पुरुरपदुरितो मुक्तिमाप प्रणूतः ।
चंपायां वासुपूज्यस्त्रिदशपतिनुतो नेमिरप्यूर्जयंते ।।१।।

पावायां वर्धमानस्त्रिभुवनगुरवो विंशतिस्तीर्थनाथाः ।
सम्मेदाग्रे प्रजग्मुर्ददतु विनमतां निवृत्तिं नो जिनेन्द्राः ।।२।।

गोर्गजोश्वः कपिः कोकः सरोजः स्वस्तिकः शशी ।
मकरः श्रीयुतो वृक्षो गंडो महिष सूकरौ ।।३।।

सेधा वज्रमृगच्छागाः पाठीनः कलशस्तथा ।
कच्छपश्चोत्पलं शंखो नागराजश्च केसरी ।।४।।

शान्ति कुन्थवर कौरव्या यादवौ नेमिसुव्रतौ ।
उग्रनाथौ पार्श्ववीरौ शेषा इक्ष्वाकुवंशजाः ।।५।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! परिणिव्वाणभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, इमम्मि, अवसप्पिणीए चउत्थ समयस्स पच्छिमे भाए, आउट्ठमासहीणे वासचउक्कम्मि सेसकालम्मि, पावाए णयरीए कत्तिय मासस्स किण्ह चउदसिए रत्तीए सादीए, णक्खत्ते, पच्चूसे, भयवदो महदि महावीरो वड्ढमाणो सिद्धिं गदो । तिसुवि लोएसु, भवणवासिय-वाणविंतर जोयिसिय कप्पवासियत्ति चउव्विहा देवा सपरिवारा दिव्वेण ण्हाणेण, दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण अक्खेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण चुण्णेण, दिव्वेण

दीवेण, दिव्वेण धूवेण, दिव्वेण वासेण, णिच्चकालं अच्चंति, पूजंति, वंदंति, णमंसंति परिणिव्वाण महाकल्लाण पुज्जं करंति। अहमवि इह संतो तत्थ संताइयं णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं, समाहि-मरणं जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं।

।। इति निर्वाण भक्तिः ।।

श्री नन्दीश्वर भक्ति

त्रिदशपतिमुकुट तट गतमणि,
गणकर निकर सलिलधाराधौत।
क्रमकमलयुगलजिनपति रुचिर,
प्रतिबिम्बविलय विरहितनिलयान् ।।१।।
निलयानहमिह महसां सहसा,
प्रणिपतन पूर्वमवनौम्यवनौ।
त्रय्यां त्रय्या शुद्ध्या निसर्ग,
शुद्धान्विशुद्धये घनरजसाम् ।।२।।

भवनवासियों के विमानों के अकृत्रिम चैत्यालयों का वर्णन

भावनसुर-भवनेषु,
द्वासप्तति-शत-सहस्र-संख्याभ्यधिकाः।
कोट्यः सप्त प्रोक्ता,
भवनानां भूरि-तेजसां भुवनानाम् ।।३।।

व्यन्तर देवों के अकृत्रिम चैत्यालयों का वर्णन

त्रिभुवन-भूत-विभूनां,
संख्यातीतान्यसंख्य-गुण-युक्तानि ।
त्रिभुवन-जन-नयन-मनः,
प्रियाणिभवनानिं भौम-विबुध-नुतानि ॥४॥

ज्योतिष्क तथा वैमानिक देवों के अकृत्रिम चैत्यालयों का वर्णन

यावन्ति सन्ति कान्त-ज्योति-र्लोकाधिदेवताभिनुतानि ।
कल्पेऽनेक-विकल्पे, कल्पातीतेऽहमिन्द्र-कल्पानल्पे ॥५॥

विंशतिरथ त्रिसहिता, सहस्र-गुणिता च सप्तनवतिः प्रोक्ता ।
चतुरधिकाशीतिरतः, पञ्चक-शून्येन विनिहतान्यनघानि॥६॥

मनुष्य क्षेत्र के अकृत्रिम चैत्यालयों की संख्या

अष्टापञ्चाशदतश्-चतुःशतानीह मानुषे च क्षेत्रे ।
लोकालोक-विभाग-प्रलोकनाऽऽलोक-संयुजां जय-भाजाम्॥७॥

तीनों लोकों के अकृत्रिम चैत्यालयों की संख्या

नव-नव-चतुःशतानि च,
सप्त च नवतिः सहस्र-गुणिताः षट् च ।
पञ्चाशत्पञ्च-वियत्,
प्रहताः पुनरत्र कोटयोऽष्टौ प्रोक्ताः ॥८॥

एतावन्त्येव सता-मकृत्रि-
माण्यथ जिनेशिनां भवनानि ।

भुवन-त्रितये त्रिभुवन-सुर-
समिति-समर्च्यमान-सत्प्रतिमानि ।।९।।

मध्यलोक के ४५८ चैत्यालय

वक्षार-रुचक-कुण्डल-
रौप्य-नगोत्तर-कुलेषुकारनगेषु ।
कुरुषु च जिनभवनानि,
त्रिशतान्यधिकानि तानि षड्विंशत्या ।।१०।।

नन्दीश्वर द्वीप के चैत्यालय

नन्दीश्वर-सद्द्वीपे,
नन्दीश्वर-जलधि-परिवृते धृत-शोभे ।
चन्द्र-कर-निकर-सन्निभ-
रुन्द्र-यशो वितत-दिङ्-मही-मण्डलके ।।११।।
तत्रत्याञ्जन-दधिमुख-
रतिकर-पुरु-नग-वराख्य-पर्वत-मुख्याः ।
प्रतिदिश-मेषा-मुपरि,
त्रयो-दशेन्द्रार्चितानि जिनभवनानि ।।१२।।
आषाढ़-कार्तिकाख्ये,
फाल्गुनमासे च शुक्लपक्षेऽष्टम्याः ।
आरभ्याष्ट-दिनेषु च,
सौधर्म-प्रमुख-विबुधपतयो भक्त्या ।।१३।।
तेषु महामह-मुचितं
प्रचुराक्षत-गन्ध-पुष्प-धूपै-र्दिव्यैः ।

सर्वज्ञ-प्रतिमाना-
मप्रतिमानां प्रकुर्वते सर्व-हितम् ।।१४।।
भेदेन वर्णना का,
सौधर्मः स्नपन-कर्तृता मापन्नः ।
परिचारक-भावमिताः,
शेषेन्द्रा-रुन्द्र-चन्द्र-निर्मल-यशसः ।।१५।।
मंगल-पात्राणि पुनस्तद्-
देव्यो बिभ्रतिस्म शुभ्र-गुणाढ्याः ।
अप्सरसो नर्तक्यः,
शेष-सुरास्तत्र लोकनाव्यग्रधियः ।।१६।।
वाचस्पति-वाचामपि,
गोचरतां संव्यतीत्य यत्-क्रममाणम् ।
विबुधपति-विहित-विभवं,
मानुष-मात्रस्य कस्य शक्तिः स्तोतुम् ।।१७।।
निष्ठापित-जिनपूजाश्-
चूर्ण-स्नपनेन दृष्टविकृतविशेषाः ।
सुरपतयो नन्दीश्वर-
जिनभवनानि प्रदक्षिणीकृत्य पुनः ।।१८।।
पञ्चसु मंदरगिरिषु,
श्रीभद्रशालनन्दन-सौमनसम् ।
पाण्डुकवनमिति तेषु,
प्रत्येकं जिनगृहाणि चत्वार्येव ।।१९।।

तान्यथ परीत्य तानि च,
नमसित्वा कृतसुपूजनास्तत्रापि ।
स्वास्पदमीयुः सर्वे,
स्वास्पदमूल्यं स्वचेष्टया संगृह्य ।।२०।।

नन्दीश्वर द्वीप के चैत्यालयों की विभूति

सहतोरणसद्वेदी-
परीतवनयाग-वृक्ष-मानस्तम्भः ।
ध्वजपंक्तिदशकगोपुर,
चतुष्टयात्रितय-शाल-मण्डप-वर्यैः ।।२१।।

अभिषेकप्रेक्षणिका,
क्रीडनसंगीतनाटकालोकगृहैः ।
शिल्पिविकल्पित-कल्पन-
संकल्पातीत-कल्पनैः समुपेतैः ।।२२।।

वापी सत्पुष्करिणी,
सुदीर्घिकाद्यम्बुसंसृतैः समुपेतैः ।
विकसितजलरुहकुसुमै-
र्नभस्यमानैः शशिग्रहर्क्षैः शरदि ।।२३।।

भृंगाराब्दक-कलशा,
द्युपकरणैष्टशतक-परिसंख्यानैः ।
प्रत्येकं चित्रगुणैः,
कृतझणझणनिनद-वितत-घंटाजालैः ।।२४।।

प्रविभाजंते नित्यं,
हिरण्यमयानीश्वरेशिनां भवनानि ।
गंधकुटीगतमृगपति,
विष्टर-रुचिराणि-विविध-विभव-युतानि ।।२५।।

नन्दीश्वर के चैत्यालयों में स्थित प्रतिमाओं का वर्णन

येषु-जिनानां प्रतिमाः,
पञ्चशत-शरासनोच्छ्रिताः सत्प्रतिमाः ।
मणिकनक-रजतविकृता,
दिनकरकोटि-प्रभाधिक-प्रभदेहाः ।।२६।।

तानि सदा वंदेऽहं,
भानुप्रतिमानि यानि कानि च तानि ।
यशसां महसां प्रतिदिश-
मतिशय-शोभा-विभाञ्जि पापविभाञ्जि ।।२७।।

तीर्थङ्करों की स्तुति

सप्तत्यधिक-शतप्रिय,
धर्मक्षेत्रगत-तीर्थकर-वर-वृषभान् ।
भूतभविष्यत्संप्रति-
काल-भवान् भवविहानये विनतोऽस्मि ।।२८।।

भगवान् वृषभदेव की स्तुति

अस्यामवसर्पिण्यां,
वृषभजिनः प्रथमतीर्थकर्ता भर्ता ।

अष्टापदगिरिमस्तक,
गतस्थितो मुक्तिमाप पापान्मुक्तः ।।२९।।

भगवान वासुपूज्य की स्तुति

श्रीवासुपूज्यभगवान्,
शिवासु पूजासु पूजितस्त्रिदशानाम् ।
चम्पायां दुरित-हरः,
परमपदं प्रापदापदा-मन्तगतः ।।३०।।

नेमिनाथ स्वामी की स्तुति

मुदितमतिबलमुरारि-
प्रपूजितो जित कषायरिपुरथ जातः ।
वृहदूर्जयन्त-शिखरे,
शिखामणिस्त्रिभुवनस्य-नेमिर्भगवान् ।।३१।।

श्री महावीर स्वामी की स्तुति

पावापुरवरसरसां,
मध्यगतः सिद्धिवृद्धितपसां महसाम् ।
वीरो नीरदनादो,
भूरि-गुणश्चारु शोभमास्पद-मगमत् ।।३२।।

अवशेष बीस तीर्थङ्करों की स्तुति

सम्मदकरिवन-परिवृत-
सम्मेदगिरीन्द्रमस्तके विस्तीर्णे ।
शेषा ये तीर्थकराः,
कीर्तिभृतः प्रार्थितार्थसिद्धिमवापन् ।।३३।।

अन्य सिद्ध स्थानों से मंगल प्रार्थना

शेषाणां केवलिना-
    मशेषमतवेदिगणभृतां साधूनां ।
गिरितलविवरदरीसरि-
    दुरुवनतरु-विटपिजलधि-दहनशिखासु ।।३४।।

मोक्षगतिहेतु-भूत-
    स्थानानि सुरेन्द्ररुन्द्र-भक्तिनुतानि ।
मंगलभूतान्येता-
    न्यंगीकृत-धर्मकर्मणामस्माकम् ।।३५।।

जिनपतयस्तत्-प्रतिमा-
    स्तदालयास्तन्निषद्यका स्थानानि ।
ते ताश्च ते च तानि च,
    भवन्तु भव-घात-हेतवो भव्यानाम् ।।३६।।

तीनों समय नन्दीश्वर भक्ति करने का फल

सन्ध्यासु तिसृषु नित्यं,
    पठेद्यदि स्तोत्र-मेतदुत्तम-यशसाम् ।
सर्वज्ञानां सार्वं,
    लघु लभते श्रुतधरेडितं पद-ममितम् ।।३७।।

अरहंतों के शरीर सम्बन्धी दश अतिशय

नित्यं निःस्वेदत्वं,
    निर्मलता क्षीर-गौर-रुधिरत्वं च ।

स्वाद्याकृति-संहनने,
　　सौरूप्यं सौरभं च सौलक्ष्यम् ।।३८।।

अप्रमित-वीर्यता च,
　　प्रिय-हित वादित्व-मन्यदमित-गुणस्य ।
प्रथिता दश-विख्याता,
　　स्वतिशय-धर्मा स्वयं-भुवो देहस्य ।।३९।।

केवलज्ञान के दश अतिशय

गव्यूति-शत-चतुष्टय-
　　सुभिक्षता-गगन-गमन-मप्राणिवधः ।
भुक्त्युपसर्गाभाव-
　　श्चतुरास्यत्वं च सर्व-विद्येश्वरता ।।४०।।

अच्छायत्व-मपक्ष्म-
　　स्पन्दश्च सम-प्रसिद्ध-नख-केशत्वम् ।
स्वतिशय-गुणा भगवतो,
　　घाति-क्षयजा भवन्ति तेऽपि दशैव ।।४१।।

देवकृत चौदह अतिशय

सार्वार्ध-मागधीया,
　　भाषा मैत्री च सर्व-जनता-विषया ।
सर्वर्तु-फल-स्तबक-
　　प्रवाल-कुसुमोपशोभित-तरु-परिणामाः ।।४२।।

आदर्शतल-प्रतिमा,
    रत्नमयी जायते मही च मनोज्ञा ।
विहरण-मन्वेत्यनिलः,
    परमानन्दश्च भवति सर्व-जनस्य ।।४३।।

मरुतोऽपि सुरभि-गन्ध-
    व्यामिश्रा योजनान्तरं भूभागम् ।
व्युपशमित-धूलि-कण्टक-
    तृण-कीटक-शर्करोपलं प्रकुर्वन्ति ।।४४।।

तदनु स्तनितकुमारा,
    विद्युन्माला-विलास-हास-विभूषाः ।
प्रकिरन्ति सुरभि-गन्धि,
    गन्धोदक-वृष्टि-माज्ञया त्रिदशपतेः ।।४५।।

वर-पद्मराग-केसर-मतुल-
    सुख-स्पर्श-हेम-मय-दल-निचयम् ।
पादन्यासे पद्मं सप्त,
    पुरः पृष्ठतश्च सप्त भवन्ति ।।४६।।

फलभार-नम्र-शालि-
    ब्रीह्यादि-समस्त-सस्य-धृत-रोमाञ्चा ।
परिहृषितेव च भूमि-
    स्त्रिभुवननाथस्य वैभवं पश्यन्ती ।।४७।।

शरदुदय-विमल-सलिलं,
सर इव गगनं विराजते विगतमलम् ।
जहति च दिशस्तिमिरिकां,
विगतरजः प्रभृति जिह्मताभावं सद्यः ॥४८॥

एतेतेति त्वरितं ज्योति-
र्व्यन्तर-दिवौकसा-ममृतभुजः ।
कुलिशभृदाज्ञापनया,
कुर्वन्त्यन्ये समन्ततो व्याह्वानम् ॥४९॥

स्फुर-दरसहस्र-रुचिरं,
विमल-महारत्न-किरण-निकर-परीतम् ।
प्रहसित-किरण-सहस्र-
द्युति-मण्डल-मग्रगामि-धर्म-सुचक्रम् ॥५०॥
इत्यष्ट-मंगलं च,
स्वादर्श-प्रभृति-भक्ति-राग-परीतैः ।
उपकल्प्यन्ते त्रिदशै-
रेतेऽपि-निरुपमातिशयाः ॥५१॥

आठ प्रातिहार्यों का वर्णन

अशोक वृक्ष

वैडूर्य-रुचिर-विटप-प्रवाल-
मृदु-पल्लवोपशोभित-शाखः ।
श्रीमानशोक-वृक्षो वर-मरकत-
पत्र-गहन-बहलच्छायः ॥५२॥

मन्दार-कुन्द-कुवलय-
नीलोत्पल-कमल-मालती-बकुलाद्यैः ।
समद-भ्रमर-परीतै-
र्व्यामिश्रा पतति कुसुम-वृष्टि-र्नभसः ।।५३।।

चामर

कटक-कटि-सूत्र-कुण्डल-
केयूर-प्रभृति-भूषितांगौ स्वंगौ ।
यक्षौ कमल-दलाक्षौ,
परि-निक्षिपतःसलील-चामर-युगलम्।।५४।।

भामण्डल

आकस्मिक-मिव युगपद्-
दिवसकर-सहस्र-मपगत-व्यवधानम् ।
भामण्डल-मविभावित-
रात्रिन्दिव-भेद-मतितरामाभाति ।।५५।।

दुन्दुभिवाद्य

प्रबल-पवनाभिघात-
प्रक्षुभित-समुद्र-घोष-मन्द्र-ध्वानम् ।
दन्ध्वन्यते सुवीणा-
वंशादि-सुवाद्य-दुन्दुभिस्तालसमम् ।।५६।।

तीन छत्र

त्रिभुवन-पतिता-लाञ्छन-
मिन्दुत्रय-तुल्य-मतुल-मुक्ता-जालम् ।

छत्रत्रयं च सुबृहद्-
वैडूर्य-विक्लृप्त-दण्ड-मधिक-मनोज्ञम् ।।५७।।

दिव्यध्वनि

ध्वनिरपि योजनमेकं,
प्रजायते श्रोतृ-हृदयहारि-गम्भीरः ।
ससलिल-जलधर-पटल-
ध्वनितमिव प्रविततान्त-राशावलयम् ।।५८।।

सिंहासन

स्फुरितांशु-रत्न-दीधिति-
परिविच्छुरिताऽमरेन्द्र-चापच्छायम् ।
ध्रियते मृगेन्द्रवर्यैः-
स्फटिक-शिला-घटित-सिंह-विष्टर-मतुलम् ।।५९।।

यस्येह चतुस्त्रिंशत्-
प्रवर-गुणा प्रातिहार्य-लक्ष्म्यश्चाष्टौ ।
तस्मै नमो भगवते,
त्रिभुवन-परमेश्वरार्हते गुण-महते ।।६०।।

क्षेपक-श्लोकाः

गत्वा क्षितेर्वियति पंचसहस्रदण्डान्,
सोपान-विंशतिसहस्र-विराजमाना ।
रेजे सभा धनद यक्षकृता यदीया,
तस्मै नमस्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय ।।१।।

सालोऽथ वेदिरथ वेदिरथोऽपि सालो,
वेदिश्च साल इह वेदिरथोऽपि सालः ।
वेदिश्च भाति सदसि क्रमतो यदीये,
तस्मै नमस्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय ।।२।।

प्रासाद-चैत्य-निलयाः परिखात-वल्ली,
प्रोद्यानकेतुसुरवृक्षगृहाङ् गणाश्च ।
पीठत्रयं सदसि यस्य सदा विभाति,
तस्मै नम-स्त्रिभुवन-प्रभवे जिनाय ।।३।।

माला-मृगेन्द्र-कमलाम्बर वैनतेय-
मातंगगोपतिरथांगमयूरहंसाः ।
यस्य ध्वजा विजयिनो भुवने विभान्ति,
तस्मै नम-स्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय ।।४।।

निर्ग्रंथ-कल्प-वनिता-व्रतिका भ-भौम,
नागस्त्रियो भवन-भौम-भ-कल्पदेवाः ।
कोष्ठस्थिता नृ-पशवोऽपिनमन्ति यस्य,
तस्मै नमस्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय ।।५।।

भाषा-प्रभा-वलयविष्टर-पुष्पवृष्टिः,
पिण्डिद्रुमस्त्रिदशदुन्दुभि-चामराणि ।
छत्रत्रयेण सहितानि लसन्ति यस्य,
तस्मै नमस्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय ।।६।।

भृंगार-ताल-कलश-ध्वजसुप्रतीक-
श्वेतातपत्र-वरदर्पण-चामराणि ।
प्रत्येक-मष्टशतकानि विभान्ति यस्य,
तस्मै नमस्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय ।।७।।

स्तंभ-प्रतोलि-निधि-मार्ग-तडाग-वापी-
क्रीडाद्रि-धूप-घट-तोरण-नाट्य-शालाः ।
स्तूपाश्च चैत्य-तरवो विलसन्ति यस्य,
तस्मै नमस्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय ।।८।।

सेनापति स्थपति-हर्म्यपति-द्विपाश्व,
स्त्री-चक्र-चर्म-मणि-काकिणिका-पुरोधाः ।
छत्रासि-दंडपतयः प्रणमन्ति यस्य,
तस्मै नमस्त्रिभुवनप्रभवे जिनाय ।।९।।

पद्मःकालो महाकालः सर्वरत्नश्च पांडुकः,
नैसर्पो माणवः शंखः पिंगलो निधयो नव ।
एतेषां पतयः प्रणमन्ति यस्य,
तस्मै नमस्त्रिभुवन प्रभवे जिनाय ।।१०।।

खविय-घण-घाइ-कम्मा,
चउतीसातिसयविसेसपंचकल्लाणा ।
अट्ठवरपाडिहेरा,
अरिहंता मंगला मज्झं ।।११।।

इच्छामि भंते ! णंदीसरभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं । णंदीसरदीवम्मि, चउदिस विदिसासु अंजण-दधिमुह-रदिकर-पुरुणगवरेसु जाणि जिणचेइयाणि ताणि सव्वाणि तिसुवि लोएसु भवणवासिय-वाणविंतर-जोइसिय-कप्पवासिय-त्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेहिं ण्हाणेहिं, दिव्वेहिं गंधेहिं, दिव्वेहिं अक्खेहिं, दिव्वेहिं पुप्फेहिं, दिव्वेहिं चुण्णेहिं, दिव्वेहिं दीवेहिं, दिव्वेहिं धूवेहिं, दिव्वेहिं वासेहिं, आसाढ़-कात्तियफागुण-मासाणं अट्ठमिमाइं, काऊण जाव पुण्णिमंति णिच्चकालं अच्चंति, पुज्जंति, वंदंति, णमंसंति। णंदीसरमहाकल्लाणपुज्जं करंति अहमवि इह संतो तत्थसंताइयं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो सुगइ-गमणं, समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

तृतीय खण्ड समाप्त

चतुर्थ खण्ड

नैमित्तिक-क्रिया-विधि

अथ अष्टमी-पर्व-क्रियाविधि

अथ अष्टमी-पर्व क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्ति-कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(यहाँ सर्वप्रथम नमस्कार करें, पश्चात् तीन आवर्त और एक शिरोनति कर सामायिक दण्डक पढ़ें ।)

पश्चात् वृहद् सिद्धभक्ति पढ़े २२७ पृ० ।

अथ अष्टमी-पर्व क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री चैत्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(यहाँ आवर्त, शिरोनति और नमस्कार सहित दण्डक का उच्चारण कर कायोत्सर्ग करें । पश्चात् चैत्यभक्ति पढ़े ।) पृ० २३१ पर देखें ।

अथ अष्टमी पर्व-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल कर्मक्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना स्तव समेतं श्री श्रुतभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(यहाँ विधिवत् दण्डक पाठ बोलकर अञ्चलिका सहित वृहद् श्रुतभक्ति पढ़े ।) पृ० २३८ पर देखें ।

अथ अष्टमी-पर्व क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री चारित्रभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(विधिवत् दण्डक पाठ बोलकर चारित्रभक्ति पढ़ें)

पश्चात् चारित्रालोचना पढ़ें

(अष्टमी प्रतिक्रमण)

चारित्रालोचना

इच्छामि भंते ! अट्ठमियम्मि आलोचेउं अट्ठण्हं दिवसाणं, अट्ठण्हं राइणं, अब्भंतरदो पंचविहो आयारो णाणायारो, दंसणाचारो, तवायारो, वीरियाचारो चरित्तायारो चेदि ।

तत्थ णाणायारो अट्ठविहो काले, विणए, उवहाणे, बहुमाणे, तहेव अणिण्हवणे, विंजण-अत्थतदुभये चेदि । णाणायारो-अट्ठविहो परिहाविदो, से अक्खरहीणं वा, सरहीणं वा, विंजणहीणं वा, पदहीणं वा, अत्थ-हीणं वा, गंथ-हीणं वा, थएसु वा, थुइसु वा, अत्थक्खाणेसु वा, अणियोगेसु वा, अणियोगद्दारेसु वा, अकाले-सज्झाओ कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, काले वा, परिहाविदो, अच्छा-कारिदं वा, मिच्छा-मेलिदं वा, आ-मेलिदं, वा मेलिदं, अण्णहादिण्हं, अण्णहा-पडिच्छिदं, आवास-एसु-परिहीणदाए तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१।।

दंसणायारो अट्ठविहो

णिस्संकिय णिकंक्खिय णिव्विदिगिंच्छा अमूढदिट्ठि य उवगूहण ठिदिकरणं वच्छल्ल-पहावणा चेदि ।

दंसणायारो अट्ठविहो परिहाविदो संकाए, कंखाए, विदिगिंछाए, अण्ण-दिट्ठी-पसंसणदाए, परपाखंड-पसंसणाए, अणायदण-सेवणाए, अवच्छल्लदाए, अपहावणाए तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२।।

तवायारो बारसविहो अब्भंतरो-छव्विहो, बाहिरो-छव्विहो चेदि। तत्थ बाहिरो अणसणं, आमोदरियं, वित्ति-परिसंखा, रस-परिच्चाओ, सरीरपरिच्चाओ, विवित्त-सयणासणं चेदि। तत्थ अब्भंतरो पायच्छितं, विणाओ, वेज्जावच्चं, सज्झाओ, झाणं, विउस्सग्गो चेदि। अब्भंतरं-बाहिरं-बारसविहं-तवोकम्मं ण कदं, णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।३।।

वीरियायारो पंचविहो परिहाविदो वर-वीरिय-परिक्कमेण जहुत्त-माणेण, बलेण, वीरिएण, परिक्कमेण णिगूहियं, तवो-कम्मं, ण कदं, णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।४।।

चरित्तायारो तेरसविहो परिहाविदो पंचमहव्वदाणि, पंचसमिदीओ, तिगुत्तीओ चेदि। तत्थ पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं से पुढविकाइया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, आऊ काइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, तेऊ काइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वाऊ काइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वणप्फदिकाइया जीवा अणंताणंता हरिया, बीआ, अंकुरा, छिण्णा, भिण्णा, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

बे-इन्दियाजीवा असंखेज्जासंखेज्जा, कुक्खि, किमि, संख, खुल्लय-वराडय-अक्ख-रिट्ठय-गण्डवाल, संबुक्क,

सिप्पि, पुलविकाइया एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

ते-इन्दियाजीवा असंखेज्जासंखेज्जा, कुन्थूद्देहियविंच्छिय-गोभिंद-गोजुव-मक्कुण-पिपीलियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

चउरिंदिया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, दंसमसय-मक्खि-पयंग-कीड-भमर-महुयर-गोमच्छियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।

पंचिंदियाजीवा असंखेज्जासंखेज्जा अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुच्छिमा, उब्भेदिमा, उववादिमा, अवि-चउरासीदि-जोणि-पमुहसद-सहस्सेसु एदेसिं, उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१।।

अहावरे दुव्वे महव्वदे मुसावादादो वेरमणं से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, राएण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भयेण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा,

अणादरेण वा, केण-वि-कारणेण जादेण वा, सव्वो मुसावादो भासिओ, भासाविओ, भासिज्जंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२।।

अहावरे तव्वे महव्वदे अदिण्णा-दाणादो वेरमणं से गामे वा, णयरे, खेडे वा, कव्वडे वा, मडंवे वा, मंडले वा, पट्टणे वा, दोणमुहे वा, घोसे बा, आसमे वा, सहाए वा, संवाहे वा, सण्णिवेसे वा, तिण्हं वा, कट्ठं वा, वियडिं वा, मणिं वा, एवमाइयं अदिण्णं गिण्हियं, गेण्हावियं, गेण्हिज्जंतं समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।३।।

अहावरे चउत्थे महव्वदे मेहुणादो वेरमणं से देविएसु वा, माणुसिएसु वा, तेरिच्छिएसु वा, अचेयणिएसु वा, मणुण्णामणुण्णेसु रूवेसु, मणुण्णामणुण्णेसु सद्देसु, मणुण्णामणुण्णेसु गंधेसु मणुण्णामणुण्णेसु रसेसु, मणुण्णामणुण्णेसु फासेसु, चक्खिदिय-परिणामे, सोदिंदिय-परिणामे, घाणिंदिय-परिणामे, जिब्भिदिय-परिणामे, फासिंदिय-परिणामे, णो-इंदिय-परिणामे, अगुत्तेण अगुत्तिंदिएण, णवविहं बंभचरियं, ण रक्खियं, ण रक्खावियं, ण रक्खिज्जंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।४।।

अहावरे पंचमे महव्वदे परिग्गहादो वेरमणं सो वि परिग्गहो दुविहो अब्भंतरो बाहिरो चेदि । तत्थ अब्भंतरो परिग्गहो णाणावरणीयं, दंसणावरणीयं, वेयणीयं, मोहणीयं,

आउग्गं, णामं, गोदं, अंतरायं चेदि अट्ठविहो । तत्थ बाहिरो परिग्गहो उवयरण-भंड-फलह-पीढ-कमण्डलु-संथार-सेज्ज-उवसेज्ज-भत्त-पाणादि-भेदेण अणेय विहो, एदेण परिग्गहेण अट्ठविहं कम्मरयं बद्धं, बद्धावियं, बज्झन्तं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।५।।

अहावरे छट्ठे अणुव्वदे राइ-भोयणादो वेरमणं से असणं, पाणं, खाइयं, साइयं चेदि । चउव्विहो आहारो से तित्तो वा, कडुओ वा, कसाइलो वा, अमिलो वा, महुरो वा, लवणो वा, अलवणो वा, दुच्चिंतिओ, दुब्भासिओ, दुप्परिणाम्बिओ, दुस्समिणिओ, रत्तीए भुत्तो, भुंजावियो, भुंज्जिजंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।६।।

पंचसमिदीओ-इरियासमिदी, भासासमिदी, एषणासमिदी, आदाण-णिक्खेवण समिदी, उच्चारपस्सवण खेल-सिंहाणय-वियडि-पइट्ठावणसमिदी चेदि ।

तत्थ इरियासमिदी पुव्वुत्तर-दक्खिण-पच्छिम चउदिसि, विदिसासु, विहरमाणेण, जुगंतर-दिट्ठिणा, भव्वेण दट्ठव्वा । डव-डव-चरियाए, पमाद-दोसेण, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।७।।

तत्थ भासासमिदी कक्कसा, कडुआ, परुसा, णिट्ठुरा, परकोहिणी, मज्झंकिसा, अइ-माणिणी, अणयंकरा, छेयंकरा,

भूयाण-वहंकरा चेदि । दसविहा भासा, भासिया, भासाविया, भासिज्जंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।८।।

तत्थ एसणासमिदी अहाकम्मेण वा, पच्छाकम्मेण वा, पुरा-कम्मेण वा, उद्दिट्ठयडेण वा, णिद्दिट्ठियडेण वा, कीडयडेण वा, साइया, रसाइया, सइंगाला, सधूमिया, अइ-गिद्धए, अग्गीव, छण्हं जीव-णिकायाणं, विराहणं, काऊण, अपरिसुद्धं, भिक्खं, अण्णं, पाणं, आहारियं, आहाराविय, आहारिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।९।।

तत्थ आदाण-णिक्खेवण समिदी-चक्कलं वा, फलहं वा, पोत्थयं वा, पीढं वा, कमण्डलुं वा, वियडिं वा, मणिं वा, एवमाइयं, उवयरणं, अप्पडिलेहिऊण-गेण्हंतेण वा, ठवंतेण वा, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१०।।

तत्थ उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाणय-वियडिपइट्ठा-विणिया समिदी, रत्तीए वा, वियाले वा, अच्क्खुविसए, अवत्थंडिले, अब्भोवयासे, सणिद्धे, सवीए, सहरिए, एवमाइएसु, अप्पासु-गट्ठाणेसु पइट्ठावंतेण, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।११।।

तिण्णि-गुत्तीओ, मणगुत्तीओ, वचि-गुत्तीओ, काय-

गुत्तीओ चेदि । तत्थ मण-गुत्ती, अट्टे झाणे, रुद्दे झाणे, इह लोय-सण्णाए, पर-लोय-सण्णाए, आहार-सण्णाए, भय-सण्णाए, मेहुण-सण्णाए, परिग्गह-सण्णाए, एवमाइयासु जा मण गुत्ती, ण रक्खिया, ण रक्खाविया, ण रक्खिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१२।।

तत्थ वचि-गुत्ती, इत्थि-कहाए, अत्थ-कहाए, भत्त-कहाए, राय कहाए, चोर-कहाए, वेर-कहाए, परपासंड-कहाए, एवमाइयासु जा वचि-गुत्ती, ण रक्खिया, ण रक्खाविया, ण रक्खिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१३।।

तत्थ काय-गुत्ती चित्त-कम्मेसु वा, पोत्त-कम्मेसु वा, कट्ठ-कम्मेसु वा, लेप्प-कम्मेसु वा, लयकम्मेसु वा, एवमाइयासु जा कायगुत्ती, ण रक्खिया, ण रक्खाविया, ण रक्खिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१४।।

दोसु अट्ट-रुद्द-संकिलेस-परिणामेसु, तीसु अप्पसत्थ-संकिलेस-परिणामेसु, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छा चरित्तेसु, चउसु, उवसग्गेसु, चउसु सण्णासु, चउसु पच्चएसु, पंचसु चरित्तेसु, छसु जीव-णिकाएसु, छसु आवासएसु, सत्तसु, भयेसु, अट्ठसु, सुद्धीसु, णवसु, बंभचेर-गुत्तीसु, दससु समण-धम्मेसु, दससु धम्मज्झाणेसु, दससु मुण्डेसु, बारसेसु संजमेसु, बावीसाए परीसहेसु, पणवीसाए

भावणासु, पणवीसाए किरियासु, अट्ठारस-सील-सहस्सेसु, चउरासीदि-गुण-सय-सहस्सेसु, मूलगुणेसु, उत्तर गुणेसु अट्ठमियम्मि अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो जो तं पडिक्कमामि। मए पडिक्कंतं तस्स मे सम्मत्त-मरणं, पंडिय-मरणं, वीरिय-मरणं, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं-समाहि-मरणं, जिणगुण-सम्पत्ति होदु मज्झं।

अथ अष्टमी पर्व क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण............. श्री पञ्च महागुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

पृ० २५१ पर देखें।

(यहाँ विधिवत् कायोत्सर्ग करके पञ्चमहागुरुभक्ति पढ़ें।)

अथ अष्टमी....................................शान्तिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

पृ० २५३ पर देखें।

(विधिवत् कायोत्सर्ग करके शांति भक्ति पढ़ें)

अथ अष्टमी पर्वक्रियायां, पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्ध भक्ति, श्रुत भक्ति, वृहदालोचनापूर्वक चारित्रभक्ति, पंचमहागुरु भक्ति शान्ति भक्तिं च कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादि-दोष विशुद्ध्यर्थं आत्म-पवित्री-करणार्थं, समाधि-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

पृ० २५८ पर देखें।

(विधिवत् कायोत्सर्ग करके समाधिभक्ति पढ़ें)

॥ इति अष्टमी पर्व क्रिया समाप्त ॥

[1]चतुर्दशी पर्व-क्रिया-विधि

अथ चतुर्दशी-पर्व-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २२७ पर देखें ।

(यहाँ आवर्त, शिरोनति और नमस्कार आदि विधिपूर्वक दण्डक पाठ पढ़ें)

वृहद् सिद्धभक्ति पढ़ें

अथ चतुर्दशी-पर्व-क्रियायां, पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-स्तव-समेतं श्री चैत्य-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २३१ पर देखें ।

(यहाँ विधिवत् आवर्त्त, शिरोनति एवं नमस्कार पूर्वक सामायिक दण्डक तथा "थोस्सामि" पढ़ें ।)

अथ चतुर्दशी-पर्व-क्रियायां, पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री श्रुत भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २३८ पर देखें ।

(यहाँ पर विधिवत् दण्डक पाठ बोलकर पश्चात् अञ्चलिका सहित वृहद्-श्रुत भक्ति पढ़ें ।)

---

१. चतुर्दशी की क्रिया त्रिकाल देववन्दना (सामायिक) में ही करने का विधान है ।

अथ चतुर्दशी-पर्व-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्मक्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री पंचमहागुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २५३ पर देखें ।

(यहाँ पर विधिवत् आवर्त, शिरोनति एवं नमस्कार आदि पूर्वक सामायिक दण्डक तथा 'थोस्सामि स्तव' बोलें, पश्चात् पञ्चमहागुरुभक्ति पढ़ें ।)

अथ चतुर्दशी-पर्व-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री शान्तिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २५३ पर देखें ।

(यहाँ पर विधिवत् दण्डक पाठ बोलकर पश्चात् अञ्चलिका सहित श्री शान्तिभक्ति पढ़ें ।)

अथ चतुर्दशी-पर्व-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्तिं, चैत्यभक्तिं, श्रुतभक्तिं, पञ्चमहागुरुभक्तिं, शान्तिभक्ति च कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादि-दोष-विशुद्ध्यर्थं आत्मपवित्री-करणार्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(यहाँ पर विधिवत् दण्डक बोलकर पश्चात् अञ्चलिका सहित वृहद् समाधिभक्ति पढ़ें ।)

पृ० २५८ पर देखें ।

अथ पाक्षिकी-क्रिया-विधि

नोट : यदि धर्म व्यासंग आदि के कारण चतुर्दशी की क्रिया चतुर्दशी के दिन न कर पावें तो पूर्णिमा और अमावस्या के दिन पाक्षिकी क्रिया करना चाहिए ।

अथ पाक्षिकी-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण .... श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २२७ पर देखें ।

यहाँ विधिवत् दण्डक बोलकर पश्चात् वृहद् सिद्धभक्ति बोलना चाहिए ।

अथ पाक्षिकी-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण............ सालोचना चारित्रभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २४२ पर देखें ।

यहाँ विधिवत् दण्डक बोलकर चारित्रभक्ति पढ़ें पश्चात् वृहद् आलोचना (जो कि अष्टमी की क्रिया विधि में लिखी गई है उसे) पढ़ें ।)

अथ पाक्षिकी-क्रियायां.............. श्री चैत्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २३१ पर देखें ।

विधिवत् दण्डक विधान बोलकर वृहद् चैत्यभक्ति बोलना चाहिए ।

अथ पाक्षिकी-क्रियायां.............. श्री पंचमहागुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २५१ पर देखें ।

विधिवत् दण्डक विधान सहित पंचमहागुरुभक्ति बोलना चाहिए ।

अथ पाक्षिकी-क्रियायां................ श्री शान्तिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २५३ पर देखें ।

विधिवत् दण्डक विधान सहित शान्तिभक्ति बोलना चाहिए ।

अथ पाक्षिकी क्रियायां................ श्री सिद्धसालोचनाचारित्र-चैत्य-पंचमहागुरु-शान्ति-भक्तिं च

कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादि-दोष विशुद्ध्यर्थं आत्मपवित्री करणार्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २५८ पर देखें ।

विधिवत् दण्डक विधान सहित समाधिभक्ति बोलना चाहिये ।

सिद्ध-प्रतिमा-दर्शन-क्रिया

अथ [1]सिद्धप्रतिमा-दर्शन-क्रियायां .... श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २२७ पर देखें ।

विधिवत् दण्डक बोलकर अञ्चलिका सहित वृहद् सिद्धभक्ति बोलना चाहिए।

पूर्व-जिनचैत्य-वन्दना-क्रिया

अथ [2]पूर्व-जिन-चैत्य-वन्दना-क्रियायां................ श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २२७ पर देखें ।

विधिवत् दण्डक पूर्वक वृहद् सिद्धभक्ति पढ़ें ।

अथ पूर्व-जिन-चैत्य-वन्दना-क्रियायां.................. सालोचना चारित्रभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २४२ पर देखें ।

विधिवत् दण्डक बोलकर पहिले चारित्रभक्ति पश्चात् वृहद् आलोचना पढ़ना चाहिए ।

---

१. प्रातिहार्यैर्विना-शुद्धं सिद्धं बिम्बमपीदृशः............. ।।७०।।

–वसुनन्दि प्र० पाठ तृ० परिच्छेद ।

सिद्धेश्वराणां प्रतिमाऽपियोज्या, तत्प्रातिहार्यादि विना तथैव..........।।१८१।।

–जयसेन प्रतिष्ठा पाठ ।

अर्थात् सिद्धों की प्रतिमाएँ चिह्नों एवं प्रातिहार्यों से रहित होती हैं ।

२. विहार करते करते छह माह से पूर्व (पहिले) ही उसी प्रतिमा के दर्शन हों तो उसे पूर्व जिन चैत्य कहते हैं ।

अथ पूर्व-जिन-चैत्य-वन्दना-क्रियायां............... श्री चैत्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २३१ पर देखें ।

विधिवत् दण्डक बोलकर चैत्यभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ पूर्व-जिन-चैत्य-वन्दना-क्रियायां................ श्री पञ्चगुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २५१ पर देखें ।

विधिवत् दण्डक बोलकर पञ्चगुरुभक्ति पढ़ना चाहिये ।

अथ पूर्व-जिन-चैत्य-वन्दना-क्रियायां.................. श्री शान्तिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्

पृ० २५३ पर देखें ।

विधिवत् दण्डक बोलकर शान्तिभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ पूर्व-जिन-चैत्य-वन्दना-क्रियायां.............. श्री सिद्ध-सालोचनाचारित्र-चैत्य-पंचमहागुरु-शान्ति-भक्तिं च कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादि-दोष-विशुद्ध्यर्थं आत्मपवित्रीकरणार्थं श्री समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २५८ पर देखें ।

विधिवत् दण्डक बोलकर समाधिभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अपूर्व-चैत्य-वन्दना-क्रिया-विधि

पूर्व जिन चैत्यवन्दना की जो विधि ऊपर लिखी है, वही विधि [1]अपूर्व चैत्य वन्दना की है, विशेष इतना है कि सिद्धभक्ति के बाद और चारित्रभक्ति के पूर्व श्रुतभक्ति पढ़ना चाहिए ।

---

१. जिस प्रतिमा के दर्शन पूर्व में कभी नहीं हुए हों उसे अपूर्व जिन चैत्य कहते हैं, अथवा व्यवहारी पुरुषों की परम्परा में एक बार दर्शन करने के बाद यदि छह माह तक दर्शन न हों, उसके बाद दर्शन हों तो उसे भी अपूर्व जिन चैत्य कहते हैं ।

अनेक-अपूर्व-चैत्य-वन्दना-क्रिया-विधि

अपूर्व चैत्य वन्दना की जो विधि है वही विधि [1]अनेक-अपूर्व-चैत्यवन्दना की है ।

अथ श्रुतपञ्चमी-क्रिया-विधि

अथ श्रुतस्कन्ध-प्रतिष्ठापन-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २२७ पर देखें ।

यहाँ विधिवत् सामायिक दण्डक और चतुर्विंशतिस्तव पढ़कर वृहद् सिद्धभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ श्रुतस्कन्ध-प्रतिष्ठापन-क्रियायां................ श्री श्रुतभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २३८ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक और चतुर्विंशतिस्तव पढ़कर वृहद श्रुतभक्ति पढ़ना चाहिए ।

(इसके बाद श्रुतस्कन्ध की स्थापना कर श्रुतावतारका वर्णन करना चाहिए, पश्चात् नीचे लिखी विधि के अनुसार स्वाध्याय आदि करना चाहिए ।)

अथ स्वाध्याय-प्रतिष्ठापन-क्रियायां............. श्री श्रुतभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २३८ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर वृहद् श्रुतभक्ति बोलना चाहिए ।

---

१. यदि अनेक अपूर्व प्रतिमाओं के दर्शनों का सौभाग्य प्राप्त हो जाय तो उन सब अपूर्व प्रतिमाओं में से किसी एक अभिरुचित प्रतिमा के सन्मुख बैठकर जो क्रिया अपूर्वजिन चैत्य वन्दना विधि में की जाती है, वही क्रिया करना चाहिए ।

अथ स्वाध्याय-प्रतिष्ठापन-क्रियायां............ श्री आचार्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २४७ पर देखें ।

(विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पश्चात् निम्नलिखित आचार्य भक्ति पढ़ना चाहिए ।)

(पश्चात् यहाँ स्वाध्याय सम्पन्न करना चाहिए)

अथ स्वाध्याय-निष्ठापन-क्रियायां............... श्री श्रुतभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २३८ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर श्रुतभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ श्रुत-पञ्चमी-पर्व-क्रियायां.................. श्री शान्तिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २५३ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर शान्तिभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ श्रुतपञ्चमी-पर्व-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्तिं, श्रुतभक्तिं, आचार्यभक्तिं, श्रुतभक्तिं, शांतिभक्तिं च कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादि-दोष-विशुद्ध्यर्थं, आत्मपवित्री-करणार्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर वृहद् समाधिभक्ति पढ़ना चाहिए।

पृ० २५८ पर देखें ।

अथ आष्टाह्निक-पर्व-क्रिया-विधि

आष्टाह्निक पर्वों में अष्टमी के दिन सिद्धभक्ति के बाद और नन्दीश्वर भक्ति के पहिले श्रुतभक्ति, चारित्रभक्ति और चारित्रालोचना करना चाहिए तथा चतुर्दशी के दिन सिद्धभक्ति के बाद और नन्दीश्वर भक्ति के पूर्व चैत्यभक्ति एवं श्रुतभक्ति करना चाहिए, शेष दिनों की विधि नीचे लिखी जा रही है ।

अथ आष्टाह्निक-पर्व-क्रियायां............... श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २२७ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर वृहद् सिद्धभक्ति बोलना चहिए ।

अथ आष्टाह्निक-पर्व-क्रियायां.................. श्री नन्दीश्वरभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २६६ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर नन्दीश्वर भक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ आष्टाह्निक-पर्व-क्रियायां.................. श्री पञ्चमहागुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २५१ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पञ्चमहागुरुभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ आष्टान्हिक-पर्व--क्रियायां............... श्री शान्तिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्हम् ।

पृ० २५३ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर शान्तिभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ आष्टाह्निक-पर्व-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्म-क्षयार्थं भाव पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं, श्री

सिद्धभक्तिं, नन्दीश्वरभक्तिं, पंचमहागुरुभक्तिं, शांतिभक्तिं च कृत्वा तद्धीनाधिक त्वादि-दोष-विशुद्ध्यर्थं आत्म-पवित्रीकरणार्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक एवं चतुर्विंशतिस्तव बोलकर वृहद् समाधिभक्ति पढ़ना चाहिए ।

मंगल-गोचर-मध्याह्न-वन्दना-क्रिया-विधि

नोट :–वर्षा योग धारण और समापन के प्रथम दिन अर्थात् आषाढ़शुक्ला और कार्तिक कृष्णा त्रयोदशी के दिन मध्याह्न देव वन्दना निम्नलिखित विधि के अनुसार करना चाहिए ।

अथ मंगलगोचर-मध्याह्नवन्दना क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २२७ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक एवं चतुर्विंशति स्तव पढ़कर वृहद् सिद्धभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ मंगलगोचर-मध्याह्नवन्दना क्रियायां .... श्री चैत्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २३१ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर वृहद् चैत्यभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ मंगलगोचर-मध्यान्ह-वन्दना-क्रियायां......... श्री पञ्चमहागुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २५१ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर पञ्चमहागुरुभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ मंगलगोचर-मध्याह्न-वन्दना-क्रियायां........ श्री शान्तिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २५३ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर शान्तिभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ मंगलगोचर-मध्याह्न-वन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना स्तव-समेतं श्री सिद्ध-भक्ति-चैत्य-भक्तिं, पञ्च-महागुरुभक्तिं, शान्तिभक्तिं च कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादि दोष विशुद्ध्यर्थं आत्मपवित्री करणार्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

पृ० २५८ पर देखें ।

विधिवत् दण्डक बोलकर समाधिभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ मंगल-गोचर-भक्तप्रत्याख्यान क्रिया-विधि

(नोट :–मङ्गलगोचर-मध्याह्न-देववन्दना क्रिया के बाद सभी साधुओं को गुरु (आचार्य) के पास जाकर वर्षायोग धारण या समापन हेतु चतुर्दशी का उपवास ग्रहण करने के लिए निम्नलिखित वृहत् (बड़ी) प्रत्याख्यान विधि करना चाहिए ।

अथ मंगल-गोचर-भक्त-प्रत्याख्यान-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वंदना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २२७ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक नौ जाप्य और थोस्सामि करके वृहद्सिद्धभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ मंगल-गोचर-भक्त-प्रत्याख्यानक्रियायां........... श्री योगिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २४५ पर देखें ।

विधिवत् दण्डक बोलकर एवं कायोत्सर्ग कर वृहद् योगिभक्ति पढ़ें । पश्चात् गुरु साक्षी पूर्वक चतुर्विध आहार का त्याग करें ।

अथ मंगल-गोचर-भक्त-प्रत्याख्यान एवं आचार्यवन्दना-क्रियायां............. श्री आचार्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्।

पृ० २४७ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक, नौ जाप्य और थोस्सामि बोलकर वृहद् आचार्य भक्ति पढ़ें ।

अथ मंगल-गोचर-भक्त-प्रत्याख्यान-क्रियायां............ श्री शान्तिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २५३ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि बोलकर शान्तिभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ मंगलगोचर-भक्त-प्रत्याख्यान-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्तिं, योगिभक्तिं, शान्तिभक्तिं च कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादि-दोष-विशुद्ध्यर्थं, आत्म-पवित्री-करणार्थं श्री समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २५८ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक-कायोत्सर्ग और थोस्सामि करके बड़ी समाधिभक्ति पढ़ें ।

नोट :–यह सब उपर्युक्त क्रिया त्रयोदशी को की जायगी, पश्चात् सभी साधुओं को मिलकर आषाढ़ शुक्ला चतुर्दशी की पूर्वरात्रि में वर्षायोग प्रतिष्ठापन (धारण) हेतु तथा कार्तिक कृष्णा चतुर्दशी की अपर (पिछली) रात्रि में वर्षायोगनिष्ठापन (समापन) हेतु निम्नलिखित क्रिया करना चाहिये ।

वर्षायोग धारण-समापन-क्रिया-विधि

अथ वर्षायोग-प्रतिष्ठापन (निष्ठापन) क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्मक्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तवसमेतं श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक, कायोत्सर्ग और थोस्सामि बोलकर बड़ी सिद्धभक्ति पढ़ें ।

अथ वर्षायोग-प्रतिष्ठापन (निष्ठापन) क्रियायां............ श्री योगिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २२७ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक, कायोत्सर्ग और थोस्सामि बोलकर बड़ी सिद्धभक्ति पढ़ें ।

पूर्व दिशा में-

यावन्ति जिन चैत्यानि विद्यन्ते भुवनत्रये ।
तावन्ति सततं भक्त्या त्रिःपरीत्य नमाम्यहम् ।।

अथ वृषभजिन स्तोत्र

स्वयम्भुवा भूत-हितेन भूतले,
समञ्जस-ज्ञान-विभूति-चक्षुषा ।
विराजितं येन विधुन्वता तमः,
क्षपाकरेणेव गुणोत्करैः करैः ।।१।।

प्रजापति-र्यः प्रथमं जिजीविषुः,
शशास कृष्यादिषु कर्मसु प्रजाः ।
प्रबुद्धतत्त्वः पुनरद्भुतोदयो,
ममत्वतो निर्विविदे विदांवरः ।।२।।

विहाय यः सागर-वारि-वाससं,
वधू-मिवेमां वसुधा-वधूं सतीम् ।
मुमुक्ष-रिक्ष्वाकु-कुलादि-रात्मवान् ,
प्रभुः प्रवव्राज सहिष्णु-रच्युतः ।।३।।

स्वदोष-मूलं स्वसमाधि-तेजसा,
निनाय यो निर्दय-भस्मसात्-क्रियाम् ।
जगाद तत्त्वं जगतेऽर्थिनेऽञ्जसा,
बभूव च ब्रह्मपदामृतेश्वरः ।।४।।

स विश्व-चक्षु-र्वृषभोऽर्चितः सतां,
समग्र-विद्यात्म-वपु-र्निरञ्जनः ।
पुनातु चेतो मम नाभिनन्दनो,
जिनोऽजित-क्षुल्लक-वादि-शासनः ।।५।।

श्री अजित जिन स्तुति

यस्य प्रभावात् त्रिदिवच्युतस्य,
क्रीडास्वपि क्षीव-मुखारविन्दः ।
अजेय-शक्ति-र्भुवि बन्धुवर्ग-
श्चकार नामाजित इत्यबन्ध्यम् ।।६।।

अद्यापियस्याजित-शासनस्य,
सतां प्रणेतुः प्रति-मंगलार्थम् ।
प्रगृह्यते नाम परं पवित्रं,
स्व-सिद्धि-कामेन जनेन लोके ।।७।।

यः प्रादु-रासीत्प्रभु-शक्ति-भूम्ना,
भव्याशया-लीन-कलंक-शान्त्यै ।
महामुनि-र्मुक्त-घनोपदेहो,
यथारविन्दाभ्युदयाय भास्वान् ।।८।।

येन प्रणीतं पृथु धर्मतीर्थं,
जेष्ठं जनाः प्राप्य जयन्ति दुःखम् ।
गांगं ह्रदं चन्दन-पंक-शीतं,
गज-प्रवेका इव घर्मतप्ता ।।९।।

स ब्रह्मनिष्ठः सम-मित्र-शत्रु-
र्विद्या-विनिर्वान्त-कषाय-दोषः ।
लब्धात्म-लक्ष्मी-रजितोऽजितात्मा,
जिनः श्रियं मे भगवान् विधत्ताम् ।।१०।।

अथ वर्षायोग प्रतिष्ठापन (निष्ठापन) क्रियायां........... श्री लघुचैत्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

विधिवत् सामायिक दण्डक कायोत्सर्ग और थोस्सामि स्तव बोलकर निम्नलिखित चैत्यभक्ति पढ़ें ।

अथ लघु-चैत्य-भक्ति

वर्षेषु वर्षान्तर-पर्वतेषु,
नन्दीश्वरे यानि च मन्दिरेषु ।
यावन्ति चैत्यायतनानि लोके,
सर्वाणि वन्दे जिन-पुंगवानाम् ।।१।।

अवनि-तल-गतानां कृत्रिमाकृत्रिमाणाम् ,
वन-भवन-गतानां दिव्य-वैमानिकानाम् ।
इह मनुज-कृतानां देव-राजार्चितानाम् ,
जिनवर-निलयानां भावतोऽहं स्मरामि ।।२।।

जम्बू-धातकि-पुष्करार्द्ध-वसुधा-क्षेत्र त्रये ये भवाः,
चंद्राम्भोज-शिखण्डि-कण्ठ-कनक-प्रावृड्घना-भा-जिनाः ।
सम्यग्ज्ञान-चरित्र-लक्षण-धरा-दग्धाष्ट-कर्मेन्धनाः,
भूतानागत-वर्तमान-समये तेभ्यो जिनेभ्यो नमः ।।३।।

श्रीमन्मेरौ कुलाद्रौ रजन-गिरिवरे शाल्मलौ जम्बुवृक्षे,
वक्षारे चैत्यवृक्षे रतिकर रुचके कुण्डले मानुषाङ्के ।
इष्वाकारेञ्जनाद्रौ दधिमुख-शिखरे व्यन्तरे स्वर्गलोके,
ज्योति-र्लोकेऽभिवन्दे भुवन-महितले यानि चैत्यालयानि ।।

द्वौ कुन्देन्दु-तुषार-हार-धवलौ द्वाविन्द्रनील प्रभौ,
द्वौ बन्धूक-सम-प्रभौ जिनवृषौ द्वौ च प्रियङ्गु-प्रभौ ।
शेषाः षोडश जन्म-मृत्यु-रहिताः सन्तप्त-हेम-प्रभा-
स्ते सज्ज्ञान-दिवाकराः सुर-नुताः सिद्धिं प्रयच्छन्तु नः ।।

इच्छामि भंते ! चेइय-भत्ति काउस्सग्गो, कओ तस्सालोचेउं, अहलोय-तिरियलोय-उड्ढलोयम्मि किट्टिमा-किट्टिमाणि जाणि, जिण-चेइयाणि ताणि सव्वाणि तिसुवि लोएसु भवणवासिय-वाणविंतर-जोइसिय-कप्पवासिय-त्ति चउविहा देवा सपरिवारा दिव्वेण ण्हाणेण, दिव्वेण गंधेण, दिव्वेण अक्खेण, दिव्वेण पुप्फेण, दिव्वेण चुण्णेण,

दिव्वेण दीवेण धूवेण, दिव्वेण वासेण णिच्चकालं अच्चंति, पुज्जंति, वंदंति, णमंसंति । अहमवि इह संतो तत्थ संताइयं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं ।

प्राग्-दिग्-विदिगन्तरे केवलि-जिन-सिद्ध-साधुगण-देवाः
ये सर्वर्द्धि-समृद्धा योगिगणाँस्तानहं वन्दे ।।१।।

इति पूर्व दिक्वन्दना

दक्षिण दिशा में-

यावन्ति जिन-चैत्यानि विद्यन्ते भुवनत्रये ।
तावन्ति सततं भक्त्या त्रिःपरीत्य नमाम्यहम् ।।

श्री संभव जिन स्तोत्रम्

त्वं सम्भवः सम्भव-तर्ष-रोगैः,
सन्तप्यमानस्य जनस्य लोके ।
आसीरिहाकस्मिक एव वैद्यो,
वैद्यो यथा-नाथ-रुजां प्रशान्त्यै ।।

अनित्य-मत्राण-महङ्क्रियाभिः,
प्रसक्त-मिथ्याध्यवसाय-दोषम् ।
इदं जगज्जन्म-जरान्तकार्तं,
निरञ्जनां शान्ति-मजीगमस्त्वम् ।।२।।

शतह्रदोन्मेष-चलं हि सौख्यं,
तृष्णामयाप्यायन-मात्र-हेतुः ।

तृष्णाभिवृद्धिश्च तपत्यजस्रं,
तापस्तदायासयतीत्यवादीः ॥३॥

बन्धश्च मोक्षश्च तयोश्च हेतु-
र्बद्धश्च मुक्तश्च फलं च मुक्तेः ।
स्याद्वादिनो नाथ तवैव युक्तं,
नैकान्त-दृष्टेस्त्वमतोऽसि शास्ता ॥४॥

शक्रोऽप्यशक्तस्तव पुण्यकीर्तेः,
स्तुत्यां प्रवृत्तः किमु मादृशोऽज्ञः ।
तथापि भक्त्या स्तुत-पाद-पद्मो,
ममार्य देयाः शिवाति-मुच्चैः ॥५॥

श्री अभिनन्दन जिन स्तोत्र

गुणाभिनन्दा-दभिनन्दनो भवान्
दयावधूं क्षान्ति-सखी-मशिश्रियत् ।
समाधितन्त्रस्तदुपोपपत्तये,
द्वयेन नैर्ग्रन्थ्यगुणेन चायुजत् ॥६॥

अचेतने तत्कृत-बन्धजेऽपि च,
ममेदमित्याभिनिवेशिकग्रहात् ।
प्रभङ्गुरे स्थावर-निश्चयेन च,
क्षतं जगत्तत्व-मजिग्रहद्-भवान् ॥७॥

क्षुधादि-दुःख-प्रतिकारतः स्थिति-
र्न चेन्द्रियार्थ-प्रभवाल्प-सौख्यतः ।

ततो गुणो नास्ति च देह-देहिनो-
रितीदमित्थं भगवान् व्यजिज्ञपत् ।।८।।

जनोऽतिलोलोप्यनुबन्ध-दोषतो,
भयादकार्येष्विह न प्रवर्तते ।
इहाप्यमुत्राप्यनुबन्ध-दोषवित्,
कथं सुखे संसजतीति चाब्रवीत् ।।९।।

स चानुबन्धोऽस्य जनस्य तापकृत्,
तृषोऽभिवृद्धिः सुखतो न च स्थितिः ।
इति प्रभो ! लोकहितं यतो मतं,
ततो भवानेन गतिः सतां मतः ।।१०।।

अथ वर्षायोग-प्रतिष्ठापन (निष्ठापन) क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री लघुचैत्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

विधिवत् सामायिकदण्डक, कायोत्सर्ग और थोस्सामि स्तव बोलकर "वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु" इत्यादि लघुचैत्यभक्ति अञ्चलिका सहित पढ़ना चाहिए ।

दक्षिण-दिग्-विदिगंतरे केवलि-जिन-सिद्ध साधुगण-देवाः।
ये सर्वर्द्धि-समृद्धा योगिगणाँस्तानहं वन्दे ।।२।।

इति दक्षिण-दिग्-वन्दना

पश्चिम दिशा में-

यावन्ति जिन-चैत्यानि विद्यन्ते भुवनत्रये ।
तावन्ति सततं भक्तया त्रिःपरीत्य नमाम्यहम् ।।

श्री सुमतिनाथ जिन स्तोत्रम्

अन्वर्थ-संज्ञः सुमति-र्मुनिस्त्वं,
स्वयं मतं येन सुयुक्ति-नीतम् ।
यतश्च शेषेषु मतेषु नास्ति,
सर्व-क्रिया-कारक-तत्त्व-सिद्धिः ।।१।।

अनेक-मेकं च तदेव तत्त्वं,
भेदान्वय-ज्ञान-मिदं हि सत्यम् ।
मृषोपचारोऽन्यतरस्य लोपे,
तच्छेष-लोपोऽति ततोनुपाख्यम् ।।२।।

सतः कथञ्चित्तदसत्त्व-शक्तिः,
खे नास्ति पुष्पं तरुषु प्रसिद्धम् ।
सर्वस्वभाव-च्युत-मप्रमाणं,
स्ववाग्-विरुद्धं तव दृष्टितोऽन्यत् ।।३।।

न सर्वथा नित्य-मुदेत्यपैति,
न च क्रिया-कारक-मत्र-युक्तम् ।
नैवासतो जन्म सतो न नाशो,
दीपस्तमः पुद्गल-भावतोऽस्ति ।।४।।

विधि-र्निषेधश्च कथञ्चिदिष्टौ,
विवक्षया मुख्य-गुण-व्यवस्था ।
इति प्रणीतिः सुमतेस्तवेयं,
मति-प्रवेकः स्तुवतोऽस्तु नाथ ।।५।।

श्री पद्मप्रभ जिन स्तोत्र

पद्मप्रभः पद्म-पलाश-लेश्यः,
पद्मालयालिंगित-चारु-मूर्तिः ।
बभौ भवान् भव्य-पयोरुहाणां,
पद्माकराणामिव पद्मबन्धुः ।।६।।

बभार पद्मां च सरस्वतीं च,
भवान्-पुरस्तात्-प्रतिमुक्ति-लक्ष्म्याः ।
सरस्वती-मेव समग्र-शोभां,
सर्वज्ञ-लक्ष्मीं ज्वलितां विमुक्तः ।।७।।

शरीर-रश्मि-प्रसरः प्रभोस्ते,
बालार्करश्मि-च्छविरालिलेप ।
नरामराकीर्ण-सभां प्रभाव-
च्छैलस्य पद्मा-भमणेः स्वसानुम् ।।८।।

नभस्तलं पल्लवयन्निव त्वं
सहस्र पत्राम्बुज-गर्भचारैः,
पादाम्बुजै पातित मोहदर्पो
भूमौ प्रजानां विजहर्ष भूत्यै ।।९।।

गुणाम्बुधे-र्विप्रुष-मप्यजस्त्रं,
नाखण्डलस्तोतुमलं तवर्षे ।
प्रावेग मादृक्किमुताति-भक्ति-
र्मां बाल-मालापयतीद-मित्थम् ।।१०।।

अथ वर्षायोग-प्रतिष्ठापन (निष्ठापन) क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं................ श्री लघु-चैत्य-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० ३२५ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक, कायोत्सर्ग और थोस्सामि स्तव बोलकर "वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु" इत्यादि लघुचैत्यभक्ति अञ्चलिका सहित पढ़ना चाहिए ।

पश्चिम-दिग्-विदिगंतरे केवलि-जिन-सिद्ध साधुगण-देवाः ये सर्वर्द्धि-समृद्धा योगिगणाँस्तानहं वन्दे ।।३।।

इति पश्चिम दिग्वन्दना

उत्तर दिशा में-

यावन्ति जिन-चैत्यानि विद्यन्ते भुवनत्रये ।
तावन्ति सततं भक्त्या त्रिःपरीत्य नमाम्यहम् ।।

श्री सुपार्श्व जिन स्तोत्र

स्वास्थ्यं यदात्यन्तिक-मेष पुंसां,
स्वार्थो न भोगः परिभङ्गुरात्मा ।
तृषोनुषंगान्न च ताप-शान्ति-,
रितीदमाख्यद्-भगवान् सुपार्श्वः ।।१।।
अजंगमं जंगमनेय-यन्त्रं,
यथा तथा जीवधृतं शरीरम् ।
बीभत्सु पूति क्षयि तापकं च,
स्नेहो वृथात्रेति हितं त्वमाख्यः ।।२।।
अलंघ्य-शक्ति-र्भवितव्यतेयं,
हेतु-द्वयाविष्कृत-कार्य-लिंगाः ।

अनीश्वरो जन्तु-रहंक्रियार्त्तः,
संहत्य कार्येष्विति साध्ववादीः ।।३।।

विभेति मृत्यो-र्न ततोऽस्ति मोक्षो,
नित्यं शिवं वाञ्छति नास्य लाभः ।
तथापि बालो भय-काम-वश्यो,
वृथा स्वयं तप्यत इत्यवादीः ।।४।।

सर्वस्य तत्त्वस्य भवान्-प्रमाता,
मातेव बालस्य हितानुशास्ता ।
गुणावलोकस्य जनस्य नेता,
मयापि भक्त्या परिणूयसेऽद्य ।।५।।

श्री चन्द्रप्रभजिन स्तोत्र

चन्द्रप्रभं चन्द्रमरीचि-गौरं,
चन्द्र-द्वितीयं जगतीव कान्तम् ।
वन्देऽभिवन्द्यं महता-मृषीन्द्रं,
जिनं जित-स्वान्त-कषाय-बन्धम् ।।६।।

यस्यांग-लक्ष्मी-परिवेश-भिन्नं,
तमस्तमोरेरिव रश्मि-भिन्नम् ।
ननाश बाह्यं बहुमानसं च,
ध्यान-प्रदीपातिशयेन भिन्नम् ।।७।।

स्वपक्ष-सौस्थित्य-मदाऽवलिप्ता,
वाक्-सिंहनादै-र्विमदा बभूवुः ।

प्रवादिनो यस्य मदार्द्रगण्डा,
गजा यथा केशरिणो निनादैः ।।८।।

यः सर्वलोके परमेष्ठितायाः,
पदं बभूवाद्भुत-कर्म-तेजाः ।
अनन्त-धामाक्षर-विश्वचक्षुः,
समन्त-दुःख-क्षय-शासनस्य ।।९।।

स चन्द्रमा भव्य-कुमुद्वतीनां,
विपन्न-दोषाऽभ्र-कलंक-लेप ।
व्याकोश-वाङ्-न्याय-मयूख-मालः,
पूयात्-पवित्रो भगवान्-मनो मे ।।१०।।

अथ वर्षायोग प्रतिष्ठापन (निष्ठापन) क्रियायां..........
श्री लघुचैत्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० ३०४ पर देखें ।

विधिवत् सामायिकदण्डक, कायोत्सर्ग और थोस्सामि स्तव बोलकर "वर्षेषु वर्षान्तरपर्वतेषु" इत्यादि लघुचैत्यभक्ति अञ्चलिका सहित पढ़ना चाहिए ।

उत्तर-दिग्-विदिगंतरे केवलि-जिन-साधुगण-देवाः ।
ये सर्वर्द्धि-समृद्धा योगिगणाँस्तानहं वन्दे ।।४।।

इति उत्तर दिग्-वन्दना

अथ वर्षायोगप्रतिष्ठापन (निष्ठापन) क्रियायां...........
श्री पञ्चगुरुभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २५१ पर देखें ।

विधिवत् सामायिकदण्डक आदि पढ़कर पञ्चमहागुरुभक्ति अञ्चलिका सहित पढ़ें ।

अथ वर्षायोगप्रतिष्ठापन (निष्ठापन) क्रियायां............ श्री शान्तिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २५३ पर देखें ।

विधिवत् सामायिक दण्डक आदि पढ़कर शान्तिभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ वर्षायोग प्रतिष्ठापन (निष्ठापन) क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्तिं, योगिभक्तिं, लघुचैत्यभक्तिं, पञ्चगुरुभक्तिं, शान्तिभक्तिं च कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादि-दोष-विशुद्ध्यर्थं आत्मपवित्री-करणार्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २५८ पर देखें ।

(विधिवत् सामायिक दण्डक, कायोत्सर्ग और थोस्सामि स्तव बोलकर बड़ी समाधिभक्ति पढ़ना चाहिए ।)

श्री वीर-निर्वाण-क्रिया-विधि

अथ श्री वीर-निर्वाण-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्मक्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २२७ पर देखें ।

विधिवत् सामायिकदण्डक, कायोत्सर्ग और थोस्सामि स्तव बोलकर वृहद्सिद्धभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ श्री वीर-निर्वाण-क्रियायां.............. श्री निर्वाणभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २५१ पर देखें ।

विधिवत् सामायिकदण्डक आदि बोलकर पञ्चगुरुभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ वीर-निर्वाण-क्रियायां............... श्री शान्तिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २५३ पर देखें ।

विधिवत् सामायिकदण्डक आदि बोलकर शान्तिभक्ति पढ़ना चाहिए ।

अथ वीर-निर्वाण-क्रियायां, पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्तिं, निर्वाणभक्तिं, पञ्चगुरुभक्तिं, शान्तिभक्तिं च कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादि-दोष-विशुद्ध्यर्थं आत्मपवित्री-करणार्थं, श्री समाधि-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २५८ पर देखें ।

विधिवत् सामायिकदण्डक आदि बोलकर वृहद् समाधिभक्ति पढ़ना चाहिए।

अथ लोच-करण-क्रिया-विधि

अथ लोच-प्रतिष्ठापन-क्रियायां, पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री लघु[1]-सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

नौबार णमोकारमन्त्र का जाप

सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं ।
अगुरु-लघु-मव्वावाहं अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ।।१।।

---

१. (अ) लोचो द्वि-त्रि-चतुर्मासै र्वरो मध्यमोऽधमः क्रमात् ।
लघुप्राग्भक्तिभिः कार्यः सोपवास-प्रतिक्रमः ।।८६।।
—अनगारधर्मामृत, नवम अध्याय ।

(ब) लघुसिद्धर्षिभक्त्यान्यः................................... ।

तवसिद्धे णयसिद्धे संजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमस्सामि ।।२।।

इच्छामि भंते ! सिद्धभक्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्म-दंसण-सम्मचारित्त-जुत्ताणं, अट्ठ-विहकम्मविप्पमुक्काणं, अट्ठगुणसंपण्णाणं, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं तवसिद्धाणं, णयसिद्धाणं, संजमसिद्धाणं, चरित्तसिद्धाणं अतीदा-णागद-वट्टमाण-कालत्तय सिद्धाणं, सव्वसिद्धाणं णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि, वंदामि णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ लोच-प्रतिष्ठापन-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना स्तव-समेतं श्री लघुयोगिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

नौबार णमोकारमन्त्र का जाप करना

प्रावृट्काले सविद्युत्प्रपतित-सलिले वृक्षमूलाधिवासाः,
हेमन्ते रात्रिमध्ये प्रति-विगत-भयाः काष्ठवत्-त्यक्त-देहाः।
ग्रीष्मे सूर्यांशु-तप्ता गिरि-शिखर-गताः स्थान-कूटांतरस्था-
स्ते मे धर्मं प्रदद्युर्मुनिगण-वृषभा मोक्ष-निःश्रेणि-भूताः ।।

गिम्हे गिरि-सिहरत्था-वरिसायाले रुक्ख-मूल-रयणीसु ।
सिसिरे वाहिर सयणा ते साहू वंदिमो णिच्चं ।।२।।

नोट :–उपर्युक्त लघुसिद्ध और लघुयोगिभक्ति पढ़कर लोच प्रारम्भ करना चाहिए तथा लोच समाप्त हो जानेपर निम्नलिखित भक्ति पढ़कर लोचक्रिया का निष्ठापन (समाप्त) करना चाहिए ।

गिरि-कन्दर-दुर्गेषु ये वसन्ति दिगम्बराः ।
पाणिपात्र-पुटाहारास्ते यांति परमां गतिम् ।।३।।

इच्छामि भंते ! योगिभक्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णा-रस-कम्म-भूमिसु, आदावण-रुक्ख-मूल-अब्भोवास-ठाण-मोण-वीरास-णेक्कपास-कुक्कुडासण-चउ-छ-पक्ख-खवणादि-जोग-जुत्ताणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइगमणं समाहि-मरणं, जिणगुणसंपत्ति होदु मज्झं

(नौ बार णमोकारमन्त्र का जाप करना)

अथ लोचनिष्ठापनक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकलकर्म-क्षयार्थं भाव पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री लघु-सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

पृ० २३६ पर देखें ।

लिखी सम्मत्तणाण-दंसण................ इत्यादि लघुसिद्ध-भक्ति पढ़ना । तत्पश्चात् लोच सम्बन्धी प्रतिक्रमण करना चाहिए ।

।। इति नैमित्तिक क्रिया-विधि-समाप्त ।।

कौन-कौन सी भक्ति कहाँ-कहाँ करनी चाहिए इसका स्पष्ट विवरण

कार्य	भक्ति
जिन प्रतिमावंदन	चैत्यभक्ति, पंचगुरुभक्ति
आचार्य वंदना (गवासन से)	लघु सिद्धभक्ति, आचार्य भक्ति
सिद्धांतवेत्ता आचार्य की वंदना	सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति, आचार्य भक्ति
साधारण मुनियों की वंदना	सिद्धभक्ति
सिद्धांतवेत्ता मुनियों की वंदना	सिद्धभक्ति, श्रुतभक्ति
स्वाध्याय का प्रारम्भ	लघुश्रुत भक्ति, आचार्य भक्ति
स्वाध्याय की समाप्ति	लघु श्रुत भक्ति
आचार्य की अनुपस्थिति में पहले दिन उपवास वा प्रत्याख्यान ग्रहण किया हो तो दूसरे दिन आहार के समय	सिद्ध भक्ति पढ़कर उसका त्याग वा आहार के लिये गमन
आहार की समाप्ति पर अगले दिन के उपवास वा प्रत्याख्यान का ग्रहण करने में	सिद्धभक्ति
आचार्य की उपस्थिति में आहार लिये जाने के पहले	लघुसिद्धभक्ति, लघुयोगिभक्ति
आहार के अनंतर प्रत्याख्यान वा उपवास की प्रतिज्ञा के लिये	लघुसिद्धभक्ति, लघुयोगिभक्ति

चतुर्दशी के दिन त्रिकाल वंदना के लिये	चैत्यभक्ति, श्रुतभक्ति, पंच-गुरुभक्ति अथवा सिद्धभक्ति, चैत्यभक्ति, श्रुतभक्ति, पंचगुरु भक्ति, शांतिभक्ति और समाधिभक्ति ।
नंदीश्वर पर्व में	सिद्धभक्ति, नंदीश्वरभक्ति, पंचगुरुभक्ति, शांतिभक्ति, समाधिभक्ति ।
सिद्धप्रतिमा के सामने	सिद्धभक्ति
तीर्थंकर के जन्म दिन	चैत्यभक्ति, श्रुतभक्ति, पंच-गुरुभक्ति अथवा सिद्धभक्ति, चैत्यभक्ति, श्रुतभक्ति, पंचगुरुभक्ति, शान्तिभक्ति ।
अष्टमी-चतुर्दशी की क्रिया में अपूर्व चैत्यवंदना वा त्रिकाल नित्यवंदना के समय	चैत्यभक्ति, पंचगुरुभक्ति, शान्तिभक्ति ।
अभिषेक वंदना	सिद्धभक्ति, चैत्यभक्ति, पंचगुरुभक्ति, शांतिभक्ति
स्थिरबिंबप्रतिष्ठा	सिद्धभक्ति, शांतिभक्ति
चलबिंबप्रतिष्ठा	सिद्धभक्ति, शांतिभक्ति
चल बिंबप्रतिष्ठा के चतुर्थ अभिषेक में	सिद्धभक्ति, चैत्यभक्ति, पंचमहागुरुभक्ति, शांतिभक्ति

तीर्थंकरों के गर्भजन्मकल्याणक में	सिद्धभक्ति, चारित्रभक्ति, शांतिभक्ति ।
दीक्षाकल्याणक	सिद्धभक्ति, चारित्रभक्ति, योगि-भक्ति, शांतिभक्ति ।
ज्ञानकल्याणक	सिद्ध, श्रुत चारित्र, योगि, निर्वाण और शांति-भक्ति ।
निर्वाणकल्याणक	सिद्ध, श्रुत, चारित्र, योगि निर्वाण और शांति भक्ति ।
वीरनिर्वाण-सूर्योदय के समय	सिद्धभक्ति, निर्वाणभक्ति, पंचगुरुभक्ति, शांतिभक्ति ।
श्रुतपंचमी	वृहत्सिद्धभक्ति, बृहत्श्रुतभक्ति श्रुतस्कंध की स्थापना, बृहत् वाचना, बृहत् श्रुत भक्ति, आचार्य भक्ति पूर्वक स्वाध्याय, श्रुत भक्ति द्वारा स्वाध्याय की पूर्णता अंत में शांति भक्ति कर क्रिया की पूर्णता ।
श्रुतपंचमी के दिन गृहस्थों को	सिद्ध, श्रुत, शांतिभक्ति ।
सिद्धांत वाचना	स्वाध्याय का प्रारंभ श्रुतभक्ति, आचार्यभक्ति द्वारा करके वाचना अंत में श्रुत और शांति भक्ति।

यदि चतुर्दशी की क्रिया चतुर्दशी के दिन न हो सके तो पूर्णिमा वा अमावस्या के दिन अष्टमी की क्रिया करें अर्थात् सिद्ध, श्रुत, चारित्र और शांतिभक्ति ।

गृहस्थों को संन्यास के प्रारंभ में	सिद्ध, श्रुत, शान्तिभक्ति
गृहस्थों को संन्यासके अन्त में	सिद्ध, श्रुत, शान्तिभक्ति ।
वर्षायोग धारण करते समय	सिद्ध, योगि, चैत्यभक्ति ।
वर्षायोग धारण की प्रदक्षिणा में	यावंति जिनचैत्यानि, स्वयंभूस्तोत्र की स्तुति चैत्यभक्ति
वर्षायोग स्वीकार करते समय	गुरुभक्ति, शांतिभक्ति
वर्षायोग की समाप्ति में	वर्षायोग धारण करने की पूर्व विधि
आचार्यपद ग्रहण करते समय	सिद्ध, आचार्य, शांतिभक्ति
प्रतिमायोग धारण करने वाले मुनि की वंदना करते समय	सिद्ध, योगि, शांतिभक्ति
दीक्षा ग्रहण करते समय	बृहत्सिद्धभक्ति, योगिभक्ति
दीक्षा के अन्त में	सिद्धभक्ति
केशलोंच करते समय	लघुसिद्धभक्ति, लघुयोगिभक्ति
लोंच के अन्त में	सिद्धभक्ति
प्रतिक्रमण में	सिद्ध, प्रतिक्रमण, वीरभक्ति, चतुर्विंशतितीर्थंकरभक्ति
रात्रियोग धारण	योगिभक्ति
रात्रियोग का त्याग	योगिभक्ति

देववंदना में दोष लगने पर	समाधिभक्ति
सामान्य ऋषि के स्वर्गवास होनेपर उनके शरीर और निषद्या की क्रिया में	सिद्ध, योगि, शांतिभक्ति
सिद्धान्तवेत्ता साधु के स्वर्गवास में	सिद्ध, श्रुत, योगि, शांतिभक्ति
उत्तरगुणधारी सिद्धांतवेत्ता साधु के स्वर्गवास पर	सिद्ध, चारित्र, योगि, शांतिभक्ति।
आचार्य के स्वर्गवास होने पर	सिद्ध, श्रुत, आचार्य, योगि, शांति भक्ति
सिद्धान्तवेत्ता आचार्य के स्वर्गवास होने पर	सिद्ध, श्रुत, योगि, आचार्य, शान्ति भक्ति
उत्तर गुणधारी आचार्य के स्वर्गवास पर	सिद्ध, श्रुतयोगि, आचार्य, शान्ति भक्ति
उत्तर गुणधारी सिद्धान्तवेत्ता आचार्य के स्वर्गवास होने पर	सिद्ध, चारित्र, योगि, आचार्य शान्तिभक्ति
पाक्षिक प्रतिक्रमण में	सिद्ध, चारित्र, प्रतिक्रमण, वीर भक्ति, चतुर्विंशति भक्ति, चारित्रालोचना, गुरुभक्ति, बृहदालोचना, गुरुभक्ति, लघु आचार्य भक्ति ।

चतुर्मासिक प्रतिक्रमण में	सिद्ध, चारित्र, प्रतिक्रमण वीरभक्ति, चतुर्विंशति भक्ति चारित्रालोचना, गुरुभक्ति, बृहदालोचना, गुरुभक्ति, लघु आचार्य भक्ति ।
वार्षिक प्रतिक्रमण में	सिद्ध, चारित्र, प्रतिक्रमण वीरभक्ति, चतुर्विंशति भक्ति चारित्रालोचना, गुरुभक्ति, बृहदालोचना, गुरुभक्ति, लघु आचार्य भक्ति ।

चतुर्थ खण्ड समाप्त

पंचम खण्ड

अथ पाक्षिकादिप्रतिक्रमणम्

(पाक्षिक, चातुर्मासिक एवं वार्षिक आदि प्रतिक्रमणों में सभी साधर्मी शिष्य, लघुसिद्ध, श्रुत एवं आचार्य भक्ति द्वारा आचार्य श्री की वन्दना करें ।)

नमोऽस्तु आचार्य-वन्दनायां प्रतिष्ठापन-सिद्ध-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् । (९ जाप्य)

सम्मत्त-णाण दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं ।
अगुरु-लघु-मव्वावाहं अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ।।१।।
तवसिद्धे, णयसिद्धे संजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य ।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमंसामि ।।२।।

इच्छामि भंते ! सिद्ध भत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सलोचेउं सम्मणाण सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, अट्ठविह-कम्म-विप्पमुक्काणं, अट्ठगुण संपण्णाणं, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तव सिद्धाणं, णय सिद्धाणं, संयम सिद्धाणं, चरित्तसिद्धाणं, अतीताणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं सव्व-सिद्धाणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ, बोहिलाओ सुगइगमणं समाहि-मरणं जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं !

नमोऽस्तु आचार्य-वन्दनायां प्रतिष्ठापन-श्रुत-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् । (९ जाप्य)

कोटी-शतं द्वादश चैव कोट्यो, लक्षाण्यशीति-त्र्यधिकानि चैव।
पंचाश-दष्टौ च सहस्र-संख्य-मेतच्छ्रुतं पंचपदं नमामि।।१।।

अरहंत-भासियत्थं गणहर-देवेहिं गंथियं सम्मं।
पणमामि भत्तिजुत्तो सुद-णाण-महोवहिं सिरसा।।२।।

इच्छामि भंते ! सुदभत्ति काउस्सगो कओ, तस्सालोचेउं अंगोवंग-पइण्णय-पाहुडय-परियम्म-सुत्त-पढमाणिओग-पुव्वगय-चूलिया चेव सुत्तत्थय-थुइ-धम्म-कहाइयं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं-जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं।

नमोऽस्तु आचार्य वन्दनायां प्रतिष्ठापनाचार्य भक्ति-कायोत्सर्गं करोम्यहम्। (९ जाप्य)

श्रुत-जलधि-पारगेभ्यः स्व-पर-मत-विभावना-पटु-मतिभ्यः।
सुचरित-तपो-निधिभ्यो नमो गुरुभ्यो गुण-गुरुभ्यः।।१।।

छत्तीस-गुण-समग्गे पंच-विहाचार-करण संदरिसे।
सिस्साणुग्गह-कुसले धम्माइरिए सदा वन्दे।।२।।

गुरु-भत्ति संजमेण य तरंति संसार-सायरं घोरं।
छिण्णंति अट्ठ-कम्मं जम्मण-मरणं ण पावेंति।।३।।

ये नित्यं व्रत-मन्त्र-होम-निरता ध्यानाग्नि-होत्रा कुलाः।
षट्-कर्माभि-रतास्तपो-धन-धनाः साधु क्रियाः साधवः।।

शील-प्रावरणा गुण-प्रहरणा-श्चन्द्रार्क-तेजोधिका ।
मोक्ष-द्वार-कपाट-पाटन-भटाः प्रीणंतु मां साधवः ।।४।।

गुरुवः पान्तु नो नित्यं ज्ञानं-दर्शन-नायकाः ।
चारित्रार्णव-गंभीरा मोक्ष-मार्गोपदेशकाः ।।५।।

इच्छामि भंते ! आइरिय-भत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचारित्त जुत्ताणं पंच विहाचाराणं आइरियाणं आयारादि-सुद-णाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं; ति-रयण-गुण-पालण रयाणं सव्वसाहूणं; णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि णमस्सामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं जिणगुण संपत्ति होउ मज्झं ।

(यहाँ शिष्यों और साधर्मियों से युक्त आचार्य (गुरु) अपने इष्ट देव को नमस्कार करें पश्चात् "समतासर्वभूतेषु" इत्यादि पाठ और वृहद्सिद्ध एवं चारित्रभक्ति अन्चलिका सहित बोलें ।)

नमः श्रीवर्धमानाय निर्धूत-कलिरात्मने ।
सालोकानां त्रिलोकानां यद्-विद्या दर्पणायते ।।१।।

समता सर्व-भूतेषु संयमः शुभ-भावना ।
आर्त्त-रौद्र-परित्याग-स्तद्धि सामायिकं मतं ।।२।।

अथ सर्वातिचार विशुद्ध्यर्थं (पाक्षिक) (चातुर्मासिक) (वार्षिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां कृत-दोष-निराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
गामो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।

चत्तारि-मंगलं-अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं केवलि-पण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलि-पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वंज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वजामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस-कम्मभूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्म-देसगाणं, धम्म-णायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं दंसाणाणं चरित्ताणं, सदा करेमि किरियम्मं । करेमि भंते ! सामाइयं सव्व-सावज्ज-जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण-मणसा, वचसा, काएण, ण करेमि, ण कारेमि, अण्णं करंतं पि ण समणुमणामि तस्स भंते! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि, तावकालं, पावकम्मं, दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(यहाँ तीन आवर्त एक शिरोनति करके २७ उच्छ्वास पूर्वक कायोत्सर्ग करें अनन्तर नमस्कार करके पुनः तीन आवर्त और एक शिरोनति करके चतुर्विंशति स्तव पढ़ें ।)

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे ।
णर-पवर-लोए-महिए, विहुय-रय-मले महप्पण्णे ।।१।।

लोयस्सुज्जोययरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वन्दे ।
अरहंते कित्तिस्से चउवीसं चेव केवलिणो ।।२।।

उसह-मजियं च वन्दे संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउ-मप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे ।।३।।

सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ।।४।।

कुंथुं च जिणवरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदामिरिट्ठ-णेमिं तह पासं वड्ढमाणं च ।।५।।

एवं मए अभित्थुआ विहुय-रय-मला-पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।।६।।

कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।७।।

चंदेहिं णिम्मल-यरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायर-मिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।८।।

(यहाँ तीन आवर्त और एक शिरोनति करके निम्नलिखित सिद्धभक्ति पढ़ें)

श्री सिद्धभक्ति

सिद्धा-नुद्धूत-कर्म-प्रकृति-
समुदयान् साधितात्म-स्वभावान् ।
वन्दे सिद्धि-प्रसिद्धयै,
तदनुपम-गुण-प्रग्रहाकृष्टि-तुष्टः ।
सिद्धिः स्वात्मोपलब्धिः
प्रगुण-गुण-गणोच्छादि-दोषापहाराद् ।
योग्योपादान-युक्त्या
दृषद् इह यथा हेम-भावोपलब्धिः ।।१।।

नाभावः सिद्धि-रिष्टा न निज-गुण-हतिस्तत्-तपोभि-र्न युक्तेः ।
अस्त्यात्मानादि-बद्धः स्व-कृतज-फल भुक्-तत्-क्षयान् मोक्षभागी ।।
ज्ञाता दृष्टा स्वदेह-प्रमिति-
रुपसमाहार-विस्तार-धर्मा-
ध्रौव्योत्पत्ति-व्ययात्मा
स्व-गुण-युत-इतो नान्यथा साध्य-सिद्धिः ।।२।।
स त्वन्तर्बाह्य-हेतु-प्रभव-
विमल-सद्दर्शन-ज्ञान-चर्या-
संपद्धेति-प्रघात-क्षत-दुरित-
तया व्यञ्जिताचिन्त्य-सारैः ।
कैवल्यज्ञान-दृष्टि-प्रवर-सुख-
महावीर्य सम्यक्त्व-लब्धि-
ज्योति-र्वातायनादि-स्थिर-
परम-गुणै-रद्भुतै-र्भासमानः ।।३।।

जानन् पश्यन् समस्तं
सम-मनुपरतं संप्रतृप्यन् वितन्वन्,
धुन्वन् ध्वान्तं नितान्तं
निचित-मनुपमं प्रीणयन्नीशभावम्।
कुर्वन् सर्व-प्रजाना-मपर-
मभिभवन् ज्योति-रात्मानमात्मा,
आत्मन्येवात्मनासौ क्षण-
मुपजनयन्-सत्-स्वयंभूः प्रवृत्तः ।।४।।

छिन्दन् शेषानशेषान्-निगल-
बल-कलींस्तै-रनन्त-स्वभावैः,
सूक्ष्मत्वाग्र्यावगाहागुरु-
लघुक-गुणैः क्षायिकैः शोभमानः।
अन्यै-श्चान्य-व्यपोह-प्रवण-
विषय-संप्राप्ति-लब्धि-प्रभावै-
रूर्ध्वं-व्रज्या-स्वभावात् समय-
मुपगतो धाम्नि संतिष्ठतेऽग्र्ये ।।५।।

अन्याकाराप्ति-हेतु-र्न च
भवति परो येन तेनाल्प-हीनः,
प्रागात्मोपात्त-देह-प्रति-
कृति-रुचिराकार एव ह्यमूर्तः।
क्षुत्-तृष्णा-श्वास-कास-ज्वर-
मरण-जरानिष्ट-योग-प्रमोह,

व्यापत्त्याद्युग्र-दुःख-प्रभव-
    भव-हतेः कोऽस्य सौख्यस्य माता ॥६॥

आत्मोपादान-सिद्धं स्वय-
    मतिशय-वद्-वीत बाधं विशालम्,
वृद्धि-ह्रास-व्यपेतं विषय-
    विरहितं निःप्रतिद्वन्द्व-भावम् ।
अन्य-द्रव्यानपेक्षं निरुपम-
    ममितं शाश्वतं सर्वकालम्,
उत्कृष्टानन्त-सारं परम-
    सुखमतस्तस्य सिद्धस्य जातम् ॥७॥

नार्थः क्षुत्-तृड्-विनाशाद्
    विविध-रस-युतै-रन्न-पानै-रशुच्या,
नास्पृष्टे-र्गन्ध-माल्यै-र्नहि
    मृदु-शयनै-र्ग्लानि-निद्राद्यभावात् ।
आतंकार्ते-रभावे तदुपशमन-
    सद्भेषजानर्थतावद्
दीपानर्थक्यवद्वा व्यपगत-
    तिमिरे दृश्यमाने समस्ते ॥८॥

तादृक्-सम्पत्समेता विविध-
    नय-तपः संयम-ज्ञान-दृष्टि-
चर्या-सिद्धाः समन्तात्
    प्रवितत-यशसो विश्व-देवाधि देवाः ।

भूता भव्या भवन्तः
सकल-जगति ये स्तूयमाना विशिष्टै,
स्तान् सर्वान् नौम्यनन्तान्
निजिग-मिषु-रं तत्स्वरूपं त्रिसन्ध्यम् ।।१।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सा-लोचेउं सम्मणाण-सम्म-दंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, अट्ठविह-कम्मविप्पमुक्काणं, अट्ठगुणसंपण्णाणं, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं तवसिद्धाणं, णयसिद्धाणं, संजमसिद्धाणं, चरित्तसिद्धाणं अतीता-णागद-वट्टमाण-कालत्तय सिद्धाणं, सव्वसिद्धाणं णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं आलोचना चारित्र भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(यहाँ आवर्त आदि की पूर्ण विधिसहित सामायिक दण्डक एवं "थोस्सामिस्तव" इत्यादि बोलकर निम्नलिखित चारित्रभक्ति आलोचना सहित बोलना चाहिए ।)

श्री चारित्रभक्ति

येनेन्द्रान् भुवन-त्रयस्य विलसत्-केयूर-हारांगदान्,
भास्वन्-मौलि-मणि-प्रभा-प्रविसरोत्-तुंगोत्तमांगान्-नतान् ।
स्वेषां पाद-पयोरुहेषु मुनय-श्चक्रुः प्रकामं सदा,
वन्दे पञ्चतयं तमद्य निगदन्-नाचार-मभ्यर्चितम् ।।१।।

ज्ञानाचार का स्वरूप

अर्थ-व्यञ्जन-तद्-द्वया-विकलता-कालोपधा-प्रश्रयाः,
स्वाचार्याद्यनपह्नवो बहु-मति-श्चेत्यष्टधा व्याहृतम्।
श्री-मज्ज्ञाति कुलेन्दुना भगवता तीर्थस्य कर्त्राऽञ्जसा,
ज्ञानाचार-महं त्रिधा प्रणिपताम्युद्धूतये कर्मणाम्॥२॥

दर्शनाचार का स्वरूप

शंका-दृष्टि-विमोह-काङ्क्षण-विधि-व्यावृत्ति-सन्नद्धताम्,
वात्सल्यं विचिकित्सना-दुपरतिं धर्मोपबृंहक्रियाम्।
शक्त्या शासन-दीपनं हित-पथाद् भ्रष्टस्य संस्थापनम्,
वन्दे दर्शन-गोचरं सुचरितं मूर्ध्ना नमन्नादरात्॥३॥

तप-आचार (बाह्यतप) का स्वरूप

एकान्ते शयनोपवेशन कृतिः संतापनं तानवम्,
संख्या-वृत्ति-निबन्धना मनशनं विष्वाणमर्द्धोदरम्।
त्यागं चेन्द्रिय-दन्तिनो मदयतः स्वादो रसस्यानिशम्,
षोढ़ा बाह्य-महं स्तुवे शिव-गति-प्राप्त्यभ्युपायं तपः॥४॥

अन्तरंग तपों का वर्णन

स्वाध्यायः शुभ-कर्मणश्च्युतवतः संप्रत्यवस्थापनम्,
ध्यानं व्यापृति-रामयाविनि गुरौ वृद्धे च बाले यतौ।
कायोत्सर्जन-सत्-क्रिया विनय इत्येवं तपः षड्-विधम्,
वन्देऽभ्यन्तर-मन्तरंग बल-वद्-विद्वेषि विध्वंसनम्॥५॥

वीर्याचार का वर्णन

सम्यग्ज्ञान-विलोचनस्य दधतः श्रद्धान-मर्हन्-मते,
वीर्यस्यावि निगूहनेन तपसि स्वस्य प्रयत्नाद्यतेः ।
या वृत्ति-स्तरणीव-नौ-रविवरा लघ्वी भवोदन्वतो,
वीर्याचार-महं तमूर्जित-गुणं वन्दे सता-मर्चितम् ।।६।।

चारित्राचार का वर्णन

तिस्रः सत्तम-गुप्तय-स्तनु-मनो-भाषा निमित्तोदयाः,
पञ्चेर्यादि-समाश्रयाः समितयः पञ्च-व्रतानीत्यपि ।
चारित्रोपहितं त्रयो-दश-तयं पूर्वं न दृष्टं परै-
राचारं परमेष्ठिनो जिनपते-र्वीरं नमामो वयम् ।।७।।

पञ्चाचार पालनेवाले मुनिराजों की वन्दना

आचारं सह-पञ्च-भेद-मुदितं तीर्थं परं मंगलम्,
निर्ग्रन्थानपि सच्चरित्र-महतो वन्दे समग्रान् यतीन् ।
आत्माधीन-सुखोदया-मनुपमां लक्ष्मी-मविध्वंसिनीम्,
इच्छन् केवल-दर्शनावगमन प्राज्य प्रकाशोज्ज्वलाम् ।।८।।

चारित्र पालन में दोषों की आलोचना

अज्ञानाद्यदवीवृतं नियमिनोऽवर्तिष्यहं चान्यथा,
तस्मिन्-नर्जित-मस्यति प्रतिनवं चैनो निराकुर्वति ।
वृत्ते सप्ततयीं निधिं सुतपसामृद्धिं नयत्यद्भुतम्,
तन् मिथ्या गुरु-दुष्कृतं भवतु मे स्वं निन्दितो निंदितम्।।९।।

चारित्र धारण करने का उपदेश

संसार-व्यसना हति-प्रचलिता नित्योदय-प्रार्थिनः,
प्रत्यासन्न-विमुक्तयः सुमतयः शान्तैनसः प्राणिनः।
मोक्षस्यैव कृतं विशाल-मतुलं सोपान-मुच्चै-स्तराम्,
आरोहन्तु चरित्र-मुत्तम-मिदं जैनेन्द्र-मोजस्विनः।।१०।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! चारित्त-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, सम्मणाण-जोयस्स, सम्मत्ताहिट्ठियस्स, सव्व-पहाणस्स, णिव्वाण-मग्गस्स, कम्म-णिज्जर-फलस्स, खमा-हारस्स, पंच-महव्वय-संपण्णस्स, तिगुत्ति-गुत्तस्स, पंच-समिदि-जुत्तस्स, णाण-ज्झाण-साहणस्स, समया इव पवेसयस्स, सम्मचारित्तस्स, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

वृहद्-आलोचना

नोटः-यह वृहद् आलोचना आठ दिन में, पाक्षिकप्रतिक्रमण में, चातुर्मासिक प्रतिक्रमण में और वार्षिक प्रतिक्रमण में होती है, अतः जब प्रतिक्रमण करना हो तब की अर्थात् उस समय की दिन गणना बोलें ।

[इच्छामि भंते ! अट्ठमियम्मि आलोचेउं, अट्ठण्हं दिवसाणं, अट्ठण्हं राइणं, अब्भंतरदो, पंचविहो आयारो णाणायारो, दंसणायारो, तवायारो वीरियायारो, चारित्तायारो चेदि ।।१।।]

[इच्छामि भंते ! पक्खियम्मि आलोचेउं पण्णरसण्हं दिवसाणं, पण्णरसण्हं राइणं, अब्भंतरदो, पंचविहो आयारो, णाणायारो, दंसणायारो, तवायारो, वीरियायारो चरित्तायारो चेदि ।।२।।]

[इच्छामि भंते ! चउमासियम्मि आलोचेउं, चउण्हं मासाणं, अट्ठण्हं पक्खाणं, वीसुत्तर-सयदिवसाणं, वीसुत्तर-सय-राइणं, अब्भंतरदो, पंचविहो आयारो, णाणायारो दंसणायारो, तवायारो, वीरियायारो चरित्तायारो चेदि ।।३।।]

[इच्छामि भंते ! संवच्छरियम्मि आलोचेउं, बारसण्हं मासाणं, चउवीसण्हं पक्खाणं, तिण्हं-छावट्ठिसय-दिवसाणं, तिण्हं-छावट्ठि-सय-राइणं अब्भंतरदो, पंचविहो आयारो, णाणायारो, दंसणायारो, तवायारो, वीरियायारो, चरित्तायारो चेदि ।।४।।]

तत्थ णाणायारो अट्ठविहो काले, विणए, उवहाणे, बहुमाणे, तहेव अणिण्हवणे, विंजण-अत्थ-तदुभये चेदि । णाणायारो अट्ठविहो परिहाविदो, से अक्खर-हीणं वा, सर-हीणं वा, विंजण-हीणं वा, पद हीणं वा, अत्थ-हीणं वा, गंथ-हीणं वा, थएसु वा, थुइसु वा, अत्थक्खाणेसु वा, अणियोगेसु वा, अणियोग-द्दारेसु वा, अकाले-सज्झाओ कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, काले वा, परिहाविदो, अच्छाकारिदं वा, मिच्छा-मेलिदं वा, आ-मेलिदं, वा-मेलिदं, अण्णहा-दिण्हं, अण्णहा-पडिच्छिदं, आवासएसु-परिहीणदाए तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१।।

दंसणायारो अट्ठविहो

णिस्संकिय णिकंक्खिय णिव्विदिगिंच्छा अमूढदिट्ठी य ।
उवगूहण ठिदिकरणं वच्छल्ल-पहावणा चेदि ।।१।।

दंसणायारो अट्ठविहो परिहाविदो, संकाए, कंखाए, विदिगिंछाए, अण्ण-दिट्ठी-पसंसणाए, परपाखंड-पसंसणाए, अणायदण-सेवणाए, अवच्छल्लदाए, अपहावणाए, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२।।

तवायारो बारसविहो अब्भंतरो-छव्विहो, बाहिरो-छव्विहो चेदि । तत्थ बाहिरो अणसणं, आमोदरियं, वित्ति-परिसंखा, रस-परिच्चाओ, सरीर-परिच्चाओ, विवित्त-सयणासणं चेदि । तत्थ अब्भंतरो पायच्छित्तं, विणओ, वेज्जावच्चं, सज्झाओ, झाणं, विउस्सग्गो चेदि । अब्भंतरं बाहिरं बारसविहं-तवोकम्मं, ण कदं, णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।३।।

वीरियायारो पंचविहो परिहाविदो वर-वीरिय-परिक्कमेण, जहुत्त-माणेण, बलेण, वीरिएण, परिक्कमेण णिगूहियं, तवो-कम्मं, ण कदं, णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।४।।

चरित्तायारो तेरसविहो परिहाविदो पंच-महव्वदाणि, पंच-समिदीओ, तिगुत्तीओ चेदि । तत्थ पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं से पुढवि-काइया जीवा

असंखेज्जासंखेज्जा, आऊ-काइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, तेऊ-काइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वाऊ-काइया जीवा असंखेज्जा संखेज्जा, वणप्फदिकाइया जीवा अणंताणंता हरिया, बीआ, अंकुरा, छिण्णा, भिण्णा, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

बे-इंदियाजीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुक्खि, किमि, संख, खुल्लय-वराडय-अक्ख-रिट्ठय-गण्डवाल, संबुक्क, सिप्पि, पुलविकाइया एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

ते-इंदिया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुन्थूद्देहियविंच्छिय-गोभिंद-गोजुव-मक्कुण-पिपीलियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

चउरिंदिया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा दंस-मसय-मक्खि-पयंग-कीड-भमर-महुयर-गोमच्छियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पंचिंदियाजीवा असंखेज्जासंखेज्जा अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुच्छिमा, उब्भेदिमा, उववादिमा, अवि-चउरासीदि-जोणि-पमुह-सद-सहस्सेसु

एदेसिं, उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

अहावरे दुव्वे महव्वदे मुसावादादो वेरमणं से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, राएण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भयेण वा, पदोसेण वा, पमादेण, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, केण-वि-कारणेण जादेण वा, सव्वो मुसावादो भासिओ, भासाविओ, भासिज्जंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२।।

अहावरे तव्वे महव्वदे अदिण्णा-दाणादो वेरमणं से गामे वा, णयरे वा, खेडे वा, कव्वडे वा, मडंवे वा, मंडले वा, पट्टणे वा, दोणमुहे वा, घोसे वा, आसमे वा, सहाए वा, संवाहे वा, सण्णिवेसे वा, तिण्हं वा, कट्ठं वा, वियडिं वा, मणिं वा, एवमाइयं अदिण्णं गिण्हियं, गेण्हावियं, गेण्हिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कड ।।३।।

अहावरे चउत्थे महव्वदे मेहुणादो वेरमणं से देविएसु वा, माणुसिएसु वा, तेरिच्छिएसु वा, अचेयणिएसु वा, मणुण्णा मणुण्णेसु रूवेसु, मणुण्णा मणुण्णेसु सद्देसु, मणुण्णामणुण्णेसु गंधेसु, मणुण्णा मणुण्णेसु रसेसु, मणुण्णामणुण्णेसु फासेसु, चक्खिदिय-परिणामे, सोदिंदिय-परिणामे, घाणिंदिय-परिणामे, जिब्भिदिय परिणामे,

फासिंदिय परिणामे, णो-इंदिय-परिणामे, अगुत्तेण अगुत्तिंदिएण, णवविहं बंभचरियं, ण रक्खियं, ण रक्खावियं, ण रक्खिज्जंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।४।।

अहावरे पंचमे महव्वदे परिग्गहादो वेरमणं सो वि परिग्गहो दुविहो अब्भंतरो बाहिरो चेदि । तत्थ अब्भंतरो परिग्गहो णाणावरणीयं, दंसणावरणीयं, वेयणीयं, मोहणीयं, आउग्गं, णामं गोदं, अंतरायं चेदि अट्ठविहो । तत्थ बाहिरो परिग्गहो उवयरण-भंड-फलह-पीढ-कमण्डलु-संथार-सेज्ज-उवसेज्ज, भत्तपाणादि-भेदेण अणेयविहो, एदेण परिग्गहेण अट्ठविहं कम्मरयं बद्धं, बद्धावियं, बज्झन्तं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।५।।

अहावरे छट्ठे अणुव्वदे राइ-भोयणादो वेरमणं से असणं, पाणं, खाइयं, साइयं चेदि । चउव्विहो आहारो से तित्तो वा, कडुओ वा, कसाइलो वा, अमिलो वा, महुरो वा, लवणो वा, अलवणो वा, दुच्चिंतिओ, दुब्भासिओ, दुप्परिणामिओ, दुस्समिणिओ, रत्तीए भुत्तो, भुंजावियो, भुंज्जिजंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं।।६।।

पंचसमिदीओ, इरियासमिदी, भासासमिदी, एसणासमिदी, आदाण-णिक्खेवण समिदी, उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाणय-वियडि-पइट्ठावण-समिदी चेदि ।

तत्थइरियासमिदी पुव्वुत्तर-दक्खिण-पच्छिम चउदिसि, विदिसासु, विहरमाणेण, जुगंतर-दिट्ठिणा, भव्वेण दट्ठव्वा। डव-डव-चरियाए, पमाद-दोसेण, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।७।।

तत्थ भासासमिदी कक्कसा, कडुआ, परुसा, णिट्ठुरा, परकोहिणी, मज्झंकिसा, अइ-माणिणी, अणयंकरा, छेयंकरा, भूयाण-वहंकरा चेदि । दसविहा भासा, भासिया, भासाविया, भासिज्जंतो वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।८।।

तत्थ एसणासमिदी अहाकम्मेण वा, पच्छाकम्मेण वा, पुरा-कम्मेण वा, उद्दिट्ठयडेण वा, णिद्दिट्ठियडेण वा, कीडयडेण वा, साइया, रसाइया, सइंगाला, सधूमिया, अइ-गिद्धीए, अग्गीव, छण्हं जीव-णिकायाणं विराहणं, काऊण, अपरिसुद्धं, भिक्खं, अण्णं, पाणं, आहारियं, आहारावियं, आहारिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।९।।

तत्थ आदाण-णिक्खेवण-समिदी चक्कलं वा, फलहं वा, पोत्थयं वा, पीढं वा, कमण्डलुं वा, वियडिं वा, मणिं वा, एवमाइयं, उवयरणं, अप्पडिलेहिऊण-गेण्हंतेण वा, ठवंतेण वा, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो, कदो वा,

कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१०।।

तत्थ उच्चार-पस्सवण-खेल-सिंहाणय-वियडि-पइट्ठावणिया समिदी रत्तीए वा, वियाले वा, अचक्खुविसए, अवत्थंडिले, अब्भोवयासे, सणिद्धे, सवीए, सहरिए, एवमाइयासु, अप्पासुगट्ठाणेसु पइट्ठावंतेण, पाण-भूद-जीव-सत्ताणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।११।।

तिण्णि-गुत्तीओ मण-गुत्तीओ, वचि-गुत्तीओ, काय-गुत्तीओ चेदि । तत्थ मण-गुत्ती अट्टे झाणे, रुद्दे झाणे, इह-लोय-सण्णाए, पर-लोए-सण्णाए, आहारसण्णाए, भय-सण्णाए, मेहुण-सण्णाए, परिग्गह-सण्णाए, एवमाइयासु जा मण-गुत्ती, ण रक्खिया, ण रक्खाविया, ण रक्खिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१२।।

तत्थ वचि-गुत्ती इत्थि-कहाए, अत्थ-कहाए, भत्त-कहाए, राय-कहाए, चोर-कहाए, वेर-कहाए, परपासंड-कहाए, एवमाइयासु जा वचि-गुत्ती, ण रक्खिया, ण रक्खाविया, ण रखिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१३।।

तत्थ कायगुत्ती चित्त-कम्मेसु वा, पोत्त-कम्मेसु वा, कट्ठ-कम्मेसु वा, लेप्प-कम्मेसु वा, लय-कम्मेसु वा,

एवमाइयासु जा काय-गुत्ती, ण रक्खिया, ण रक्खाविया, ण रक्खिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१४।।

दोसु अट्ट-रुद्द-संकिलेस-परिणामेसु, तीसु अप्प-सत्थ-संकिलेस-परिणामेसु, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्तेसु, चउसु उवसग्गेसु, चउसु सण्णासु, चउसु पच्चएसु, पंचसु चरित्तेसु, छसु जीव-णिकाएसु, छसु आवासएसु, सत्तसु भयेसु, अट्ठसु सुद्धीसु, णवसु बंभचेर-गुत्तीसु, दससु समण-धम्मेसु, दससु धम्मज्झाणेसु, दससु मुण्डेसु, बारसेसु संजमेसु, बावीसाए परीसहेसु, पणवीसाए भावणासु, पणवीसाए किरियासु, अट्ठारस-सील-सहस्सेसु, चउरासीदि-गुण-सय-सहस्सेसु, मूलगुणेसु, उत्तरगुणेसु (अट्ठमियम्मि), (पक्खियम्मि), (चउमासियम्मि), (संवच्छरियम्मि), अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो जो तं पडिक्कमामि। मए पडिक्कंतं तस्स मे सम्मत्तमरणं, पंडियमरणं, वीरिय-मरणं, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिणगुण-सम्पत्ति होदु मज्झं ।

(यहाँ से नीचे लिखी सम्पूर्ण क्रिया मात्र आचार्य श्री को करना चाहिए)

नमोऽस्तु सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं सिद्ध-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् । (कायोत्सर्ग करें)

लघु सिद्धभक्ति

सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय-सुहुमं तहेव अवगहणं ।
अगुरु-लघु-मव्वावाहं अट्ठगुणा होंति सिद्धाणं ।।१।।

तवसिद्धे, णयसिद्धे संजमसिद्धे चरित्तसिद्धे य ।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमंसामि ।।२।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! सिद्धभत्ति काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, अट्ठविहकम्मविप्पमुक्काणं, अट्ठगुणसंपण्णाणं, उड्ढलोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं तवसिद्धाणं, णयसिद्धाणं, संजमसिद्धाणं, चरित्तसिद्धाणं अतीता-णागदवट्टमाण-कालत्तय सिद्धाणं, सव्वसिद्धाणं णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वन्दामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं समाहि-मरणं, जिण-गुण-सम्पत्ति होदु मज्झं ।

नमोऽस्तु सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं-मालोचना-योगि-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

णमो अरहंताण णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।

(कायोत्सर्ग करना)

लघु योगि भक्ति

प्रावृट्-काले सविद्युत्-प्र-पतित
सलिले वृक्ष-मूलाधिवासाः,
हेमन्ते रात्रि-मध्ये प्रति-विगत-
भयाः काष्ठ-वत्-त्यक्त देहाः।
ग्रीष्मे सूर्यांशु-तप्ता-गिरि-शिखर-
गताः स्थान-कूटांतर-स्थास्-,
ते मे धर्मं प्रदद्युर्मुनि-गण-
वृषभा मोक्ष-निःश्रेणि-भूताः ।।१।।

गिम्हे गिरि-सिहरत्था वरिसा-याले रुक्ख-मूल-रयणीसु
सिसिरे वाहिर-सयणा ते साहू वंदिमो णिच्चं ।।२।।

गिरि-कन्दर-दुर्गेषु ये वसन्ति दिगम्बराः।
पाणि-पात्र-पुटाहारा-स्ते यांति परमां गतिम् ।।३।।

इच्छामि भंते! योगिभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णा-रस-कम्म-भूमिसु, आदावण-रुक्ख-मूल-अब्भोवास-ठाण-मोण-वीरासणेक्क-पास-कुक्कुडासण-चउ-छ-पक्ख-खवणादिजोग-जुत्ताणं सव्वसाहूणं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइ-गमणं समाहि-मरणं, जिणगुणसंपत्ति होदु मज्झं।

आलोचना

इच्छामि भंते! चरित्तायारो, तेरसविहो, परिहाविदो, पंच-महव्वदाणि, पंच-समिदीओ, ति-गुत्तीओ चेदि। तत्थ

पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं से पुढवि-काइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, आऊ-काइया जीवा असंखेज्जा-संखेज्जा, तेऊ-काइया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वाऊ-काइया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वणप्फदि-काइया जीवा अणंताणंता हरिया, बीआ, अंकुरा, छिण्णा, भिण्णा, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१।।

बे-इंदियाजीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुक्खि, किमि, संख, खुल्लय-वराडय-अक्ख-रिट्ठय-गण्डवाल, संबुक्क सिप्पि, पुलविकाइया एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२।।

ते-इंदिया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुन्थूद्देहियविंच्छिय-गोभिंद-गोजुव-मक्कुण-पिपीलियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ॥३॥

चउरिंदिया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा दंस-मसय-मक्खि-पयंग-कीड-भमर-महुयर-गोमच्छियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।४।।

पंचिंदियाजीवा असंखेज्जासंखेज्जा अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुच्छिमा, उब्भेदिमा,

उववादिमा, अवि-चउरासीदि-जोणि-पमुह-सद-सहस्सेसु, एदेसिं, उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणु-मण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।५।।

वद समि-दिंदिय-रोधोलोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च ।।१।।

एदे खलु मूलगणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद कदादो अइचारादो णियत्तो हं ।।२।।

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं ।।१।।

इस प्रकार आचार्य श्री उपर्युक्त पाठ को तीनबार बोलकर अरहंतदेव के समक्ष अपने दोषों की आलोचना करें। पश्चात् जैसे दोष लगे हों उनके अनुसार स्वयं प्रायश्चित्त लेकर निम्नलिखित पाठ तीन बार बोलें ।

पञ्चमहाव्रत-पञ्चसमिति-पञ्चेन्द्रियरोध-लोचादि षडावश्यक-क्रियाष्टाविंशति-मूलगुणाः, उत्तमक्षमामार्दवार्जव-शौच सत्य-संयम-तप-स्त्यागाकिञ्चन्य ब्रह्मचर्याणि दश-लाक्षणिको धर्मः, अष्टादश-शील-सहस्राणि, चतुरशीति-लक्ष-गुणा, त्रयोदशविधं चारित्रं, द्वादशविधं तपश्चेति । सकलं-सम्पूर्ण अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्व-साधु-साक्षिकं सम्यक्त्व-पूर्वकं दृढ़-व्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ।।१।।

पञ्चमहाव्रत-पञ्चसमिति-पञ्चेन्द्रियरोध.............
सम्यक्त्व-पूर्वकं, दृढ़व्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु।।२।।

पञ्चमहाव्रत-पञ्चसमिति-पञ्चेन्द्रियरोध..............

सम्यक्त्व-पूर्वकं दृढ़व्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ।।३।।

उपर्युक्त पंचमहाव्रत-पंचसमिति आदि पाठ तीनबार बोलकर प्रायश्चित्त के योग्य शिष्यों को प्रायश्चित्त देवें । पश्चात् देव के लिए निम्नलिखित गुरुभक्ति बोलें ।

निष्ठापनाचार्य भक्ति

नमोऽस्तु निष्ठापनाचार्यभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

कायोत्सर्ग करना

श्रुत-जलधि-पारगेभ्यः स्व-पर-मत-विभावना-पटु-मतिभ्यः।
सुचरित-तपो-निधिभ्यो नमो गुरुभ्यो गुण-गुरुभ्यः ।।१।।

छत्तीस-गुण-समग्गे पंच-विहाचार-करण-संदरिसे ।
सिस्साणुग्गह-कुसले धम्माइरिए सदा वन्दे ।।२।।

गुरु-भत्ति-संजमेण य तरंति संसार-सायरं घोरं ।
छिण्णंति अट्ठ-कम्मं जम्मण-मरणं ण पावेंति ।।३।।

ये नित्यं व्रत-मन्त्र-होम-निरता ध्यानाग्नि-होत्रा-कुला,
षट्-कर्माभि-रतास्तपो-धन-धनाः साधु क्रियाः साधवः ।
शील-प्रावरणा गुण-प्रहरणा-श्चन्द्रार्क-तेजोधिका,
मोक्ष-द्वार-कपाट-पाटन-भटाः प्रीणंतु मां साधवः ।।४।।

गुरवः पान्तु नो नित्यं ज्ञान-दर्शन-नायकाः ।
चारित्रार्णव-गंभीरा मोक्ष-मार्गोपदेशकाः ।।५।।

(यहाँ आचार्य सहित शिष्य मुनि और साधर्मी मुनि मिलकर आचार्य श्री के आगे निम्नलिखित पाठ बोलें ।)

इच्छामि भंते ! (पक्खियम्मि), (चउमासियम्मि), (संवच्छरियम्मि) आलोचेउं, पंचमहव्वदाणि तत्थ पढमं महव्वदं पाणादिवादादो वेरमणं, बिदियं महव्वदं मुसावादादो वेरमणं, तिदियं महव्वदं अदिण्णा-दाणादो वेरमणं, चउत्थं महव्वदं मेहुणादो वेरमणं, पंचमं महव्वदं परिग्गहादो वेरमणं, छट्ठं अणुव्वदं राइभोयणादो वेरमणं, तिस्सु गुत्तीसु, णाणेसु, दंसणेसु, चरित्तेसु, बावीसाए परीसहेसु, पण-वीसाए भावणासु, पण-वीसाए किरियासु, अट्ठारस-सील-सहस्सेसु, चउरासीदि-गुण-सय-सहस्सेसु, बारसण्हं संजमाणं, बारसण्हं तवाणं, बारसण्हं अंगाणं, तेरसण्हं चरित्ताणं, चउद्दसण्हं पुव्वाणं, एयारसण्हं पडिमाणं दसविह मुण्डाणं, दसविह-समण-धम्माणं, दसविह-धम्मज्झाणाणं, णवण्हं बंभचेर-गुत्तीणं, णवण्हं णो-कसायाणं, सोलसण्हं कसायाणं, अट्ठण्हं कम्माणं, अट्ठण्हं सुद्धीणं, अट्ठण्हं पवयण-माउयाणं, सत्तण्हं भयाणं, सत्तविहसंसाराण, छण्हं जीव-णिकायाणं, छण्हं आवासयाणं, पंचण्हं इन्दियाणं, पंचण्हं महव्वयाणं, पंचण्हं समिदीणं, पंचण्हं चरित्ताणं, चउण्हं सण्णाणं, चउण्हं पच्चयाणं, चउण्हं उवसग्गाणं, मूलगुणाणं, उत्तरगुणाणं, दिट्ठियाए, पुट्ठियाए, पदोसियाए, परिदावणियाए, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण

वा, पमादेण वा, पिम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, एदेसिं अच्चासादणाए, तिण्हं दंडाणं, तिण्हं लेस्साणं, तिण्हं गारवाणं, तिण्हं अप्पसत्थसंकिलेस-परिणामाणं, दोण्हं अट्ठरुद्द, संकिलेस-परिणामाणं, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्ताणं, मिच्छत्त-पाउग्गं, असंजम-पाउग्गं, कसाय-पाउग्गं, जोगपाउग्गं, अप्पाउग्ग-सेवणदाए, पाउग्ग-गरहणदाए इत्थ मे जो कोई (पक्खियम्मि) (चउमासियम्मि) (संवच्छरियम्मि) अदिक्मो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो, तस्स भंते ! पडिक्कमामि पडिक्कंतं तस्स मे सम्मत्त-मरणं, पंडिय-मरणं, वीरिय-मरणं, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति, होदु मज्झं ।

वद-समि-दिंदिय-रोधो लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं ठिदि-भोयण मेय-भत्तं च ।।१।।

एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो अइचारादो णियत्तो हं ।।२।।

छेदोवट्ठवणं होदु मज्झं

(यह पाठ तीन बार बोलना चाहिए)

पञ्चमहाव्रत - पञ्चसमिति - पञ्चेन्द्रियरोध लोचादि षडावश्यक-क्रियाष्टाविंशति मूलगुणाः, उत्तमक्षमामार्दवार्जव-शौच-सत्य संयम-तप-स्त्यागाकिञ्चन्य-ब्रह्मचर्याणि दशलाक्षणिको धर्मः, अष्टादश-शील-सहस्राणि, चतुरशीति-

लक्ष-गुणाः, त्रयोदश-विधं चारित्रं, द्वादशविधं तपश्चेति, सकलं, सम्पूर्णं, अर्हत्सिद्धा-चार्योपाध्याय-सर्व-साधु-साक्षिकं, सम्यक्त्व-पूर्वकं, दृढव्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ।।१।।

पञ्चमहाव्रत-पंचसमिति-पञ्चेन्द्रियरोध..................
सम्यक्त्व-पूर्वकं, दृढव्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ।।२।।

पञ्चमहाव्रत-पंचसमिति-पञ्चेन्द्रियरोध..................
सम्यक्त्व-पूर्वकं, दृढव्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ।।३।।

प्रतिक्रमण भक्तिः

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं (पाक्षिक) (चातुर्मासिक) (वार्षिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां कृत-दोष-निराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भावपूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री प्रतिक्रमणभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(इस प्रकार विज्ञापन का उच्चारण कर आचार्य श्री सहित सभी शिष्य एवं साधर्मी मुनिगण निम्नलिखित णमो अरहंताण इत्यादि दण्डक बोलकर कायोत्सर्ग करें ।)

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।

चत्तारि-मंगलं-अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं केवलि-पण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलि-पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि-अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि, केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु, पण्णारस-कम्मभूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं, पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्म-देसगाणं, धम्म-णायगाणं, धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं, सदा करेमि किरियम्मं ।

करेमि भंते ! सामाइयं सव्व-सावज्ज-जोगं, पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण मणसा, वचसा, काएण, ण करेमि, ण कारेमि, अण्णं कीरंतं पि ण समणुमणामि, तस्स भंते! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि तावकालं, पावकम्मं, दुच्चरियं वोस्सरामि ।

(२७ उच्छ्वासों में कायोत्सर्ग करना)

(यथोक्त परिकर्म के बाद केवल आचार्य श्री निम्नलिखित थोस्सामि दण्डक पढ़ें।)

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे ।
णर-पवर-लोय-महिए, विहुय-रय-मले महप्पण्णे ।।१।।

लोयस्सुज्जोययरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वन्दे ।
अरहंते कित्तिस्से चउवीसं चेव केवलिणो ।।२।।

उसह-मजियं च वन्दे संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउ-मप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे ।।३।।

सुविहिं च पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ।।४।।
कुंथुं च जिणवरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदामिरिट्ठ-णेमिं तह पासं वड्ढमाणं च ।।५।।
एवं मए अभित्थुआ विहुय-रय-मला-पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।।६।।
कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।७।।
चंदेहिं णिम्मल-यरा, आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायर-मिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।८।।

(यहाँ मात्र आचार्य श्री निम्नलिखित गणधर वलय का पाठ पढ़ें)

गणधर-वलय

जिनान् जिताराति-गणान् गरिष्ठान्,
देशावधीन् सर्व-परावधींश्च ।
सत्-कोष्ठ-बीजादि-पदानुसारीन्,
स्तुवे गणेशानपि तद्-गुणाप्त्यै ।।१।।
संभिन्न-श्रोतान्वित-सन्-मुनीन्द्रान्,
प्रत्येक-सम्बोधि-बुद्ध-धर्मान् ।
स्वयं-प्रबुद्धांश्च विमुक्ति-मार्गान्,
स्तुवे गणेशानपि तद्-गुणाप्त्यैः ।।२।।
द्विधा मनःपर्यय-चित्-प्रयुक्तान्,
द्विपञ्च-सप्तद्वय-पूर्व-सक्तान् ।

अष्टांग-नैमित्तिक शास्त्र-दक्षान्,
स्तुवे गणेशानपि-तद्-गुणाप्त्यै ।।३।।
विकुर्वणाख्यर्द्धि-महा-प्रभावान्,
विद्याधरांश्चारण-ऋद्धि-प्राप्तान् ।
प्रज्ञाश्रितान् नित्य-ख-गामिनश्च,
स्तुवे गणेशानपि-तद्-गुणाप्तयै ।।४।।
आशी र्विषान् दृष्टि-विषान् मुनीन्द्रा-,
नुग्राति-दीप्तोत्तम-तप्त तप्तान् ।
महातिघोर-प्रतपःप्रसक्तान्,
स्तुवे गणेशानपि-तद्-गुणाप्त्यै ।।५।।
वन्द्यान् सुरै-र्घोर-गुणांश्च लोके,
पूज्यान् बुधै-र्घोर-पराक्रमांश्च ।
घोरगदि-संसद्-गुण ब्रह्म युक्तान्,
स्तुवे गणेशानपि-तद्-गुणाप्त्यै ।।६।।
आमर्द्धि-खेलर्द्धि-प्रजल्ल-विडर्द्धि-
सर्वर्द्धि-प्राप्तांश्च व्यथादि-हंत्रृन् ।
मनो-वचः काय-बलोपयुक्तान्,
स्तुवे गणेशानपि-तद्-गुणाप्त्यै ।।७।।
सत् क्षीर-सर्पि-र्मधुरामृतर्द्धीन्,
यतीन् वराक्षीण महानसांश्च ।
प्रवर्धमानांस्त्रिजगत्-प्रपूज्यान्,
स्तुवे गणेशानपि-तद्-गुणाप्त्यै ।।८।।

सिद्धालयान् श्रीमहतोऽतिवीरान्,
श्रीवर्धमानर्द्धि विबुद्धि-दक्षान् ।
सर्वान् मुनीन् मुक्तिवरा-नृषीन्द्रान्,
स्तुवे गणेशानपि-तद्-गुणाप्त्यै ॥९॥

नृ-सुर-खचर-सेव्या विश्व-श्रेष्ठर्द्धि-भूषा,
विविध-गुण-समुद्रा मार मातंग-सिंहाः ।
भव-जल-निधि-पोता वन्दिता मे दिशन्तु,
मुनि-गण-सकलाः श्री-सिद्धिदाः सदृषीन्द्राः ॥१०॥

[1]नित्यं यो गणभृन्मन्त्र, विशुद्धसन् जपत्यमुम् ।
आस्रवस्तस्य पुण्यानां, निर्जरा पापकर्मणाम् ॥
नश्यादुपद्रवकश्चिद्, व्याधिभूत विषादिभिः ।
सदसत् वीक्षणे स्वप्ने, समाधिश्च भवेन्मृतो ॥

(यहाँ मात्र आचार्य श्री निम्नलिखित प्रतिक्रमण दण्डक बोलें और उतने काल पर्यन्त सर्व शिष्य एवं साधर्मी मुनिगण कायोत्सर्ग मुद्रा से स्थित रहकर सुनें ।)

प्रतिक्रमण-दण्डक

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥१॥

णमो जिणाणं[1], णमो ओहि-जिणाणं[2], णमो परमोहि-जिणाणं[3], णमो सव्वोहि-जिणाणं[4], णमो अणंतोहि-जिणाणं[5], णमो कोट्ठ-बुद्धीणं[6], णमो बीज-बुद्धीणं[7], णमो

---

१. आ० विद्यानंद जी को प्राप्त हस्तलिखित प्रति से ।

पादाणु-सारीणं[८], णमो संभिण्ण-सोदारणं[९], णमो सयं-बुद्धाणं[१०], णमो पत्तेय-बुद्धाणं[११], णमो बोहिय-बुद्धाणं[१२], णमो उजु-मदीणं[१३], णमो विउल-मदीणं[१४], णमो दस पुव्वीणं[१५], णमो चउदस-पुव्वीणं[१६], णमो अट्ठंग-महा-णिमित्त-कुसलाणं[१७], णमो विउव्वइड्ढि-पत्ताणं[१८], णमो विज्जाहराणं[१९], णमो चारणाणं[२०], णमो पण्ण-समणाणं[२१], णमो आगासगामीणं[२२], णमो आसी-विसाणं[२३], णमो दिट्ठिविसाणं[२४], णमो उग्ग-तवाणं[२५], णमो दित्त-तवाणं[२६], णमो तत्त-तवाणं[२७], णमो महा-तवाणं[२८], णमो घोर-तवाणं[२९], णमो घोर-गुणाणं[३०], णमो घोर-परक्कमाणं[३१], णमो घोर-गुण-बंभयारीणं[३२], णमो आमोसहि-पत्ताणं[३३], णमो खेल्लोसहि-पत्ताणं[३४], णमो जल्लोसहि-पत्ताणं[३५], णमो विप्पोसहि-पत्ताणं[३६], णमो सव्वोसहि-पत्ताणं[३७], णमो मण-बलीणं[३८], णमो वचि-बलीणं[३९], णमो काय-बलीणं[४०], णमो खीर-सवीणं[४१], णमो सप्पि-सवीणं[४२], णमो महुर-सवीणं[४३], णमो अमिय-सवीणं[४४], णमो अक्खीण महाणसाणं[४५], णमो वड्ढमाणाणं[४६], णमो सिद्धायदणाणं[४७], णमो भयवदो-महदि-महावीर-वड्ढमाण-बुद्ध-रिसीणो[४८] चेदि ।

जस्संतियं धम्म-पहं णियंच्छे,
तस्संतियं वेणइयं पउं जे ।
काएण वाचा मणसा वि णिच्चं,
सक्कारए तं सिर-पंचमेण ।।१।।

सुदं मे आउस्संतो ! इह खलु समणेण, भयवदो, महदि-महावीरेण, महा-कस्सवेण, सव्वण्हुणा, सव्वलोग-दरिसिणा, सदेवासुर-माणुसस्स लोयस्स, आगदिगदि-चवणोववादं, बंधं, मोक्खं, इड्ढिं, ठिदिं, जुदिं, अणुभागं, तक्कं, कलं, मणो, माणसियं, भूतं, कयं, पडिसेवियं, अदिकम्मं, अरूह-कम्मं, सव्वलोए, सव्वजीवे, सव्वभावे, सव्वं समं जाणंता पस्संता विहर-माणेण, समणाणं, पंचमहव्वदाणि, राइभोयण-वेरमण-छट्ठाणि अणुव्वदाणि स-भावणाणि, समाउग पदाणि, स-उत्तर-पदाणि, सम्मं धम्मं उवदेसिदाणि।

तं जहा-

पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं, विदिए महव्वदे मुसावादादो वेरमणं, तिदिए, महव्वदे अदिण्णादाणादो वेरमणं, चउत्थे महव्वदे मेहुणादो वेरमणं, पंचमे महव्वदे परिग्गहादो वेरमणं, छट्ठे अणुव्वदे राइ-भोयणादो वेरमणं चेदि ।

तत्थ पढमे महव्वदे सव्वं भंते ! पाणादिवादं पच्चक्खामि जावज्जीवं, तिविहेण-मणसा, वचसा, काएण, से एइंदिया वा, बे इंदिया वा, ते इंदिया वा, चउरिंदिया वा, पंचिंदिया वा, पुढवि-काइए वा, आऊ-काइए वा, तेऊ-काइए वा, वाऊ-काइए वा, वणप्फदि-काइए वा, तस-काइए वा, अंडाइए वा, पोदाइए वा, जराइए वा, रसाइए वा, संसेदिमे वा, समुच्छिमे वा, उब्भेदिमे वा, उववादिमे

वा, तसे वा, थावरे वा, बादरे वा, सुहुमे वा, पाणे वा, भूदे वा, जीवे वा, सत्ते वा, पज्जत्ते वा, अपज्जत्ते वा, अविचउरासीदि-जोणि-पमुह-सद-सहस्सेसु, णेव सयं पाणादिवादिज्ज, णो अण्णेहिं पाणे अदिवादावेज्ज, अण्णेहिं पाणे, अदिवादिज्जंतो वि ण समणुमणिज्ज । तस्स भंते! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं, वोस्सरामि । पुव्विचणं भंते! जं पि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण सयं पाणे अदिवादिदे, अण्णेहिं पाणे, अदिवादाविदे, अण्णेहिं पाणे अदिवादिज्जंते वि समणुमण्णिदे तं वि ।

इमस्स णिग्गंथस्स, पवयणस्स, अणुत्तरस्स, केवलियस्स, केवलि-पण्णत्तस्स-धम्मस्स-अहिंसा-लक्खणस्स, सच्चाहिट्ठियस्स, विणय-मूलस्स, खमा-बलस्स, अट्ठारस-सील-सहस्स-परिमंडियस्स, चउरासीदि-गुण-सय-सहस्स, विहूसियस्स, णवसु-बंभचेर-गुत्तस्स, णियदि-लक्खणस्स, परिचाग-फलस्स, उवसम-पहाणस्स, खंतिमग्ग-देसयस्स, मुत्ति-मग्ग-पयासयस्स, सिद्धि-मग्गपज्जव-साहणस्स, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, अण्णाणेण वा, अदंसणेण वा, अवीरिएण वा, असंयमेण वा, असमणेण वा, अणहि-गमणेण वा, अभिमंसिदाए वा, अबोहिदाए वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण

वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, केण वि कारणेण जादेण वा, आलसदाए, बालिसदाए, कम्म-भारिगदाए, कम्मगुरु-गदाए, कम्म-दुच्चरिदाए, कम्म-पुरुक्कडदाए, ति-गारव-गुरु-गदाए, अबहु-सुददाए, अविदिद-परमट्ठदाए, तं सव्वं पुव्वं, दुच्चरियं गरहामि । आगमेसिं च अपच्चक्खियं-पच्चक्खामि, अणालोचियं-आलोचेमि, अणिंदियं-णिंदामि, अगरहियं-गरहामि, अपडिक्कंतं-पडिक्कमामि, विराहणं वोस्सरामि, आराहणं अब्भुट्ठेमि, अण्णाणं वोस्सरामि, सण्णाणं अब्भुट्ठेमि, कुदंसणं वोस्सरामि, सम्मदंसणं अब्भुट्ठेमि, कुचरियं वोस्सरामि, सुचरियं अब्भुट्ठेमि, कुतवं वोस्सरामि, सुतवं अब्भुट्ठेमि, अकरणिज्जं वोस्सरामि, करणिज्जं अब्भुट्ठेमि, अकिरियं वोस्सरामि, किरियं अब्भुट्ठेमि, पाणादिवादं वोस्सरामि, अभयदाणं अब्भुट्ठेमि, मोसं वोस्सरामि, सच्चं अब्भुट्ठेमि, अदिण्णादाणं वोस्सरामि, दिण्णं-कप्प-णिज्जं अब्भुट्ठेमि, अबंभं वोस्सरामि, बंभचरियं अब्भुट्ठेमि, परिग्गहं वोस्सरामि, अपरिग्गहं अब्भुट्ठेमि, राइ-भोयणं वोस्सरामि, दिवा-भोयण-मेग-भत्तं-पच्चुप्पणं-फासुगं-अब्भुट्ठेमि, अट्ट-रुद्द-ज्झाणं वोस्सरामि, धम्मसुक्क-ज्झाणं अब्भुट्ठेमि, किण्ह-णील-काउ-लेस्सं वोस्सरामि, तेउ-पम्म-सुक्क-लेस्सं अब्भुट्ठेमि, आरंभं वोस्सरामि, अणारंभं अब्भुट्ठेमि, असंजमं वोस्सरामि, संजमं अब्भुट्ठेमि, सग्गंथं वोस्सरामि, णिग्गंथं अब्भुट्ठेमि, सचेलं वोस्सरामि, अचेलं अब्भुट्ठेमि, अलोचं वोस्सरामि, लोचं अब्भुट्ठेमि,

ण्हाणं वोस्सरामि, अण्हाणं अब्भुट्ठेमि, अखिदि-सयणं वोस्सरामि, खिदिसयणं अब्भुट्ठेमि, दंतवणं वोस्सरामि, अदंतवणं अब्भुट्ठेमि, अट्ठिदि-भोयणं वोस्सरामि, ठिदि-भोयण-मेग-भत्तं अब्भुट्ठेमि, अपाणि-पत्तं वोस्सरामि, पाणिपत्तं अब्भुट्ठेमि, कोहं वोस्सरामि, खंतिं अब्भुट्ठेमि, माणं वोस्सरामि, मद्दवं अब्भुट्ठेमि, मायं वोस्सरामि, अज्जवं अब्भुट्ठेमि, लोहं वोस्सरामि, संतोसं अब्भुट्ठेमि, अतवं वोस्सरामि, दुवादस-विह-तवो-कम्मं अब्भुट्ठेमि । मिच्छत्तं परिवज्जामि, सम्मत्तं उवसंपज्जामि, असीलं परिवज्जामि, सुसीलं उवसंपज्जामि, ससल्लं परिवज्जामि, णिसल्लं उवसंपज्जामि, अविणयं परिवज्जामि, विणयं उवसंपज्जामि, अणाचारं परिवज्जामि, आचारं उवसंपज्जामि, उम्मग्गं परिवज्जामि, जिणमग्गं उवसंपज्जामि, अखंतिं परिवज्जामि, खंतिं उवसंपज्जामि, अगुत्तिं परिवज्जामि, गुत्तिं उवसंपज्जामि, अमुत्तिं परिवज्जामि, सुमुत्तिं उवसंपज्जामि, असमाहिं परिवज्जामि, सुसमाहिं उवसंपज्जामि, ममत्तिं परिवज्जामि, णिम्ममत्तिं उवसंपज्जामि, अभावियं भावेमि, भावियं ण भावेमि, इमं णिग्गंथं पव्वयणं, अणुत्तरं केवलियं-पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइयं संसुद्धं, सल्लघट्टाणं-सल्लघत्ताणं, सिद्धि-मग्गं, सेढि मग्गं, खंति-मग्गं, मुत्ति-मग्गं, पमुत्ति-मग्गं, मोक्ख-मग्गं, पमोक्ख-मग्गं, णिज्जाण-मग्गं, णिव्वाण-मग्गं, सव्व-दुक्ख-परिहाणि-मग्गं, सु-

चरिय-परिणिव्वाण-मग्गं, जत्थ-ठिया-जीवा, सिज्झंति, बुज्झंति, मुंचंति, परिणिव्वाणयंति, सव्व-दुक्खाणमतं करेंति । तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदो उत्तरं, अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि कयाचिवा, कुदोचिवा णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, सीलेण वा, गुणेण वा, तवेण वा, णियमेण वा, वदेण वा, विहारेण वा, आलएण वा, अज्जवेण वा, लाहवेण वा, अण्णेण वा, वीरिएण वा, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि, उवहि-णियडि-माण-माया-मोस-मूरण, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण मिच्छाचरित्तं च पडिविरदोमि। सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि । जं जिणवरेहिं पण्णत्तो, जो मए पक्खिय चउमासिय (संवच्छरिय) इरयावहि-केस-लोचाइचारस्स, संथारादिचारस्स, पंथादि-चारस्स, सव्वादिचारस्स, उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तं च रोचेमि।

पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं, उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महापुरिसाणु-चिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु-सक्खियं, अप्प-सक्खियं, पर-सक्खियं, देवता-सक्खियं, उत्तमट्ठम्हि। "इदं मे महव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु, णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवतु ।"

प्रथमं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्वपूर्वकं, दृढव्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ।।१।।

प्रथमं महाव्रतं सर्वेषां............ते मे भवतु ।।२।।
प्रथमं महाव्रतं सर्वेषां............ते मे भवतु ।।२।।
णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।
णमो अरहंताणं..........णमो लोए सव्वसाहूणं ।।२।।
णमो अरहंताणं..........णमो लोए सव्वसाहूणं ।।३।।

अहावरे विदिए महव्वदे सव्वं भंते ! मुसावादं पच्चक्खामि, जावज्जीवेण तिविहेण मणसा-वचसा-काएण, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पिम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, अणेण केण वि कारणेण जादेण वा, णेव सयं मोसं भासेज्ज, णो अण्णेहिं मोसं भासाविज्ज, णो अण्णेहिं मोसं भासिज्जंतं वि समणुमणिज्ज। तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि ।

पुव्विचणं भंते ! जं वि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण सयं मोसं भासियं, अण्णेहिं मोसं भासावियं, अण्णेहिं मोसं भासिज्जंतं वि समणुमण्णिदो तं वि ।

इमस्स णिग्गंथस्स, पवयणस्स, अणुत्तरस्स, केवलियस्स, केवलि-पण्णत्तस्स-धम्मस्स-अहिंसा-लक्खणस्स, सच्चाहि-

ट्ठियस्स, विणय-मूलस्स, खमा-बलस्स, अट्ठारस-सील-सहस्स-परिमंडियस्स, चउरासीदि-गुण-सयसहस्स, विहूसियस्स, णवसु-बंभचेर-गुत्तस्स, णियदिलक्खणस्स, परिचाग-फलस्स, उवसम-पहाणस्स, खंति-मग्ग-देसयस्स, मुत्ति-मग्ग-पयासयस्स, सिद्धि-मग्ग-पज्जव-साहणस्स, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, अण्णाणेण वा, अदंसणेण वा, अविरिएण वा, असंयमेण वा, असमणेण वा, अणाहि-गमणेण वा, अभिमंसिदाए वा, अबोहिदाए वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, केण वि कारणेण जादेण वा, आलसदाए, बालिसदाए, कम्म-भारिगदाए, कम्म-गुरु गदाए, कम्म-दुच्चरिदाए, कम्म-पुरुक्कडदाए, ति-गारव-गुरु-गदाए, अबहुसुददाए, अविदिद-परमट्ठदाए, तं सव्वं पुव्वं दुच्चरियं गरहामि। आगमेसिं च अपच्चक्खियं-पच्चक्खामि, अणालोचियं-आलोचेमि, अणिंदियं-णिंदामि, अगरहियं-गरहामि, अपडिक्कंत-पडिक्कमामि, विराहणं वोस्सरामि, आराहणं अब्भुट्ठेमि, अण्णाणं वोस्सरामि, सण्णाणं अब्भुट्ठेमि, कुदंसणं वोस्सरामि, सम्मदंसणं अब्भुट्ठेमि, कुचरियं वोस्सरामि, सुचरियं अब्भुट्ठेमि, कुतवं वोस्सरामि, सुतवं अब्भुट्ठेमि, अकरणिज्जं वोस्सरामि, करणिज्जं अब्भुट्ठेमि, अकिरियं वोस्सरामि, किरियं

अब्भुट्ठेमि, पाणादिवादं वोस्सरामि, अभयदाणं अब्भुट्ठेमि, मोसं वोस्सरामि, सच्चं अब्भुट्ठेमि, अदिण्णादाणं वोस्सरामि, दिण्णं-कप्प-णिज्जं अब्भुट्ठेमि, अबंभं वोस्सरामि, बंभचरियं अब्भुट्ठेमि, परिग्गहं वोस्सरामि, अपरिग्गहं अब्भुट्ठेमि, राइ भोयणं वोस्सरामि, दिवाभोयण-मेग-भत्तं-पच्चुप्पणं-फासुगं-अब्भुट्ठेमि, अट्टरुद्द-ज्झाणं वोस्सरामि, धम्म-सुक्क-ज्झाणं अब्भुट्ठेमि, किण्ह-णील काउ लेस्सं वोस्सरामि, तेउ-पम्म-सुक्क-लेस्सं अब्भुट्ठेमि, आरंभं वोस्सरामि, अणारंभं अब्भुट्ठेमि, असंजमं वोस्सरामि, संजमं अब्भुट्ठेमि, सग्गंथं वोस्सरामि णिग्गंथं अब्भुट्ठेमि, सचेलं वोस्सरामि, अचेलं अब्भुट्ठेमि, अलोचं वोस्सरामि, लोचं अब्भुट्ठेमि, ण्हाणं वोस्सरामि, अण्हाणं अब्भुट्ठेमि, अखिदि-सयणं वोस्सरामि, खिदि-सयणं अब्भुट्ठेमि, दंतवणं वोस्सरामि, अदंतवणं अब्भुट्ठेमि, अट्ठिदिं भोयणं वोस्सरामि, ठिदिभोयण-मेग भत्तं अब्भुट्ठेमि, अपाणि-पत्तं वोस्सरामि, पाणि-पत्तं अब्भुट्ठेमि, कोहं वोस्सरामि, खंतिं अब्भुट्ठेमि, माणं वोस्सरामि, मद्दवं अब्भुट्ठेमि, मायं वोस्सरामि, अज्जवं अब्भुट्ठेमि, लोहं वोस्सरामि, संतोसं अब्भुट्ठेमि, अतवं वोस्सरामि, दुवादस-विहतवो-कम्मं अब्भुट्ठेमि । मिच्छत्तं परिवज्जामि, सम्मत्तं उवसंपजामि, असीलं परिवज्जामि, सुसीलं उवसंपज्जामि, ससल्लं परिवज्जामि, णिसल्लं उवसंपज्जामि, अविणयं परिवज्जामि, विणयं उवसंपज्जामि,

अणाचारं परिवज्जामि, आचारं उवसंपज्जामि, उम्मग्गं परिवज्जामि, जिणमग्गं उवसंपज्जामि, अखंतिं परिवज्जामि, खंतिं उवसंपज्जामि, अगुत्तिं, परिवज्जामि, गुत्तिं उवसंपज्जामि, अमुत्तिं परिवज्जामि, सुमुत्तिं उवसंपज्जामि, असमाहिं परिवज्जामि, सुसमाहिं उव-संपज्जामि, ममत्तिं परिवज्जामि, णिम्ममत्तिं उवसंपज्जामि, अभावियं भावेमि, भावियं ण भावेमि, इमं णिग्गंथं पव्वयणं, अणुत्तरं, केवलियं-पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइयं संसुद्धं, सल्लघट्टाणं-सल्लघत्ताणं, सिद्धिमग्गं, सेढिमग्गं, खंतिमग्गं, मुत्तिमग्गं, पमुत्तिमग्गं, मोक्खमग्गं, पमोक्खमग्गं, णिज्जाणमग्गं, णिव्वाणमग्गं, सव्व-दुक्ख-परिहाणि-मग्गं सुचरिय-परिणिव्वाण-मग्गं, जत्थ-ठिया-जीवा, सिज्झंति, बुज्झंति, मुंचंति, परिणिव्वाणयंति, सव्व-दुक्खाणमंतं करेंति । तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदो उत्तरं, अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि, कयाचिवा कुदोचिवा णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, सीलेण वा, गुणेण वा, तवेण वा, णियमेण वा, वदेण वा, विहारेण वा, आलएण वा, अज्जवेण वा, लाहवेण वा, अण्णेण वा, वीरिएण वा, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि, उवहि-णियडि-माण-माया-मोस-मूरण, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्तं च पडिविरदोमि । सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि जं जिणवरेहिं

पण्णत्तो, जो मए पक्खिय (चउमासिय) (संवच्छरिय) इरियावहि-केस-लोचाइचारस्स, संथारादिचारस्स, पंथादिचारस्स, सव्वादिचारस्स, उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तं च रोचेमि।

विदिए महव्वदे मुसावादादो वेरमणं, उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महापुरिसाणुचिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु-सक्खियं अप्पसक्खियं, परसक्खियं, देवतासक्खियं उत्तमट्ठम्मि। "इदं मे महव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु, णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवतु।"

द्वितीयं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्वपूर्वकं, दृढ़व्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ।।१।।

द्वितीयं महाव्रतं सर्वेषां............ ते मे भवतु ।।२।।

द्वितीयं महाव्रतं सर्वेषां............ ते मे भवतु ।।३।।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।

णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।

णमो अरहंताणं..........णमो लोए सव्वसाहूणं ।।२।।

णमो अरहंताणं..........णमो लोए सव्वसाहूणं ।।३।।

अहावरे तिदिए महव्वदे सव्वं भंते ! अदिण्णादाणं पच्चक्खामि जावज्जीवं, तिविहेण मणसा-वचसा-काएण, से देसे वा, गामे वा, णयरे वा, खेडे वा, कव्वडे वा, मंडवे वा, मंडले वा, पट्टणे वा, दोणमुहे वा, घोसे वा, आसणे वा, सहाए वा, संवाहे वा, सण्णिवेसे वा, तिणं वा, कट्ठं वा, वियडिं वा, मणिं वा, खेत्ते वा, खले वा,

जले वा, थले वा, पहे वा, उप्पहे वा, रण्णे वा, अरण्णे वा, णट्ठं वा, पमुट्ठं वा, पडिदं वा, अपडिदं वा, सुणिहिदं वा, दुण्णिहिदं वा, अप्पं वा, बहुं वा, अणुयं वा, थूलं वा, सचित्तं वा, अचित्तं वा, मज्झत्थं वा, बहित्थं वा, अवि दंतंतरसोहण-णिमित्तं, वि णेव सयं अदत्तं गेण्हिज्ज, णो अण्णेहिं अदत्तं गेण्हाविज्ज णो अण्णेहिं अदत्तं गेण्हिज्जंतं विसमणुमणिज्ज, तस्स भंते ! अइचारं, पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि ।

पुव्विचणं भंते ! जं पि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण, सयं अदत्तं गेण्हिदं, अण्णेहिं अदत्तं गेण्हाविदं अण्णेहिं अदत्तं गेण्हिज्जंतं, वि समणुमण्णिदो तं वि ।

इमस्स णिग्गंथस्स, पवयणस्स, अणुत्तरस्स, केवलियस्स, केवलि-पण्णत्तस्स-धम्मस्स-अहिंसा-लक्खणस्स, सच्चाहिट्ठियस्स, विणय-मूलस्स, खमा-बलस्स, अट्ठारस-सील-सहस्स-परिमंडियस्स, चउरासीदि-गुणसय-सहस्स, विहूसियस्स, णवसु-बंभचेर-गुत्तस्स, णियदि-लक्खणस्स, परिचाग-फलस्स, उवसम-पहाणस्स, खंतिमग्ग-देसयस्स, मुत्ति-मग्ग-पयासयस्स, सिद्धि-मग्ग-पज्जव-साहणस्स, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, अण्णाणेण वा, अदंसणेण वा, अविरिएण वा, असंयमेण वा, असमणेण वा, अणाहि-गमणेण वा, अभिमंसिदाए वा, अबोहिदाए वा,

रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, अणेण केण वि कारणेण जादेण वा,, आलसदाए, बालिसदाए, कम्म-भारिगदाए, कम्मगुरु-गदाए, कम्म-दुच्चरिदाए, कम्म-पुरुक्कडदाए, तिगारव-गुरु-गदाए, अबहु-सुददाए, अविदिद-परमट्ठदाए, तं सव्वं पुव्वं, दुच्चरियं गरहामि। आगमेसिं च अपच्चक्खियं-पच्चक्खामि, अणालोचियं-आलोचेमि, अणिंदियं-णिंदामि, अगरहियं-गरहामि, अपडिक्कंतं-पडिक्कमामि, विराहणं वोस्सरामि, आराहणं अब्भुट्ठेमि, अण्णाणं वोस्सरामि, सण्णाणं अब्भुट्ठेमि, कुदंसणं वोस्सरामि, सम्मदंसणं अब्भुट्ठेमि, कुचरियं वोस्सरामि, सुचरियं अब्भुट्ठेमि, कुतवं वोस्सरामि, सुतवं अब्भुट्ठेमि, अकरणिज्जं वोस्सरामि करणिज्जं अब्भुट्ठेमि, अकिरियं वोस्सरामि, किरियं अब्भुट्ठेमि, पाणादिवादं वोस्सरामि, अभयदाणं अब्भुट्ठेमि, मोसं वोस्सरामि, सच्चं अब्भुट्ठेमि, अदिण्णादाणं वोस्सरामि, दिण्णं-कप्प-णिज्जं अब्भुट्ठेमि, अबंभं वोस्सरामि, बंभचरियं अब्भुट्ठेमि, परिग्गहं वोस्सरामि, अपरिग्गहं अब्भुट्ठेमि, राइ भोयणं वोस्सरामि, दिवाभोयण-मेग-भत्तं-पच्चुप्पणं-फासुगं-अब्भुट्ठेमि, अट्टरुद्द-ज्झाणं वोस्सरामि, धम्म-सुक्क-ज्झाणं अब्भुट्ठेमि, किण्ह-णील-काउ-लेस्सं वोस्सरामि, तेउ-पम्मसुक्क-लेस्सं अब्भुट्ठेमि, आरंभं वोस्सरामि-अणारंभं अब्भुट्ठेमि, असंजमं वोस्सरामि, संजमं अब्भुट्ठेमि,

सग्गंथं वोस्सरामि, णिग्गंथं अब्भुट्ठेमि, सचेलं वोस्सरामि, अचेलं अब्भुट्ठेमि, अलोचं वोस्सरामि, लोचं अब्भुट्ठेमि, ण्हाणं वोस्सरामि, अण्हाणं अब्भुट्ठेमि, अखिदि-सयणं वोस्सरामि, खिदि-सयणं अब्भुट्ठेमि, दंतवणं वोस्सरामि, अदंतवणं अब्भुट्ठेमि, अट्ठिदि भोयणं वोस्सरामि, ठिदिभोयण-मेग-भत्तं अब्भुट्ठेमि, अपाणि-पत्तं वोस्सरामि, पाणि-पत्तं अब्भुट्ठेमि, कोहं वोस्सरामि, खंतिं अब्भुट्ठेमि, माणं वोस्सरामि, मद्दवं अब्भुट्ठेमि, मायं वोस्सरामि, अज्जवं अब्भुट्ठेमि, लोहं वोस्सरामि, संतोसं अब्भुट्ठेमि, अतवं वोस्सरामि, दुवादस-विहतवो-कम्मं अब्भुट्ठेमि । मिच्छत्तं परिवज्जामि, सम्मत्तं उवसंपज्जामि, असीलं परिवज्जामि, सुसीलं उवसंपज्जामि, ससल्लं परिवज्जामि, णिसल्लं उवसंपज्जामि, अविणयं परिवज्जामि, विणयं उवसंपज्जामि, अणाचारं परिवज्जामि, आचारं उवसंपज्जामि, उम्मग्गं परिवज्जामि, जिणमग्गं उवसंपज्जामि, अखंतिं परिवज्जामि, खंतिं उवसंपज्जामि, अगुत्तिं परिवज्जामि, गुत्तिं उवसंपज्जामि, अमुत्तिं परिवज्जामि, सुमुत्तिं उवसंपज्जामि, असमाहिं परिवज्जामि, सुसमाहिं उवसंपज्जामि, ममत्तिं परिवज्जामि णिम्ममत्तिं उवसंपज्जामि, अभावियं भावमि, भावियं ण भावेमि, इमं णिग्गंथं पव्वयणं, अणुत्तरं केवलियं-पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइयं, संसुद्धं, सल्लघट्टाणं-सल्लघत्ताणं सिद्धिमग्गं, सेढिमग्गं, खंतिमग्गं, मुत्तिमग्गं,

पमुत्तिमग्गं, मोक्खमग्गं, पमोक्खमग्गं, णिज्जाणमग्गं, णिव्वाणमग्गं, सव्व-दुक्ख-परिहाणि-मग्गं, सुचरिय-परिणिव्वाणमग्गं, जत्थ-ठिया-जीवा, सिज्झंति, बुज्झंति, मुंचंति, परिणिव्वाणयंति, सव्व-दुक्खाणमंतं करेंति । तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदो उत्तरं अण्णं, णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि कयाचिवा कुदोचिवा णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, सीलेण वा गुणेण वा, तवेण वा, णियमेण वा, वदेण वा, विहारेण वा, आलएण वा, अज्जवेण वा, लाहवेण वा, अण्णेण वा, वीरिएण वा, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि, उवहि-णियडि-माण-मायामोस-मूरण, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्तं चपडिविरदोमि । सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि । जं जिणवरेहिं-पण्णत्तो, जो मए पक्खिय (चउमासिय) (संवच्छरिय) इरियावहि-केसलोचाइचारस्स, संथारादिचारस्स, पंथादि-चारस्स, सव्वादिचारस्स, उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तं च रोचेमि।

तिदिए महव्वदे अदिण्णा-दाणादो वेरमणं उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महापुरिसाणु-चिण्णो अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु-सक्खियं, अप्प-सक्खियं, पर-सक्खियं, देवता-सक्खियं, उत्तमट्ठम्हि "इदं मे महव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु, णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवतु" ।

तृतीयं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्व-पूर्वकं दृढव्रतं समारूढं ते मे भवतु ॥१॥

तृतीयं महाव्रतं सर्वेषां..................... ते मे भवतु ॥२॥

तृतीयं महाव्रतं सर्वेषां..................... ते मे भवतु ॥३॥

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ॥१॥

णमो अरहंताणं............... णमो लोए सव्वसाहूणं ॥२॥

णमो अरहंताणं............... णमो लोए सव्वसाहूणं ॥३॥

अहावरे चउत्थे महव्वदे सव्वं भंते ! अबंभं पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण मणसा-वचसा-काएण, से देविएसु वा, माणुसिएसु वा, तिरिच्छिएसु वा, अचेयणिएसु वा, कट्ठ-कम्मेसु वा, चित्त-कम्मेसु वा, पोत्त-कम्मेसु वा, लेप्प-कम्मेसु वा, लय-कम्मेसु वा, सिल्ला-कम्मेसु वा, गिह-कम्मेसु वा, भित्ति-कम्मेसु वा, भेद-कम्मेसु वा, भण्ड-कम्मेसु वा, धादु-कम्मेसु वा, दंत-कम्मेसु वा, हत्थ-संघट्टणदाए, पाद-संघट्टणदाए, पुग्गल-संघट्टणदाए मणुण्णामणुण्णेसु सद्देसु, मणुण्णामणुण्णेसु रूवेसु, मणुण्णामणुण्णेसु गंधेसु, मणुण्णामणुण्णेसु रसेसु, मणुण्णामणुण्णेसु फासेसु, सोर्दिदय परिणामे, चक्खिदिय-परिणामे, घाणिंदिय-परिणामे, जिब्भिदिय-परिणामे, फासिंदिय-परिणामे, णो-इन्दिय-परिणामे, अगुत्तेण, अगुत्तिदिएण, णेव सयं अबंभं सेविज्ज, णो अण्णेहिं अबंभं

सेवाविज्ज, णो अण्णेहिं अबंभ सेविज्जंतं वि समणुमणिज्ज, तस्स भंते! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि ।

पुव्विचणं भंते ! जं वि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण सयं अबंभं सेवियं, अण्णेहिं अबंभं सेवावियं, अण्णेहिं अबंभं सेविज्जंतं वि समणुमण्णिदं तं वि।

इमस्स णिग्गंथस्स, पवयणस्स, अणुत्तरस्स, केवलियस्स, केवलि-पण्णत्तस्स-धम्मस्स-अहिंसा-लक्खणस्स, सच्चाहिट्ठियस्स, विणय-मूलस्स, खमा-बलस्स, अट्ठारस-सील-सहस्स-परिमंडियस्स, चउरासीदि-गुण-सयसहस्स, विहूसियस्स, णवसु-बंभचेर-गुत्तस्स, णियदि-लक्खणस्स, परिचाग-फलस्स, उवसम-पहाणस्स, खंति-मग्ग-देसयस्स, मुत्ति-मग्गपयासयस्स, सिद्धिमग्ग पज्जव साहणस्स, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, अण्णाणेण वा, अदंसणेण वा, अविरिएण वा, असंयमेण वा, असमणेण वा, अणाहि-गमणेण वा, अभिमंसिदाए वा, अबोहिदाए वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, अणेण केण वि कारणेण जादेण वा, आलसदाए, बालिसदाए, कम्म-भारिगदाए, कम्म-गुरु-गदाए, कम्म-दुच्चरिदाए, कम्म-पुरुक्कडदाए, ति-गारव-गुरु-गदाए, अबहु-सुददाए, अविदिद-परमट्ठदाए, तं सव्वं

पुव्वं दुच्चरियं गरहामि । आगमेसिं च अपच्चक्खियं-पच्चक्खामि, अणालोचियं-आलोचेमि, अणिंदियं-णिंदामि, अगरहियं-गरहामि, अपडिक्कतं-पडिक्कमामि, विराहणं वोस्सरामि, आराहणं अब्भुट्ठेमि, अण्णाणं वोस्सरामि, सण्णाणं अब्भुट्ठेमि, कुदंसणं वोस्सरामि, सम्मदंसणं अब्भुट्ठेमि, कुचरियं वोस्सरामि, सुचरियं अब्भुट्ठेमि, कुतवं वोस्सरामि, सुतवं अब्भुट्ठेमि, अकरणिज्जं वोस्सरामि, करणिज्जं अब्भुट्ठेमि, अकिरियं वोस्सरामि, किरियं अब्भुट्ठेमि, पाणादिवादं वोस्सरामि, अभयदाणं अब्भुट्ठेमि, मोसं वोस्सरामि, सच्चं अब्भुट्ठेमि, अदिण्णादाणं वोस्सरामि, दिण्णं-कप्प-णिज्जं अब्भुट्ठेमि, अबंभं वोस्सरामि, बंभचरियं अब्भुट्ठेमि, परिग्गहं वोस्सरामि अपरिग्गहं अब्भुट्ठेमि, राइ भोयणं वोस्सरामि, दिवाभोयण-मेग-भत्तं-पच्चुप्पणं-फासुगं-अब्भुट्ठेमि, अट्टरुद्द-ज्झाणं वोस्सरामि, धम्म-सुक्क-ज्झाणं अब्भुट्ठेमि, किण्ह-णील काउ-लेस्सं वोस्सरामि, तेउ-पम्म-सुक्क-लेस्सं अब्भुट्ठेमि, आरंभं वोस्सरामि, अणारंभं अब्भुट्ठेमि, असंजमं वोस्सरामि, संजम अब्भुट्ठेमि, सग्गंथं वोस्सरामि, णिग्गंथं अब्भुट्ठेमि, सचेलं वोस्सरामि, अचेलं अब्भुट्ठेमि, अलोचं वोस्सरामि, लोचं अब्भुट्ठेमि, ण्हाणं वोस्सरामि, अण्हाणं अब्भुट्ठेमि, अखिदि-सयणं वोस्सरामि, खिदि-सयणं अब्भुट्ठेमि, दंतवणं वोस्सरामि, अदंत-वणं अब्भुट्ठेमि, अट्ठिदि-भोयणं वोस्सरामि, ठिदिभोयण-मेग-

भत्तं अब्भुट्ठेमि, अपाणि-पत्तं वोस्सरामि, पाणि-पत्तं अब्भुट्ठेमि, कोहं वोस्सरामि, खंतिं अब्भुट्ठेमि, माणं वोस्सरामि, मद्दवं अब्भुट्ठेमि, मायं वोस्सरामि, अज्जवं अब्भुट्ठेमि, लोहं वोस्सरामि, संतोसं अब्भुट्ठेमि, अतवं वोस्सरामि, दुवादस-विहतवो-कम्मं अब्भुट्ठेमि । मिच्छत्तं परिवज्जामि, सम्मत्तं उवसंपज्जामि, असीलं परिवज्जामि सुसीलं उवसंपज्जामि, ससल्लं परिवज्जामि, णिसल्लं उवसंपज्जामि, अविणयं परिवज्जामि, विणयं उवसंपज्जामि, अणाचारं परिवज्जामि, आचारं उवसंपज्जामि, उम्मग्गं परिवज्जामि, जिणमग्गं उवसंपज्जामि, अखंतिं परिवज्जामि, खंतिं उवसंपज्जामि, अगुत्तिं परिवज्जामि, गुत्तिं उवसंपज्जामि, अमुत्तिं परिवज्जामि, सुमुत्तिं उवसंपज्जामि, असमाहिं परिवज्जामि, सुसमाहिं उवसंपज्जामि, ममत्तिं परिवज्जामि, णिम्ममत्तिं उवसंपज्जामि, अभावियं भावेमि, भावियं ण भावेमि, इमं णिग्गंथं पव्वयणं, अणुत्तरं, केवलियं-पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइयं संसुद्धं, सल्लघट्टाणं-सल्लघत्ताणं, सिद्धिमग्गं, सेढिमग्गं, खंतिमग्गं, मुत्तिमग्गं, पमुत्तिमग्गं, मोक्खमग्गं, पमोक्खमग्गं, णिज्जाणमग्गं, णिव्वाणमग्गं, सव्व-दुक्ख-परिहाणि-मग्गं, सुचरिय-परिणिव्वाण-मग्गं, जत्थ-ठिया-दीवा, सिज्झंति, बुज्झंति, मुंचंति, परिणिव्वाणयंति, सव्व-दुक्खाणमंतं करेंति । तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदो उत्तरं,

अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि, कयाचिवा कुदोचिवा णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, सीलेण वा, गुणेण वा, तवेण वा, णियमेण वा, वदेण वा, विहारेण वा, आलएण वा, अज्जवेण वा, लाहवेण वा, अण्णेण वा, वीरिएण वा, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि, उवहि-णियडि-माण-माया-मोस-मूरण, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्तं च पडिविरदोमि । सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि । जं जिणवरेहिं पण्णत्तो, जो मए पक्खिय (चउमासिय) (संवच्छरिय) इरियावहि-केस-लोचाइचारस्स, संथारादिचारस्स, पंथादिचारस्स, सव्वादिचारस्स, उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तं च रोचेमि ।

चउत्थे महव्वदे अबंभादो वेरमणं, उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महापुरिसाण-चिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु-सक्खियं, अप्प सक्खियं, पर-सक्खियं, देवता-सक्खियं, उत्तमट्ठम्हि। "इदं मे महव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु, णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवतु ।"

चतुर्थं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्वपूर्वकं, दृढ़व्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ।।१।।
चतुर्थं महाव्रतं सर्वेषां............ते मे भवतु ।।२।।
चतुर्थं महाव्रतं सर्वेषां............ते मे भवतु ।।३।।

णमो अरहंताणं सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।
णमो अरिहंताण...........णमो लोए सव्वसाहूणं ।।२।।
णमो अरिहंताण...........णमो लोए सव्वसाहूणं ।।३।।

अहावरे पंचमे महव्वदे सव्वं भंते ! दुविहं-परिग्गहं पच्चक्खामि । तिविहेण मणसा-वचसा-काएण । सो परिग्गहो दुविहो अब्भंतरो, बाहिरो चेदि । तत्थ अब्भंतरं परिग्गह-

मिच्छत्त-वेय-राया-तहेव हस्सादिया य छद्दोसा ।
चत्तारि तह कसाया चउदस अब्भंतरं गंथा ।।१।।

तत्थ बाहिरं परिग्गहं से हिरण्णं वा, सुवण्णं वा, धणं वा, खेत्तं वा, खलं वा, वत्थुं वा, पवत्थुं वा, कोसं वा, कुठारं वा, पुरं वा, अंत-उरं वा, बलं वा, वाहणं वा, सयडं वा, जाणं वा, जपाणं वा, जुगं वा, गद्दियं वा, रहं वा, सदणं वा, सिवियं वा, दासी-दास-गो-महिस-गवेडयं, मणि-मोत्तिय-संख-सिप्पिपवालयं, मणिभाजणं वा, सुवण्ण-भाजणं वा, रजत-भाजणं वा, कंस-भाजणं वा, लोह-भाजणं वा, तंब-भाजणं वा, अंडजं वा, वोडजं वा, रोमजं वा, वक्कलजं वा, चम्मजं वा, अप्पं वा, बहुं वा, अणुं वा, थूलं वा, सचित्तं वा, अचित्तं वा, अमत्थुं वा, बहित्थं वा, अवि वालग्ग-कोडि मित्तं पि णेव सयं असमण-पाउग्गं-परिग्गहं-गिण्हिज्ज, णो अण्णेहिं असमण-पाउग्गं

परिग्गहं-गेण्हाविज्ज, णो अण्णेहिं असमण-पाउग्गं परिग्गहं गिण्हज्जंतं वि समणुमणिज्ज, तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि ।

पुव्विचणं भंते ! जं वि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण सयं असमण-पाउग्गं-परिग्गहं गिण्हियं, अण्णेहिं असमण-पाउग्गं-परिग्गहं-गेण्हावियं, अण्णेहिं असमण-पाउग्गं-परिग्गहं-गेण्हिज्जंतं वि समणुमण्णिदं तं वि ।

इमस्स णिग्गंथस्स, पवयणस्स, अणुत्तरस्स, केवलियस्स, केवलि-पण्णत्तस्स-धम्मस्स-अहिंसा-लक्खणस्स, सच्चाहिट्ठियस्स, विणय-मूलस्स, खमा-बलस्स, अट्ठारस-सील-सहस्स-परिमंडियस्स, चउरासीदि-गुण-सय-सहस्स, विहूसियस्स, णवसु-बंभचेर-गुत्तस्स, णियदि-लक्खणस्स, परिचाग-फलस्स, उवसम-पहाणस्स, खंति-मग्ग-देसयस्स, मुत्ति-मग्ग-पयासयस्स, सिद्धि-मग्ग-पज्जव-साहणस्स, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, अण्णाणेण वा, अदंसणेण वा, अविरिएण वा, असंयमेण वा, असमणेण वा, अणहि-गमणेण वा, अभिमंसिदाए वा, अबोहिदाए वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, केण वि कारणेण जादेण वा, आलसदाए, बालिसदाए, कम्म-भारिगदाए, कम्म-गुरु

गदाए, कम्म-दुच्चरिदाए, कम्म-पुरुक्कडदाए, तिगारव-गुरु-गदाए, अबहु-सुददाए, अविदिद-परमट्ठदाए, तं सव्वं पुव्वं, दुच्चरियं गरहामि । आगमेसिं च अपच्चक्खियं-पच्चक्खामि, अणालोचियं-आलोचेमि, अणिंदियं-णिंदामि, अगरहियं-गरहामि, अपडिक्कंतं-पडिक्कमामि, विराहणं वोस्सरामि, आराहणं अब्भुट्ठेमि, अण्णाणं वोस्सरामि, सण्णाणं अब्भुट्ठेमि, कुदंसणं वोस्सरामि, सम्मदंसणं अब्भुट्ठेमि, कुचरियं वोस्सरामि, सुचरियं अब्भुट्ठेमि, कुतवं वोस्सरामि, सुतवं अब्भुट्ठेमि, अकरणिज्जं वोस्सरामि, करणिज्जं अब्भुट्ठेमि, अकिरियं वोस्सरामि, किरियं अब्भुट्ठेमि, पाणादिवादं वोस्सरामि, अभयदाणं अब्भुट्ठेमि, मोसं वोस्सरामि, सच्चं अब्भुट्ठेमि, अदिण्णादाणं वोस्सरामि, दिण्णं-कप्प-णिज्जं अब्भुट्ठेमि, अबंभं वोस्सरामि, बंभचरियं अब्भुट्ठेमि, परिग्गहं वोस्सरामि, अपरिग्गहं अब्भुट्ठेमि, राइ भोयणं वोस्सरामि, दिवाभोयण-मेग-भत्तं-पच्चुप्पणं-फासुगं-अब्भुट्ठेमि, अट्टरुद्द-ज्झाणं वोस्सरामि, धम्म-सुक्क-ज्झाणं अब्भुट्ठेमि, किण्ह-णील-काउ-लेस्सं वोस्सरामि, तेउ-पम्मसुक्क-लेस्सं अब्भुट्ठेमि, आरंभं वोस्सरामि, अणारंभं अब्भुट्ठेमि, असंजमं वोस्सरामि, संजमं अब्भुट्ठेमि, सग्गंथं वोस्सरामि, णिग्गंथं अब्भुट्ठेमि, सचेलं वोस्सरामि, अचेलं अब्भुट्ठेमि, अलोचं वोस्सरामि, लोचं अब्भुट्ठेमि, ण्हाणं वोस्सरामि, अण्हाणं अब्भुट्ठेमि, अखिदि-सयणं वोस्सरामि,

खिदि-सयणं अब्भुट्ठेमि, दंतवणं वोस्सरामि, अदंतवणं अब्भुट्ठेमि, अट्ठिदि भोयणं वोस्सरामि, ठिदिभोयण-मेग-भत्तं अब्भुट्ठेमि, अपाणि-पत्तं वोस्सरामि, पाणि-पत्तं अब्भुट्ठेमि, कोहं वोस्सरामि, खंतिं अब्भुट्ठेमि, माणं वोस्सरामि, मद्दवं अब्भुट्ठेमि, मायं वोस्सरामि, अज्जवं अब्भुट्ठेमि,, लोहं वोस्सरामि, संतोसं अब्भुट्ठेमि, अतवं वोस्सरामि, दुवादस-विहतवो-कम्मं अब्भुट्ठेमि । मिच्छत्तं परिवज्जामि, सम्मत्तं उवसंपज्जामि, असीलं परिवज्जामि, सुसीलं उवसंपज्जामि, ससल्लं परिवज्जामि, णिसल्लं उवसंपज्जामि, अविणयं परिवज्जामि, विणयं उवसंपज्जामि, अणाचारं परिवज्जामि, आचारं उवसंपज्जामि, उम्मग्गं परिवज्जामि, जिणमग्गं उवसंपज्जामि, अखंतिं परिवज्जामि, खंतिं उवसंपज्जामि, अगुत्तिं परिवज्जामि, गुत्तिं उवसंपज्जामि, अमुत्तिं परिवज्जामि, सुमुत्तिं उवसंपज्जामि, असमाहिं परिवज्जामि, सुसमाहिं उवसंपज्जामि, ममत्तिं परिवज्जामि णिम्ममत्तिं उवसंपज्जामि, अभावियं भावेमि, भावियं ण भावेमि, इमं णिग्गंथ पव्वयणं, अणुत्तरं, केवलियं-पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइयं, संसुद्धं, सल्लघट्टाणं-सल्लघत्ताणं, सिद्धिमग्गं, सेढिमग्गं, खंतिमग्गं, मुत्तिमग्गं, पमुत्तिमग्गं, मोक्खमग्गं, पमोक्खमग्गं, णिज्जाणमग्गं, णिव्वाणमग्गं, सव्व-दुक्ख-परिहाणि-मग्गं, सुचरिय-परिणिव्वाण-मग्गं, जत्थ-ठिया-जीवा, सिज्झंति, बुज्झंति,

मुंचति, परिणिव्वाणयंति, सव्व-दुक्खाणमंतं करेंति । तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदो उत्तरं, अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि कयाचि वा कुदोचि वा णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, सीलेण गुणेण वा, तवेण वा, णियमेण वा, वदेण वा, विहारेण वा, आलएण वा, अज्जवेण वा, लाहवेण वा, अण्णेण वा, वीरिएण वा, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि, उवहि-णियडि-माण-माया-मोस-मूरण, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्तं च पडिविरदोमि । सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि । जं जिणवरेहिं-पण्णत्तो, जो मए पक्खिय (चाउमासिय) (संवच्छरिय) इरियावहि-केसलोचाइचारस्स, संथारादिचारस्स, पंथादि-चारस्स, सव्वादिचारस्स, उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तं च रोचेमि।

पंचमे महव्वदे परिग्गहादो वेरमणं उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महापुरिसाण-चिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु-सक्खियं, अप्प-सक्खियं, पर-सक्खियं, देवता-सक्खियं, उत्तमट्ठम्हि। "इदं मे महव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु, णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवतु" ।

पंचमं महाव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्वपूर्वकं दृढव्रतं सुव्रतं समारूढं ते मे भवतु ।।१।।

पंचमं महाव्रतं सर्वेषां.............ते मे भवतु ।।२।।

पंचमं महाव्रतं सर्वेषां..................ते मे भवतु ।।३।।
णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।
णमो अरहंताणं...........णमो लोए सव्वसाहूणं ।।२।।
णमो अरहंताणं...........णमो लोए सव्वसाहूणं ।।३।।

अहावरे छट्ठे अणुव्वदे सव्वं भंते ! राइ-भोयणं पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण मणसा-वचसा-काएण, से असणं वा, पाणं वा, खादियं वा, सादियं वा, कडुयं वा, कसायं वा, आमिलं वा, महुरं वा, लवणं वा, अलवणं वा, सचित्तं वा, अचित्तं वा, तं-सव्वं-चउव्विहं-आहारं, णेव सयं रत्तिं भुंजिज्ज, णो अण्णेहिं रत्तिं भुंजाविज्ज, णो अण्णेहिं रत्तिं भुंजिज्जंतं पि समणुमणिज्ज, तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि ।

पुव्विचणं भंते! जं वि मए रागस्स वा, दोसस्स वा, मोहस्स वा, वसंगदेण वा, चउव्विहो आहारो, सयं रत्तिं भुत्तो, अण्णेहिं रत्तिं भुंजाविदो, अण्णेहिं रत्तिं भुंजिज्जंतो वि समणुमण्णिदो तं वि ।

इमस्स णिग्गंथस्स, पवयणस्स, अणुत्तरस्स, केवलियस्स, केवलि-पण्णत्तस्स-धम्मस्स-अहिंसा-लक्खणस्स, सच्चाहि-ट्ठियस्स, विणय-मूलस्स, खमा-बलस्स, अट्ठारस-सील-सहस्स-परिमंडियस्स, चउरासीदि-गुण-सयसहस्स, विहूसियस्स,

णवसु-बंभचेर-गुत्तस्स, णियदिलक्खणस्स, परिचाग-फलस्स, उवसम-पहाणस्स, खंति-मग्ग-देसयस्स, मुत्ति-मग्ग-पयासयस्स, सिद्धि-मग्ग-पज्जव-साहणस्स, से कोहेण वा, माणेण वा, मायाए वा, लोहेण वा, अण्णाणेण वा, अदंसणेण वा, अविरिएण वा, असंयमेण वा, असमणेण वा, अणहि-गमणेण वा, अभिमंसिदाए वा, अबोहिदाए वा, रागेण वा, दोसेण वा, मोहेण वा, हस्सेण वा, भएण वा, पदोसेण वा, पमादेण वा, पेम्मेण वा, पिवासेण वा, लज्जेण वा, गारवेण वा, अणादरेण वा, अणेण केण वि कारणेण जादेण वा, आलसदाए, बालिसदाए, कम्म-भारिगदाए, कम्म-गुरु-गदाए, कम्म-दुच्चरिदाए, कम्म-पुरुक्कडदाए, ति-गारव-गुरुगदाए, अबहु-सुददाए, अविदिद-परमट्ठदाए, तं सव्वं पुव्वं दुच्चरियं गरहामि । आगमेसिं च अपच्चक्खियं-पच्चक्खामि, अणालोचियं-आलोचेमि, अणिंदियं-णिंदामि, अगरहियं-गरहामि, अपडिक्कंतं-पडिक्कमामि, विराहणं वोस्सरामि, आराहणं अब्भुट्ठेमि, अण्णाणं वोस्सरामि, सण्णाणं अब्भुट्ठेमि, कुदंसणं वोस्सरामि, सम्मदंसणं अब्भुट्ठेमि, कुचरियं वोस्सरामि, सुचरियं अब्भुट्ठेमि, कुतवं वोस्सरामि, सुतवं अब्भुट्ठेमि, अकरणिज्जं वोस्सरामि, करणिज्जं अब्भुट्ठेमि, अकिरियं वोस्सरामि, किरियं अब्भुट्ठेमि, पाणादिवादं वोस्सरामि, अभयदाणं अब्भुट्ठेमि, मोसं वोस्सरामि, सच्चं अब्भुट्ठेमि, अदिण्णादाणं वोस्सरामि,

दिण्णं-कप्प-णिज्जं अब्भुट्ठेमि, अबंभं वोस्सरामि, बंभचरियं अब्भुट्ठेमि, परिग्गहं वोस्सरामि, अपरिग्गहं अब्भुट्ठेमि, राइ भोयणं वोस्सरामि, दिवाभोयण-मेग-भत्तं-पच्चुप्पणं-फासुगं-अब्भुट्ठेमि अट्टरुद्द-ज्झाणं वोस्सरामि, धम्म-सुक्क-ज्झाणं अब्भुट्ठेमि, किण्ह-णील काउ-लेस्सं वोस्सरामि, तेउ-पम्मसुक्क-लेस्सं अब्भुट्ठेमि, आरंभं वोस्सरामि, अणारंभं अब्भुट्ठेमि, असंजमं वोस्सरामि, संजमं अब्भुट्ठेमि, सग्गंथं वोस्सरामि, णिग्गथं अब्भुट्ठेमि, सचेलं वोस्सरामि, अचेलं अब्भुट्ठेमि, अलोचं वोस्सरामि, लोचं अब्भुट्ठेमि, ण्हाणं वोस्सरामि, अण्हाणं अब्भुट्ठेमि, अखिदि-सयणं वोस्सरामि, खिदि-सयणं अब्भुट्ठेमि, दंतवणं वोस्सरामि, अदंतवणं अब्भुट्ठेमि, अट्ठिदि-भोयणं वोस्सरामि, ठिदिभोयण-मेग-भत्तं अब्भुट्ठेमि, अपाणि-पत्तं वोस्सरामि, पाणि-पत्तं अब्भुट्ठेमि, कोहं वोस्सरामि, खंतिं अब्भुट्ठेमि, माणं वोस्सरामि, मद्दवं अब्भुट्ठेमि, मायं वोस्सरामि, अज्जवं अब्भुट्ठेमि, लोहं वोस्सरामि, संतोसं अब्भुट्ठेमि, अतवं वोस्सरामि, दुवादस-विहतवो-कम्मं अब्भुट्ठेमि । मिच्छत्तं परिवज्जामि, सम्मत्तं उवसंपज्जामि, असीलं परिवज्जामि, सुसीलं उवसंपज्जामि, ससल्लं परिवज्जामि, णिसल्लं उवसंपज्जामि, अविणयं परिवज्जामि, विणयं उवसंपज्जामि, अणाचारं परिवज्जामि, आचारं उवसंपज्जामि, उम्मग्गं परिवज्जामि, जिणमग्गं उवसंपज्जामि, अखंतिं परिवज्जामि,

खंतिं उवसंपज्जामि, अगुत्तिं परिवज्जामि, गुत्तिं उवसंपज्जामि, अमुत्तिं परिवज्जामि, सुमुत्तिं उवसंपज्जामि, असमाहिं परिवज्जामि, सुसमाहिं उवसंपज्जामि, ममत्तिं परिवज्जामि, णिम्ममत्तिं उवसंपज्जामि, अभावियं भावेमि, भावियं ण भावेमि, इमं णिग्गंथ पव्वयणं, अणुत्तरं, केवलियं-पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइयं संसुद्धं, सल्लघट्टाणं-सल्लघत्ताणं, सिद्धिमग्गं, सेढिमग्गं, खंतिमग्गं, मुत्तिमग्गं, पमुत्तिमग्गं, मोक्खमग्गं, पमोक्खमग्गं, णिज्जाणमग्गं, णिव्वाणमग्गं, सव्व-दुक्ख-परिहाणि-मग्गं, सुचरिय-परिणिव्वाण-मग्गं, जत्थ-ठिया-जीवा, सिज्झंति, बुज्झंति, मुंचंति, परिणिव्वाणयंति, सव्व-दुक्खाणमंतं करेंति । तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदो उत्तरं, अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भवस्सदि, कदाचि वा कुदोचि वा णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, सीलेण वा, गुणेण वा, तवेण वा, णियमेण वा, वदेण वा, विहारेण वा, आलएण वा, अज्जवेण वा, लाहवेण वा, अण्णेण वा, वीरिएण वा, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि, उवहि-णियडि-माण-माया-मोस-मूरण, मिच्छाणाण-मिच्छादंसण-मिच्छाचरित्तं च पडिविरदोमि । सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि । जं जिणवरेहिं पण्णत्तो, जो मए पक्खिय (चउमासिय) (संवच्छरिय) इरियावहि-केस-लोचाइचारस्स, संथारादिचारस्स,

पंथादिचारस्स, सव्वादिचारस्स, उत्तमट्ठस्स सम्मचरित्तं च रोचेमि ।

छट्ठे अणुव्वदे राइ-भोयणादो वेरमणं, उवट्ठावण-मंडले, महत्थे, महागुणे, महाणुभावे, महाजसे, महापुरिसाणचिण्णे, अरहंत-सक्खियं, सिद्ध-सक्खियं, साहु-सक्खियं, अप्प-सक्खियं, पर-सक्खियं, देवता-सक्खियं, उत्तमट्ठम्हि। "इदं मे अणुव्वदं, सुव्वदं, दिढव्वदं होदु, णित्थारयं, पारयं, तारयं, आराहियं चावि ते मे भवतु ।"

षष्ठं अणुव्रतं सर्वेषां व्रतधारिणां सम्यक्त्वपूर्वकं, दृढ़व्रतं, सुव्रतं, समारूढं ते मे भवतु ।।१।।

षष्ठं अणुव्रतं सर्वेषां............. ते मे भवतु ।।२।।

षष्ठं अणुव्रतं सर्वेषां............. ते मे भवतु ।।३।।

णमो अरिहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।

णमो अरहंताणं........... णमो लोए सव्वसाहूणं ।।२।।

णमो अरहंताणं........... णमो लोए सव्वसाहूणं ।।३।।

चूलिका

चूलियंतु पवक्खामि भावणा पंचविंसदी ।
पंच पंच अणुण्णादा एक्केक्कम्हि महव्वदे ।।१।।

अहिंसा महाव्रत की भावनाएँ

मणगुत्तो वचिगुत्तो इरिया-काय-संयदो ।
एसणा-समिदि संजुत्तो पढमं वदमस्सिदो ।।२।।

सत्य महाव्रत की भावनाएँ

अकोहणो अलोहो य भय-हस्स-विवज्जिदो ।
अणुवीचि-भास-कुसलो विदियं वदमस्सिदो ।।३।।

अचौर्यमहाव्रत की भावनाएँ

अदेहणं भावणं चावि उग्गहं य परिग्गहे ।
संतुट्ठो भत्तपाणेसु तिदियं वदमस्सिदो ।।४।।

ब्रह्मचर्यमहाव्रत की भावनाएँ

इत्थिकहा इत्थि-संसग्ग-हास-खेड-पलोयणे ।
णियमम्मि ट्ठिदो णियत्तो य चउत्थं वदमस्सिदो ।।५।।

अपरिग्रह महाव्रत की भावनाएँ

सचित्ताचित्त-दव्वेसु बज्झ-मब्भंतरेसु य ।
परिग्गहादो विरदो पंचमं वदमस्सिदो ।।६।।

उत्तम व्रत का स्वामी

धिदिमंतो खमाजुत्तो, झाण-जोग-परिट्ठिदो ।
परिसहाण-उरं देत्तो उत्तमं वदमस्सिदो ।।७।।

ध्यान की सारता

जो सारो सव्वसारेसु सो सारो एस गोयम ।
सारं झाणंति णामे ण सव्वं बुद्धेहिं देसिदं ।।८।।

इच्चेदाणि पंचमहव्वदाणि, राइ-भोयणादो वेरमणं छट्ठाणि, सभावणाणि, समाउग्ग-पदाणि, स उत्तर-पदाणि, सम्मं, धम्मं, अणुपाल-इत्ता, समणा, भयवंता, णिग्गंथा होऊण, सिज्झंति, बुज्झंति, मुच्चंति, परिणिव्वाणयंति, सव्वदुक्खाणमंतं करेंति, परिविज्जाणंति । तं जहा-

पाणादिवादं चहि मोसगं च,
अदत्त मेहुण्ण परिग्गहं च ।
वदाणि सम्मं अणुपाल-इत्ता,
णिव्वाण-मग्गं विरदा उवेंति ।।१।।

निःशल्यता का उपदेश

जाणि काणि वि सल्लाणि गरहिदाणि जिण-सासणे ।
ताणि सव्वाणि वोसरित्ता णिसल्लो विहरदे सया मुणी ।।

माया त्याग उपदेश

उप्पण्णाणुप्पण्णा माया अणुपुव्वं सो णिहंतव्वा ।
आलोयण पडिकमणं णिंदण गरहणदाए ।।३।।

द्रव्य भाव प्रतिक्रमण

अब्भुट्ठिद-करण-दाए अब्भुट्ठिद-दुक्कड-णिराकरणदाए ।
भवं भाव पडिक्कमणं सेसा पुण दव्वदो भणिदा ।।४।।

प्रतिक्रमण विधि सब तीर्थंकरों द्वारा कथित है

एसो पडिक्कमण-विही पण्णत्तो जिणवरेहिं सव्वेहिं ।
संजम-तव-ट्ठिदाणं णिग्गंथाणं महरिसीणं ।।५।।

क्षमा एवं फल याचना

अक्खर-पयत्थ-हीणं मत्ता-हीणं च जं भवे एत्थ ।
तं खमउ णाण-देवय ! देउ समाहिं च बोहिं च ।।६।।

पंच परमेष्ठियों को नमस्कार

काऊण णमोक्कारं अरहंताणं तहेव सिद्धाणं ।
आइरिय-उवज्झायाणं लोयम्मि य सव्वसाहूणं ।।७।।

इच्छामि भंते ! पडिक्कमणमिदं, सुत्तस्स, मूलपदाणं, उत्तर-पदाण-मच्चासणदाए तं जहा-

पदादि की अवहेलना सम्बन्धी प्रतिक्रमण

णमोक्कारपदे, अरहंतपदे, सिद्धपदे, आइरियपदे, उवज्झाय-पदे, साहु-पदे, मंगल-पदे, लोगोत्तम-पदे, सरण-पदे, सामाइय-पदे, चउवीस-तित्थयर-पदे, वंदण-पदे, पडिक्कमण-पदे, पच्चक्खाण-पदे, काउस्सग्ग-पदे, असीहिय-पदे, निसीहिय-पदे, अंगंगेसु, पुव्वंगेसु, पइण्णएसु, पाहुडेसु, पाहुड-पाहुडेसु, कदकम्मेसु वा, भूद कम्मेसु वा, णाणस्स-अइक्कमणदाए, दंसणस्स-अइक्कमणदाए, चरित्तस्स-अइक्कमणदाए, तवस्स-अइक्कमणदाए, वीरियस्स-अइक्कमणदाए, से अक्खर-हीणं वा, सर-हीणं वा, विंजण-हीणं वा, पद-हीणं वा, अत्थ-हीणं वा, गंथ-हीणं वा, थएसु वा, थुइसु वा, अट्टक्खाणेसु वा, अणि-योगेसु वा, अणि-योगद्दारेसु वा, जे भावा पण्णत्ता, अरहंतेहिं, भयवंतेहिं, तित्थयरेहिं, आदियरेहिं, तिलोग-णाहेहिं, तिलोग-

बुद्धेहिं, तिलोग-दरसीहिं, ते सद्दहामि, ते पत्तियामि, ते रोचेमि, ते फासेमि, ते सद्दहंतस्स, ते पत्तयंतस्स, ते रोचयंतस्स, ते फासयंतस्स, जो मए (पक्खिओ) (चउमासिओ) (संवच्छरिओ) अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो, अकालो, सज्झाओ, कओ काले वा, परिहाविदो, अच्छाकारिदं, मिच्छामेलिदं, आमेलिदं, वा मेलिदं, अण्णहा-दिण्णं, अण्णहा-पडिच्छदं, आवासएसु, परिहीणदाए तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

अह पडिवदाए, विदियाए, तिदियाए, चउत्थीए, पंचमीए, छट्ठीए, सत्तमीए, अट्ठमीए, णवमीए, दसमीए, एयारसीए बारसीए, तेरसीए, चउद्दसीए, पुण्ण-मासीए, पण्णरस-दिवसाणं, पण्णरस-राइणं, (चउण्हं-मासाणं, अट्ठणं-पक्खाणं, वीसुत्तरसय-दिवसाणं, वीसुत्तरसय-राइणं) (बारसण्हं-मासाणं, चउवीसण्हं-पक्खाणं, तिण्हि-छावट्ठि-सय-दिवसाणं, तिण्हि-छावट्ठि-सय-राइणं) (पंचवरिसादो) परदो, अब्भतंरदो वा, दोण्हं-अट्ट-रूद्द-संकिलेस-परिणामाणं, तिण्हं-अप्पसत्थ-संकिलेस-परिणामाणं, तिण्हं-दंडाणं, तिण्हं-लेस्साणं, तिण्हं-गुत्तीणं, तिण्हं-गारवाणं, तिण्हं-सल्लाणं, चउण्हं-सण्णाणं, चउण्हं-कसायाणं, चउण्हं-उवसग्गाणं, पंचण्हं महव्वयाणं पंचण्हं इंदियाणं, पंचण्हं-समिदीणं, पंचण्हं-चरित्ताणं, छण्हं-आवासयाणं, सत्तण्हं-भयाणं, सत्त-

विहसंसाराणं, अट्ठण्हं-मयाणं, अट्ठण्हं-सुद्धीणं, अट्ठण्हं-कम्माणं, अट्ठण्हं-पवयण-माउयाणं, णवण्हं-बंभचेर-गुत्तीणं, णवण्हं-णो-कसायाणं, दस-विह-मुंडाणं, दसविह-समण-धम्माणं, दसविह-धम्मज्झाणाणं, बारसण्हं संजमाणं, बारसण्हं तवाणं, बारसण्हं अंगाणं, तेरसण्हं किरियाणं, चउदसण्हं पुव्वाण्हं, पण्णरसण्हं पमायाणं, सोलसण्हं कसायाणं बावीसाए परीसहेसु, पणवीसाए किरियासु, पणवीसाए भावणासु, अट्ठारस-सील-सहस्सेसु, चउरासीदि-गुण-सय-सहस्सेसु, मूलगुणेसु, उत्तरगुणेसु, अदिक्कमो, वदिक्कमो, अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो, तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, पडिक्कंतं, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदं, तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि, अप्पाणं वोस्सरामि, जाव अरहंताणं, भयवंताण, णमोक्कारं करेमि, पज्जुवासं करेमि, ताव कालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।१।।

श्रावक के १२ व्रतों के अन्तर्गत पाँच अणुव्रतों का वर्णन

पढमं ताव सुदं मे आउस्संतो ! इह खलु समणेण, भयवदा, महदि, महावीरेण, महाकस्सवेण, सव्वण्हुणा, सव्व-लोय-दरसिणा, सावयाणं, सावियाणं, खुड्डयाणं खुड्डीयाणं, कारणेण, पंचाणुव्वदाणि, तिण्णि

गुणव्वदाणि, चत्तारि सिक्खावदाणि, बारस-विहं गिहत्थ-धम्मं सम्मं उवदेसियाणि । तत्थ इमाणि पंचाणुव्वदाणि पढमे अणुव्वदे थूलयडे पाणादिवादादो वेरमणं, विदिये अणुव्वदे थूलयडे मुसावादादो वेरमणं, तिदिये अणुव्वदे, थूलयडे अदिण्णादाणादो वेरमणं, चउत्थे अणुव्वदे, थूलयडे सदार-संतोस-परदारा-गमण-वेरमणं, कस्स य पुणु सव्वदो विरदी, पंचमे अणुव्वदे, थूलयडे इच्छा-कद-परिमाणं चेदि, इच्चेदाणि पंच अणुव्वदाणि ।

तीन गुणव्रतों का वर्णन

तत्थ इमाणि तिण्णि गुणव्वदाणि तत्थ पढमे गुणव्वदे दिसि-विदिसि पच्चक्खाणं, विदिये, गुणव्वदे, विविध-अणत्थ-दंडादो वेरमणं, तिदिये गुणव्वदे भोगोपभोग-परिसंखाणं चेदि, इच्चेदाणि तिण्णि गुणव्वदाणि ।

चार शिक्षाव्रतों का वर्णन

तत्थ इमाणि चत्तारि सिक्खावदाणि तत्थ पढमे सामाइयं, विदिये पोसहोवासयं, तिदिये अतिथि-संविभागो, चउत्थे सिक्खावदे पच्छिम-सल्लेहणा-मरणं चेदि । इच्चेदाणि चत्तारि सिक्खावदाणि ।

से अभिमद-जीवाजीव-उवलद्ध-पुण्ण-पाव-आसव-बंध-संवर-णिज्जर-मोक्ख-महि-कुसले, धम्माणु-रायरत्तो, पेम्माणुराय-रत्तो, अट्ठि-मज्जाणुराय-रत्तो, मुच्छिदट्ठे, गिहि-दट्ठे, विहि-दट्ठे, पालि-दट्ठे, सेविदट्ठे, इणमेव णिग्गंथ-पवयणे, अणुत्तरे, से-अट्ठे, सेवणुट्ठे ।

सम्यक्त्व के आठ अंगों के नाम

णिस्संकिय णिक्कंखिय णिव्विदिगिंच्छा अमूढदिट्ठी य ।
उवगूहण ट्ठिदिकरणं वच्छल्ल-पहावणा य ते अट्ठ ।।१।।

सव्वेदाणि पंचाणुव्वदाणि; तिण्णि गुणव्वदाणि, चत्तारि सिक्खावदाणि; बारसविहं-गिहत्थ-धम्ममणु-पाल-इत्ता ।

देशव्रत के ग्यारह स्थानों के नाम

दंसण-वय-सामाइय-पोसह-सचित्त-राइ-भत्तेय ।
बंभारंभ परिग्गह अणुमणमुदिट्ठ देसविरदोय ।।१।।

श्रावक धर्म

महु-मंस-मज्ज जूआ वेसादि-विवज्जणा सीलो ।
पंचाणुव्वय-जुत्तो सत्तेहिं सिक्खावयेहिं संपुण्णो ।।२।।

श्रावक व्रत निर्दोष पालने का फल

जो एदाइं वदाइं धरेइ, सावया-सावियाओ वा, खुड्डय-खुड्डियाओ वा, दह-अट्ठ-पंच, भवणवासिय-वाणविंतर-जोइसिय, सोहम्मीसाण-देवीओ वदिक्कमित्तु उवरिम-अण्णदर-महड्ढियासु देवेसु उववज्जंति ।

तं जहा-सोहम्मीसाण-सणक्कुमार-माहिंद-बंभ-बंभुत्तर-लांतव-कापिट्ठ सुक्क-महासुक्क सतार-सहस्सार आणत-पाणत-आरण-अच्चुत-कप्पेसु उववज्जंति ।

अडयंबर-सत्थधरा कडयंगद-बद्धनउडकय-सोहा ।
भासुरवर-बोहिधरा देवा य महड्ढिया होंति ।।१।।

समाधिमरण का फल

उक्कस्सेण दो-तिण्ण भव-गहणाणि, जहण्णेण सत्तट्ठ-भव-गहणाणि, तदो सुमाणुसत्तादो-सुदेवत्तं, सुदेवत्तादो-सुमाणुसत्तं, तदो साइहत्था, पच्छा-णिग्गंथा होऊण, सिज्झंति, बुज्झंति, मुंचंति, परिणिव्वाण-यंति, सव्वदुक्खाणमंतं करेंति । जाव अरहंताणं, भयवंताणं, णमोक्कारं करेमि, पज्जुवासं करेमि, तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

वद-समि-दिंदिय-रोधो लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं ठिदि-भोयण-मेय भत्तं च ।।१।।

एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो अइचारादो णियत्तो हं ।।२।।

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं

अथ सर्वातिचार विशुद्ध्यर्थं पाक्षिक (चातुर्मासिक) (वार्षिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां, कृत-दोष-निराकरणार्थं पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं श्री निष्ठितकरण-चन्द्रवीरभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

यहाँ आचार्य श्री के साथ-साथ सभी मुनिराजों को निम्नलिखित सामायिक दण्डक, कायोत्सर्ग और थोस्सामि स्तव पढ़कर वीरभक्ति आदि बोलना चाहिए ।

श्री वीरभक्ति

(णमो अरहंताणं...से वोस्सरामि पर्यन्त सामायिक दण्डक बोलें। पश्चात् पाक्षिक[1] प्रतिक्रमण में ३०० श्वासोच्छ्वास[2] अर्थात् १०० बार पंचनमस्कार मंत्र का जाप, चातुर्मासिक प्रतिक्रमण में ४०० श्वासोच्छ्वास अर्थात् १३४ बार पंचनमस्कार मंत्र का जाप और वार्षिक प्रतिक्रमण में ५०० श्वासोच्छ्वास अर्थात् १६७ बार पंचनमस्कार मंत्र का जाप करना चाहिए। पश्चात् चतुर्विंशति स्तव अर्थात् थोस्सामि बोलना चाहिए।)

चन्द्रप्रभं चन्द्रमरीचिगौरं,
चन्द्रं द्वितीयं जगतीव कान्तम्।

---

१. (अ) अट्ठसदं देवसिय कल्लद्धं पक्खियं च तिण्णि सया।
उस्सासा कायव्वा णियमंते अप्पमत्तेण ॥१८५॥
चादुम्मासे चउरो सदाइ संवच्छरे य पंचदसा।
काओसग्गुस्सासा पंचसु ठाणेसु णादव्वा ॥१८६॥
अ० ७ मूलाचार (कुन्दकुन्दाचार्य)

(ब) उच्छ्वासा...।
परमेष्ठि-पदोच्चारैः शतानि-त्रीणि पाक्षिके ॥६३॥
उच्छ्वासानां च चातुर्मासिके चतु शतानि वै।
शतानि पंच सांवत्सरके स्युर्नियमात्सताम् ॥६४॥
चतुर्थ अ०, मूलाचार प्रदीप।

२.(क) बाहर से भीतर की ओर प्राण वायु के खींचने को श्वास कहते हैं, तथा भीतर की ओर से बाहर प्राण वायु के निकालने को उच्छ्वास कहते हैं और इन दोनों के समूह को श्वासोच्छ्वास कहते हैं।

(ख) श्वास लेते समय "णमो अरहंताणं" पद और श्वास छोड़ते समय "णमो आइरियाणं" और श्वास छोड़ते समय 'णमो उवज्झायाणं' पद बोलें। पुनः श्वास लेते समय पंचम पद के अर्धभाग को अर्थात् 'णमो लोए' पद तथा श्वास छोड़ते समय शेष अर्धभाग को अर्थात् 'सव्वसाहूणं' पद बोलें। इस प्रकार एक पंच नमस्कार मंत्र के उच्चारण में तीन श्वासोच्छ्वास और नौ बार णमोकार मन्त्र के उच्चारण में २७ श्वासोच्छ्वास करना चाहिए।

वन्देऽभिवन्द्यं महतामृषीन्द्रं,
जिनं जित-स्वान्त-कषाय-बन्धम् ।।१।।
यस्याङ्ग-लक्ष्मी-परिवेश-भिन्नं,
तमस्तमोरेरिव रश्मि-भिन्नम् ।
ननाश बाह्यं बहु-मानसं च,
ध्यान-प्रदीपातिशयेन भिन्नम् ।।२।।
स्व-पक्ष-सौस्थित्य-मदावलिप्ता,
वाक्-सिंह-नादै-र्विमदा बभूवुः ।
प्रवादिनो यस्य मदार्द्र-गण्डा,
गजा यथा केसरिणो निनादैः ।।३।।
यः सर्व-लोके परमेष्ठितायाः,
पदं बभूवादभुत-कर्म-तेजाः ।
अनन्त-धामाक्षर विश्व-चक्षुः,
समस्त-दुःख-क्षय-शासनश्च ।।४।।
स चन्द्रमा भव्य-कुमुद्वतीनां,
विपन्न-दोषभ्र-कलङ्क-लेपः
व्याकोश-वाङ्-न्याय-मयूख-मालः,
पूयात् पवित्रो भगवान्-मनो मे ।।५।।

यः सर्वाणि चराचराणि विधिवद् द्रव्याणि तेषां गुणान्,
पर्यायानपि भूत-भावि-भवतः सर्वान् सदा सर्वदा ।
जानीते युगपत् प्रतिक्षण-मतः सर्वज्ञ इत्युच्यते,
सर्वज्ञाय जिनेश्वराय महते वीराय तस्मै नमः ।।१।।

वीरः सर्व-सुरासुरेन्द्र-महितो वीरं बुधाः संश्रिता,
वीरेणाभिहतः स्व-कर्म-निचयो वीराय भक्त्या नमः ।
वीरात् तीर्थ-मिदं प्रवृत्त-मतुलं वीरस्य घोरं तपो,
वीरे श्री-द्युति-कांति-कीर्ति-धृतयो हे वीर ! भद्रं त्वयि।।२।।

ये वीर-पादौ प्रणमन्ति नित्यं,
ध्यान-स्थिताः संयम-योग-युक्ताः ।
ते वीत-शोका हि भवन्ति लोके,
संसार-दुर्गं विषमं तरन्ति ।।३।।

व्रत-समुदय-मूलः संयम-स्कन्ध-बन्धो,
यम-नियम-पयोभि-र्वर्धितः शील-शाखः ।
समिति-कलिक-भारो गुप्ति-गुप्त-प्रवालो,
गुण-कुसुम-सुगन्धिः सत्-तपश्चित्र-पत्रः ।।४।।

शिव-सुख-फलदायी यो दया-छाय-योद्धः,
शुभजन-पथिकानां खेदनोदे समर्थः ।
दुरित-रविज-तापन प्रापयन्-नन्तभावं,
स भव-विभव-हान्यै नोऽस्तु चारित्र-वृक्षः ।।५।।

चारित्रं सर्व-जिनैश्चरितं प्रोक्तं च सर्व-शिष्येभ्यः ।
प्रणमामि पञ्च-भेदं पञ्चम-चारित्र-लाभाय ।।६।।

धर्मः सर्व-सुखाकरो हितकरो धर्मं बुधाश्चिन्वते,
धर्मेणैव समाप्यते शिव-सुखं धर्माय तस्मै नमः ।
धर्मान् नास्त्यपरः सुहृद्-भव-भृतां धर्मस्य मूलं दया,
धर्मे चित्त-महं दधे प्रतिदिनं हे धर्म ! मां पालय ।।७।।

धम्मो मंगल-मुक्किट्ठं अहिंसा संयमो तवो।
देवा वि तं णमस्संति जस्स धम्मे सया मणो ।।८।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! वीरभत्ति काउस्सग्गो तस्सालोचेउं, सम्मणाण सम्मदंसण-सम्म-चारित्त-तव-वीरियाचारेसु, जम-णियम-संजम - सील - मूलुत्तर - गुणेसु, सव्वमइचारं, सावज्ज - जोगं पडिविरदोमि, असंखेज्ज-लोय-अज्झवसायठाणाणि, अप्पसत्थ - जोग - सण्णा - णिंदिय-कसाय - गारव - किरियासु, मण - वयण - काय - करण-दुप्पणिहाणि, परिचिंतियाणि, किण्हणील - काउ - लेस्साओ, विकहापालिकुंचिएण - उम्मग्ग- हस्सरदि - अरदि - सोय-भय - दुगंछ - वेयण - विज्जंभ - जंभाइ - आणि, अट्ट-रुद्द - संकिलेस - परिणामाणि, परिणामिदाणि, अणिहुद-कर-चरण-मण-वयण-काय-करणेण, अक्खित्त-बहुल-परायणेण, अपडिपुण्णेण वा, सरक्खरावय-परिसंघाय पडिवत्तिएण, अच्छा-कारिदं, मिच्छा-मेलिदं, आ-मेलिदं, वा-मेलिदं, अण्णहा-दिण्हं, अण्णहा-पडिच्छिदं, आवासएसु-परिहीणदाए कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वद-समि-दिंदिय-रोधो लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च ।।१।।

एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो अइचारादो णियत्तो हं ।।२।।

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं

शान्ति-चतुर्विंशति-स्तुतिः

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं पाक्षिक (चातुर्मासिक) (वार्षिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां कृत-दोष-निराकरणार्थं, पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकलकर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वन्दना-स्तव-समेतं, शान्ति-चतुर्विंशति-तीर्थंकर-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(यहाँ णमो अरहंताणं इत्यादि सामायिक दण्डक बोलें)

(२७ उच्छ्वासों में कायोत्सर्ग करें)

(पश्चात् थोस्सामि हं जिणवरे.................इत्यादि बोलकर निम्नलिखित भक्तियाँ पढ़ें)

शान्ति कीर्तना

विधाय रक्षां परतः प्रजानां,
राजा चिरं योऽप्रति-मप्रतापः ।
व्यधात् पुरस्तात् स्वत एव शान्ति-
र्मुनि-र्दया-मूर्ति-रिवाघशान्तिम् ॥१॥

चक्रेण यः शत्रु-भयङ्करेण,
जित्वा नृपः सर्व-नरेन्द्र-चक्रम् ।
समाधि-चक्रेण पुन-र्जिगाय,
महोदयो दुर्जय-मोह चक्रम् ॥२॥

राजश्रिया राजसु राजसिंहो-
रराज यो राजसु भोगतन्त्रः ।
आर्हन्त्य-लक्ष्म्या पुन-रात्मतन्त्रो,
देवासुरोदार-सभे रराज ॥३॥

यस्मिन् नभूद्राजनि राजचक्रं,
मुनौ दया-दीधिति-धर्म-चक्रम् ।
पूज्ये मुहुः प्राञ्जलि देव चक्रं,
ध्यानोन्मुखे ध्वंसि कृतान्त-चक्रम् ।।४।।
स्वदोष-शान्त्या-विहितात्म-शान्तिः,
शान्ते-र्विधाता शरणं गतानाम् ।
भूयाद् भव-क्लेश-भयोपशान्त्यै,
शान्ति-र्जिनो मे भगवाञ्छरण्यः ।।५।।

चतुर्विंशति स्तुति

[1]चउवीसं तित्थयरे उसहाइ-वीर-पच्छिमे वन्दे ।
सव्वे सगण-गण-हर सिद्धे सिरसा णमंसामि ॥१॥
ये लोकेऽष्टसहस्र-लक्षण-धरा, ज्ञेयार्णवान्तर्गता,
ये सम्यग्-भव-जाल-हेतु-मथना-श्चन्द्रार्क-तेजोऽधिकाः ।
ये साध्विन्द्र-सुराप्सरो-गण-शतै-र्गीत-प्रणूतार्चिता-
स्तान् देवान् वृषभादि-वीर-चरमान्, भक्त्या नमस्याम्यहम् ।।२।।
नाभेयं देवपूज्यं जिनवर-मजितं, सर्व-लोक-प्रदीपम्,
सर्वज्ञं संभवाख्यं मुनि-गण-वृषभं, नन्दनं देव-देवम् ।
कर्मारिघ्नं सुबुद्धिं वर-कमल-निभं, पद्म-पुष्पाभि-गन्धम्,
क्षान्तं दान्तं सुपार्श्वं सकल-शशि-निभं, चंद्रनामान-मीडे।३।।
विख्यातं पुष्पदन्तं भव-भय-मथनं , शीतलं लोक-नाथम्,
श्रेयांसं शील-क्रोशं प्रवर-नर-गुरुं, वासुपूज्यं सुपूज्यम् ।

१. क्रियाकलाप पृ० ११२ के अनुसार ।

मुक्तं दान्तेन्द्रियाश्वं विमल-मृषि-पतिं, सैंह-सेन्यं मुनीन्द्रम्
धर्मंसद्धर्म-केतुं शम-दम-निलयं, स्तौमि शान्ति शरण्यम्।।४।।

कुन्थुं सिद्धालयस्थं श्रमण-पति-मरं त्यक्त-भोगेषु चक्रम्,
मल्लिं विख्यात-गोत्रं खचर-गण-नुतं सुव्रतं सौख्य-राशिम्।
देवेन्द्रार्च्यं नमीशं हरि-कुल-तिलकं नेमिचन्द्रं भवान्तम्,
पार्श्वं नागेन्द्र-वंद्य शरणमहमितो वर्धमानं च भक्त्या ।।५।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! चउवीस-तित्थयर-भत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं पंच-महा-कल्लाण-संपण्णाणं, अट्ठ-महा-पाडिहेर-सहियाणं चउतीसाति-सयविसेस-संजुत्ताणं, बत्तीस-देविंद-मणि-मउड-मत्थय-महिदाणं, बलदेव-वासुदेव-चक्कहर-रिसि-मुणि-जइअणगारोवगूढाणं, थुइ-सय-सहस्स-णिलयाणं, उसहाइ-वीर-पच्छिम-मंगल-महा पुरिसाणं, णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

वद-समि-दिंदिय रोधो लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च ।।१।।

एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो अइचारादो णियत्तो हं ।।२।।

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं

चारित्रालोचना-सहिता वृहदाचार्य-भक्तिः

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं चारित्रा-लोचना-चार्य-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(यहाँ पूर्ववत् "णमो अरहंताणं" इत्यादि दण्डक बोलकर कायोत्सर्ग करें, पश्चात् "थोस्सामि हं जिणवरे" इत्यादि स्तव बोलकर निम्नलिखित आचार्य भक्ति एवं लघु-चारित्रालोचना पढ़ें ।)

वृहद्-आचार्य-भक्ति

सिद्ध-गुण-स्तुति-निरता-नुद्धूत-
रुषाग्नि-जाल-बहुल-विशेषान् ।
गुप्तिभि-रभिसम्पूर्णान् मुक्ति-युतः,
सत्य-वचन-लक्षित-भावान् ।।१।।

मुनि-माहात्म्य-विशेषान् जिन-
शासन-सत्प्रदीप-भासुर-मूर्तीन् ।
सिद्धिं प्रपित् सुमनसो बद्ध-रजो-
विपुल-मूल-घातन-कुशलान् ।।२।।

गुण-मणि-विरचित-वपुषः षड्-
द्रव्य-विनिश्चितस्य धातृन् सततम् ।
रहित-प्रमाद-चर्यान् दर्शन-शुद्धान्,
गणस्य संतुष्टि-करान् ।।३।।

मोह-च्छिदुग्र-तपसः प्रशस्त-
परिशुद्ध-हृदय-शोभन-व्यवहारान् ।
प्रासुक-निलया-ननघा-नाशा-
विध्वंसि-चेतसो-हत-कुपथान् ।।४।।

धारित-विलसन् मुण्डान् वर्जित-
बहुदण्ड-पिण्ड-मण्डल-निकरान् ।
सकल-परीषह-जयिनः क्रियाभि-
रनिशं प्रमादतः परिरहितान् ॥५॥

अचलान् व्यपेत-निद्रान् स्थान-
युतान् कष्ट-दुष्ट-लेश्या-हीनान् ।
विधि-नानाश्रित-वासा-नलिप्त-
देहान् विनिर्जितेन्द्रिय-करिणः ॥६॥

अतुला-नुत्कुटिकासान् विविक्त-
चित्ता-नखण्डित-स्वाध्यायान् ।
दक्षिण-भाव-समग्रान् व्यपगत-
मद-राग-लोभ-शठ-मात्सर्यान् ॥७॥

भिन्नार्त-रौद्र-पक्षान् सम्भावित-
धर्म-शुक्ल-निर्मल-हृदयान् ।
नित्यं पिनद्ध-कुगतीन् पुण्यान्,
गण्योदयान् विलीन-गारव-चर्यान् ॥८॥

तरु-मूल-योग-युक्ता-नवकाशा-
ताप-योग-राग-सनाथान् ।
बहुजन-हितकर-चर्या-नभया-
ननघान् महानुभाव-विधानान् ॥९॥

ईदृश-गुण-सम्पन्नान् युष्मान्,
भक्त्या विशालया स्थिर-योगान् ।

विधि-नानारत-मग्रयान् मुकुली-
कृत-हस्त-कमल-शोभित-शिरसा ।।१०।।

अभिनौमि सकल-कलुष-प्रभवोदय-
जन्म-जरा-मरण-बंधन-मुक्तान् ।
शिव-मचल-मनघ-मक्षय-मव्याहत-
मुक्ति-सौख्य-मस्त्विति-सततम् ।।११।।

लघु-चारित्रालोचना

इच्छामि भंते ! चरित्तायारो, तेरसविहो, परिहाविदो, पंचमहव्वदाणि, पंच-समिदीओ, ति-गुत्तीओ चेदि । तत्थ पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं से पुढवि-काइया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, आऊ-काइया जीवा असंखेज्जा-संखेज्जा, तेऊ-काइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वाऊ-काइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वणप्फदि-काइया जीवा अणंताणंता, हरिया, बीआ, अंकुरा, छिण्णा, भिण्णा, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

बे-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, कुक्खिकिमि-संख-खुल्लय-वराडय-अक्खरिट्ठय-गण्डवाल-संबुक्क-सिप्पि-पुलविकाइया एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

ते-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुन्थूदेहियविंच्छिय-गोभिंद-गोजुव-मक्कुण-पिपीलियाइया, एदेसिं, उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

चउरिंदिया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, दंसमसय-मक्खि-पयंग-कीड-भमर-महुयर-गोमच्छियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पंचिंदिया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुच्छिमा, उब्भेदिमा, उववादिमा, अवि-चउरासीदि-जोणि-पमुह-सद-सहस्सेसु एदेसिं, उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

इच्छामि भंते ! आइरिय भत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, सम्मणाण, सम्म-दंसण-सम्म-चरित्त-जुत्ताणं, पंच-विहाचाराणं, आइरियाणं, आयारादि-सुद-णाणो-वदेसयाणं, उवज्झायाणं, ति-रयण-गुण-पालण-रयाणं, सव्व-साहूणं णिच्चकालं अच्चेमि पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

वद समिदिंदिय-रोधो लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं ठिदि-भोयण-मेय भत्तं च ।।१।।
एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो अइचारादो णियत्तोहं ।।२।।
छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं

वृहदालोचना-सहिता मध्यमाचार्य-भक्तिः

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं वृहदालोचनाचार्य-भक्ति-कायोत्सर्गं करोम्यहम्-

(यहाँ "णमो अरहंताणं" इत्यादि दण्डक बोलकर कायोत्सर्ग करें पश्चात् थोस्सामि हं जिणवरे" इत्यादि स्तव बोलकर निम्नलिखित "देस-कुल-जाइ-सुद्धा" इत्यादि मध्यम-आचार्य-स्तुति और वृहदालोचना बोलें ।)

देस-कुल-जाइ-सुद्धा विसुद्ध-मण-वयण-काय-संजुत्ता ।
तुम्हं पाय-पयोरुह-मिह मंगल-मत्थु मे णिच्चं ।।१।।
सग पर-समय-विदण्हू आगम-हेदूहिं चावि जाणित्ता ।
सुसमत्था जिण-वयणे विणये सत्ताणु-रूवेण ।।२।।
बाल-गुरु-बुड्ढ सेक्खग्-गिलाण-थेरे य खमण-संजुत्ता ।
वट्टावयगा अण्णे दुस्सीले चावि जाणित्ता ।।३।।
वद-समिदि-गुत्ति-जुत्ता मुत्ति-पहे ठाविया पुणो अण्णे ।
अज्झावय-गुण-णिलया साहु-गुणेणावि संजुत्ता ।।४।।
उत्तम-खमाए पुढवी पसण्ण-भावेण अच्छ-जल-सरिसा ।
कम्मिंधण-दहणादो अगणी वाऊ असंगादो ।।५।।
गयण-मिव णिरुवलेवा अक्खोहा सायरुव्व मुणि-वसहा ।
एरिस-गुण-णिलयाणं पायं पणमामि-सुद्ध-मणो ।।६।।

संसार-काणणे पुण बंभम-माणेहिं भव्व-जीवेहिं।
णिव्वाणस्स हु मग्गो लद्धो तुम्हं पसाएण ।।७।।
अविसुद्ध-लेस्स-रहिया-विसुद्ध-लेस्साहि परिणदा सुद्धा ।
रुद्दट्टे पुण चत्ता धम्मे सुक्के य संजुत्ता ।।८।।
उग्गह-ईहावाया-धारण-गुण-संपदेहिं संजुत्ता ।
सुत्तत्थ-भावणाए भाविय-माणेहि वंदामि ।।९।।
तुम्हं गुण-गण-संथुदि अजाण-माणेण जो मया वुत्तो ।
देउ मम बोहिलाहं गुरुभत्ति-जुदत्थओ णिच्चं ।।१०।।

वृहद्-आलोचना

नोट–प्रतिक्रमण पन्द्रह दिन, चार मास और बारह मास में होता है, जब करना हो, तब की अर्थात् उस समय की दिन गणना बोलें ।

[इच्छामि भंते ! पक्खियम्मि आलोचेउं पण्णरसण्हं दिवसाणं, पण्णरसण्हं राइणं, अब्भंतरदो, पंचविहो आयारो णाणायारो, दंसणायारो, तवायारो, वीरियायारो चरित्तायारो चेदि ।]

[इच्छामि भंते ! चउमासियम्मि आलोचेउं चउण्हं मासाणं, अट्ठण्हं पक्खाणं, बीसुत्तर-सय-दिवसाणं, बीसुत्तर-सय-राइणं, अब्भंतरदो, पंचविहो आयारो, णाणायारो, दंसणायारो, तवायारो, वीरियायारो, चरित्तायारो चेदि ।]

[इच्छामि भंते ! संवच्छरियम्मि आलोचेउं, बारसण्हं मासाणं, चउवीसण्हं पक्खाणं, तिण्णिछावट्ठि-सय-दिवसाणं, तिण्णि-छावट्ठि-सय-राइणं अब्भंतरदो, पंचविहो आयारो,

णाणायारो, दंसणायारो, तवायारो, वीरियायारो, चरित्तायारो चेदि ।]

तत्थ णाणायारो अट्ठविहो काले, विणए, उवहाणे, बहुमाणे, तहेव अणिण्हवणे, विंजण-अत्थतदुभये चेदि । णाणायारो अट्ठविहो परिहाविदो, से अक्खर-हीणं वा, सर-हीणं वा, विंजण-हीणं वा, पद-हीणं वा, अत्थ-हीणं वा, गंथ हीणं वा, थएसु वा, थुइसु वा, अत्थक्खाणेसु वा, अणियोगेसु वा, अणियोगद्दारेसु वा, अकाले-सज्झाओ कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो काले वा, परिहाविदो, अच्छा-कारिदं वा, मिच्छा मेलिदं वा, आ मेलिदं, वा-मेलिदं, अण्णहा-दिण्हं, अण्णहा-पडिच्छिदं आवासएसु-परिहीणदाए तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

दंसणायारो अट्ठविहो

णिस्संकिय णिंकंक्खिय णिव्विदिगिंच्छा अमूढदिट्ठीय ।
उवगूहण ठिदि-करणं वच्छल्ल-पहावणा चेदि ।।१।।

दंसणायारो अट्ठविहो परिहाविदो संकाए, कंखाए, विदिगिंछाए, अण्ण-दिट्ठी-पसंसणाए, पर-पाखंड-पसंसणाए, अणायदण-सेवणाए, अवच्छल्लदाए, अपहावणाए तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

तवायारो बारसविहो अब्भंतरो-छव्विहो, बाहिरो-छव्विहो चेदि । तत्थ बाहिरो अणसणं, आमोदरियं, वित्ति-परिसंखा, रस-परिच्चाओ, सरीर-परिच्चाओ, विवित्त-

सयणासणं चेदि । तत्थ अब्भंतरदो पायच्छित्तं, विणओ, वेज्जावच्चं सज्झाओ, झाणं, विउसग्गो चेदि । अब्भंतरं बाहिरं-बारसविहं-तवोकम्मं, ण कदं, णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वीरियायारो पंचविहो परिहाविदो वर-वीरिय-परिक्कमेण, जहुत्त-माणेण, बलेण, वीरिएण, परिक्कमेण णिगूहियं तवो कम्मं, ण कदं, णिसण्णेण पडिक्कंतं तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

इच्छामि भंते ! चरित्तायारो, तेरसविहो, परिहाविदो, पंचमहव्वदाणि, पंच-समिदीओ, ति-गुत्तीओ चेदि । तत्थ पढमे महव्वदे पाणादिवादादो वेरमणं से पुढवि-काइया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, आऊ-काइया जीवा असंखेज्जा-संखेज्जा, तेऊ-काइया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वाऊ-काइया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वणप्फदि-काइया जीवा अणंताणंता, हरिया, बीआ, अंकुरा, छिण्णा भिण्णा, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

बे-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, कुक्खिकिमि-संख-खुल्लय-वराडय-अक्खरिट्ठय-गण्डवाल-संबुक्क-सिप्पि-पुलविकाइया एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

ते-इंदिया जीवा असंखेज्जासंखेज्जा कुन्थूद्देहियविंच्छिय-गोर्भिद-गोजुव-मक्कुण-पिपीलियाइया, एदेसिं, उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

चउरिंदिया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, दंसमसय-मक्खि-पयंग-कीड-भमर-महुयर-गोमच्छियाइया, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

पंचिंदिया-जीवा असंखेज्जासंखेज्जा अंडाइया, पोदाइया, जराइया, रसाइया, संसेदिमा, सम्मुच्छिमा, उब्भेदिमा, उववादिमा, अवि-चउरासीदि-जोणि-पमुह-सद-सहस्सेसु एदेसिं, उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

वद-समि-दिंदिय रोधो लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च ।।१।।
एदे खलु मूल-गुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो अइचारादो णियत्तोहं ।।२।।

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं

क्षुल्लकालोचना-सहिता क्षुल्लकाचार्य-भक्तिः

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं क्षुल्लकालोचनाचार्य-भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्-

(यहाँ पूर्ववत् "णमो अरहंताणं" इत्यादि दण्डक बोलकर कायोत्सर्ग करें, पश्चात् थोस्सामि हं जिणवरे" इत्यादि स्तव बोलकर नीचे लिखी लघु आचार्य भक्ति पढ़ें ।)

लघु आचार्य-भक्ति

प्राज्ञः प्राप्त-समस्त-शास्त्र-हृदयः प्रव्यक्त-लोक-स्थितिः,
प्रास्ताशः प्रतिभा-परः प्रशमवान् प्रागेवदृष्टोत्तरः ।
प्रायः प्रश्न-सह : प्रभुः पर-मनोहारी परानिन्दया,
ब्रूयाद् धर्म-कथां गणी-गुण-निधिः प्रस्पष्ट-मिष्टाक्षरः ।।१।।

श्रुत-मविकलं, शुद्धा वृत्तिः, पर-प्रति-बोधने,
परिणति-रुरूद्योगो मार्ग-प्रवर्तन-सद्-विधौ ।
बुध-नुति-रनुत्सेको लोकज्ञता मृदुता-स्पृहा,
यति-पति-गुणा यस्मिन् नन्ये च सोऽस्तु गुरुः सताम् ।।२।।

श्रुत-जलधि-पारगेभ्यः स्व-पर-
मत-विभावना-पटु-मतिभ्यः ।
सुचरित-तपो-निधिभ्यो नमो,
गुरुभ्यो गुण-गुरुभ्यः ।।३।।

छत्तीस-गुण-समग्गे पञ्च-विहाचार-करण-संदरिसे ।
सिस्साणुग्गह-कुसले धम्माइरिए सदा वन्दे ।।४।।

गुरु-भत्ति-संजमेण य तरन्ति संसार-सायरं घोरम् ।
छिण्णंति अट्ठ-कम्मं जम्मण-मरणं ण पावेंति ।।५।।

ये नित्यं व्रत-मन्त्र-होम-निरता ध्यानाग्नि-होत्रा-कुलाः,
षट्-कर्माभिरता-स्तपोधन-धनाः साधु-क्रियाः साधवः ।

शील-प्रावरणा गुण-प्रहरणा-श्चन्द्रार्क-तेजोऽधिका,
मोक्ष-द्वार-कपाट-पाटन-भटाः प्रीणन्तु मां साधवः ॥६॥

गुरवः पान्तु नो नित्यं ज्ञान-दर्शन-नायकाः ।
चारित्रार्णव-गम्भीरा-मोक्ष-मार्गोपदेशकाः ॥७॥

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! आइरिय-भत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, सम्म-णाण, सम्म-दंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, पंच-विहाचाराणं, आयरियाणं, आयारादि-सुद-णाणो-वदेसयाणं, उवज्झायाणं, ति-रयण-गुण-पालण-रयाणं, सव्व-साहूणं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

वद-समि-दिंदिय-रोधो लोचावासय-मचेल-मण्हाणं ।
खिदि-सयण-मदंतवणं ठिदि-भोयण-मेय-भत्तं च ॥१॥

एदे खलु मूलगुणा समणाणं जिणवरेहिं पण्णत्ता ।
एत्थ पमाद-कदादो अइचारादो णियत्तोऽहं ॥२॥

छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं

अथ सर्वातिचार-विशुद्ध्यर्थं (पाक्षिक) (चातुर्मासिक) (वार्षिक) प्रतिक्रमण-क्रियायां कृत-दोष-निराकरणार्थं, पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वंदना-स्तव-समेतं सिद्ध-चारित्र-प्रतिक्रमण-निष्ठित करण-चन्द्रवीर-शान्ति-चतुर्विंशति-तीर्थंकर-चारित्रालोचनाचार्य वृहदालोचना-

चार्य-मध्यमालोचनाचार्य, क्षुल्लकालोचनाचार्य भक्ती: कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादिदोष-विशुद्ध्यर्थं आत्मपवित्री-करणार्थं, समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम्-

(यहाँ पर आचार्य श्री सहित सर्व साधुगण पूर्ववत् दण्डक आदि बोलकर कायोत्सर्ग करें, पश्चात् चतुर्विंशति स्तव बोलकर नीचे लिखी समाधि भक्ति पढ़ें ।)

समाधि भक्ति

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

शास्त्राभ्यासो जिन-पति-नुतिः सङ्गति सर्वदार्यैः,
सद्वृत्तानां गुण-गण-कथा दोष-वादे च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रिय-हित-वचो भावना चात्म-तत्त्वे,
सम्पद्यन्तां मम भव-भवे यावदेतेऽपवर्ग ।।१।।
तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद् यावन् निर्वाण-सम्प्राप्तिः ।।२।।
अक्खर-पयत्थ-हीणं मत्ता-हीणं च जं मए भणियं ।
तं खमउ णाणदेवय ! मज्झवि दुक्खक्खयं कुणउ ।।३।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! समाहिभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, रयण-त्तय-सरूव परमप्प-ज्झाण लक्खणं समाहि-भत्तीए णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

(यहाँ एक कायोत्सर्ग करें)

(इसके बाद सभी साधुगण निम्नलिखित क्रियानुसार आचार्य श्री को नमस्कार करें)

अथ आपराह्णिक आचार्य वन्दनाक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं, भाव-पूजा-वंदना-स्तव-समेतं श्री सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(कायोत्सर्ग करें)

सम्मत्त-णाण-दंसण-वीरिय सुहुमं तहेव अवगहणं ।
अगुरुलघु-मव्वावाहं अट्ठ-गुणा-होंति सिद्धाणं ।।१।।
तव-सिद्धे णय-सिद्धे संजम-सिद्धे चरित्त-सिद्धेय ।
णाणम्मि दंसणम्मि य सिद्धे सिरसा णमस्सामि ।।२।।

इच्छामि भंते ! सिद्ध भक्ति-काउस्सग्गो कओतस्सालोचेउं सम्मणाण-सम्म-दंसण-सम्म-चरित्त-जुत्ताणं, अट्ठ-विह-कम्म-विप्प-मुक्काणं, अट्ठ-गुण-संपण्णाणं, उड्ढ-लोय-मत्थयम्मि पइट्ठियाणं, तव सिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त सिद्धाणं, अतीदाणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं सव्व-सिद्धाणं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो सुगइ गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

अथ आपराह्णिक आचार्य वन्दनाक्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण सकल कर्म-क्षयार्थं भाव-पूजा-वन्दना स्तव समेतं श्री श्रुतभक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

कोटी-शतं द्वादश चैव कोट्यो,
लक्षाण्यशीति-स्त्र्यधिकानि चैव ।

पञ्चाशदष्टौ च सहस्र-संख्या-
मेतच्छ्रुतं पञ्च पदं नमामि ।।१।।

अरहंत-भासियत्थं गणहर-देवेहिं गंथियं सम्मं ।
पणमामि भत्तिजुत्तो सुद-णाण महोवहिं सिरसा ।।२।।

इच्छामि भंते ! सुदभत्ति काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं अंगोवंग पइण्णय-पाहुडय-परियम्म-सुत्त-पढमाणिओग-पुव्वगय-चूलिया चेव सुत्तत्थय-थुइ-धम्म-कहाइयं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ गमणं, समाहि-मरणं जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं ।

अथ आपराण्हिक आचार्य-वन्दना-क्रियायां पूर्वाचार्यानुक्रमेण, सकल-कर्म-क्षयार्थं भाव-पूजा वंदना स्तव-समेतं श्री आचार्य भक्ति कायोत्सर्गं करोम्यहम् ।

(कायोत्सर्ग करें)

श्रुत-जलधि-पारगेभ्यः,
स्व-पर-मत-विभावना-पटु-मतिभ्यः ।
सुचरित-तपो-निधिभ्यो,
नमो गुरुभ्यो गुण-गुरुभ्यः ।।१।।

छत्तीस-गुण-समग्गे पंच-विहाचार-करण-संदरिसे ।
सिस्सा णुग्गह-कुसले धम्मा इरिए सदा वंदे ।।२।।

गुरु-भत्ति-संजमेण य तरंति संसार-सायरं घोरं ।
छिण्णंति अट्ठ-कम्मं जम्मण-मरणं ण पावेंति ।।३।।

ये नित्यं व्रत-मंत्र-होम-निरता ध्यानाग्नि-होत्राकुला,
षट्-कर्माभिरता-स्तपोधन-धनाः साधु-क्रिया-साधवः ।
शील-प्रावरणा-गुण-प्रहरणा-श्चन्द्रार्क-तेजोऽधिका ,
मोक्षद्वार-कपाट-पाटन-भटाः प्रीणंतु मां साधवः ।।४।।

गुरवः पान्तु नो नित्यं ज्ञान दर्शन-नायकाः ।
चारित्रार्णव-गम्भीरा मोक्ष-मार्गोपदेशकाः ।।५।।

इच्छामि भंते ! आइरिय-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, सम्मणाण सम्मदंसण-सम्मचरित्त-जुत्ताणं, पंचविहाचाराणं, आइरियाणं, आयारादिसुद-णाणोवदेसयाणं उवज्झायाणं, ति-रयण-गुण-पालण-रयाणं सव्व-साहूणं, णिच्चकालं, अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

।। इति पाक्षिकादि-प्रतिक्रमण-समाप्त ।।

प्रायश्चित्त-याचना-विधि

हे स्वामिन् ! पक्षे (चातुर्मासे) (संवत्सरे) अष्टविंशति-मूलगुणेषु (आर्यिका-व्रत-क्रियायां) मनसा वचसा कर्मणा कृत-कारितानुमोदनैः आहारे विहारे निहारे च रागेण द्वेषेण मोहेन भयेन लज्जया प्रमादेन वा जागरणे स्वप्ने च ज्ञाताज्ञात-भावेन अतिक्रम-व्यतिक्रमातिचारानाचार इत्यादयो दोषा लग्नाः तान् क्षमित्वा प्रायश्चित्त-दानेन शुद्धं कुर्यात् माम् ।

सर्वदोषप्रायश्चित्तविधिः

ॐ ह्रीं अर्हं असिआउसा त्रयस्त्रिंशदऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥१॥
ॐ ह्रीं अर्हं अहिंसामहाव्रतस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥२॥
ॐ ह्रीं अर्हं सत्यमहाव्रतस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥३॥
ॐ ह्रीं अर्हं अचौर्यमहाव्रतस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥४॥
ॐ ह्रीं अर्हं ब्रह्मचर्यमहाव्रतस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥५॥
ॐ ह्रीं अर्हं अपरिग्रहमहाव्रतस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥६॥
ॐ ह्रीं अर्हं ईर्यासमितेरऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥७॥
ॐ ह्रीं अर्हं भाषासमितेरऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥८॥
ॐ ह्रीं अर्हं एषणासमितेरऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥९॥
ॐ ह्रीं अर्हं आदाननिक्षेपणसमितेरऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥१०॥

ॐ ह्रीं अर्हं उत्सर्गसमितेरऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।११।।
ॐ ह्रीं अर्हं मनोगुप्तेरऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।१२।।
ॐ ह्रीं अर्हं वचोगुप्तेरऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।१३।।
ॐ ह्रीं अर्हं कायगुप्तेरऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।१४।।
ॐ ह्रीं अर्हं जीवास्तिकायस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।१५।।
ॐ ह्रीं अर्हं पुद्गलास्तिकायस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।१६।।
ॐ ह्रीं अर्हं धर्मास्तिकायस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।१७।।
ॐ ह्रीं अर्हं अधर्मास्तिकायस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।१८।।
ॐ ह्रीं अर्हं आकाशास्तिकायस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।१९।।
ॐ ह्रीं अर्हं पृथिविकायिकस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।२०।।
ॐ ह्रीं अर्हं अप्कायिकस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।२१।।

ॐ ह्रीं अर्हं तेजःकायिकस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥२२॥
ॐ ह्रीं अर्हं वायुकायिकस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥२३॥
ॐ ह्रीं अर्हं वनस्पतिकायिकस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥२४॥
ॐ ह्रीं अर्हं त्रसकायिकस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥२५॥
ॐ ह्रीं अर्हं जीवपदार्थस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥२६॥
ॐ ह्रीं अर्हं अजीवपदार्थस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥२७॥
ॐ ह्रीं अर्हं आस्रवपदार्थस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥२८॥
ॐ ह्रीं अर्हं बन्धपदार्थस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥२९॥
ॐ ह्रीं अर्हं संवरपदार्थस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥३०॥
ॐ ह्रीं अर्हं निर्जरापदार्थस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥३१॥
ॐ ह्रीं अर्हं मोक्षपदार्थस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ॥३२॥

ॐ ह्रीं अर्हं पुण्यपदार्थस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।३३।।
ॐ ह्रीं अर्हं पापपदार्थस्याऽत्यासादना-
त्यागायाऽनुष्ठितप्रोषधोद्योतनाय नमः ।।३४।।
ॐ ह्रीं अर्हं सम्यग्ज्ञानाय नमः ।।३५।।
ॐ ह्रीं अर्हं सम्यग्दर्शनाय नमः ।।३६।।
ॐ ह्रीं अर्हं सम्यक्चारित्राय नमः ।।३७।।

।। इति सर्व दोषप्रायश्चित्तविधिः ।।

अथ श्रावक-प्रतिक्रमणम्

जीवे प्रमाद-जनिताः प्रचुराः प्रदोषा,
यस्मात्प्रतिक्रमणतः प्रलयं प्रयान्ति ।
तस्मात्तदर्थममलं गृहि-बोधनार्थं,
वक्ष्ये विचित्र-भव-कर्म-विशोधनार्थम् ।।१।।

पापिष्ठेन दुरात्मना जड़धिया मायाविना लोभिना,
रागद्वेष-मलीमसेन मनसा दुष्कर्म यन्निर्मितम् ।
त्रैलोक्याधिपते ! जिनेन्द्र ! भवतः श्रीपादमूलेऽधुना,
निन्दापूर्वमहं जहामि सततं वर्वर्तिषुः सत्पथे ।।२।।

खम्मामि सव्वजीवाणं सव्वे जीवा खमंतु मे ।
मेत्ती मे सव्वभूदेसु, वेरं मज्झं ण केण वि ।।३।।

रागबंधपदोसं च, हरिसं दीणभावयं ।
उस्सुगत्तं भयं सोगं रदिमरदिं च वोस्सरे ।।४।।

हा दुट्ठ-कयं हा दुट्ठ-चिंतियं भासियं च हा दुट्ठं ।
अंतो अंतो डज्झमि पच्छत्तावेण वेयत्तो ।।५।।
दव्वे खेत्ते काले भावे य कदाऽवराह-सोहणयं ।
णिंदण-गरहण-जुत्तो मण-वय-कायेण पडिक्कमणं ।।६।।

एइंदिया बेइंदिया तेइंदिया चउरिंदिया पंचिंदिया पुढविकाइया आउकाइया तेउकाइया वाउकाइया-वणप्फदिकाइया तसकाइया एदेसिं उद्दावणं परिदावणं विराहणं उवघादो कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

दंसण-वय-सामाइय-पोसह-सचित्त-राइभत्ते य ।
बंभाऽरंभ-परिग्गह-अणुमणुमुद्दिट्ठ-देसविरदे य ।।

एयासु जहाकहिद-पडिमासु पमादाइकयाइचारसोहणट्ठं छेदोट्ठावणं, होउ मज्झं ।

अथ देवसिय (राइय) पडिक्कमणाए सव्वाइचार-विसोहि-णिमित्तं पुव्वाइरिय कमेण आलोयण-सिद्ध-भत्ति-काउस्सग्गं करोमि ।

सामायिक दण्डक

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं ।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।

चत्तारि मंगलं-अरहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं । चत्तारि लोगुत्तमा-अरहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा,

केवलि-पण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमा । चत्तारि सरणं पव्वज्जामि, अरहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहु सरणं पव्वज्जामि, केवलि-पण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ।

अड्ढाइज्ज-दीव-दो-समुद्देसु पण्णारस-कम्म-भूमिसु, जाव-अरहंताणं, भयवंताणं, आदियराणं, तित्थयराणं, जिणाणं, जिणोत्तमाणं, केवलियाणं, सिद्धाणं, बुद्धाणं, परिणिव्वुदाणं, अंतयडाणं पारगयाणं, धम्माइरियाणं, धम्मदेसयाणं, धम्मणायगाणं धम्म-वर-चाउरंग-चक्कवट्टीणं, देवाहि-देवाणं, णाणाणं, दंसणाणं, चरित्ताणं सदा करेमि किरियम्मं, करेमि भंते ! सामायियं सव्व-सावज्ज-जोगं पच्चक्खामि जावज्जीवं तिविहेण मणसा वचसा काएण, ण करेमि, ण कारेमि, ण अण्णं करंतं पि समणुमणामि तस्स भंते ! अइचारं पडिक्कमामि, णिंदामि, गरहामि अप्पाणं, जाव अरहंताणं भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि तावकालं पावकम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

कायोत्सर्ग करें

थोस्सामि हं जिणवरे तित्थयरे केवली अणंत जिणे ।
णर-पवर-लोय-महिए, विहुय-रय-मले महप्पण्णे ।।१।।
लोयस्सुज्जोय-यरे धम्मं तित्थंकरे जिणे वंदे ।
अरहंते कित्तिस्से चौबीसं चेव केवलिणो ।।२।।
उसह-मजियं च वन्दे संभव-मभिणंदणं च सुमइं च ।
पउमप्पहं सुपासं जिणं च चंदप्पहं वन्दे ।।३।।

सुविहिं पुप्फयंतं सीयल सेयं च वासुपुज्जं च ।
विमल-मणंतं भयवं धम्मं संतिं च वंदामि ।।४।।
कुंथुं च जिण वरिंदं अरं च मल्लिं च सुव्वयं च णमिं ।
वंदामिरिट्ठ-णेमिं तह पासं वड्ढमाणं च ।।५।।
एवं मए अभित्थुआ विहुय-रय-मला-पहीण-जर-मरणा ।
चउवीसं पि जिणवरा तित्थयरा मे पसीयंतु ।।६।।
कित्तिय वंदिय महिया एदे लोगोत्तमा जिणा सिद्धा ।
आरोग्ग-णाण-लाहं दिंतु समाहिं च मे बोहिं ।।७।।
चंदेहिं णिम्मल-यरा आइच्चेहिं अहिय-पया-संता ।
सायर-मिव गंभीरा सिद्धा सिद्धिं मम दिसंतु ।।८।।
श्रीमते वर्धमानाय नमो नमित-विद्विषे ।
यज्ज्ञानाऽन्तर्गतं भूत्वा त्रैलोक्यं गोष्पदाऽयते ।।१।।
तव-सिद्धे णय-सिद्धे, संजम-सिद्धे चरित्त-सिद्धे य ।
णाणम्मि दंसणम्मि य, सिद्धे सिरसाणमंस्सामि ।।२।।

इच्छामि भंते ! सिद्ध-भत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, सम्मणाण-सम्म-दंसण-सम्म-चरित्त-जुत्ताणं, अट्ठ-विह-कम्म-विप्प-मुक्काणं, अट्ठ-गुण-संपण्णाणं, उड्ढ-लोए-मत्थयम्मि पयट्ठियाणं, तव सिद्धाणं, णय-सिद्धाणं, संजम-सिद्धाणं, चरित्त-सिद्धाणं, अतीदाणागद-वट्टमाण-कालत्तय-सिद्धाणं, सव्व-सिद्धाणं णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होदु मज्झं ।

इच्छामि भंते ! देवसियं (राइय) आलोचेउं तत्थ-

दर्शन प्रतिमा

पंचुम्बर सहियाइं, सत्तवि वसणाइं जो विवज्जेइ।
सम्मत्तविशुद्ध मई, सो दंसण सावओ भणिओ ।।१।।

व्रत प्रतिमा

पंच य अणुव्वयाइं, गुणव्वयाइं हवंति तह तिण्णि।
सिक्खावयाइं चत्तारि, जाण विदियम्मि ठाणम्मि ।।२।।

सामायिक प्रतिमा

जिणवयण धम्मचेइय, परमेट्ठि जिणयालयाण णिच्चंपि।
जं वंदणं तिआलं, कीरइ सामाइयं तं खु ।।३।।

प्रोषधोपवास प्रतिमा

उत्तम मज्झ जहण्णं, तिविहं पोसहविहाण मुद्दिट्ठं।
सगसत्तीएमासम्मि, चउसु पव्वेसु कायव्वं ।।४।।

सचित्तत्याग प्रतिमा

जं वज्जिजदि हरिदं, तय पत्त पवाल कंदफल वीयं।
अपसुगं च सलिलं, सचित्तणिव्वत्तिमं ठाणं ।।५।।

दिवामैथुनत्याग या रात्रिभोजनत्याग प्रतिमा

मण वयण काय कद, कारिदाणुमोदेहिंमेहुणं णवधा।
दिवसम्मि जो विवज्जदि, गुणम्मि जो सावओ छट्ठो ।।६।।

ब्रह्मचर्य प्रतिमा

पुव्वुत्तणव विहाणं पि, मेहुणं सव्वदा विवज्जंतो।
इत्थिकहादि णिवित्ती, सत्तमगुण बंभचारी सो ।।७।।

आरम्भत्याग प्रतिमा

जं किं पि गिहारंभं, बहुथोवं वा सया विवज्जेदि ।
आरंभणिवितमदी, सो अट्ठम सावओ भणिओ ।।८।।

परिग्रहत्याग प्रतिमा

मोत्तूण वत्थमित्तं, परिग्गहं जो विवज्जदेसेसं ।
तत्थवि मुच्छणं करेदि, वियाण सो सावओ णवमो ।।९।।

अनुमतित्याग प्रतिमा

पुट्ठो वाऽपुट्ठो वा, णियगेहिं परेहिं सग्गिह कज्जे ।
अणुमणणं जो ण कुणदि, वियाण सो सावओ दसमो।।१०।।

उद्दिष्टत्याग प्रतिमा

णवकोडीसु विशुद्धं, भिक्खायरणेण भुंजदे भुंजं ।
जायणरहियं जोग्गं, एयारस सावओ सो दु ।।११।।

एयारसम्मि ठाणे, उक्किट्ठो सावओ हवई दुविहो ।
वत्थेय धरो पढमो, कोवीण परिग्गहो विदिओ ।।१२।।

तव वय णियमावासय, लोचं कारेदि पिच्छगिण्हेदि ।
अणुवेहा धम्मझाणं, करपत्ते एय-ठाणम्मि ।।१३।।

एत्थ मे जो कोई देवसिओ (राइओ) अइचारो अणाचारो तस्स भंते ! पडिक्कमामि पडिक्कमंतस्स मे सम्मत्तमरणं, समाहिमरणं, पंडियमरणं, वीरियमरणं, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो सुगइगमणं समाहिमरणं, जिणगुणसंपत्ति होउ मज्झं ।

दंसण वय सामाइय, पोसह सचित्त रायभत्तेय।
बंभारंभ परिग्गह, अणुमणमुद्दिट्ठदेस विरदोय ।।१।।

एयासु जधा कहिद पडिमासु पमादाइ कयाइचार सोहणं छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं । अरहंत सिद्ध आयरिय उवज्झाय सव्वसाहुसक्खियं, सम्मत्तपुव्वगं, सुव्वदं दिढव्वदं समारोहियं मे भवदु, मे भवदु, मे भवदु ।

अथ देवसिय (राइय) पडिक्कमणाए, सव्वाइचार विसोहिणिमित्तं, पुव्वाइरियकमेण पडिक्कमण भत्ति कायोत्सर्गं करोमि ।

णमो अरहंताणं णमो सिद्धाणं णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं णमो लोए सव्वसाहूणं ।।३।।

इस णमोकार मंत्र का तीन बार उच्चारण करना चाहिये ।

णमोजिणाणं णमोजिणाणं णमोजिणाणं णमो णिस्सिहीए णमो णिस्सिहीए णमो णिस्सिहीए णमोत्थुदे णमोत्थुदे णमोत्थुदे अरहंत ! सिद्ध ! बुद्ध ! णीरय ! णिम्मल ! सममण ! सुभमण ! सुसमत्थ ! समजोग ! समभाव ! सल्लघट्टाणं ! सल्लघत्ताणं ! णिब्भय ! णिराय ! णिद्दोस! णिम्मोह ! णिम्मम ! णिस्संग ! णिसल्ल ! माणमाय-मोसमूरण, तवप्पहावण, गुणरयण, सीलसायर, अणंत, अप्पमेय, महदि महावीर वड्ढमाण, बुद्धिरिसिणो चेदि णमोत्थु दे णमोत्थु दे णमोत्थु दे ।

मम मंगलं अरहंता य, सिद्धा य, बुद्धा य, जिणा य, केवलिणो, ओहिणाणिणो, मणपज्जयणाणिणो, चउदस-

पुव्वगामिणो, सुदसमिदिसमिद्धाय, तवोय, वारह विहो तवसी, गुणाय, गुणवंतोय, महरिसी तित्थं तित्थंकराय, पवयणं पवयणी य, णाणं णाणी य, दंसणं दंसणी य, संजमो संजदा य, विणओ विणदा ए, बंभचेरवासो, बंभचारी य, गुत्तीओ, चेव गुत्तिमंतो य, मुत्तिओचेव मुत्तिमंतो य, समिदीओ, चेव समिदि मंतो य, सुसमय परसम विदु, खंति खंतिवंतो य, खवगा य, खीणमोहा य खीणवंतो य, बोहिय बुद्धाय, बुद्धिमंतो य, चेइयरुक्खाय चेईयाणि ।

उड्ढ-मह-तिरियलोए, सिद्धायदणाणि णमंस्सामि, सिद्धणिसीहियाओ, अट्ठावय पव्वये, सम्मेदे, उज्जंते, चंपाए, पावाए, मज्झिमाए, हत्थिवालियसहाय, जाओ अण्णाओ काओवि णिसीहियाओ जीवलोयम्मि इसिपब्भारतलगयाणं सिद्धाणं बुद्धाणं कम्मचक्कमुक्काणं णीरयाणं णिम्मलाणं गुरु आइरिय उवज्झायाणं पव्वतित्थेर कुलयराणं चउवण्णोय समण-संघोय, दससु भरहेरावएसु पंचसु महाविदेहेसु जो लोए संति साहवो संजदा तवसी एदे मम मंगलं पवित्तं एदेहं मगलं करेमि भावदो विसुद्धोसिरसा अहिवंदिऊण सिद्धेकाऊण अंजलिं मत्थयम्मि तिविहं तियरण सुद्धो ।

पडिक्कमामि भंते ! दंसण पडिमाए, संकाए, कंखाए, विदिगिंच्छाए, परपासंडपसंसणाए, पसंथुए, जो मए

देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए पढमे थूलयडे हिंसाविरदिवदेः-वहेण वा, बंधेण वा, छेएण वा, अइभारारोहणेण वा, अण्णपाणणिरोहणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-१।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वदपडिमाए विदिये थूलयडे असच्चविरदिवदेः-मिच्छोपदेसेण वा, रहो अब्भक्खाणेण वा, कूडलेह करणेण वा, णायापहारेण वा सायारमंतभेएण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-२।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए तिदिये थूलयडे थेणविरदिवदे थेणपओगेण वा थेणहरियादाणेण वा, विरुद्धरज्जा-इक्कमणेण वा, हीणाहियमाणुम्माणेण वा, पडिरूवय ववहारेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो मणसा, वचसा, कायेण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-३।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए चउत्थे थूलयडे अबंभविरदिवदे:-परविवाहकरणेण वा, इत्तरियागमणेण वा, परिग्गहिदा परिग्गहिदागमणेण वा, अणंगकीडणेण वा, कामतिव्वाभिणिवेसेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-४।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए पंचमे थूलयडे परिग्गहपरिमाणवदे:-खेत्तवत्थूणं परिमाणाइक्कमणेण वा, धणधण्णाणं परिमाणाइक्कमणेण वा, हरिण्णसुवण्णाणं परिमाणाइक्कमणेण वा, दासीदासाणं परिमाणाइक्कमणेण वा, कुप्पभांडपरिमाणाइक्कमणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-५।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए पढमे गुणव्वदे:-उड्ढवइक्कमणेण वा, अहोवइक्कमणेण वा, तिरियवइक्कमणेण वा, खेत्तवड्ढिएण वा, अंतराधाणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-६-१।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाएविदिए गुणव्वदे:-आणयणेणवा, विणिजोगेण वा, सद्दाणुवाएण वा, रूवाणुवाएण वा, पुग्गलखेवेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-७-२।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाएतिदिए गुणव्वदे:- कंदप्पेण वा, कुकुवेएण वा, मोक्खरिएण वा, असमक्खियाहिकरणेण वा, भोगोपभोगाणत्थकेण वा जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो मणसा, वचसा, काएण, कदो वा,कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-८-३।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए पढमे सिक्खावदे:-फासिंदिय भोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, रसणिंदियभोगपरि-माणाइक्कमणेण वा, घाणिंदिय भोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, चक्खिंदियभोगपरिमाणाइक्क-मणेण वा, सवणिंदिय भोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-९-१।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए विदियसिक्खावदे:-फासिंदिय परिभोगपरिमाणाइक्कमणेण

वा, रसणिंदिय परिभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, घाणिंदिय-परिभोगपरिमाणाइक्कमणेण वा, चक्खिंदियपरिभोग-परिमाणाइक्कमणेण वा, सवणिंदिय परिभोगपरिमाणा-इक्कमणेण वा जो मए देवसियो (राइयो) अइचारो मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-१०-२।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाएतिदिए सिक्खावदे:-सचित्तणिक्खेवेण वा, सचित्तपिहाणेण वा, परउवएसेण वा, कालाइक्कमणेण वा, मच्छरिएण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-११-३।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! वद पडिमाए चउत्थे सिक्खावदे:-जीविदासंसणेण वा, मरणासंसणेण वा, मित्ताणुराएण वा, सुहाणुबंधेण वा, णिदाणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।२-१२-४।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! सामाइय पडिमाए:-मणदुप्पणिधाणेण वा, वयदुप्पणिधाणेण वा, कायदुप्पणि-धाणेण वा, अणादरेण वा, सदि अणुव्वट्ठावणेण वा, जो मए देवसिओ (राइओ) अइचारो, मणसा, वचसा, काएण,

कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।३।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! पोसह पडिमाए:-अप्पडिवेक्खियापमज्जियोसग्गेण वा, अप्पडिवेक्खियापमज्जियादाणेण वा, अप्पडिवेक्खियापज्जियासंथारोवक्कमणेण वा, आवस्सयाणदरेण वा, सदिअणुवट्ठावणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।४।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! सचित्तविरदिपडिमाए:-पुढविकाइआ जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, आउकाइआ जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, तेउकाइआ जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वाउकाइआ जीवा असंखेज्जासंखेज्जा, वणप्फदिकाइआ जीवा अणंताणंता, हरिया, बीया, अंकुरा, छिण्णाभिण्णा, एदेसिं उद्दावणं, परिदावणं, विराहणं, उवघादो, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।५।।

गद्य-पडिक्कमामि भंते ! राइभत्तपडिमाए:-णवविह-बंभचरियस्स दिवा जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।६।।

गद्य–पडिक्कमामि भंते ! बंभपडिमाए:–इत्थि-कहायत्तणेण वा, इत्थिमणोहरांगनिरिक्खिणेण वा, पुव्वरयाणुस्सरणेण वा, कामकोवणरसासेवणेण वा, शरीर-मंडणेण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) अइचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।७।।

गद्य–पडिक्कमामि भंते ! आरंभविरदिपडिमाए:–कसायवसंगएण वा, जो मए देवसिओ (राइयो) आरम्भो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।९।।

गद्य–पडिक्कमामि भंते ! परिग्गहविरदिपडिमाए:–वत्थमेत्त परिग्गहादो अवरम्मि परिग्गहे मुच्छापरिणामे जो मे देवसिओ (राइयो) अइचारो, अणाचारो, मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।९।।

गद्य–पडिक्कमामि भंते ! अणुमणविरदिपडिमाए जं किं पि अणुमणणं पुट्ठापुट्ठेण कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।१०।।

गद्य–पडिक्कमामि भंते ! उद्दिट्ठविरदिपडिमाए उद्दिट्ठदोस-बहुल आहारादियं आहारयं वा आहारावियं वा आहारिज्जंतं वा समणुमण्णिदो, तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।।११।।

निर्ग्रन्थ पद की वांछा

इच्छामि भंते ! इमं णिग्गंथं पवयणं अणुत्तरं केवलियं, पडिपुण्णं, णेगाइयं, सामाइयं, संसुद्धं, सल्लघट्टाणं, सल्लघत्ताणं, सिद्धिमग्गं, सेढिमग्गं, खंतिमग्गं, मुत्तिमग्गं, पमुत्तिमग्गं, मोक्खमग्गं, पमोक्खमग्गं, णिज्जाणमग्गं, णिव्वाणमग्गं, सव्वदुःखपरिहाणिमग्गं, सुचरियपरि-णिव्वाणमग्गं, अवितहं, अविसंति-पवयणं, उत्तमं तं सद्दहामि, तं पत्तियामि, तं रोचेमि, तं फासेमि, इदोत्तरं अण्णं णत्थि, ण भूदं, ण भविस्सदि, णाणेण वा, दंसणेण वा, चरित्तेण वा, सुत्तेण वा, इदो जीवा सिज्झंति, बुज्झंति, मुच्चंति, परि-णिव्वाण-यंति, सव्व-दुक्खाण-मंतकरेंति, पडि-वियाणंति, समणोमि, संजदोमि, उवरदोमि, उवसंतोमि, उवधि-णियडि-माण-माया-मोसमूरण-मिच्छाणाण-मिच्छा-दंसण-मिच्छाचरित्तं च पडिविरदोमि, सम्मणाण-सम्मदंसण-सम्मचरित्तं च रोचेमि, जं जिणवरेहिं पण्णत्तो, इत्थ मे जो कोई (राइओ) देवसिओ अइचारो अणाचारो तस्स मिच्छा मे दुक्कडं ।

इच्छामि भंते ! पडिकमणाइचारमालोचेउं जो मए देवसिओ (राइओ) अइचारो, अणाचारो, आभोगो, अणाभोगो, काइओ, वाइओ, माणसिओ, दुच्चरिओ, दुच्चारिओ, दुब्भासिओ, दुप्परिणामिओ, णाणे, दंसणे, चरित्ते, सुत्ते, सामाइए, एयारसण्हं-पडिमाणं विराहणाए,

अट्ठ-विहस्स कम्मस्स-णिग्घादणाए, अण्णहा उस्सासिदेण वा, णिस्सासिदेण वा, उम्मिस्सिदेण वा, णिम्मिस्सिदेण वा, खासिदेण वा, छिंकिदेण वा, जंभाइदेण वा, सुहुमेहिं-अंग-चलाचलेहिं, दिट्ठिचलाचलेहिं, एदेहिं सव्वेहिं, अ-समाहिं-पत्तेहिं, आयरेहिं, जाव अरंहताणं, भयवंताणं, पज्जुवासं करेमि, ताव कायं पाव कम्मं दुच्चरियं वोस्सरामि ।

दंसण वय सामाइय, पोसह सचित्त राइभत्तेय ।
बंभारंभ परिग्गह, अणुमणमुद्दिट्ठदेस विरदेदे ।।१।।

एयासु जधा कहिद पडिमासु पमादाइ कयाइचार सोहणट्ठं छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं । अरहंत सिद्ध आयरिय उवज्झाय सव्वसाहुसक्खियं, सम्मत्तपुव्वगं, सुव्वदं दिढव्वदं समारोहियं मे भवदु, मे भवदु, मे भवदु ।

अथ देवसियो (राइय) पडिक्कमणाए सव्वाइचार विसोहिणिमित्तं, पुव्वाइरियकमेण निष्ठितकरण वीरभक्ति कायोत्सर्गं करेमि ।

(इति विज्ञाप्य-णमो अरहंताणं इत्यादि दण्डकं पठित्वा कायोत्सर्गं कुर्यात् । थोस्सामीत्यादि स्तवं पठेत्)

यः सर्वाणि चराचराणि विधिवद् द्रव्याणि तेषां गुणान्, पर्यायानपि भूत-भावि-भवितः सर्वान् सदा सर्वदा ।
जानीते युगपत् प्रतिक्षण-मतः सर्वज्ञइत्युच्यते, सर्वज्ञाय जिनेश्वराय महते वीराय तस्मै नमः ।।१।।

वीरः सर्व-सुराऽसुरेन्द्र-महितो वीरं बुधाः संश्रिताः,
वीरेणाभिहतः स्व-कर्म-निचयो वीराय भक्त्या नमः ।
वीरात् तीर्थ-मिदं-प्रवृत्त-मतुलं वीरस्य घोरं तपो ,
वीरे श्री-द्युति-कान्ति-कीर्ति-धृतयो हे वीर ! भद्रं-त्वयि ।।२।।

ये वीर-पादौ प्रणमन्ति नित्यं,
ध्यान-स्थिताः संयम-योग-युक्ताः ।
ते वीत-शोका हि भवन्ति लोके,
संसार-दुर्गं विषमं तरन्ति ।।३।।

व्रत-समुदय-मूलः संयम-स्कन्ध-बन्धो,
यम नियम-पयोभि-र्वर्धितःशील-शाखः ।
समिति-कलिक-भारो गुप्ति-गुप्त-प्रवालो,
गुण-कुसुम सुगन्धिःसत्-तपश्चित्र-पत्रः ।।४।।

शिव-सुख-फलदायी यो दया-छाययौघः,
शुभजन-पथिकानां खेदनो देसमर्थः ।
दुरित-रविज-तापं प्रापयन्नन्तभावं,
स भव-विभव-हान्यै नोऽस्तुचारित्र-वृक्षः ।।५।।

चारित्रं सर्व-जिनैश्चरितं प्रोक्तं च सर्व-शिष्येभ्यः ।
प्रणमामि पञ्च-भेदं पञ्चम-चारित्र-लाभाय ।।६।।

धर्मः सर्व-सुखाकरो हितकरो धर्मं बुधाश्चिन्वते,
धर्मेणैव समाप्यते शिव-सुखं धर्माय तस्मै नमः ।
धर्मान्नास्त्यपरः सुहृद् भव-भृतां धर्मस्य मूलं दया,
धर्मे चित्तमहं दधे प्रतिदिनं हे धर्म मां पालय ।।७।।

धम्मो मंगल-मुक्किट्ठं अहिंसा संयमो तवो ।
देवा वि तस्स पणमंति जस्स धम्मे सया मणो ।।८।।

इच्छामि भंते ! वीरभत्ति काउस्सग्गं करेमि तत्थ देसासिआ, असणासिआ ठाणासिआ कालासिआ मुद्दासिआ, काउसग्गासिआ पणमासिआ आवत्तासिआ पडिक्कमणाए तत्थसु आवासएसु परिहीणदा जो मए अच्चासणा मणसा, वचसा, काएण, कदो वा, कारिदो वा, कीरंतो वा, समणुमण्णिदो तस्समिच्छा मे दुक्कडं ।।१।।

दंसण-वय-सामाइय-पोसह-सचित्त-राइभत्ते य ।
बंभाऽऽरंभ-परिग्गह-अणुमणमुद्दिट्ठ-देसविरदेदे ।।१।।

एयासु जधा कहिद पडिमासु पमादाइ कयाइचार सोहणट्ठं छेदोवट्ठावणं होदु मज्झं । अरहंत सिद्ध आयरिय उवज्झाय सव्वसाहुसक्खियं, सम्मत्तपुव्वगं, सव्वदं दिढव्वदं समारोहियं मे भवदु, मे भवदु, मे भवदु ।

अथ देवसियो (राइय) पडिक्कमणाए सव्वाइचार विसोहिणिमित्तं, पुव्वाइरियकमेण चउवीस तित्थयर भक्ति कायोत्सर्गं करोमि ।

(इति विज्ञाप्य-णमो अरहंताणं इत्यादि दण्डकं पठित्वा कायोत्सर्गं कुर्यात्। थोस्सामीत्यादि स्तवं पठेत्)

चउवीसं तित्थयरे उसहाइ-वीर-पच्छिमे वन्दे ।
सव्वेसगण-गण-हरे सिद्धे सिरसा णमंसामि ॥१॥

ये लोकेऽष्ट-सहस्र-लक्षण-धरा;
ज्ञेयार्णवान्तर्गता;
ये सम्यग्-भव-जाल-हेतु-मथना-
श्चन्द्रार्क-तेजोऽधिकाः ।
ये साध्विन्द्र-सुराप्सरो-गण-शतै-
र्गीत-प्रणुत्यार्चिता-
स्तान् देवान् वृषभादि-वीर-चरमान्,
भक्त्या नमस्याम्यहम् ।।२।।

नाभेयं देवपूज्यं जिनवर-मजितं
सर्व-लोक-प्रदीपम्,
सर्वज्ञं सम्भवाख्यं मुनि-गण-वृषभं
नन्दनं देव-देवम् ।
कर्मारिघ्नं सुबुद्धिं वर-कमल-निभं
पद्म-पुष्पाभि-गन्धम्,
क्षान्तं दान्तं सुपार्श्वं सकल शशि-निभं
चंद्रनामान-मीडे ।।३।।

विख्यातं पुष्पदन्तं भव-भय-मथनं
शीतलं लोक-नाथम्,
श्रेयांसं शील-कोशं प्रवर-नर-गुरुं
वासुपूज्यं सुपूज्यम् ।
मुक्तं दान्तेन्द्रियाश्वं विमल-मृषि-पतिं
सिंहसैन्यं मुनीन्द्रम्,

धर्मं सद्धर्म-केतुं शम-दम-निलयं
स्तौमि शान्तिं शरण्यम् ।।४।।
कुन्थुं सिद्धालयस्थं श्रमण-पतिमरं
त्यक्त-भोगेषु चक्रम्,
मल्लिं विख्यात-गोत्रं खचर-गण-नुतं
सुव्रतं सौख्य-राशिम् ।
देवेन्द्रार्च्यं नमीशं हरि-कुल-तिलकं
नेमिचन्द्रं भवान्तम्,
पार्श्वं नागेन्द्र-वन्द्यं शरणमहमितो
वर्धमानं च भक्त्या ।।५।।

अञ्चलिका

इच्छामि भंते ! चउवीस-तित्थयर-भत्ति-काउस्सग्गो कओ, तस्सालोचेउं, पंच-महाकल्लाण-संपण्णाणं, अट्ठ-महा-पाडिहेर-सहियाणं, चउतीसाऽतिसयविसेस-संजुत्ताणं, बत्तीस-देविंद-मणिमय-मउड-मत्थय-महिदाणं, बलदेव-वासुदेव-चक्कहर-रिसि-मुणि-जइ-अणगारोवगूढाणं, थुइ-सय-सहस्स-णिलयाणं, उसहाइ-वीर-पच्छिम-मंगल-महा-पुरिसाणं, सया णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ, बोहिलाहो, सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होउ मज्झं ।

दंसण वय सामाइय पोसह सचित्तराइ भत्तेय ।
बंभारंभ परिग्गह अणुमणमुद्दिट्ठ देसविरदेदे ।।

एयासु जधा कहिद पडिमासु पमादाइकदादिचार सोहणट्ठं छेदोवट्ठावण होउ मज्झं अरहंत सिद्ध आइरिय उवज्झाय सव्वसाहु सक्खियं सम्मत्तपुव्वगं सुव्वदं दिढव्वदं समारोहियं मे भवदु, मे भवदु, मे भवदु ।

अथ देवसिय (राइय) पडिक्कमणाएसव्वादिचार विसोहिणिमित्तं पुव्वायरिय कमेण आलोयण श्री सिद्धभत्ति पडिक्कमणभत्ति णिट्ठिदकरण वीरभत्ति चउवीस-तित्थयर भत्ति कृत्वा तद्धीनाधिकत्वादिदोष परिहारार्थं सकल दोष निराकरणार्थं सर्वमलातिचार विशुद्ध्यर्थं आत्मपवित्रीकरणार्थं समाधिभक्ति कायोत्सर्गं करोमि ।

(णमोकार ९ गुणिवा)

अथेष्ट-प्रार्थना

प्रथमं करणं चरणं द्रव्यं नमः ।

शास्त्राभ्यासो जिन-पति-नुतिः सङ्गतिः सर्वदार्यैः,
सद्वृत्तानां गुण-गण-कथा दोष-वादो च मौनम् ।
सर्वस्यापि प्रिय-हित-वचो भावना चात्म-तत्त्वे,
सम्पद्यन्तां मम भव-भवे यावदेतेऽपवर्गः ।।१।।
तव पादौ मम हृदये मम हृदयं तव पदद्वये लीनम् ।
तिष्ठतु जिनेन्द्र ! तावद् यावन्निर्वाण-सम्प्राप्तिः ।।२।।

अक्खर-पयत्थ-हीणं मत्ता-हीणं च जं मए भणियं ।
तं खमउ णाणदेवय ! मज्झवि दुक्खक्खयं कुणउ ।।३।।

इच्छामि भंते ! समाहिभत्ति-काउस्सग्गो कओ तस्सालोचेउं, रयणत्तय-सरूव-परमप्प-ज्झाण-लक्खण-समाहि-भत्तीए सया णिच्चकालं अच्चेमि, पुज्जेमि, वंदामि, णमस्सामि, दुक्खक्खओ, कम्मक्खओ बोहिलाहो सुगइ-गमणं, समाहि-मरणं, जिण-गुण-संपत्ति होदु मज्झं।

।। इति श्रावक प्रतिक्रमण ।।

पंचम खण्ड समाप्त

षष्ठम् खण्ड

दीक्षा-दृश्य

दीक्षा नक्षत्राणि

श्लोक

प्रणम्य शिरसा वीरं जिनेन्द्रममलव्रतम् ।
दीक्षा ऋक्षाणि वक्ष्यन्ते सतां शुभ फलाप्तये ।।१।।

भरण्युत्तरफाल्गुन्यौ मघाचित्राविशाखिका: ।
पूर्वाभाद्रपदा भानि रेवती मुनि-दीक्षणे ।।२।।

रोहिणी चोत्तराषाढ़ा, उत्तरा भाद्रपत्तथा ।
स्वातिः कृतिकया सार्धं, वर्ज्यंते मुनिदीक्षणे ।।३।।

अश्विनी-पूर्वाफाल्गुन्यौ, हस्तस्वात्यनुराधिका: ।
मूलं तथोत्तराषाढा श्रवणः शतभिषक्तथा ।।४।।

उत्तरा भाद्रपच्चापि दशेति विशदाशया: ।
आर्यिकाणां व्रते योग्यान्युषन्ति शुभहेतवः ।।५।।

भरण्यां कृत्तिकायां च पुष्ये श्लेषार्द्रयोस्तथा ।
पुनर्वसौ च नो दद्युरार्यिकाव्रतमुत्तमा: ।।६।।

पूर्वाभाद्रपदा मूलं, घनिष्ठा च विशाखिका ।
श्रवणश्चेषु दीक्ष्यन्ते क्षुल्लका: शल्यवर्जिता: ।।७।।

अथ दीक्षा ग्रहण क्रिया

श्लोक

सिद्धयोगि बृहद्भक्ति, पूर्वकं लिङ्गमर्प्यताम् ।
लुञ्चाख्यानाग्न्यपिच्छात्म, क्षम्यतां सिद्धभक्तितः ।।

गद्य--१. अथ दीक्षा ग्रहण क्रियायां-सिद्धभक्ति कायोत्सर्ग करोमिः-('सिद्धानुद्धूत' इत्यादि यह भक्ति पृष्ठ २२७ से चालू है वहाँ से पढ़ लेनी चाहिये)

२. अथ दीक्षा ग्रहण क्रियायां-योगिभक्ति कायोत्सर्ग करोमि (जातिजरोरुरोग इत्यीदि पृष्ठ २४५ से चालू है वहाँ से पढ़ लेनी चाहिये)

अनंतरं लोचकरणं नाग्न्यप्रदानं, नामकरण, पिच्छप्रदानं शास्त्र प्रदानं कमण्डलु प्रदानं च ।

अथ दीक्षानिष्ठापनक्रियायां-सिद्धभक्ति कायोत्सर्ग करोम्यहं । दीक्षा धारण करने के बाद सिद्धभक्ति कायोत्सर्ग करता हूँ । दीक्षादानोत्तर कर्तव्यम्-दीक्षा को ग्रहण करने के बाद की क्रिया । व्रतसमितीन्द्रियरोधाः पंच पृथक् क्षितिशयो रदाघर्षः स्थितीसकृदशनलुञ्चा, वश्यकषट्के विचेलताऽस्नानम् ।

इत्यष्टविंशति मूल गुणान् निक्षिप्य दीक्षिते ।
संक्षेपेण सशीलादीन्, ~~मप्पी~~ कुर्यात्प्रतिक्रमम् ।।

लोचक्रिया

श्लोक

लोचो द्वित्रिचतुर्मासै, र्वरो मध्योऽधमः क्रमात् ।
लघु प्राग्भक्तिभिः कार्यः सोपवासप्रतिक्रमः ।।१।।

अथ लोच प्रतिष्ठापन क्रियायां-सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोमि । (पृ० २२७ पर देखिये ।)

अथ लोच प्रतिष्ठापन क्रियायां-योगिभक्ति कायोत्सर्गं करोमि (जातिजरोरुरोग) अनन्तरं स्वहस्तेन परहस्तेनापि वा लोचः कार्याः । (पृ० २४५ पर देखिये ।)

अथ लोच निष्ठापन क्रियायां-सिद्धभक्ति कायोत्सर्गं करोमि (तवसिद्धे इत्यादि) अनन्तरं प्रतिक्रमणं कर्तव्यम्।

बृहद् दीक्षाविधि

गद्य--पूर्वदिने भोजनसमये भाजनादितिरस्कारविधिं विधाय, आहारं गृहीत्वा, चैत्यालये आगच्छेत् । ततो बृहत्प्रत्याख्यान-प्रतिष्ठापने सिद्धयोगिभक्ती पठित्वा गुरुपार्श्वे प्रत्याख्यानं सोपवासं गृहीत्वा आचार्य-शांति समाधिभक्तीः पठित्वा गुरोः प्रणामं कुर्यात् ।

अथ दीक्षादाने दीक्षादातृजना शांतिक, गणधरवलय-पूजादिकं यथाशक्तिः कारयेत् । अथ दाता तं स्नानादिकं कारयित्वा, यथायोग्यालङ्कारयुक्तं महामहोत्सवेन चैत्यालये समानयेत् । स देवशास्त्रगुरुपूजां विधाय वैराग्यभावनापरः सर्वैः सह क्षमां कृत्वा गुरोरग्रे तिष्ठेत् ।

ततो गुरोरग्रे संघस्याग्रे, दीक्षायै च यांचां कृत्वा, तदाज्ञया सौभाग्यवती स्त्री विहित स्वस्तिकोपरि श्वेतवस्त्रं प्रच्छाय तत्र पूर्वदिशाभिमुखः पर्यंकासनं कृत्वा आसते, गुरुश्चोत्तराभिमुखो भूत्वा संघाष्टकं संघं च परिपृच्छ्य लोचं कुर्यात् ।

अथ तद्विधि

गद्य--बृहद्दीक्षायां लोचस्वीकारक्रियायां पूर्वाचार्येत्यादिकमुच्चार्य सिद्ध योगिभक्तिं कृत्वा-

मंत्र--ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषकल्मषाय दिव्यतेजो मूर्त्तये श्री शांतिनाथाय शांतिकराय सर्वविघ्नप्रणाशनाय सर्वरोगापमृत्युविनाशनाय, सर्वपरकृत-क्षुद्रोपद्रवविनाशनाय सर्वक्षामडामरविनाशनाय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा अमुकस्य (दीक्षित व्यक्ति का नाम) सर्व शांतिं कुरु कुरु स्वाहा । इत्यनेन मंत्रेण गंधोदकादिकं त्रिवारं मंत्रयित्वा शिरसि निक्षिपेत् । शांतिमंत्रेण गंधोदकं त्रिःवारान् परिषिंच्य मस्तकं वामहस्तेन स्पृशेत् । ततो दध्यक्षतगोमय-दूर्वांकुरान् मस्तके वर्धमानमंत्रेण निक्षिपेत् ।

वर्धमान मंत्र

मंत्र--ॐ णमो भयवदो वड्ढमाणस्स रिसहस्स चक्कं जलंतं गच्छइ आयासं, पायालं, लोयाणं, भूयाणं जये वा, विवादे वा, थंभणे वा, रणंगणे वा, रायंगणे वा

मोहेण वा, सव्वजीवसत्ताणं, अपराजिदो भवदु रक्ख रक्ख स्वाहा ।

गद्य--ततः पवित्रभस्मपात्रं गृहीत्वा "ॐ णमो अरहंताणं" रत्नत्रयपवित्रीकृत्तोत्तमांगाय, ज्योतिर्मयाय, मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलज्ञानाय, अ सि आ उ सा स्वाहा इदं मंत्रं पठित्वा शिरसि कर्पूरमिश्रितं भस्मं परिक्षिप्य "ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हं अ सि आ उ सा स्वाहा," अनेन प्रथमं केशोत्पाटनं कृत्वा पश्चात् ॐ ह्रां अर्हद्भ्यो नमः, ॐ ह्रीं सिद्धेभ्यो नमः, ॐ ह्रूं सूरिभ्यो नमः, ॐ ह्रौं पाठकेभ्यो नमः, ॐ ह्रः सर्वसाधुभ्यो नमः इत्युच्चरन् गुरुः स्वहस्तेन पंचवारान् केशान् उत्पाटयेत् । पश्चादन्यः कोऽपि लोचावसाने वृहद्दीक्षायां लोचनिष्ठापनक्रियायां पूर्वाचार्येत्यादिकं पठित्वा सिद्धभक्तिं कुर्यात् । ततः शीर्षं प्रक्षाल्य गुरुभक्तिं कृत्वा, वस्त्राभरणयज्ञोपवीतादिकं परित्यज्य तत्रैवावस्थाय दीक्षां याचयेत् । ततो गुरुः शिरसि श्रीकारं लिखित्वा "ॐ ह्रीं अर्हं अ सि आ उ सा ह्रीं स्वाहा" अनेन मंत्रेण जाप्यं १०८ दद्यात् । ततो गुरुस्तस्यांजलौ केशरकर्पूरश्रीखंडेन श्रीकारं कुर्यात् ।

गद्य--श्रीकारस्य चतुर्दिक्षु-

गाथा--रयणत्तयं च वंदे, चउवीसजिणं तहा वंदे ।
पंचगुरूणां वंदे, चारणचरणं तहा वंदे ।।

इति पठन् अंकान् लिखेत् । पूर्वे ३, दक्षिणे २४, पश्चिमे ५, उत्तरे २ इति लिखित्वा सम्यग्दर्शनाय नमः, सम्यग्ज्ञानाय नमः, सम्यक्चारित्राय नमः इति पठन् तदुलैरञ्जलिं पूर्यत्तदुपरि नालिकेरं पूगीफलं च धृत्वा सिद्धचारित्रयोगभक्तिं पठित्वा व्रतादिकं दद्यात् ।

तथाहि–उसे ही निम्न गाथा द्वारा आचार्य प्रकट करते हैं:–

गाथा–वदसमिदिंदियरोधो, लोचावासयमचेलमण्हाणं ।
खिदिसयणमदंतवणं, ठिदिभोयणमेयभत्तं च ।।१।।

इति पठित्वा तद्व्याख्या विधेया-कालानुसारेणेतिनिरूप्य पंचमहाव्रतपंचसमित्यादि पठित्वा "सम्यक्त्वपूर्वकं दृढव्रतं सुव्रतं समारूढं ते भवतु" इति त्रीन् वारान् उच्चार्य व्रतानि दत्वा ततः शांतिभक्तिं पठेत् । ततः आशीः श्लोकं पठित्वा अंजलिस्थं तंदुलादिकं दात्रे दाययित्वा ।

अथ षोडशसंस्कारारोपण

१. अयं सम्यग्दर्शनसंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।
२. अयं सम्यग्ज्ञानसंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।
३. अयं सम्यक्चारित्रसंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।
४. अयं बाह्याभ्यंतरतपः संस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।
५. अयं चतुरंगवीर्यसंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।
६. अयं अष्टमातृकामंडलसंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।
७. अयं शुद्धयष्टकावष्टंभसंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।

८. अयं अशेषपरीषहजयसंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।
९. अयं त्रियोगासंगमनिवृत्तिशीलतासंस्कार इह मुनौ स्फुरतु।
१०. अयं त्रिकरणासंयमनिवृत्तिशीलता संस्कार इह मुनौ स्फुरतु।
११. अयं दशासंयमनिवृत्तिशीलता संस्कार इह मुनौ स्फुरतु।
१२. अयं चतुः संज्ञानिग्रहशीलतासंस्कार इह मुनौ स्फुरतु।
१३. अयं पंचेन्द्रिजयशीलतासंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।
१४. अयं दशधर्मधारणशीलतासंस्कार इह मुनौ स्फुरतु।
१५. अयं अष्टादशसहस्रशीलतासंस्कार इह मुनौ स्फुरतु।
१६. अयं चतुरशीतिलक्षणसंस्कार इह मुनौ स्फुरतु ।

गद्य--इति प्रत्येकमुच्चार्य शिरसि लवंगपुष्पाणि क्षिपेत् ।

'णमो अरहंताणं' इत्यादि ॐ परमहंसाय परमेष्ठिने हंस हंस ह्रं ह्रां ह्रिं ह्रीं ह्रूं ह्रैं ह्रौं ह्रः जिनाय नमः जिनं स्थापयामि संवौषट्, ऋषि मस्तके न्यसेत् । अथ गुर्वावलीं पठित्वा, अमुकस्य अमुकनामा त्वं शिष्य इति कथयित्वा संयमाद्युपकरणानि दद्यात् ।

पिच्छिकादान

१. ॐ णमो अरहंताणं भो अन्तेवासिन् ! षड्जीवनिकायरक्षणाय मार्दवादिगुणोपेतमिदं पिच्छिकोपकरणं गृहाण गृहाणेति ।

शास्त्रदान

२. ॐ णमो अरहंताणं, मतिश्रुतवधिमनःपर्यय-केवलज्ञानाय द्वादशांगश्रुताय नमः । भो अन्तेवासिन् ! इदं ज्ञानोपकरणं गृहाण गृहाणेति ।

शौचोपकरणं

३. कमंडलुं वामहस्तेन उद्धृत्य ॐ णमो अरहंताणं रत्नत्रयपवित्रीकरणांगाय बाह्याभ्यन्तर मलशुद्धाय नमः भो अन्तेवासिन् इदं शौचोपकरणं ! गृहाण गृहाणेति ।

तत्पश्चात् समाधिभक्तिं पठेत् । ततो नवदीक्षितो मुनिर्भक्त्या गुरुं प्रणम्य अन्यान् मुनीन् प्रणम्योपविशति यावद् व्रतारोपणं न भवति तावदन्ये मुनयः प्रतिवंदनां न ददति । ततो दातृप्रमुखाः जनाः उत्तमफलानि अग्रे निधाय तस्मै नमोऽस्त्विति प्रणामं कुर्वन्ति ।

ततस्तत्पक्षे द्वितीयपक्षे वा सुमुहूर्त्ते व्रतारोपणं कुर्यात् । तदा रत्नत्रयपूजां विधाय, पाक्षिकप्रतिक्रमणपाठः पठनीयः, तत्र पाक्षिकनियमग्रहणसमयात् पूर्वं यदा वदसमिदीत्यादि पठ्यते तदा पूर्ववत्व्रतादि दद्यात् । नियमग्रहणसमये यथायोग्यं एकं तपो दद्यात् (पल्यविधानादिकं) दातृप्रभृतिः श्रावकेभ्योऽपि एकं-एकं तपो दद्यात् ततोऽन्ये मुनयः प्रतिवंदनां ददति ।

अथ मुखशुद्धि मुक्तकरणं विधि

त्रयोदशसु पंचसु त्रिषु वा कच्चोलिकासु लवंग एला-पूंगीफलादिकं निक्षिप्य ताः कच्चोलिकाः गुरोरग्रे स्थापयेत्। मुखशुद्धि मुक्तकरणंपाठक्रियायामित्याद्युच्चार्य सिद्ध-योगि आचार्यशांतिसमाधिभक्तिंविधाय ततः पश्चान्मुखशुद्धिं गृह्णीयात् ।

।। इति महाव्रतदीक्षा विधि ।।

क्षुल्लक दीक्षा विधि

अथ लघुदीक्षायां सिद्ध-योगि-शांति-समाधि-भक्तिम् पठेत् । "ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं अर्हम् नमः" अनेन मंत्रेण जाप्यं २१ अथवा १०८ बार दीयते ।

अन्यच्च विस्तारेण लघुदीक्षा विधि

अथ लघुदीक्षानेतृजनः पुरुषः स्त्री वा दाता संस्थापयति। यथायोग्यमलंकृतं कृत्वा चैत्यालये समानयेत्, देवं वंदित्वा सर्वैः सह क्षमां कृत्वा गुरोरग्रे च दीक्षां याचयित्वा तदाज्ञया सौभाग्यवती स्त्रीविहितस्वस्तिकोपरि श्वेतवस्त्र प्रच्छाद्य तत्र पूर्वाभिमुखः पर्यंकासनो गुरुश्चोत्तराभिमुखः संघाष्टकं संघं च परिपृच्छ्य लोचं कुर्यात् । अथ तद्विधिः-बृहद्दीक्षायां लोचस्वीकारक्रियायां पूर्वाचार्येत्यादिकमुच्चार्य सिद्धयोगभक्तिं कृत्वा ॐ नमोऽर्हते भगवते प्रक्षीणाशेषकल्मषाय दिव्यतेजोमूर्त्तये शांतिनाथाय

शांतिकराय सर्वविघ्न-प्रणाशकाणाय सर्वरोगापमृत्युविनाशनाय सर्वपरकृतक्षुद्रोपद्रवविनाशनाय सर्व क्षामडामरविनाशनाय ॐ ह्रां ह्रीं ह्रूं ह्रौं ह्रः अ सि आ उ सा अमुकस्य (दीक्षितस्य) सर्व शांतिं कुरु २ स्वाहा ।

इत्यनेन मंत्रेण गंधोदकं त्रिवारं मंत्रयित्वा शिरसि निक्षेपेत्। शांतिमंत्रेण गंधोदकं त्रिः परिषिंच्य मस्तकं वामहस्तेन स्पृशेत् । ततो दध्यक्षतगोमयदूर्वांकुरान् मस्तके वर्धमानमंत्रेण निक्षिपेत्-

ॐ णमो भयवदो वड्ढमाणस्स रिसहस्स चक्कं जलंतं गच्छइ आयासं पायालं लोयाणं भूयाणं जये वा, विवादे वा, थंभणे वा, रणंगणे वा, रायंगणे वा, सव्वजीवसत्ताणं, अपराजिदो भवदु रक्ख रक्ख स्वाहा । लोचादि विधिं महाव्रतवद्विधाय सिद्धभक्तिं योगिभक्तिं पठित्वा व्रतं दद्यात्।

गाथा--दंसणवयसामाइय, पोसहसचित्तराइभत्ते य ।
बंभारंभपरिग्गह, अणुमणुमुद्दिट्ठदेसविरदेदे ।।१।।

गाथामिमां वारत्रयं पठित्वा व्याख्यां विधाय च गुर्वावलीं पठेत् । ततः संयमाद्युपकरणं दद्यात् ।

ॐ णमो अरहंताणं (आर्य-ऐलक) क्षुल्लके वा षट्जीवनिकायरक्षणाय मार्दवादिगुणोपेतमिदं पिच्छोपकरणं गृहाण गृहाण इति ।

ॐ णमो अरहंताणं मतिश्रुतावधिमनःपर्ययकेवलज्ञानाय द्वादशांगश्रुताय नमः । भो अन्तेवासिन् । इदं ज्ञानोपकरणं गृहाण गृहाणेति ।

कमंडलुं वामहस्तेन उद्धृत्य ॐ णमो अरहंताणं रत्नत्रयपवित्रकरणाङ्गाय बाह्याभ्यन्तरमलशुद्धाय नमः । भो अन्तेवासिन् । इदं शौचोपकरणं गृहाण गृहाणेति ।

।। इति क्षुल्लकदीक्षा विधानं ।।

अथोपाध्याय (पददान) विधि

शुभमुहूर्ते दाता गणधरवलय + अर्चनं द्वादशाङ्ग श्रुतार्चनं च कारयेत् । ततः श्रीखंडादिना छटान् दत्वा तंदुलैः स्वस्तिकं कृत्वा, तदुपरि पट्टकं संस्थाप्य तत्र पूर्वाभिमुखं तमुपाध्यायपदयोग्यं मुनिमासयेत् । अथोपाध्यायपदस्थापनं-क्रियायांपूर्वाचार्येत्याद्युच्चार्यसिद्ध श्रुतभक्ति पठेत् । तत् आह्वानादि मंत्रानुच्चार्य शिरसि लवंग पुष्पाक्षतं क्षिपेत् तद्यथा-ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं, उपाध्यायपरमेष्ठिन् अत्र एहि एहि संवौषट् आह्वाननं, स्थापनं, सन्निधिकरणं । ततश्च "ॐ ह्रौं णमो उवज्झायाणं, उपाध्यायपरमेष्ठिने नमः" इमं मंत्रं सहेंदुना चन्दनेन शिरसि न्यसेत् । ततश्च शांतिसमाधिभक्ति पठेत् । ततः स उपाध्यायो गुरुभक्तिं दत्वा प्रणम्य दात्रे आशिष दद्यादिति ।

।। इत्युपाध्याय पददान विधि ।।

अथाचार्य पद स्थापन विधि

गद्य--सुमुहूर्ते दाता शांतिकं गणधरवलयार्चनं च यथाशक्ति कारयेत् । ततः श्रीखंडादिना छटादिकं कृत्वा आचार्यपदयोग्यं मुनिमासयेत् । आचार्यपदप्रतिष्ठापनक्रियायां इत्याद्युच्चार्य सिद्धाचार्यभक्ति पठेत् "ॐ हूं परम सुरभिद्रव्य सन्दर्भ परिमलगर्भ तीर्थाम्बुसम्पूर्णसुवर्णकलश पंचकतोयेन परिषेचयामीति स्वाहा ॥" इति पठित्वा कलशपंचकतोयेन पादौ परिषेचयेत् । ततः पंडिताचार्यो "निर्वेद सौष्ठ" इत्यादि महर्षिस्तवनं पठन् पादौ समंतात् परामृश्य गुणारोपणं कुर्यात्। ततः ओं हूं णमो आइरियाणं आचार्य परमेष्ठिन्। अत्र एहि एहि संवौषट्, आह्वाननं, स्थापनं, सन्निधिकरणं। ततश्च "ॐ हूं णमो आइरियाणं धर्माचार्याधिपतये नमः। अनेन मंत्रेण सहेन्दुना चन्दनेन पादयोर्द्वयोस्तिलकं दद्यात्। ततः शांतिसमाधिभक्तिं कृत्वा, गुरुभक्त्या गुरुं प्रणम्य उपविशति। तत् उपासकास्तस्य पादयोरष्टतयिमिष्टि कुर्वन्ति। यतश्च गुरुभक्ति दत्वा प्रणमति । स उपासकेभ्य आशीर्वादं दद्यात्।

।। इति आचार्य पददान विधि ।।

मंत्र--ॐ ह्रां ह्रीं श्रीं अर्हम् हं सः आचार्याय नमः । आचार्यवाचना मंत्र । अन्यच्च ।

मंत्र--ॐ ह्रीं श्रीं अर्हम् हं सः आचार्याय नमः । आचार्यमंत्र ।

रत्नकरण्ड-श्रावकाचार:

नम: श्री वर्द्धमानाय, निर्द्धूतकलिलात्मने ।
सालोकानां त्रिलोकानां, यद्विद्या दर्पणायते ॥१॥

देशयामि समीचीनं, धर्मं कर्मनिबर्हणम् ।
संसारदु:खत: सत्वान्, यो धरत्युत्तमे सुखे ॥२॥

सद्दृष्टिज्ञानवृत्तानि, धर्मं धर्मेश्वरा विदु: ।
यदीय प्रत्यनीकानि, भवन्ति भवपद्धति: ॥३॥

श्रद्धानं परमार्थाना, माप्तागमतपोभृताम् ।
त्रिमूढापोढमष्टाङ्गं, सम्यग्दर्शनमस्मयम् ॥४॥

आप्तेनोच्छिन्नदोषेण, सर्वज्ञेनागमेशिना ।
भवितव्यं नियोगेन नान्यथा ह्याप्तता भवेत् ॥५॥

क्षुत्पिपासाजरातङ्क-जन्मान्तक भयस्मयाः ।
न रागद्वेषमोहाश्च, यस्याप्तः सः प्रकीर्त्यते ॥६॥

परमेष्ठी परंज्योति, र्विरागो विमलः कृती ।
सर्वज्ञोऽनादिमध्यान्तः, सार्वः शास्तोपलाल्यते ॥७॥

अनात्मार्थं विना रागैः, शास्ता शास्ति सतो हितम् ।
ध्वनन् शिल्पिकरस्पर्शा, न्मुरजः किमपेक्षते ॥८॥

आप्तोपज्ञमनुल्लंघ्य, मदृष्टेष्ट विरोधकम् ।
तत्वोपदेशकृत्सार्वं, शास्त्रं कापथघट्टनम् ॥९॥

विषयाशावशातीतो, निरारम्भोऽपरिग्रहः ।
ज्ञानध्यानतपोरक्तः, स्तपस्वी सः प्रशस्यते ॥१०॥

सम्यग्दर्शन के आठ अंग (सम्यक्त्वस्याष्टाङ्गानि)

इदमेवेदृशमेव, तत्त्वं नान्यन्न चान्यथा ।
इत्यकम्पायसाम्भोव, त्सन्मार्गेऽसंशया रुचि ॥११॥

कर्मपरवशे सान्ते, दुःखैरन्तरितोदये।
पापबीजे सुखेऽनास्था, श्रद्धानाकांक्षणा स्मृता ॥१२॥

स्वभावतोऽशुचौ काये, रत्नत्रयपवित्रिते।
निर्जुगुप्सा गुणप्रीति, र्मता निर्विचिकित्सिता ॥१३॥

कापथे पथि दुःखानां, कापथस्थेऽप्यसम्मतिः ।
असम्पृक्तिरनुत्कीर्ति, रमूढ़ा-दृष्टिरुच्यते ॥१४॥

स्वयं शुद्धस्य मार्गस्य, बालाशक्तजनाश्रयाम् ।
वाच्यतां यत्प्रमार्जन्ति, तद्वदन्त्युपगूहनम् ॥१५॥

दर्शनाच्चरणाद्वापि, चलतां धर्मवत्सलैः ।
प्रत्यवस्थापनं प्राज्ञैः, स्थितिकरणमुच्यते ॥१६॥

स्वयूथ्यान्प्रति सद्भाव, सनाथापेतकैतवा ।
प्रतिपत्तिर्यथायोग्यं, वात्सल्यमभिलप्यते ॥१७॥

अज्ञानतिमिर-व्याप्ति, मपाकृत्य यथायथम्,
जिनशासनमाहात्म्य, - प्रकाशः स्यात्प्रभावना ॥१८॥

तावदञ्जन-चौरोऽङ्गे, ततोऽनन्तमती स्मृता ।
उद्दायन-स्तृतीयेऽपि, तुरीये रेवती मता ॥१९॥

ततो जिनेन्द्रभक्तोऽन्यो, वारिषेणस्ततः परः ।
विष्णुश्च वज्रनामा च, शेषयोर्लक्ष्यतां गतौ ॥२०॥

नाङ्गहीनमलं छेत्तुं, दर्शनं जन्मसन्ततिम् ।
न हि मन्त्रोऽक्षरन्यूनो, निहन्ति विषवेदनाम् ॥२१॥

आपगासागरस्नानमुच्चयः सिकताश्मनाम् ।
गिरिपातोऽग्निपातश्च, लोकमूढं निगद्यते ॥२२॥

वरोपलिप्सयाशावान्, रागद्वेषमलीमसाः ।
देवता यदुपासीत, देवतामूढमुच्यते ॥२३॥

सग्रन्थारम्भहिंसानां, संसारावर्तवर्तिनाम् ।
पाखण्डिनां पुरस्कारो, ज्ञेयं पाखण्डिमोहनम् ॥२४॥

ज्ञानं पूजां कुलं जातिं, बलमृद्धिं तपो वपुः ।
अष्टावाश्रित्य मानित्वं, स्मयमाहुर्गतस्मयाः ॥२५॥

स्मयेन योऽन्यानत्येति, धर्मस्थान् गर्विताशयः ।
सोऽत्येति धर्ममात्मीयं, न धर्मो धार्मिकैर्विना ॥२६॥

यदि पापनिरोधोऽन्य, सम्पदा किं प्रयोजनम् ।
अथ पापास्रवोऽस्त्यन्य, सम्पदा किं प्रयोजनम् ॥२७॥

सम्यदर्शनसम्पन्न, मपि मातङ्गदेहजम् ।
देवा देवं विदुर्भस्म, गूढाङ्गारान्तरौजसम् ॥२८॥

श्वापि देवोऽपि देवःश्वा, जायते धर्मकिल्विषात् ।
कापि नाम भवेदन्या, सम्पद्धर्म्माच्छरीरिणाम् ॥२९॥

भयाशास्नेहलोभाच्च, कुदेवागमलिङ्गिनाम् ।
प्रणामं विनयं चैव, न कुर्युः शुद्धदृष्टयः ॥३०॥

दर्शनं ज्ञानचारित्रा, त्साधिमानमुपाश्नुते ।
दर्शनं कर्णधारं, तन्मोक्षमार्गे प्रचक्षते ॥३१॥

विद्यावृत्तस्य संभूति, स्थितिवृद्धिफलोदयाः ।
न सन्त्यसति सम्यक्त्वे, बीजाभावे तरोरिव ॥३२॥

गृहस्थो मोक्षमार्गस्थो, निर्मोहो नैव मोहवान् ।
अनगारो गृही श्रेयान्, निर्मोहो मोहिनो मुनेः ॥३३॥

न सम्यक्त्वसमं किञ्चित्, त्रैकाल्ये त्रिजगत्यपि ।
श्रेयोऽश्रेयश्च मिथ्यात्व, समं नान्यत्तनूभृताम् ॥३४॥

सम्यग्दर्शनशुद्धा, नारकतिर्यङ्-नपुसंक-स्त्रीत्वानि ।
दुष्कुलविकृताल्पायु, र्दरिद्रतां च व्रजन्ति नाप्यव्रतिकाः ॥३५॥

ओजस्तेजोविद्या, - वीर्ययशोवृद्धि विजय विभवसनाथाः ।
महाकुला महार्था, मानवतिलका भवन्ति दर्शनपूताः ॥३६॥

अष्टगुणपुष्टितुष्टा, दृष्टिविशिष्टाः प्रकृष्टशोभाजुष्टाः ।
अमराप्सरसां परिषदि, चिरं रमन्ते जिनेन्द्रभक्ताः स्वर्गे ।।३७।।

नवनिधिसप्तद्वय, रत्नाधीशः सर्व-भूमि-पतयश्चक्रम् ।
वर्तयितुं प्रभवन्ति, स्पष्टदृशः क्षत्रमौलिशेखरचरणाः ।।३८।।

अमरासुरनरपतिभि, र्यमधरपतिभिश्च नूतपादाम्भोजा ।
दृष्ट्या सुनिश्चितार्था, वृषचक्रधरा भवन्ति लोकशरण्या ।।३९।।

शिवमजरमरुजमक्षय, मव्याबाधं विशोकभयशङ्कम् ।
काष्ठागतसुखविद्या, विभवं विमलं भजन्ति दर्शनशरणाः ।।४०।।

देवेन्द्र चक्रमहिमानममेयमानम्,
राजेन्द्रचक्रमवनीन्द्र शिरोऽर्चनीयम् ।
धर्मेन्द्रचक्रमधरीकृतसर्वलोकं,
लब्ध्वा शिवं च जिनभक्तिरुपैति भव्यः ।।४१।।

।। इति प्रथमोऽध्यायः ।।

अथ द्वितीयोऽध्याय

अन्यूनमनतिरिक्तं, याथातथ्यं विना च विपरीतात् ।
निःसन्देहं वेद, यदाहुस्तज्ज्ञानमागमिनः ॥४२॥

प्रथमानुयोगमर्था, ख्यानं चरितं पुराणमपि पुण्यम् ।
बोधिसमाधिनिधानं, बोधति बोधः समीचीनः ॥४३॥

लोकालोकविभक्तेः, र्युगपरिवृत्तेश्चतुर्गतीनां च ।
आदर्शमिव तथामति, रवैति करणानुयोगं च ॥४४॥

गृहमेध्यनगाराणां, चारित्रोत्पत्तिवृद्धिरक्षाङ्गम् ।
चरणानुयोगसमयं, सम्यग्ज्ञानं विजानाति ॥४५॥

जीवाजीवसुतत्त्वे, पुण्यापुण्ये च बन्धमोक्षौ च ।
द्रव्यानुयोगदीपः, श्रुतविद्यालोकमातनुते ॥४६॥

॥ इति द्वितियोऽद्यायः ॥

अथ तृतीयोऽध्याय:

मोहतिमिरापहणे, दर्शनलाभादवाप्त-संज्ञानः ।
रागद्वेष निवृत्यै, चरणं प्रतिपद्यते साधुः ॥४७॥

रागद्वेषनिवृत्ते, हिंसादि निर्वतना कृता भवति।
अनपेक्षितार्थवृत्तिः, कः पुरुषः सेवते नृपतीन् ॥४८॥

हिंसानृतचौर्येभ्यो, मैथुनसेवापरिग्रहाभ्यां च।
पापप्रणालिकाभ्यो, विरतिः संज्ञस्य चारित्रम् ॥४९॥

सकलं विकलं चरणं, तत्सकलं सर्वसङ्गविरतानाम्।
अनगाराणां विकलं, सागाराणां ससङ्गानाम् ॥५०॥

गृहिणां त्रेधा तिष्ठ, त्यणुगुणशिक्षाव्रतात्मकं चरणम्।
पञ्चत्रिचतुर्भेदं, त्रयं यथासंख्यमाख्यातम् ॥५१॥

प्राणातिपातवितथ, व्याहारस्तेयकाममूर्च्छेभ्यः।
स्थूलेभ्यो पापेभ्यः, व्युपरमणमणुव्रतं भवति ॥५२॥

संकल्पात्कृतकारित, मननाद्योगत्रयस्य चरसत्वान् ।
न हिनस्ति यत्तदाहुः, स्थूलवधाद्विरमणं निपुणाः ॥५३॥

छेदनबन्धनपीडन, मतिभारारोपणं व्यतीचाराः ।
आहारवारणापि च, स्थूलवधाद् व्यपरतेः पञ्च ॥५४॥

स्थूलमलीकं न वदति, न परान् वादयति सत्यमपि विपदे।
यंत्तद्वदन्ति सन्तः, स्थूलमृषावाद वैरमणम् ॥५५॥

परिवादरहोभ्याख्या, पैशून्यं कूटलेखकरणं च।
न्यासापहारितापि च, व्यतिक्रमाः पञ्च सत्यस्य ॥५६॥

निहितं वा पतितं वा, सुविस्मृतं वा परस्वमविसृष्टम्।
न हरति यन्न च दत्ते, तदकृषचौर्यादुपारमणम् ॥५७॥

चौरप्रयोग चौरा, र्थादान विलोप सदृश सन्मिश्राः।
हीनाधिकविनिमानं, पञ्चास्तेये व्यतीपाताः ॥५८॥

न तु परदारान् गच्छति, न परान् गमयति च पापभीतेर्यत्।
सा परदारनिवृत्तिः, स्वदारसन्तोष नामापि॥५९॥

अन्यविवाहाकरणा, नङ्गक्रीडाविटत्वविपुलतृषः।
इत्वरिकागमनं चा, स्मरस्य पञ्च व्यतीचारा॥६०॥

धनधान्यादिग्रन्थं, परिमाय ततोऽधिकेषु निस्पृहता।
परिमित-परिग्रहः स्या, दिच्छा परिमाणनामापि॥६१॥

अतिवाहनातिसंग्रह, विस्मयलोभातिभारवहनानि।
परिमितपरिग्रहस्य च, विक्षेपाः पञ्च कथ्यन्ते॥६२॥

पञ्चाणुव्रतनिधयो, निरतिक्रमणाः फलन्ति सुरलोकम्।
यत्रावधिरष्टगुणा, दिव्यशरीरं च लभ्यन्ते॥६३॥

मातङ्गो धनदेवश्च, वारिषेणस्ततः परः।
नीली जयश्च सम्प्राप्ताः, पूजातिशयमुत्तमम्॥६४॥

धनश्रीसत्यघोषौ च, तापसारक्षकावपि ।
उपाख्येयास्तथा श्मश्रु, नवनीतो यथाक्रमम् ।।६५।।

मद्य-मांस-मधु-त्यागैः, सहाणुव्रत-पञ्चकम् ।
अष्टौ मूलगुणानाहु, गृहिणां श्रमणोत्तमाः ।।६६।।

दिग्व्रतमनर्थदण्ड, व्रतं च भोगोपभोगपरिमाणम् ।
अनुबृंहणाद् गुणाना, माख्यान्ति गुणव्रतान्यार्याः ।।६७।।

दिग्वलयं परिगणितं, कृत्वाऽतोऽहं बहिर्न यास्यामि ।
इति सङ्कल्पो दिग्व्रत, मामृत्यणु पापविनिवृत्त्यै ।।६८।।

मकराकरसरिदटवी, गिरिजनपदयोजनानि मर्यादाः ।
प्राहुर्दिशां दशानां, प्रतिसंहारे प्रसिद्धानि ।।६९।।

अवधेर्बहिरणुपाप, प्रतिविरतेर्दिग्व्रतानि धारयताम् ।
पञ्चमहाव्रतपरिणति, मणुव्रतानि प्रपद्यन्ते ।।७०।।

प्रत्याख्यानतनुत्वा, न्मन्दतराश्चरणमोहपरिणाणाः ।
सत्वेन दुःखधारा, महाव्रताय प्रकल्प्यन्ते ॥७१॥

पञ्चानां पापानां, हिंसादीनां मनोवचःकायैः ।
कृतकारितानुमोदै, स्त्यागस्तु महाव्रतं महताम् ॥७२॥

ऊर्ध्वाधस्तात्तिर्यग्, व्यतिपाताः क्षेत्रवृद्धिरवधीनाम् ।
विस्मरणं दिग्विरते, रत्याशाः पञ्च मन्यन्ते ॥७३॥

अभ्यन्तरं दिगवधे, रपार्तिकेभ्यः सपापयोगेभ्यः ।
विरमणमनर्थदण्ड, व्रतं च विदुर्व्रतधराग्रण्यः ॥७४॥

पापोपदेश हिंसा, दानापध्यानदुःश्रुतीः पञ्च ।
प्राहुः प्रमादचर्या, मनर्थदण्डानदण्डधराः ॥७५॥

तिर्यक्क्लेषवणिज्या, हिंसारम्भप्रलम्भनादीनाम् ।
कथाप्रसङ्गप्रसवः, स्मर्तव्यः पाप-उपदेशः ॥७६॥

परशुकृपाणखनित्र, ज्वलनायुधश्रृङ्गश्रृङ्खलादीनाम् ।
वधहेतूनां दानं, हिंसादानं ब्रुवन्ति बुधाः ॥७७॥

वधबन्धच्छेदादे, र्द्वेषाद्रागाच्च परकलत्रादेः ।
आध्यानमपध्यानं, शासति जिनशासने विशदाः ॥७८॥

·आरम्भसङ्गसाहस, मिथ्यात्वद्वेषरागमदमदनैः ।
चेतः कलुषयतां श्रुति, रवधीनां दुःश्रुतिर्भवति ॥७९॥

क्षितिसलिलदहनपवना, रम्भं विफलं वनस्पतिच्छेदम् ।
सरणं सारणमपि च, प्रमादचर्यां प्रभाषन्ते ॥८०॥

कन्दर्पं कौत्कुच्यं, मौखर्यमतिप्रसाधनं पञ्च ।
असमीक्ष्य चाधिकरणं, व्यतीतयोऽनर्थदण्डकृद्विरतेः ॥८१॥

अक्षार्थानां परिसं, ख्यानं भोगोपभोगपरिमाणम् ।
अर्थवतामप्यवधौ, रागरतीनां तनूकृतये ॥८२॥

भुक्त्वा परिहातव्यो, भोगो भुक्त्वा पुनश्च भोक्तव्यः ।
उपभोगोऽशनवसन, प्रभृतिपाञ्चेन्द्रियो विषयः ॥८३॥

त्रसहतिपरिहरणार्थं, क्षौद्रं पिशितं प्रमादपरिहृतये ।
मद्यं च वर्जनीयं, जिनचरणौ शरणमुपयातैः ॥८४॥

अल्पफलबहुविधाता, न्मूलकमार्द्राणि शृङ्गवेराणि ।
नवनीतनिम्बकुसुमं, कैतकमित्येवमवहेयम् ॥८५॥

यदनिष्टं तद्व्रतये, द्यच्चानुपसेव्यमेतदपि जह्यात् ।
अभिसन्धिकृताविरति, र्विषयाद्योग्याद्व्रतं भवति ॥८६॥

नियमो यमश्च विहितौ, द्वेधा भोगोपभोगसंहारे ।
नियमः परिमितिकालो, यावज्जीवं यमो ध्रियते ॥८७॥

भोजनवाहनशयन, स्नानपवित्राङ्गरागकुसुमेषु ।
ताम्बूलवसनभूषण, मन्मथसङ्गीतगीतेषु ॥८८॥

अद्य दिवा रजनीं वा, पक्षो मासस्तथर्तुरयनं वा।
इतिकालपरिच्छित्या, प्रत्याख्यानं भवेन्नियमः ॥८९॥

विषयविषतोऽनुपेक्षा, नुस्मृतिरति लौल्यमतितृषानुभवो।
भोगोपभोगपरमा, व्यतिक्रमाः पञ्च कथ्यन्ते ॥९०॥

देशावकाशिकं वा, सामयिकं प्रौषधोपवासो वा ।
वैय्यावृत्यं शिक्षा, व्रतानि चत्वारि शिष्टानि ॥९१॥

देशावकाशिकं स्या, त्कालपरिच्छेदनेन देशस्य ।
प्रत्यहमणुव्रतानां, प्रतिसंहारो विशालस्य ॥९२॥

गृहहारिग्रामाणां, क्षेत्रनदीदावयोजनानां च।
देशावकाशिकस्य, स्मरन्ति सीम्नां तपोवृद्धाः ॥९३॥

संवत्सरमृतुरयनं, मासचतुर्मासपक्षमृक्षं च ।
देशावकाशिकस्य, प्राहुः कालावधिं प्राज्ञाः ॥९४॥

सीमान्तानां परतः, स्थूलतरपञ्चपापसंत्यागात् ।
देशावकाशिकेन च, महाव्रतानि प्रसाध्यन्ते ॥९५॥

प्रेषणशब्दानयनं, रूपाभिव्यक्तिपुद्गलक्षेपौ।
देशावकाशिकस्य, व्यदिश्यन्तेऽत्ययाः पञ्च ॥९६ ॥

आसमयमुक्तिमुक्तं, पञ्चाघानामशेषभावेन।
सर्वत्र च सामयिकाः, सामयिकं नाम शंसन्ति ॥९७॥

मूर्धरुहमुष्ठिवासो, बन्धं पर्यङ्कबन्धनं चापि।
स्थानमुपवेशनं वा, समयं जानन्ति समयज्ञाः ॥९८॥

एकान्ते सामयिकं, निर्व्याक्षेपेवनेषु वास्तुषु च।
चैत्यालयेषु वापि च, परिचेतव्यं प्रसन्नधिया ॥९९॥

व्यापारवैमनस्या, द्विनिवृत्त्यामन्तरात्मविनिवृत्त्या ।
सामयिकं बध्नीया, दुपवासे चैकभुक्ते वा ॥१००॥

सामयिकं प्रतिदिवसं, यथावदप्यनलसेन चेतव्यम् ।
व्रतपञ्चकपरिपूरण, कारणमवधानयुक्तेन ॥१०१॥

सामयिके सारम्भाः, परिग्रहा नैव सन्ति सर्वेऽपि ।
चेलोपसृष्टमुनिरिव, गृही तदा याति यतिभावम् ॥१०२॥

शीतोष्णदंशमशक, परिषहमुपसर्गमपि च मौनधराः ।
सामयिकं प्रतिपन्ना, अधिकुर्वीरन्नचलयोगाः ॥१०३॥

अशरणमशुमनित्यं, दुःखमनात्मानमावसामि भवम् ।
मोक्षस्तद्विपरीता, त्मेति ध्यायन्तु सामयिके ॥१०४॥

वाक्कायमानसानां, दुःप्रणिधानान्यनादरास्मरणे ।
सामयिकस्यातिगमा, व्यज्यन्ते पञ्चभावेन ॥१०५॥

पर्वण्यष्टम्यां च, ज्ञातव्यः प्रोषधोपवासस्तु ।
चतुरभ्यवहार्याणां, प्रत्याख्यानं सदेच्छाभिः ॥१०६॥

पञ्चानां पापाना, मलंक्रियारम्भगन्धपुष्पाणाम् ।
स्नानाञ्जननस्याना, मुपवासे परितिं कुर्यात् ॥१०७॥

धर्मामृतं सतृष्णः, श्रवणाभ्यां पिबतु पाययेद्वान्यान् ।
ज्ञानध्यानपरो वा, भवतूपवसन्नतन्द्रालुः ॥१०८॥

चतुराहारविसर्जन, मुपवासः प्रोषधः सकृद्भुक्तिः ।
स प्रोषधोपवासो, यदुपोष्यारम्भमाचरति ॥१०९॥

ग्रहणविसर्गास्तरणा, न्यदृष्टमृष्टान्यनादरास्मरणे ।
यत्प्रोषधोपवास, व्यतिलङ्घनपञ्चकं तदिदम् ॥११०॥

दानं वैयावृत्त्यं, धर्माय तपोधनाय गुणनिधये ।
अनपेक्षितोपचारो, पक्रियमगृहाय विभवेन ॥१११॥

व्यापत्तिव्यपनोदः, पदयोः संवाहनं च गुणरागात् ।
वैयावृत्यं यावा, नुपग्रहोऽन्योऽपि संयमिनाम् ॥११२॥

नवपुण्यैः प्रतिपत्तिं, सप्तगुणसमाहितेन शुद्धेन ।
अपसूनारम्भाणा, मार्याणामिष्यते दानम् ॥११३॥

गृहकर्मणापि निचितं, कर्म विमार्ष्टि खलु गृहविमुक्तानाम् ।
अतिथीनां प्रतिपूजा, रुधिरमलं धावते वारि ॥११४॥

उच्चैर्गोत्रं प्रणते, र्भोगो दानादुपासनात्पूजा ।
भक्तेः सुन्दररूपं, स्तवनात्कीर्तिस्तपोनिधिषु ॥११५॥

क्षितिगतमिव वटबीजं, पात्रगतं दानमल्पमपि काले ।
फलतिच्छायाविभवं, बहुफलमिष्टं शरीरभृताम् ॥११६॥

आहारौवधयोर, प्युपकरणावासयोश्च दानेन ।
वैयावृत्यं ब्रुवते, चतुरात्मत्वेन चतुरस्रा ॥११७॥

श्रीषेणवृषभसेने, कौण्डेशः शूकरश्च दृष्टान्ताः ।
वैयावृत्यस्यैते, चतुर्विकल्पस्य मन्तव्याः ॥११८॥

देवाधिदेवचरणे, परिचरणं सर्वदुःख निर्हरणम्।
कामदुहि कामदाहिनि, परिचिनुयादादृतो नित्यम्॥११९॥

अर्हच्चरणसपर्या,- महानुभावं महात्मनामवदत्।
भेकः प्रमोदमत्तः, कुसुमेनैकेन राजगृहे ॥१२०॥

हरितपिधाननिधाने, ह्यनादरास्मरणमत्सरत्वानि।
वैयावृत्यस्यैते, व्यतिक्रमाः पञ्च कथ्यन्ते ॥१२१॥

उपसर्गे दुर्भिक्षे, जरसि रुजायां च निःप्रतीकारे।
धर्माय तनुविमोचन, माहुः सल्लेखनामार्याः ॥१२२॥

अन्तःक्रियाधिकरणं, तपः फलं सकलदर्शिनः स्तुवते।
तस्माद्यावद्विभवं, समाधिमरणे प्रयतितव्यम्॥१२३॥

स्नेहं वैरं सङ्गं, परिग्रहं चापहाय शुद्धमनाः।
स्वजनं परिजनमपि च, क्षांत्वा क्षमयेत्प्रियैर्वचनैः॥१२४॥

आलोच्य सर्वमेनः, कृतकारितमनुमतं च निर्व्याजम्।
आरोपयेन्महाव्रत, मामरणस्थासि निश्शेषम्।।१२५।।

शोकं भयमवसादं, क्लेदं कालुष्यमरतिमपि हित्वा।
सत्त्वोत्साहमुदीर्य च, मनः प्रसाद्यं श्रुतैरमृतैः ।।१२६।।

आहारं परिहाप्य, क्रमश स्निग्धं विवर्द्धयेत्पानम्।
स्निग्धं च हापयित्वा, खरपानं पूरयेत्क्रमशः ।।१२७।।

खरपानहापनामपि, कृत्वा कृत्वोपवासमपि शक्त्या ।
पञ्चनमस्कारमना, स्तनुं त्यज्येत्सर्वयत्नेन ।।१२८।।

जीवितमरणाशंसे, भयमित्रस्मृतिनिदाननामानः ।
सल्लेखनातिचाराः, पञ्च जिनेन्द्रैः समादिष्टाः ।।१२९।।

निःश्रेयसमभ्युदयं, निस्तीरं दुस्तरं सुखाम्बुनिधिम् ।
निःपिबति पीतधर्मा, सर्वदुःखैरनालीढः ।।१३०।।

जन्मजरामयमरणैः, शोकैर्दुःखैर्भयैश्च परिमुक्तम्।
निर्वाणं शुद्धसुखं, निःश्रेयसमिष्यते नित्यम्।।१३१।।

विद्यादर्शनशक्ति, स्वास्थ्य प्रह्लादतृप्तिशुद्धियुजः ।
निरतिशया निरवधयो, निःश्रेयसमावसन्ति सुखम् ॥१३२॥

काले कल्पशतेऽपि च, गते शिवानां न विक्रिया लक्षा ।
उत्पातोऽपि यदि स्या, त्रिलोकसम्भ्रान्तिकरणपटुः ॥१३३॥

निःश्रेयसमधिपन्ना, स्त्रैलोक्यशिखामणिश्रियं दधते ।
निष्किट्टिकालिकाच्छवि, चामीकरभासुरात्मानः ॥१३४॥

पूजार्थाज्ञैश्वर्यैः, बलपरिजनकामभोगभूयिष्ठैः ।
अतिशयितभुवनमद्भुत, मभ्युदयं फलति सद्धर्मः ॥१३५॥

श्रावकपदानि देवै, रेकादश देशितानि येषु खलु ।
स्वगुणाः पूर्वगुणैः सह, संतिष्ठन्ते क्रमविवृद्धाः ॥१३६॥

सम्यग्दर्शनशुद्धः, संसारशरीरभोगनिर्विण्णः ।
पञ्चगुरुचरणशरणो, दार्शनिकस्तत्त्वपथगृह्यः ॥१३७॥

निरतिक्रमणमणुव्रत, पञ्चकमपि शीलसप्तकं चापि।
धारयते निःशल्यो, योऽसौ व्रतिनां मतो व्रतिकः
॥१३८॥

चतुरावर्तत्रितय, श्चतुः प्रणामस्थितो यथाजातः।
सामयिको द्विनिषद्य, स्त्रियोगशुद्धिस्त्रिसंन्ध्यमभिवन्दी॥१३९॥

पर्वदिनेषु चतुर्ष्वपि, मासे मासे स्वशक्तिमनिगुह्य।
प्रोषधनियमविधायी, प्रणधिपरः प्रोषधानशनः ॥१४०॥

मूलफलशाकशाखा, करीरकन्दप्रसूनबीजानि।
नामानि योऽत्ति सोऽयं, सचित्तविरतो दयामूर्तिः ॥१४१॥

अन्नं पानं खाद्यं, लेह्यं नाश्नाति यो विभावर्याम्।
स च रात्रिभुक्तिविरतः, सत्त्वेष्वनुकम्पमानमनाः ॥१४२॥

मलबीजं मलयोनिं, गलन्मलं पूतगन्धिबीभत्सम्।
पश्यन्नङ्गमनङ्गा, द्विरमति यो ब्रह्मचारी सः ॥१४३॥

सेवाकृषिवाणिज्य, प्रमुखादारम्भतो व्युपारमति ।
प्राणातिपातहेतो, र्योऽसावारम्भविनिवृत्तः ॥१४४॥

बाह्येषु दशसु वस्तुषु ममत्वमुत्सृज्य निर्ममत्वरतः ।
स्वस्थः सन्तोषपरः परिचित्तपरिग्रहाद्विरतः ॥१४५॥

अनुमतिरारम्भे वा परिग्रहे वैहिकेषु कर्मसु वा ।
नास्ति खलु यस्य समधीरनुमतिविरतः स मन्तव्यः ॥१४६॥

गृहतो मुनिवनमित्वा गुरूपकण्ठे व्रतानि परिगृह्य
भैक्ष्याशनस्तपस्यन्नुत्कृष्टश्चेलखण्डधरः ॥१४७॥

पापमरातिर्धर्मो बन्धुर्जीवस्य चेति निश्चिन्वन् ।
समयं यदि जानीते श्रेयो ज्ञाता ध्रुवं भवति ॥१४८॥

येन स्वयं वीतकलङ्कविद्या दृष्टिः क्रियारत्नकरण्डभावम् ।
नीतस्यमायाति पतीच्छयेव सर्वार्थसिद्धिस्त्रिषुविष्टपेषु॥१४९॥

सुखयतु सुखभूमिः कामिनं कामिनीव
सुतमिव जननी मां शुद्धशीला भुनक्तु ।
कुलमिव गुणभूषा कन्यका संपुनीतात्
जिनपतिपदपद्मप्रेक्षिणी दृष्टिलक्ष्मीः ॥१५०॥

॥ इति श्री समन्तभद्र आचार्य विरचित
रत्नकरंडश्रावकाचारः ॥

द्रव्यसंग्रह

जीवमजीवं दव्वं, जिणवरवसहेण जेण णिद्दिट्ठं।
देविंदविंदवंदं, वंदे तं सव्वदा सिरसा ॥१॥

जीवो उवओगमओ, अमुत्तिकत्ता सदेहपरिमाणो।
भोत्ता संसारत्थो, सिद्धो सो विस्ससोड्ढगई ॥२॥

तिक्काले चदुपाणा, इंदियबलमाउ, आणपाणो य।
ववहारा सो जीवो, णिच्चयणायदो दु चेदणा जस्स ॥३॥

उवओगो दुवियप्पो, दंसण णाणं च दंसणं चदुधा।
चक्खु अचक्खु ओही, दंसणमध केवलं णेयं ॥४॥

णाणं अट्ठवियप्पं, मदिसुदओही अणाणणाणाणी।
मणपज्जयकेवलमवि, पच्चक्ख परोक्खभेयं च ॥५॥

अट्ठचदुणाणदंसण, सामण्णं जीवलक्खणं भणियं।
ववहारा सुद्धणया, सुद्धं पुण दंसणं णाणं ॥६॥

वण्ण रस पंच गंधा, दो फासा अट्ठ णिच्चया जीवे।
णो संति अमुत्ति तदो, ववहार मुत्ति बंधादो ॥७॥

पुग्गलकम्मादीणं, कत्ता ववहारदो दु णिच्छयदो।
चेदणकम्माणादा, सुद्धणया सुद्धभावाणं ॥८॥

ववहारा सुहदुक्खं, पुग्गलकम्मप्फलं पभुंजेदि।
आदा णिच्छयणयदो, चेदणभावं खु आदस्स ॥९॥

अणुगुरूदेहपमाणो, उवसंहारप्पसप्पदो चेदा।
असमुहदो ववहारा, णिच्छयणयदो असंखदेसो वा ॥१०॥

पुढविजलतेउवाउ, वणप्फदी विविहथावरेइंदी।
विगतिगचदुपंचक्खा, तस जीवा होंति संखादी ॥११॥

समणा अमणा णेया, पंचिंदिया णिम्मणा परे सव्वे।
बादरसुहुमेइंदी, सव्वे पज्जत्त इदरा य ॥१२॥

मग्गणगुणठाणेहिं य, चउदसहिं हवंति तह अशुद्धणया।
विण्णेया संसारी, सव्वे सुद्धा हु सुद्धणया ॥१३॥

णिक्कम्मा अट्ठगुणा, किंचूणा चरमदेहदो सिद्धा।
लोयग्गठिदा णिच्चा, उप्पादवयेहिं संजुत्ता ॥१४॥

अज्जीवो पुण णेओ, पुग्गल धम्मो अधम्म आयासं।
कालो पुग्गल मुत्तो, रुवादिगुणो अमुत्ति सेसा दु ॥१५॥

सद्दो बंधो सुहमो, थूलो संठाणभेदतमछाया।
उज्जोदादवसहिया, पुग्गलदव्वस्स पज्जाया ॥१६॥

गइपरिणयाण धम्मो, पुग्गल जीवाण गमणसहयारी।
तोयं जह मच्छाणं, अच्छंता णेव सो णेई ॥१७॥

ठाणजुदाण अधम्मो, पुग्गलजीवाण ठाणसहयारी।
छाया जह पहियाणं, गच्छंता णेव सो धरई ॥१८॥

अवगासदाण जोग्गं, जीवादीणं वियाण आयासं।
जेण्णं लोगागासं, अल्लोगागासमिदि दुविहं ॥१९॥

धम्मा धम्मा कालो, पुग्गलजीवा य संति जावदिये।
आयासे सो लोगो, तत्तो परदो अलोगुत्तो ॥२०॥

दव्वपरिवट्टरूवो, जो सो कालो हवेइ ववहारो।
परिणामादिलक्खो, वट्टणलक्खो य परमट्ठो ॥२१॥

लोयायासपदेसे, इक्केक्के जे ठिया हु इक्केक्का।
रयणाणं रासीमिव, ते कालाणू असंखदव्वाणि ॥२२॥

एवं छब्भेयमिदं, जीवाजीवप्पभेददो दव्वं।
उत्तं काल विजुत्तं, णायव्वा पंच अत्थिकाया दु ॥२३॥

संति जदो तेणेदे, अत्थीत्ति भणंति जिणवरा जम्हा।
काया इव बहुदेसा, तम्हा काया य अत्थिकाया य ॥२४॥

होंति असंखा जीवे, धम्माधम्मे अणंत आयासे।
मुत्ते तिविह पदेसा, कालस्सेगो ण तेण सो काओ ॥२५॥

एयपदेसो वि अणू, णाणाखंधप्पदेसदो होदि।
बहुदेसोउवयारा, तेण य काओ भणंति सव्वण्हु ॥२६॥

जावदियं आयासं, अविभागी पुग्गलाणुवट्ठद्धं।
तं खु पदेसं जाणे, सव्वाणुट्ठाणदाणरिहं ॥२७॥

आसवबंधणसंवरणिज्जरमोक्खो सपुण्णपावा जे।
जीवाजीव विसेसा, तेवि समासेण पभणामो ॥२८॥

आसवदि जेण कम्मं, परिणामेणप्पणो स विण्णेयो।
भावासवो जिणुत्तो, कम्मासवणं परो होदि ॥२९॥

मिच्छत्ताविरदिपमादजोगकोहादओथ विण्णेया।
पण पण पणदस तिय चदु, कमसो भेदा दु पुव्वस्स ॥३०॥

णाणावरणादीणं, जोग्गं जं पुग्गलं समासवदि।
दव्वासवो स णेओ, अणेयभेओ जिणक्खादो ॥३१॥

बज्झदि कम्मं जेणदु, चेदणभावेण भावबंधो सो।
कम्मादपदेसाणं, अण्णोण्णपवेसणं इदरो ॥३२॥

पयडिट्ठिदिअणुभागप्पदेसभेदा दु चदुविधो बंधो।
जोगा पयडिपदेसा, ठिदि अणुभागा कसायदो होंति ॥३३॥

चेदणपरिणामो जो कम्मस्सासवणिरोहणे हेऊ।
सो भावसंवरो खलु, दव्वासवरोहणे अण्णो ॥३४॥

वदसमिदीगुत्तीओ, धम्माणुपिहा परीसहजओ य।
चारित्तं बहुभेयं, णायव्वा भावसंवरविसेसा ॥३५॥

जह कालेण तवेण य, भुत्तरसं कम्मपुग्गलं जेण।
भावेण सडदि णेया, तस्सडणं चेदि णिज्जरा दुविहा ॥३६॥

सव्वस्स कम्मणो जो, खयहेदू अप्पणो हु परिणामो।
णेओ स भावमोक्खो, दव्वविमोक्खो य कम्मपुधभावो ॥३७॥

सुहअसुहभावजुत्ता, पुण्णं पावं हवंति खलु जीवा।
सादं सुहाऊणामं, गोदं पुण्णं पराणि पावं च ॥३८॥

सम्मद्दंसण णाणं, चरणं मोक्खस्स कारणं जाणे।
ववहारा, णिच्छयदो, तत्तियमइयो णिओ अप्पा ॥३९॥

रयणत्तयं ण वट्टइ, अप्पाणं मुयत्तु अण्णदवियम्हि।
तम्हा तत्तियमइयो, होदि हु मोक्खक्स कारणं आदा ॥४०॥

जीवदीसद्दहणं, सम्मत्तं रूवमप्पणो तं तु।
दुरभिणिवेसविमुक्कं, णाणं सम्मं खु होदि सदि जम्हि ॥४१॥

संसयविमोहविब्भम विवज्जियं अप्पपरसरूवस्स।
गहणं सम्मं, णाणं, सायारमणेयभेयं च ।।४२।।

जे सामण्णं गहणं, भावाणं णेव कट्टुमायारं।
अविसेसिदूण अट्ठे, दंसणमिदि भण्णए समये ।।४३।।

दंसण पुव्वं णाणं, छदुमत्थाणं ण दुण्णि उवओगा।
जुगवं जम्हा केवलि णाहे जुगवं तु ते दो वि ।।४४।।

असुहादो विणिवित्ती, सुहे पवित्ती य जाण चारित्तं।
वदसमिदि गुत्ति रूवं ववहारणयादु जिणभणियं ।।४५।।

बहिरब्भंतरकिरिया रोहो भवकारणप्पणा सट्ठं।
णाणिस्स जं जिणुत्तं, तं परमं सम्मचारित्तं ।।४६।।

दुविहं पि मोक्खहेउं, झाणे पाउणदि जं मुणी णियमा।
तम्हा पयत्तचित्ता, जूयं झाणं समब्भसह ।।४७।।

मा मुज्झह, मा रज्जह, मा दुस्सह इट्ठणिट्ठअत्थेसु।
थिरमिच्छह जइचित्तं, विचित्त झाणप्पसिद्धीए ।।४८।।

पणतीस सोल छप्पण, चदु दुग मेगं च जवह झाएह।
परमेट्ठिवाचयाणं, अण्णं चगुरूवएसेण ।।४९।।

णट्ठचदुघाइकम्मो दंसणसुहणाणवीरियमइयो
सुहदेहत्थो अप्पा, सुद्धो अरिहो विचिंतिज्जो ।।५०।।

णट्ठट्ठकम्मदेहो लोया लोयस्स जाणओ दट्ठा।
पुरुसायारो अप्पा, सिद्धो झाएह लोयसिहरत्थो ।।५१।।

दंसणणाणपहाणे, वीरियचारित्त वरतवायारे।
अप्पं परं च जुंजइ, सो आइरियो मुणी झेओ ।।५२।।

जो रयणत्तयजुत्तो, णिच्चं धम्मोवएसणे णिरदो।
सो उवझाओ अप्पा, जदिवरवसहो णमो तस्स ।।५३।।

दंसणणाण समग्गं, मग्गं मोक्खस्स जो हु चारित्तं।
साधयति णिच्चसुद्धं, साहू सो मुणी णमो तस्स ।।५४।।

जं किंचिवि चिंतंतो, णिरीहवित्ती हवे जदा साहू।
लद्धूणय एयत्तं, तदा हु तं तस्स णिच्चयं झाणं ।।५५।।

मा चिट्ठह माजंपह, मा चिंतह किं वि जेण होइ थिरो।
अप्पा अप्पम्मि रओ, इणमेव परं हवे झाणं ।।५६।।

तवसुदवदवं चेदा, झाणरह धुरंधरो हवे जम्हा।
तम्हा तत्तियणिरदा, तल्लद्धीए सदा होइ ।।५७।।

दव्वसंगहमिणं मुणिणाह, दोससंचयचुदा सुद पुण्णा।
सोधयंतु तणुसुत्तधरेण, णेमिचंदमुणिणा भणियं जं ।।५८।।

।। इति द्रव्यसंग्रह ।।

इष्टोपदेश

यस्य स्वयं स्वभावाप्तिरभावे कृत्स्नकर्मण:।
तस्मै संज्ञानरूपाय नमोस्तु परमात्मने।।१।।

योग्योपादानयोगेन दृषद: स्वर्णता मता।
द्रव्यादिस्वादिसंपत्तावात्मनोऽप्यात्मतामता।।२।।

वरं व्रतै: पदं दैवं नाव्रतैर्वत नारकम्।
छाया तपस्थयोर्भेद: प्रतिपालयतोर्महान्।।३।।

यत्र भाव: शिवं दत्ते द्यौ: कियद्दूरवर्तिनी।
यो नयत्याशु गव्यूतिं क्रोशार्धे किं स सीदति?।।४।।

हृषीकजमनातङ्कं दीर्घकालोऽपलालितं।
नाके नाकौकसां सौख्यं नाके नाकौकसामिव।।५।।

वासनामात्रमेवैतत्सुखं दु:खं च देहिनां।
तथा ह्युद्वेजयंत्येते भोगा रोगा इवापदि।।६।।

मोहेन संवृतं ज्ञानं स्वभावं लभते न हि।
मत्त: पुमान्पदार्थानां यथा मदनको-द्रवै:।।७।।

वपुर्गृहं धनं दारा: पुत्रा: मित्राणि शत्रव:।
सर्वथान्यस्वभावानि मूढ: स्वानि प्रपद्यते।।८।।

दिग्देशेभ्य: खगा एत्य संवसन्ति नगे-नगे।
स्व-स्व कार्यवशाद्यान्ति देशे दिक्षु प्रगे-प्रगे।।९।।

विराधक: कथं हंत्रे जनाय परिकुप्यति।
त्र्यंगुलं पातयत्पद्भ्यां स्वयं दण्डेन पात्यते।।१०।।

राग द्वेष द्वयीदीर्घ नेत्राकर्षण कर्मणा।
अज्ञानात्सुचिरं जीवः संसराब्धौ भ्रमत्यसौ ।।११।।

विपद्भवपदावर्ते पदिकेवाति वाह्यते।
यावत्तावद् भवत्यन्याः प्रचुराः विपत्त्यः पुरः।।१२।।
दुरर्ज्येनसुरक्षेण नश्वरेण धनादिना।
स्वस्थं मन्योजनः कोऽपि ज्वरवानिव सर्पिषा।।१३।।
विपत्तिमात्मनो मूढः परेषामिव नेक्षते।
दह्यमानमृगाकीर्णवनान्तरतरुस्थवत्।।१४।।
आयुर्वृद्धि क्षयोत्कर्षहेतुं कालस्य निर्गमम्।
वांछतां धनिनामिष्ट जीवितात्सुतरां धनम्।।१५।।
त्यागाय श्रेयसे वित्तमवित्तः संचिनोति यः।
स्वशरीरं स पंकेन स्नास्यामीति विलम्पति।।१६।।
आरम्भे तापकान् प्राप्तावतृप्तिप्रतिपादकान्।
अन्ते सुदुस्त्याज्यान् कामान् कामं कः सेवते सुधीः।।१७।।
भवंति प्राप्य यत्संगमशुचीनि शुचीन्यपि।
स कायः संततापायस्तदर्थं प्रार्थना वृथा।।१८।।
यज्जीवस्योपकाराय तद्देहस्यापकारकम्।
यद्देहस्योपकाराय तज्जीवस्यापकारकम्।।१९।।
इतश्चिन्तामणिर्दिव्य इतः पिण्याकखंडकम्।
ध्यानेन चेदुभे लभ्ये क्वाद्रियतां विवेकिनः।।२०।।

स्वसंवेदनसुव्यक्तस्तनुमात्रो निरत्ययः।
अत्यंतसौख्यवानात्मा लोकालोकविलोकनः।।२१।।
संयम्य करणग्राममेकाग्रत्वेन चेतसः।
आत्मानमात्मवान्ध्यायेदात्मनैवात्मनि स्थितः।।२२।।
अज्ञानोपास्तिरज्ञानं ज्ञानं ज्ञानिसमाश्रयः।
ददाति यत्तु यस्यास्ति सुप्रसिद्धमिदं वचः।।२३।।

परीषहाद्यविज्ञानादास्रवस्य निरोधिनी।
जायतेऽध्यात्मयोगेन कर्मणामाशु निर्जरा।।२४।।
कटस्य कर्त्ताहमिति संबंधः स्याद्द्वयोर्द्वयोः।
ध्यानं ध्येयं यदात्मैव सम्बन्धः कीदृशस्तदा।।२५।।
बद्ध्यते मुच्यते जीवः सममो निर्ममः क्रमात्।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन निर्ममत्वं विचिन्तयेत्।।२६।।
एकोऽहं निर्ममः शुद्धो ज्ञानी योगीन्द्रगोचरः।
बाह्यसंयोगजा भावा मत्तः सर्वेऽपि सर्वथा।।२७।।
दुःखसंदोहभागित्वं संयोगादिह देहिनाम्।
त्यजाम्येनं ततः सर्वं मनोवाक्कायकर्मभिः।।२८।।
न मे मृत्युः कुतो भीतिर्नः मे व्याधिः कुतो व्यथा।
नाहं बालो न वृद्धोऽहं न युवैतानि पुद्गले।।२९।।
भुक्तोज्झिता मुहुर्मोहान्मया सर्वेऽपि पुद्गलाः।
उच्छिष्टेष्विव तेष्वद्य मम विज्ञस्य का स्पृहा।।३०।।
कर्म कर्महिताबन्धि जीवो जीवहितस्पृहः।
स्वस्वप्रभावभूयस्त्वे स्वार्थं को वा न वाञ्छति।।३१।।
परोपकृतिमुत्सृज्य स्वोपकारपरो भव।
उपकुर्वन्परस्याज्ञो दृश्यमानस्य लोकवत्।।३२।।
गुरुपदेशादभ्यासात्संवित्तेः स्व-परांतरं।
जानाति यः स जानाति मोक्षसौख्यं निरंतरं।।३३।।
स्वस्मिन्सदाभिलाषित्वादभीष्टज्ञापकत्वतः।
स्वयं हितप्रयोक्तृत्वादात्मैव गुरुरात्मनः।।३४।।
नाज्ञो विज्ञत्वमायाति विज्ञो नाज्ञत्वमृच्छति।
निमित्तमात्रमन्यस्तु गतेर्धर्मास्तिकायवत्।।३५।।
अभवच्चित्तविक्षेप एकान्ते तत्त्व संस्थितिः।
अभ्यस्येदभियोगेन योगी तत्त्वं निजात्मनः।।३६।।

यथा यथा समायाति सम्वित्तौ तत्त्वमुत्तमम्।
तथा तथा न रोचन्ते विषयाः सुलभा अपि।।३७।।
यथा यथा न रोचन्ते विषयाः सुलभा अपि।
तथा तथा समायाति संवित्तौ तत्त्वमुत्तमम्।।३८।।
निशामयति निःशेषमिंद्रजालोपमं जगत्।
स्पृहयत्यात्मलाभाय गत्वान्यत्रानुतप्यते।।३९।।
इच्छत्येकान्तसंवासं निर्जनं जनितादरः।
निजकार्यवशात्किंचिदुक्त्वा विस्मरति द्रुतम्।।४०।।
ब्रुवन्नपि हि न ब्रूते गच्छन्नपि न गच्छति।
स्थिरीकृतात्मतत्त्वस्तु पश्यन्नपि न पश्यति।।४१।।
किमिदं कीदृशं कस्य कस्मात् क्वेत्यविशेषयन्।
स्वदेहमपि नावैति योगी योगपरायणः।।४२।।
यो यत्र निवसन्नास्ते स तत्र कुरुते रतिम्।
यो यत्र रमते तस्मादन्यत्र स न गच्छति।।४३।।
आगच्छंस्तद्विशेषाणामनभिज्ञश्च जायते।
अज्ञाततद्विशेषस्तु बद्धयते न विमुच्यते।।४४।।
परः परस्ततो दुःखमात्मैवात्मा ततः सुखम्।
अत एव महात्मानस्तन्निमित्तं कृतोद्यमाः।।४५।।
अविद्वान् पुद्गलद्रव्यं योऽभिनंदति तस्य तत्।
न जातु जंतोः सामीप्यं चतुर्गतिषु मुञ्चति।।४६।।
आत्मानुष्ठाननिष्ठस्य व्यवहारबहिः स्थितेः।
जायते परमानंदः कश्चिद्योगेन योगिनः।।४७।।
आनन्दो निर्दहत्युद्धं कर्मेन्धनमनारतम्।
न चासौ खिद्यते योगी बहिर्दुःखेष्वचेतनः।।४८।।
अविद्याभिदुरं ज्योतिः परं ज्ञानमयं महत्।
तत्प्रष्टव्यं तदेष्टव्यं तद्द्रष्टव्यं मुमुक्षुभिः।।४९।।

जीवोऽन्यः पुद्गलश्चान्य इत्यसौ तत्त्वसंग्रहः।
यदन्यदुच्यते किंचित्सोऽस्तु तस्यैव विस्तरः।।५०।।

इष्टोपदेशमिति सम्यगधीत्य धीमान्
मानापमानसमतां स्वमताद् वितन्य।।
मुक्ताग्रहो विनिवसन्सजने वने वा,
मुक्तिश्रियं निरुपमामुपयाति भव्यः।।५१।।

समाधि तन्त्र

श्री पूज्यपाद आचार्य विरचित

येनात्माऽबुद्ध्यतात्मैव परत्वेनैव चापरम्।
अक्षयानन्तबोधाय तस्मै सिद्धात्मने नमः।।१।।

जयन्ति यस्यावदतोऽपि भारती,
विभूतयस्तीर्थकृतोऽप्यनीहितुः।
शिवाय धात्रे सुगताय विष्णवे,
जिनाय तस्मै सकलात्मने नमः।।२।।

श्रुतेन लिंगेन यथात्मशक्ति समाहितान्तः करणेन सम्यक्।
समीक्ष्य कैवल्यसुखस्पृहाणां, विविक्तमात्मानमथाभिधास्ये।।३।।

बहिरन्तः परश्चेति त्रिधात्मा सर्वदेहिषु।
उपेयात्तत्र परमं मध्योपायाद्बहिस्त्यजेत्।।४।।

बहिरात्मा शरीरादौ जातात्मभ्रान्तिरन्तरः।
चित्तदोषात्मविभ्रान्तिः परमात्मातिनिर्मलः।।५।।

निर्मलः केवलः सिद्धो विविक्तः प्रभुरक्षयः।
परमेष्ठी परात्मेति परमात्मेश्वरो जिनः।।६।।

बहिरात्मेन्द्रियद्वारैरात्मज्ञानपराङ्मुख।
स्फुरितश्चात्मनोदेहमात्मत्वेनाध्यवस्यति।।७।।

नरदेहस्थमात्मानमविद्वान्मन्यते नरम्।
तिर्यञ्चं तिर्यगङ्गस्थं सुराङ्गस्थं सुरं तथा।।८।।
नारकं नारकाङ्गस्थं न स्वयं तत्त्वतस्तथा।
अनंतानंतधीशक्तिः स्वसंवेद्योऽचलस्थितिः।।९।।
स्वदेहसदृशं दृष्टवा परदेहमचेतनम्।
परात्माधिष्ठिंतं मूढः परत्वेनाध्यवस्यति।।१०।।
स्वपराध्यवसायेन देहेष्वविदितात्मनाम्।
वर्त्तते विभ्रमः पुंसां पुत्रभार्यादिगोचरः।।११।।
अविद्यासंज्ञितस्तस्मात्संस्कारो जायते दृढः।
येन लोकोऽङ्गमेव स्वं पुनरप्यभिमन्यते।।१२।।
देहे स्वबुद्धिरात्मानं युनक्त्येतेन निश्चयात्।
स्वात्मन्येवात्मधीस्तस्माद्वियोजयति देहिनम्।।१३।।
देहेष्वात्मधिया जाताः पुत्रभार्यादिकल्पनाः।
सम्पत्तिमात्मनस्ताभिर्मन्यते हा हतं जगत्।।१४।।
मूलं संसारदुःखस्य देह एवात्मधीस्ततः।
त्यक्त्वैनां प्रविशेदन्तर्वहिरव्यापृतेन्द्रियः।।१५।।
मत्तश्च्युत्वेन्द्रियद्वारैः पतितो विषयेष्वहम्।
तान्प्रपद्याहमिति मां पुरा वेद न तत्त्वतः।।१६।।
एवं त्यक्त्वा बहिर्वाचं त्यजेदन्तरशेषतः।
एष योगः समासेन प्रदीपः परमात्मनः।।१७।।
यन्मया दृश्यते रूपं तन्न जानाति सर्वथा।
जानन्न दृश्यते रूपं ततः केन ब्रवीम्यहम्।।१८।।
यत्परैः प्रतिपाद्योऽहं यत्परान्प्रतिपादये।
उन्मत्तचेष्टितं तन्मे यदहं निर्विकल्पकः।।१९।।
यदग्राह्यं न गृह्णति गृहीतं नापि मुञ्चति।
जानाति सर्वथा सर्वं तत्स्वसंवेद्यमस्म्यहम्।।२०।।

उत्पन्नपुरुषभ्रान्तेः स्थाणौ यद्वद्विचेष्टितम् ।
तद्वन्मे चेष्टितं पूर्वं देहादिष्वात्मविभ्रमात् ।।२१।।
यथासौ चेष्टते स्थाणौ निवृत्ते पुरुषाग्रहे ।
तथाचेष्टोऽस्मि देहादौ विनिवृत्तात्मविभ्रमः ।।२२।।
येनात्मनानुभूयेऽहमात्मनैवात्मनात्मनि ।
सोऽहं न तन्न सा नासौ नैको न द्वौ न वा बहुः ।।२३।।
यद्भावे सुषुप्तोऽहं यद्भावे व्युत्थितः पुनः ।
अतीन्द्रियमनिर्देश्यं तत्स्वसंवेद्यमस्म्यहम् ।।२४।।
क्षीयन्तेऽत्रैव रागाद्यास्तत्त्वतो मां प्रपश्यतः ।
बोधात्मानं ततः कश्चिन्न मे शत्रुर्न च प्रियः ।।२५।।
मामपश्यन्नयं लोका न मे शत्रुर्न च प्रियः ।
मां प्रपश्यन्नयं लोका न मे शत्रुर्न न प्रियः ।।२६।।
त्यक्त्वैव बहिरात्मानमंतरात्मव्यवस्थितः ।
भावयेत्परमात्मानं सर्वसंकल्प वर्जितम् ।।२७।।
सोऽहमित्यात्तसंस्कारस्तस्मिन् भावनया पुनः ।
तत्रैव दृढसंस्काराल्लभते ह्यात्मनि स्थितिम् ।।२८।।
मूढात्मा यत्र विश्वस्तस्ततो नान्यद्भयास्पदम् ।
यतो भीतस्ततो नान्यदभयस्थानमात्मनः ।।२९।।
सर्वेन्द्रियाणि संयम्य स्तिमितेनान्तरात्मना ।
यत्क्षणं पश्यतो भाति तत्तत्त्वं परमात्मनः ।।३०।।
यः परमात्मा स एवाहं योऽहं स परमस्ततः ।
अहमेव मयोपास्यो नान्यः कश्चिदिति स्थितिः ।।३१।।
प्रच्याव्य विषयेभ्योऽहं मां मयैव मयि स्थितम् ।
बोधात्मानं प्रपन्नोऽस्मि परमानंदनिर्वृतम् ।।३२।।
यो न वेत्ति परं देहादेवमात्मानमव्ययम् ।
लभते न स निर्वाणं तप्त्वापि परमं तपः ।।३३।।

आत्मदेहान्तरज्ञानजनिताल्हाद निर्वृत्तः।
तपसा दुष्कृतं घोर भुञ्जानोऽपि न खिद्यते।।३४।।
रागद्वेषाविकल्लोलैरलोलं यन्मनोजलम्।
सः पश्यत्यात्मनस्तत्त्वं तत्तत्त्वं नेतरो जनः।।३५।।
अविक्षिप्तं मनस्तत्त्वं विक्षिप्तं भ्रान्तिरात्मनः।
धारयेत्तदविक्षिप्तं विक्षिप्तं नाश्रयेत्ततः।।३६।।
अविद्याभ्याससंस्कारैरवशं क्षिप्यते मनः।
तदेव ज्ञानसंस्कारैः स्वतस्तत्त्वेऽवतिष्ठते।।३७।।
अपमानादयस्तस्य विक्षेपो यस्य चेतसः।
नापमानादयस्तस्य न क्षेपो यस्य चेतसः।।३८।।
यदामोहात्प्रजायेते रागद्वेषौ तपस्विनः।
तदैव भावयेत्स्वस्थमात्मानं शाम्यतः क्षणात्।।३९।।
यत्र काये मुनेः प्रेम ततः प्रच्याव्य देहिनम्।
बुद्धया तदुत्तमे काये योजयेत्प्रेम नश्यति।।४०।।
आत्मविभ्रमजं दुःखमात्मज्ञानात्प्रशाम्यति।
नापतास्तत्र निर्वान्ति कृत्वापि परमं तपः।।४१।।
शुभं शरीरं दिव्यांश्च विषयानभिवाञ्छति।
उत्पन्नात्ममतिर्देहे तत्त्वज्ञानी ततश्च्युतिम्।।४२।।
परत्राहंमतिः स्वस्माच्च्युतो बध्नात्यसंशयम्।
स्वस्मिन्नहम्मतिश्च्युत्वा परस्मान्मुच्यते बुधः।।४३।।
दृश्यमानमिदं मूढस्त्रिलिङ्गमवबुध्यते।
इदमित्यवबुद्धस्तु निष्पन्नं शब्दवर्जितम्।।४४।।
जानन्नप्यात्मनस्तत्त्वं विविक्तं भावयन्नपि।
पूर्वविभ्रमसंस्काराद्भ्रान्तिं भूयोऽपि गच्छति।।४५।।
अचेतनमिदं दृश्यमदृश्यं चेतनं ततः।
क्व रूष्यामि क्व तुष्यामि मध्यस्थोऽहं भवाम्यतः।।४६।।

त्यागादाने बहिर्मूढ़ करोत्यध्यात्ममात्मवित्।
नान्तर्वहिरुपादानं न त्यागो निष्ठितात्मनः।।४७।।
युञ्जीत मनसात्मानं वाक्कायाभ्यां वियोजयेत्।
मनसा व्यवहारं तु त्यजेद्वाक्काययोजितम्।।४८।।
जगद्देहात्मदृष्टीनां विश्वास्यं रम्यमेव च।
स्वात्मन्येवात्म दृष्टीनां क्व विश्वासः क्व वा रतिः।।४९।।
आत्मज्ञानात्परं कार्यं न बुद्धौ धारयेच्चिरम्।
कुर्यादर्थवशात् किंचिद्वाक्कायाभ्यामतत्परः।।५०।।
यत्पश्यामीन्द्रियैस्तन्मे नास्ति यन्नियतेन्द्रियः।
अन्तः पश्यामि सानंदं तदस्तु ज्योतिरुत्तमम्।।५१।।
सुखमारब्धयोगस्य बहिर्दुःखमथात्मनि।
बहिरेवासुखं सौख्यमध्यात्मं भावितात्मनः।।५२।।
तद् ब्रूयात्तत्परान्पृच्छेत्तदिच्छेत्तत्परो भवेत्।
येनाविद्यामयं रूपं त्यक्त्वा विद्यामयं व्रजेत्।।५३।।
शरीरे वाचि चात्मानं संधत्ते वाक्शरीरयोः।
भ्रान्तोऽभ्रान्तः पुनस्तत्वं पृथगेषां निबुध्यते।।५४।।
न तदस्तीन्द्रियार्थेषु यत् क्षेमंकरमात्मनः।
तथापि रमते बालस्तत्रैवाज्ञानभावनात्।।५५।।
चिरं सुषुप्तास्तमसि मूढात्मानः कुयोनिषु।
अनात्मीयात्मभूतेषु ममाहमिति जाग्रति।।५६।।
पश्येन्निरंतरं देहमात्मनोऽनात्मचेतसा।
अपरात्मधियान्येषामात्मतत्त्वे व्यवस्थितः।।५७।।
अज्ञापितं न जानन्ति यथा मां ज्ञापितं तथा।
मूढात्मानस्ततस्तेषां वृथा मे ज्ञापनश्रमः।।५८।।
यद्बोधयितुमिच्छामि तन्नाहं यदहं पुनः।
ग्राह्यं तदपि नान्यस्य तत्किमन्यस्य बोधये।।५९।।

बहिस्तुष्यति मूढात्मा पिहितज्योतिरन्तरे।
तुष्यत्यन्तः प्रबुद्धात्मा बहिर्व्यावृत्तकौतुकः।।६०।।
न जानन्ति शरीराणि सुखदुःखान्यबुद्धयः।
निग्रहानुग्रहधियं तथाप्यत्रैव कुर्वते।।६१।।
स्वबुद्धया यावद्गृह्णीयात् कायवाक्चेतसां त्रयं।
संसारस्तावदेतेषां भेदाभ्यासे तु निर्वृतिः।।६२।।
घने वस्त्रे यथात्मानं न घनं मन्यते तथा।
घने स्वदेहेऽप्यात्मानं न घनं मन्यते बुधः।।६३।।
जीर्णे वस्त्रे यथात्मानं न जीर्णं मन्यते तथा।
जीर्णे स्वदेहेऽप्यात्मानं न जीर्णं मन्यते बुधः।।६४।।
नष्टे वस्त्रे यथात्मानं न नष्टं मन्यते तथा।
नष्टे स्वदेहेऽप्यात्मानं न नष्टं मन्यते बुधः।।६५।।
रक्ते वस्त्रे यथात्मानं न रक्तं मन्यते तथा।
रक्ते स्वदेहेऽप्यात्मानं न रक्तं मन्यते बुधः।६६।।
यस्य सस्पन्दमाभाति निष्पन्देन समंजगत्।
अप्रज्ञमक्रियाभोजं स शमं याति नेतरः।।६७।।
शरीर कञ्चुकेनात्मा संवृतो ज्ञानविग्रहः।
नात्मानं बुध्यते तस्मात् भ्रमत्यतिचिरंभवे।।६८।।
प्रविशत्गलतां व्यूहे देहेऽणूनां समाकृतौ।
स्थितिभ्रान्त्या प्रपद्यन्ते तमात्मानमबुद्धयः।।६९।।
गोरः स्थूलः कृशो वाऽहमित्यंगेनाविशेषयन्।
आत्मानं धारयेन्नित्यं केवलं ज्ञप्तिविग्रहम्।।७०।।
मुक्तिरेकान्तिकी तस्य चित्ते यस्याचला धृतिः।
तस्य नैकान्तिकीं मुक्तिर्यस्य नास्त्यचला धृतिः।।७१।।
जनेभ्यो वाक्ततः स्पन्दो मनसश्चित्तविभ्रमः।
भवन्ति तस्मात्संसर्गं जनैर्योगी ततस्त्यजेत्।।७२।।

ग्रामोऽरण्यमिति द्वेधा निवासोऽनात्मदर्शिनाम्।
दृष्टात्मनां निवासस्तु विविक्तात्मैव निश्चलः।।७३।।

देहान्तरगतेर्बीजं देहेऽस्मिन्नात्मभावना।
बीजं विदेहनिष्पत्तेरात्मन्येवात्मभावना।।७४।।

नयत्यात्मानमात्मैव जन्म निर्वाणमेव वा।
गुरूरात्मात्मनस्तस्मान्नान्योऽस्ति परमार्थतः।।७५।।

दृढात्मबुद्धिर्देहादावुत्पश्यन्नाशमात्मनः।
मित्रादिभिर्वियोगं च विभेति मरणाद्भृशम्।।७६।।

आत्मन्येवात्मधीरन्यां शरीरगतिमात्मनः।
मन्यते निर्भयं त्यक्त्वा वस्त्रं वस्त्रान्तरग्रहम्।।७७।।

व्यवहारे सुषुप्तो यः स जागर्त्यात्मगोचरे।
जागर्ति व्यवहारेऽस्मिन् सुषुप्तश्चात्मगोचरे।।७८।।

आत्मानमन्तरे दृष्टवा दृष्टवा देहादिकं बहिः।
तयोरन्तरविज्ञानादभ्यासादच्युतो भवेत्।।७९।।

पूर्वं दृष्टात्मतत्त्वस्य विभात्युन्मत्तवज्जगत्।
स्वभ्यस्तात्मधियःपश्चात्काष्ठपाषाणरूपवत्।।८०।।

श्रृणवन्नप्यन्यतः कामं वदन्नपि कलेवरात्।
नात्मानं भावयेद्भिन्नं यावत्तावन्न मोक्षभाक्।।८१।।

तथैव भावयेद् देहाद् व्यवृत्यात्मानमात्मनि।
यथा न पुनरात्मानं देहे स्वप्नेऽपि योजयेत्।।८२।।

अपुण्यमव्रतैः पुण्यं व्रतैर्मोक्षस्तयोर्व्ययः।
अव्रतानीव मोक्षार्थी व्रतान्यपि ततस्त्यजेत्।।८३।।

अव्रतानि परित्यज्य व्रतेषु परिनिष्ठितः।
त्यजेत्तान्यपि संप्राप्य परमं पदमात्मनः।।८४।।

यदन्तर्जल्पसंपृक्तमुत्प्रेक्षाजालमात्मनः।
मूलं दुःखस्य तन्नाशे शिष्टमिष्टंपरंपदम्।।८५।।

अव्रती व्रतमादाय व्रती ज्ञान परायण: ।
परात्मज्ञान संपन्न: स्वयमेव परो भवेत् ।।८६।।

लिंगंदेहाश्रितं दृष्टं देहएवात्मनो भव: ।
न मुच्यन्ते भवाद्यस्मादेते लिङ्गकृताग्रहा: ।।८७।।

जातिर्देहाश्रिता दृष्टादेह एवात्मनो भव: ।
न मुच्यन्ते भवात्तस्मादेते जातिकृताग्रहा: ।।८८।।

जातिलिङ्गविकल्पेन येषां च समयाग्रह: ।
तेऽपि न प्राप्नुवन्त्येव परम पदमात्मन: ।।८९।।

यत्त्यागाय निवर्त्तन्ते भोगेभ्यो यदवाप्तये ।
प्रीतिं तत्रैव कुर्वन्ति द्वेषमन्यत्र मोहिन: ।।९०।।

अनन्तरज्ञ: संधत्ते दृष्टिं पंगोर्यथान्धके ।
संयोगाद्दृष्टिमंगेऽपि संधत्ते तद्वदात्मन: ।।९१।।

दृष्टभेदो यथादृष्टिं पङ्गोरन्धे न योजयेत् ।
तथा न योजयेद् देहे दृष्टात्मा दृष्टिमात्मन: ।।९२।।

सुप्तोन्मत्ताद्यवस्थेव विभ्रमोऽनात्मदर्शिनाम् ।
विभ्रमोऽक्षीणदोषस्य सर्वावस्थात्मदर्शिन: ।।९३।।

विदिताशेषशास्त्रोऽपि न जाग्रदपि मुच्यते ।
देहात्मदृष्टिर्ज्ञातात्मा सुप्तोन्मत्तोऽपि मुच्यते ।।९४।।

यत्रेवाहितधी: पुन्स: श्रद्धा तत्रैव जायते ।
यत्रैव जायते श्रद्धा चित्तं तत्रैव लीयते ।।९५।।

यत्रानाहितधी: पुंस: श्रद्धा तस्मान् निवर्तते ।
यस्मान्निवर्तते श्रद्धा कुतश्चित्तस्य तल्लय: ।।९६।।

भिन्नात्मान मुपास्यात्मा परो भवति तादृश: ।
वर्तिदीपं यथोपास्य भिन्नाभवति तादृशी ।।९७।।

उपास्यात्मानमेवात्मा जायते परमोऽथवा ।
मथित्वात्मानमात्मैव जायतेऽग्निर्यथा तरु: ।।९८।।

इतीदं भावयेन्नित्यमवाचां गोचरं पदं।
स्वतः एव तदाप्नोति यतो नावर्तते पुनः।।९९।।
अयत्नसाध्यं निर्वाणं चित्तत्त्वं भूतज यदि।
अन्यथा योगतस्तस्मान्न दुःखं योगिना क्वचित्।।१००।।
स्वप्ने दृष्टे विनष्टेऽपि न नासोऽस्ति यथात्मनः।
तथा जागरदृष्टेऽपि विपर्यासाविशेषतः।।१०१।।
अदुःखभावितं ज्ञानं क्षीयते दुःखसन्निधौ।
तस्माद्यथावलं दुःखैरात्मानं भावयेन्मुनिः।।१०२।।
प्रयत्नादात्मनो वायुरिच्छाद्वेषप्रवर्तितात्।
वायोः शरीरयंत्राणि वर्तन्ते स्वेषु कर्मसु।।१०३।।
तान्यात्मनि समारोप्य साक्षाण्यास्तेऽसुखं जडः।
त्यक्त्वाऽरोपं पुनर्विद्वान् प्राप्नोति परमं पदम्।।१०४।।
मुक्त्वा परत्र परबुद्धिमहं धियंच।
संसार दुःखजननीं जननाद्विमुक्तः।।
ज्योतिर्मयं सुखमुपैति परमात्मनिष्ठ
स्तन्मार्गमेतदधिगम्य समाधितंत्रं।।१०५।।